

Singhi Fain Series
No. 2

पुरातम प्रवेध संग्रह

Ch. Harris

- stelling

atomic atomic

(1432)

Indira Gandhi National
Contre for the Arts

यशोधवल	48
यशोभद्र [सूरि]	5.2
यशोगज	96
यशोवर्मा	46-59, 68, 65
यशोवीर	909, 902
युगांदिदेव [जिन]	४५, ६६, ८६,
	904, 900
युधिष्टिर	२२, ८२
यूकाविहार	89
योगराज	98, 94
A STATE OF THE PARTY OF THE PAR	6, 90, 92, 906
योगीश्वरि [भट्टारिका]-	
	10
₹	The second
रघु [कुल, राजा]	७३, ८६
्रङ्क [वणिक्]	900, 909
रणसिंह	998
रति	8º
रतिरमण	34
रत्नवरीक्षा ग्रन्थ	59
रत्नप्रभ [पण्डित]	Éa
रलमाछ [पुर]	905
रत्नशेखर	909, 990
रलाकर [पण्डित]	इं७
रतादित्य	94
-राज [राजपुत्र, क्षत्रिय]	94
राजघरट [बिरुद]	6.8
राजपितामह [,,]	60,69
राजमदनशङ्कर [,,]	20
राजविडम्बन [नाटक]	39
राजशेखर [कवि, अकार	वजलद] ३०
राजिराज (?)	9 €
राम [दाशरथी]	99, 28, 44, 63
रामचन्द्र [कवि, प्रबन्ध	शतकती ६३, ६४
	دع, ٩٥
रामेश्वर-प्रासाद	89
रावण [लङ्कापति]	28, 26
राष्ट्रकृट [वंश]	96
स्द	8, 36, 90
रुद्रमहाकाल-प्रासाद	§ 9
कनाविस)	
रहाइच } [मंत्री]	२१, २२, २३
रेवा [नदी]	9, 44
रैवन रे [पर्वत]	
रैवतक } [पर्वत]	६५, ८७, १०८,

	922, 923
रोहक [महामाख]	२ ५
रोहण, रोहणाचल	9, 3
ल	
संक [गह] (लड्डा)	२३, ५८
लक्खड (लाखाक))	90
लक्ष ,, }	99, 99
लक्षराज ,,	96
ल ङ्मणसेन	993
लक्ष्मी	३4, 908
लक्ष्मी व ति	920
लप (ख) णावती [पुरी]	993
लघु भैरवानन्द [योगी]	६० (हि०)
लघु वारभट [वैद्य]	922
लङ्का [नगरी] १३,३	२, ३९, ६६, ७२
लच्छ (लक्ष्मी)	84
छ छितस र	900
लवणप्रसाद [राजा]	98, 96, 900,
	903, 908
लाखाक [फुलउत्र]	96, 98
लाछि [छिम्पिका]	५६
लाट [देश]	३9, ९५
छा देश्वर	9६
लीला [ठकुर, राजवैदा]	44
लीलादेवी	94
ॡणिग [मंत्री]	900, 909
ऌ्णिगवसहि [प्रासाद]	909
व	
	9.
वटपद [प्राम]	90
7777	49
वढीयार [देश]	६५ 9२
वनराज	
वयज्ञहदेव [तपस्वभूपति	
वयजलदेव [प्रतीहार]	9.0
वररुचि [पण्डित]	३, ४७
वराहमिहिर [पण्डित]	996, 998
वर्द्धमानपुर	६४, ८६, १२५
वर्द्धमानप्रतिमा	908
वर्दमानसूरि	३६, १०९
वडभीपुर	900-5, 922
वलमीभंग	909
वहाभराज	२०

बस्तुपाल [महामाख] ९८	, 900, 902,
	903,904
वाग्भट [मंत्री]	७९, ८६, ८७
	85-68
,, (लघु, बृहत्) [वैद	1] 929
,, [वैद्यक ग्रन्थ]	929
वाणारसी [नगरी]	20, 40, 48,
	८९, ११४
गदिवेतालीय [विरुद]	६६
वामराशि [विप्र]	39
वायटीय [गच्छ]	909
वायटीय जिनायतन	५६
वाराही ग्राम	७१
वाराहीय ब्रूच	৩৭
वाराही संहिता [ग्रंथ]	996
वालाक [देश]	७१
वाल्मीकि [ऋषि]	83
वासुकि [नागराज]	998, 930
वासुदेव	43
विक(क)मकाल	94, 908
	. 8, 8, 0, 8
विक्रमार्क १,५,२७,	, x, \(\xi\), \(\sigma\), \(\xi\), \(\x
विक्रमादित्य)	₹, €
विक्रमार्क संवत्सर	93
विग्रहराज	80
विचार चतुर्भुख [विहद]	68
विजयसेन सूरि	33, 908
विजया [पण्डिता]	8.3
विदिशा [नगरी]	93
विद्याधर [मंत्री]	993, 998
विद्यापति [महाकवि]	40
विनायक [गणपति]	36
विनीता [नगरी]	89
विभीषण	46, 43
विभलगिरि	64, 900
विमलवसहिका	909
विमलवाहन	63
विरश्चि	995
विरहक [वृक्ष विशेष]	60
विद्याला [नगरी]	.35
विशोपक [देश?]	43
विश्वल	150
	(हि०), ८२
विश्वश्वर	103

Indira Gandhi National Centre for the Arts

ALEXANDER OF THE PROPERTY OF T	
विष्णु	६३, ८५
वीतरागस्तव [प्रन्थ]	८६, १२८
	96,900,903-4
वीरमनी [आर्या, गणि	नी] १२
वीसलदेव	908
बृद्धवादी [सूरि]	(हि॰) ६-७
वृषभदेव-प्रासाद	63
वैदिक [धर्म]	85
वैरसिंह	94
वैराग्यशतक [प्रन्थ]	929
व्यास [ऋषि]	82
হ	T
शकटाल [मंत्री]	999
शकुनिका विहार	८६-८८, 900
शकावतार [तीर्थ]	89
शङ्कर	8, 80
शङ्ख [चुपति]	923
शङ्ख [महासाधनिक]	907, 903
शङ्खपुर	923
शची	908
शतानन्दपुर	996
शतुलय [तीर्थ]	५७, ६५, ८४, ८६,
	७, ९३, १०३, १०५
शम्भु	999
शाकटायन [व्याकरण]	
शाकम्भरी [पुरी]	१६, १७, ७६
शातवाहन [राजा]	998, 920
शानितसूरि	44
शारदा [देवी]	85
शासनदेवता	920
शिखण्डि	99
शिप्रा [नदी]	908
शिबि [राजा]	903
शिलादित्य	900, 906, 909
शिव ७,	90, 82, 43, 94
शिवनिर्माल्य	80
शिवपत्तन	909
शिवपुराण	96,64
शिवभक्त	48
शिवभवन	42
शिवलिङ्ग	994
शिवा	908
शिञ्जपालवध [काव्य]	34
शीता [पण्डिता]	83

शीलगुणसृरि	92, 93
शीलपुन्दरी	64
गुक [मुनि]	99
शुकसंवाद [आख्यान]	36
ग्रुभकेशी	48
शुङ्गारकोडी साडी	69
शैव [दर्शन]	63
शैवेय जिन]	909
शोभन [मुनि, पण्डित]	३६, ३७, ४२
शोभनचतुर्वेशतिका [प्रन्थ	7 82
शोभनदेव [प्रतीहार]	908
,, [स्त्रधार]	909
श्रियादेवी)	93
श्रीदेवी ∫	92
श्रीपर्वतं	ę
श्रीपाल [कवि]	68
श्रीपुञ्ज [राजा]	990
श्रीमाता	990
श्रीमाळ [पुर, नगर]	28, 24, 909
श्रीमाळवंश	46
श्रीहर्ष (सीन्घल)	टि॰ २१
श्वेतपट)	. ६७
श्वेताम्बर हि ६६, ६८,	ES, 55 900
श्वेताम्बरशासन	Ęu
व	
षोडशलक्ष-प्रासाद	৬৭
ष(ख)ङ्गार [तृप]	54
स	
सहद [नौवित्तक]	903
सउंसर	
सगर	८६
सजन [दण्डनायक]	54
सत्यपुरावतार [प्राप्ताद]	900
	90, 58, 05,
	90, 99, 98,
समुद्र वेजय [राजा]	1, 998, 990
सरमति (दिवी)	920
सरस्वती १५, ४२, ६३	84, 50 (A0)
सरम्बनीकण्ठाभरण [बिहद]	६३, ७५, ८९] 900
सरस्वताकण्यासरण-प्रास्तात	30 V-
सरस्वतीकण्ठाभरण-प्रासाद	
सरस्वताकण्ठामरण-प्रासाद सरस्वती कुटुम्ब सर्वदेव	३९, ४० २७ ३६

	सर्वज्ञुत्र	u
	सहस्रालिङ्ग [सरोवर]	48, 40, 59,
		६२, ६४, ७४
	संयोगसिद्धि सिप्रा	69
	साङ्काइय [गोत्र]	३६
	साखड [भाह्याड]	93
	साङ्गण	36
	सातवाहन [राजा]	90
	सातवाहन [संप्रह्गाथाको	त] १०
	सातवाहन कथा	90
	सान्त् मंत्री	५६-५८, ७५
	सान्त्वसहिका	40
	साभ्रमती [नदी]	9
	सामन्तसिंह	94, 95
	सामल	45
	सालाहण (शालिवाइन)	99
	सालिगवसहिका	99
	साइसाङ्क [चपति]	98, 28, 994
	सिंहपुर	9
	सिंहभट	29
	सिताम्बर ४४, ४९,	६७, ८२, १०७,
N. N.		922, 923
	सिताम्बरदर्शन	903
	सिताम्बरशासन	44
	सिद्ध चकवर्ती) [जयसि	ē, 99%
	सिद्ध नृपति े सिद्धर	
	मिद्धपुर	49
	सिद्धभर्ता (सिद्धराज)	65
	सिद्धराज (जयसिंह)	५५, ५७-६२,
	मिल्मेन मिली	-00, 09, 99
	सिद्धसेन [सूरि]	,-७७, ७९, ९१ ७, ८
	सिद्धसेन [सूरि] सिद्धहेम [ब्याकरण]	,-00, 09, 99 0, 2 90, 89
	सिद्धसेन [सूरि] सिद्धहेम [ब्याकरण] सिद्धाधिप [सिद्धराज]	,-00, 09, 99 0, c 50, 59 04, 0c
	सिद्धसेन [सूरि] सिद्धहेम [व्याकरण] सिद्धाधिप [सिद्धराज] सिन्धदेश	,–७७, ७९, ९९ ७, ८ ६०, ६९ ७५, ७८ ३२
	सिद्धसेन [सूरि] सिद्धहेम [व्याकरण] सिद्धाधिप [सिद्धराज] सिन्धदेश सिन्धुपंति	,–७७, ७९, ९९ ७, ८ ६०, ६९ ७५, ७८ ३२ ७६
	सिद्धसेन [सूरि] सिद्धहेम [व्याकरण] सिद्धाधिप [सिद्धराज] सिन्धुदेश सिन्धुपंति सिन्धुराज (सीन्धल)	,-७७, ७९, ९१ ७, ८ ६०, ६१ ७५, ७८ ३२ ७६ (टि०) २१
	सिद्धसेन [सूरि] सिद्धहेम [व्याकरण] सिद्धाधिप [सिद्धराज] सिन्धदेश सिन्धुपति सिन्धुराज (सीन्धल) सिम्धु [नदी]	,–७७, ७९, ९९ ७, ८ ६०, ६९ ७५, ७८ ३२ ७६ (टि०) २९
	सिद्धसेन [सूरि] सिद्धहेम [व्याकरण] सिद्धाधिप [सिद्धराज] सिन्धदेश सिन्धुपति सिन्धुराज (सीन्धल) सिप्रा [नदी] सिवभवण (शिवभवन)	, - ७७, ४९, ४९ ७, ८ ६०, ६९ ७५, ७८ ३२ (टि०) २९ १२९
The state of the s	सिद्धसेन [सूरि] सिद्धिम [व्याकरण] सिद्धाधिप [सिद्धराज] सिन्धुदेश सिन्धुपंति सिन्धुराज (सीन्धल) सिन्ना [नदी] सिवभवण (शिवभवन) सीन्यल (सिन्धुराज)	,—७७, ७९, ९९ ७, ८ ६०, ६९ ७५, ७८ ३२ ७६ (टि०) २९ १२९ ३९
	सिद्धसेन [सूरि] सिद्धिम [व्याकरण] सिद्धिष [सिद्धराज] सिन्धुदेश सिन्धुपति सिन्धुराज (सीन्धल) सिप्रा [नदी] सिवभवण (शिवभवन) सीन्यल (सिन्धुराज) सीलण [कौतुकी]	, - ७७, ७९, ९९ ७, ८ ६०, ६९ ७५, ७८ ३२ ७६ (टि०) २९ १२९ ३९ २९, २६
the reason to the employment and the contraction of the contraction of the second of t	सिद्धसेन [सूरे] सिद्धिम [व्याकरण] सिद्धाधिप [सिद्धराज] सिन्धुदेश सिन्धुराज (सीन्धल) सिन्ना [नदी] सिवभवण (शिवभवन) सीलण [कौतुकी] सुधर्मा [देवसमा]	(হি০) ২৭ ২৭, ২৭ ১৬, ৬২ ২২ (হি০) ২৭ ৭২৭ ২৭, ২২ ৬২, ৬২
and the relationship to the property and the second	सिद्धसेन [सूरे] सिद्धिम [व्याकरण] सिद्धाधिप [सिद्धराज] सिन्धुदेश सिन्धुपति सिन्धुराज (सीन्धल) सिप्रा [नदी] सिवभवण (शिवभवन) सीन्धल (सिन्धुराज) सीलण [कौतुकी] सुधर्मा [देवसमा] सुप्रतिष्ठान [नगर]	, - ७७, ७९, ९९ ७, ८ ६०, ६९ ७५, ७८ ३२ ७६ (टि०) २९ १२९ ३९ २९, २६
grammer into the release of the Physiother State Continue and Continue Cont	सिद्धसेन [सूरे] सिद्धिम [व्याकरण] सिद्धाधिप [सिद्धराज] सिन्धुदेश सिन्धुराज (सीन्धल) सिन्ना [नदी] सिवभवण (शिवभवन) सीलण [कौतुकी] सुधर्मा [देवसमा]	(হি০) ২৭ ২৭, ২৭ ১৬, ৬২ ২২ (হি০) ২৭ ৭২৭ ২৭, ২২ ৬২, ৬২

प्रबन्धचिन्तामणिविशेषनामसूचिः।

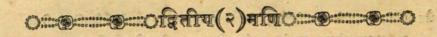
सुराष्ट्रा [देश]	६५, ८६, ९२
सुवर्णपुरुषसिद्धि [विद	ा] ५,९३,१०८
सुवत-प्रासाद	69,66
स्नळदेवी	44
सूहबदेवी	993-998
सेडर्ड [हस्ती]	49
सेडी [नदी]	970
सैन्धव [देश]	54
सैन्धवा [देवी]	66
सोमनाथ [महादेव]	94, 90, 40, 68
सोमेश्वर [महादेव]	99, 41, 40, 46,
٧٩, ۵	२, ८५, १०१, १२३
सोमेश्वर [कवि]	902, 903, 904
सोमेश्वर [प्रधान]	990
सोमेश्वरपत्तन	98, 90, 08, 59
सोमेश्वर-प्रासाद	68

सोमेश्वरयात्रा ५८, ६५	, 906, 923
सोलाक [बइकार]	60
सोळाक [मण्डलीकसत्रागार]	५६, ९४
सोहड [मालवत्यति]	90
सौगत [मत]	82, 900
सौगतमठ	900
सौराष्ट्र [देश, मण्डल]	95, 05, 94
सौराष्ट्र घाट	93
स्तम्भतीर्थ ६० (टि०), ७	0, 99, 902
स्तम्भनक [प्राम]	900, 920
स्थूलिभद्रचरित्र	६० (रि०)
स्मृतिवाक्य	96
स्वर्गारोहण-प्रासाद	904
स्वायम्भु	६२
ह	
हनुमान्	३६

हम्मीर	cs.
हर	36-80, 88
हरि	38,80
हरिपालदेव	99
हरिभद्र सूरि	36
हर्ष [चपति]	40
हारीत [ऋषि]	- 55
हिमालय [पर्वत]	२७
हेमखडू	99
हेमड सेवड	99
हेमचन्द्र सूरि) ५७, ५९	١, ६०, ६٩, ६४,
हेमसूरि } ६६, ६	0-00,00,00-
	8, 64, 60, 68,
	93, 90, 909,
	920, 926
हेमनिष्पत्ति [विद्या]	93
हैहय [वंश]	94



सिंघी जैन यन्थमाला





प्रबन्धचिन्तामणिग्रन्थसम्बद्ध

पुरातन प्रबन्ध संग्रह

1432

Indira Gandhi Nation Centre for the Arts

सिंघी जैन ग्रन्थमाला

जैन आगमिक, दार्शनिक, साहित्यिक, ऐतिहासिक, कथात्मक - इत्यादि विविधविषयगुनिकत प्राकृत, संस्कृत, अपभ्रंश, प्राचीनगूर्जर, राजस्थानी आदि भाषानिबद्ध बहु उपयुक्त पुरातनवाद्मय तथा नवीन संशोधनात्मक साहित्यप्रकाशिनी जैन ग्रन्थावि ।

कलकत्तानिवासी सर्गस्य श्रीमद् डालचन्दजी सिंघी की पुण्यस्मृतिनिमित्त तत्तुपुत्र श्रीमान् बहादुरसिंहजी सिंघी कर्तृक

संस्थापित तथा प्रकाशित

सम्पादक तथा सञ्चालक

जिनविजय मुनि

अधिष्ठाता - सिंघी जैन ज्ञानपीठ, ज्ञान्तिनिकेतन

सम्मान्य सभासद-भाण्डास्कर प्राच्यविद्या संशोधन मन्दिर पूना, तथा गूजरात साहित्यसमा अहमदाबाद; मृत पूर्वाचार्य-गृजरात पुरातत्त्वमन्दिर अहमदाबाद; जैन वाङ्मयाध्यापक विश्वभारती, शान्तिनिकेतनः संस्कृत, प्राकृत, पाली, प्राचीनगूर्जर आदि अनेकानेक ग्रंथ संशोधक-सम्पादक।

प्राप्तिस्थान

संचालक-सिंघी जैन ग्रन्थमाला

भारतीनिवास, नं०. १८, । सिंघीसदन, ४८, गरियाहाट रोड, अहमदाबाद (गूजरात).

सर्वाधिकार संरक्षित.

वि० सं० १९८१

प्रवन्धिचन्तामणिग्रन्थसम्बद्ध

पुरातन प्रबन्ध संग्रह

प्रवन्धिचन्तामणिप्रन्थगत प्रवन्धोंके साथ सम्बन्ध और समानता रखनेवाले अनेकानेक पुरातन प्रवन्धोंका विशिष्ट संग्रह ।

0.89.912

सम्पादक

जिनविजय मुनि

मूल पाठ

विशेषनामानुक्रम-पद्यानुक्रमणिकादियुक्त

प्रकाशन-कर्ता

अधिष्ठाता - सिंघी जैन ज्ञानपीठ

कलकत्ता

प्रथमावृत्ति, एक सहस्र प्रतिः

[१९३६ किष्टाब्द

SINGHI JAINA SERIES

A COLLECTION OF CRITICAL EDITIONS OF MOST IMPORTANT CANONICAL, PHILOSOPHICAL,
HISTORICAL, LITERARY, NARRATIVE ETC. WORKS OF JAINA LITERATURE
IN PRAKRIT, SANSKRIT, APABHRAMSA AND OLD VERNACULAR

Rare Book Collection

ACC No.: R-122

Apate: 24: 3:08

ANGUAGES, AND STUDIES BY COMPETENT
RESEARCH SCHOLARS.

FOUNDED AND PUBLISHED

BY

SRĪMĀN BAHĀDUR SINGHJĪ SINGHĪ OF CALCUTTA

IN MEMORY OF HIS LATE FATHER

ŚRĪ DALCANDJĪ SINGHĪ.

DATA ENTERED
Date 27 06 08

""GENERAL EDITOR

SANS 089,912 PUR

JINAVIJAYA MUNI

ADHISTHĀTĀ: SINGHĪ JAINA JNĀNAPĪTHA, SĀNTINĪKETAN.

HONORARY MEMBER OF THE BHANDARKAR ORIENTAL RESEARCH INSTITUTE OF POONA AND GUJRAT SAHITYA SABHA OF AHMEDABAD; FORMERLY PRINCIPAL OF GUJRAT PURATATTVAMANDIR OF AHMEDABAD; EDITOR OF MANY SANSKRIT, PRAKRIT, PALI, APABHRAMSA, AND OLD GUJRATI WORKS.

NUMBER 2

TO BE HAD FROM

SANCALAKA, SINGHĪ JAINA GRANTHAMĀLĀ

BHARATINIVAS, ELLIS BRIDGE AHMEDABAD. (GUJRAT)

SIP

SINGHI SADAN, 48, GARIYAHAT ROAD, BALLYGUNGE, CALCUTTA

Founded 1

All rights reserved

[1931. A. D.

ndira Gandhi Nationa Centre for the Arts

PURATANA PRABANDHA SANGRAHA

A COLLECTION OF MANY OLD PRABANDHAS SIMILAR AND ANALOGOUS TO THE MATTER
IN THE PRABANDHACINTAMANI; INDICES OF THE VERSES AND PROPER
NAMES; A SHORT INTRODUCTION IN HINDI DESCRIBING
THE MSS. AND MATERIALS USED IN PREPARING
THIS PART, ALONG WITH PLATES.

BY

JINAVIJAYA MUNI

SINGHI PROFESSOR OF JAINA CULTURE AT VISVABHARATI

SANTINIKETAN.

ORIGINAL TEXT

- I. IN SANSKRIT AND PRAKRIT WITH INDICES OF THE VERSES AND PROPER NAMES.
 - IL AN INDEX OF PROPER NAMES OF PRABANDHACINTAMANI.

PUBLISHED BY

THE ADHISTHATA-SINGHT JAINA JNANAPITHA

First edition, One Thousand Copies.

[1936 A. D.

V. E. 1992 1

प्रबन्धचिन्तामणि ग्रन्थकी प्रस्तुत आवृत्तिका संकर्तन । इस ग्रन्थकां संकरक और प्रकाशन निम्न प्रकार, ५ मागोंमें, पूर्ण होंगा।

- (१) प्रथम भाग. भिन्न भिन्न प्रतियोंके आधार पर संशोधित-विविध पाठान्तर समवेत-मूर्लंग्रन्थ; १ परिशिष्ट; मूलुमन्थ और परिशिष्टमें आये हुये संस्कृत, प्राकृत और अपभंश भाषामय पद्योंकी अकारादिकमानुसार स् चि; पाठ संशोधनके छिये काममें छाई गई पुरातन प्रतियोंका सचित्र वर्णन।
- (२) द्वितीय भाग. प्रवन्धविन्तामणिगत प्रवन्धोंके साथ सम्बन्ध और समानता रखनेवाले अनेकानेक पुरातन प्रवन्धोंका संग्रह; पद्यानुक्रमसूचि; विशेष नामानुक्रम; संक्षिप्त प्रस्तावना और प्रवन्ध संग्रहोंकी मूल प्रतियोंका सचित्र परिचय ।
- (३) तृतीय भाग. पहले और दूसरे भागका संपूर्ण हिंदी भाषान्तर।
- (४) चतुर्थ भाग. प्रबन्धिचन्तामणिवर्णित व्यक्तियोंके साथ सम्बन्ध रखनेवाले शिलालेख, ताम्रपत्र, पुस्तकप्रशस्ति आदि जितने समकालीन साधन और ऐतिहा प्रमाण उपलब्ध होते हैं उनका एकत्र संग्रह और तत्परिचायक उपयुक्त विस्तृत विवेचन; प्राक्कालीन और पश्चात्कालीन अन्यान्य प्रन्थोंमें उपलब्ध प्रमाणभूत प्रकरणों, उल्लेखों और अवतरणोंका संग्रह; कुछ शिलालेख, ताम्रपत्र और प्राचीन ताडपत्रोंके चित्र ।
- (५) पञ्चम भाग. प्रबन्धचिन्तामणिष्रथित सब बातोंका विवेचन करनेवाली विस्तृत प्रस्तावना-जिसमें तत्कालीन ऐतिहासिक, भौगोलिक, सामाजिक, धामिंक और राजकीय परिस्थितिका सविशेष ऊहापोह और सिंहावलोकन किया जायगा। अनेक प्राचीन मंदिर, मूर्तियां इत्यादिके चित्र भी दिये जायँगे।

THE SCHEME OF THE WORK OF PRABANDHACINTAMANI

[The work will be completed in five parts.]

- Part I. A critical Edition of the original Text in Sanskrit with various readings based on the most reliable MSS.; An Appendix; An alphabetical Index of all Sanskrit, Prākrit and Apabhraṃśa verses occurring in the text and the appendix; A short Introduction in Hindi describing the MSS. and materials used for the construction of the text along with plates.
- Part II. A collection of many old Prabandhas similar and analogous to the matter in the Prabandhacintāmaṇi; Indices of the verses, and proper names; A short Introduction in Hindi describing the MSS. and materials used in preparing this Part, along with plates.
- Part III. A complete Hindi Translation of Parts I and II.
- Part IV. A collection of epigraphical records, viz. stone inscriptions, copper plates, colophons and Prasastis from the contemporary MSS.; all available historical data dealing with the Persons described or referred to in the Prabandhacintāmaṇi along with a critical account in Hindi of the above, as also many plates. and A collection of authoritative references and quotations from other works.
- Part V. An elaborate general Introduction surveying the historical, geographical, social, political and religious conditions of that period; with plates.

bolics Conditi Nation Control for the Arch

।। सिंघीजैनंबन्थमालासंस्थापकप्रशस्तिः॥

अस्ति बङ्गाभिधे देशे सुप्रसिद्धा मनोरमा । मुशिदाबाद इत्याख्या पुरी वैभवशािलनी ॥
निवसन्त्यनेके तत्र जैना ऊकेशवंशजाः । धनाव्या नृपसद्द्या धर्मकर्मपरायणाः ॥
श्रीडालचन्द इत्यासीत् तेष्वेको बहुभाग्यवान् । साधुवत् सबरित्रो यः सिंधीकुलप्रभाकरः ॥
बाल्य एवागतो यो हिं कर्तुं व्यापारिवस्तृतिम् । किलकातामहापुर्यो धृतधर्मार्थनिश्चयः ॥
कुशाप्रया खबुद्धोव सद्दृत्या च सुनिष्ठया । उपार्ज्य विपुलां लक्ष्मीं जातो कोट्यधिपो हि सः ॥
तस्य मन्नुकुमारीति सन्नारीकुलमण्डना । पतित्रता प्रिया जाता शीलसौभाग्यभूषणा ॥
श्रीबहादुरसिंहाख्यः सद्धणी सुपुत्रस्तयोः । अस्त्येष सुकृती दानी धर्मप्रियो धियां निधिः ॥
प्राप्ता पुण्यवताञ्चेन प्रिया तिलकसुन्दरी । यस्याः सौभाग्यदीपेन प्रदीप्तं यदृहाङ्गणम् ॥
श्रीमान् राजेन्द्रसिंहोऽस्ति ज्येष्ठपुत्रः सुशिक्षितः । यः सर्वकार्यदक्षत्वात् बाहुर्यस्य हि दक्षिणः ॥
नरन्द्रसिंह इत्याख्यस्तेजस्वी मध्यमः सुतः । सुनुर्वीरेन्द्रसिंहश्च किनष्ठः सौम्यदर्शनः ॥
सन्ति त्रयोऽपि सत्पुत्रा आप्तभक्तिपरायणाः । विनीताः सरला भव्याः पितुर्मार्गानुगामिनः ॥
अन्येऽपि बहुवश्चास्य सन्ति स्वस्नादिबान्धवाः । धनैर्जनैः समृद्धोऽयं ततो राजेव राजते ॥

अन्यच-

सरसत्यां सदासक्तो भूत्वा लक्ष्मीप्रियोऽप्ययम् । तत्राप्येष सदाचारी तिचत्रं विदुषां खलु ॥ न गर्वो नाप्यहंकारो न विलासो न दुष्कृतिः । दृश्यतेऽस्य गृहे कापि सतां तद् विस्मयास्पदम् ॥ भक्तो गुरुजनानां यो विनीतः सज्जनान् प्रति । बन्धुजनेऽनुरक्तोऽस्ति प्रीतः पोष्यगणेष्विष ॥ देश-कालिश्वितिज्ञोऽयं विद्या-विज्ञानपूजकः । इतिहासादिसाहित्य-संस्कृति-सत्कलप्रियः ॥ समुन्नत्ये समाजस्य धर्मस्योत्कर्षहेतवे । प्रचारार्थं सुशिक्षाया व्ययत्येष धनं घनम् ॥ गत्वा सभा-सित्यादौ भृत्वाऽध्यक्षपदाङ्कितः । दत्त्वा दानं यथायोग्यं प्रोत्साहयति कर्मठान् ॥ एवं धनेन देहेन ज्ञानेन ग्रुभनिष्ठया । करोत्ययं यथाग्रिक्त सत्कर्माणि सदाग्रयः ॥ अथान्यदा प्रसङ्गेन खिपतुः स्मृतिहेतवे । कर्तुं किञ्चिद् विशिष्टं यः कार्यं मनस्यचिन्तयत् ॥ पूज्यः पिता सदैवासीत् सम्यग्-ज्ञानरुचिः परम् । तस्मात्तज्ज्ञानवृद्ध्यर्थं यतनीयं मया वरम् ॥ विचार्येवं स्वयं चित्ते पुनः प्राप्य सुसम्मितम् । अद्वास्पदस्विम्त्राणां विदुषां चापि तादशाम् ॥ जैनज्ञानप्रसारार्थं स्थाने शान्तिनिकेतने । सिंघीपदाङ्कितं जैनज्ञानपीठमतीष्ठिपत् ॥ अस्य सौजन्य-सौहार्द-स्थयौदार्यादिसद्धुणः । वशीभूयाति मुदा येन स्वीकृतं तत्पदं वरम् ॥ तस्यव प्रेरणां प्राप्य श्रीसिंघीकुलकेतुना । स्वितृश्रेयसे चैषा प्रन्थमाला प्रकाश्यते ॥ विद्यज्ञनकृताल्हादा सिच्दानन्ददा सदा । चिरं नन्दित्यं लोके जिनविजयभारती ॥

॥ सिंधीजैनयन्थमालासम्पाद्कप्रशस्तिः॥

स्वस्त श्रीमेदपाटाख्यो देशो भारतिश्रुतः । रूपाहेलीति सन्नाम्नी पुरिका तत्र सुस्थिता ॥
सदाचार-विचाराभ्यां प्राचीननृपतेः समः । श्रीमचतुरसिंहोऽत्र राठोडान्वयभूमिपः ॥
तत्र श्रीवृद्धिसिंहोऽभूत् राजपुत्रः प्रसिद्धिमान् । क्षात्रधर्मधनो यश्च परमारकुलाग्रणीः ॥
मुझ-भोजमुखा भूपा जाता यस्मिन्महाकुले । किं वर्ण्यृते कुलीनत्वं तत्कुलजातजन्मनः ॥
पत्नी राजकुमारीति तस्याभूद् गुणसंहिता । चातुर्य-रूप-लावण्य-सुवाक्सोजन्यभूषिता ॥
क्षत्रियाणीप्रभापूणां शौर्यदीप्तमुखाकृतिम् । यां दृष्ट्वैव जनो मेने राजन्यकुलजा त्वियम् ॥
सूतुः किसनसिंहाख्यो जातस्तयोरित प्रियः । रणमल इति द्धन्यद् यन्नाम जननीकृतम् ॥
श्रीदेवीहंसनामात्र राजपूज्यो यतीश्वरः । ज्योतिभेषज्यविद्यानां पारगामी जनप्रियः ॥
श्रीदेवीहंसनामात्र राजपूज्यो यतीश्वरः । स चासीद् वृद्धिसिंहस्य प्रीति-श्रद्धास्पदं परम् ॥
तेनाथाप्रतिमप्रमणा स तत्सूनुः स्वसन्निधौ । रिक्षतः, शिक्षतः सम्यक्, कृतो जैनमतानुगः ॥
दौर्माग्यात्तिच्छरोर्वाल्ये गुरु-तातौ दिवंगतौ । विमुद्धेन ततस्तेन त्यक्तं सर्वं गृहादिकम् ॥

तथा च-

परिभ्रम्याय देशेषु संसेव्य च बहून् नरान्। दीक्षितो मुण्डितो भूत्वा कृत्वाऽऽचारान् सुदुष्करान्॥ ज्ञातान्यनेकशास्त्राणि नानाधर्ममतानि च । मध्यस्थवृत्तिना तेन तत्त्वातत्त्वगवेषिणा ॥ अधीता विविधा भाषा भारतीया युरोपजाः । अनेका लिपयोऽप्येवं प्रत्न-नृतनकालिकाः ॥ येन प्रकाशिता नैका प्रनथा विद्वस्प्रशंसिताः। छिखिता बहवो छेखा ऐतिहातथ्यगुम्फिताः॥ यो बहुभिः सुविद्वद्भिस्तन्मण्डलैश्च सन्कृतः । जातः स्वान्यसमाजेषु माननीयो मनीषिणाम् ॥ यस्य तां विश्वतिं ज्ञात्वा श्रीमद्गान्वीमहात्मना । आहूतः सादरं पुण्यपत्तनात्स्वयमन्यदा ॥ पुरे चाहम्मदाबादे राष्ट्रीयशिक्षणालयः । विद्यापीठ इतिल्यातः प्रतिष्ठितो यदाऽभवत् ॥ आचार्यत्वेन तत्रोचैनियुक्तो यो महात्मना । विद्वजनकृतश्चाघे पुरातत्त्वाख्यमन्दिरे ॥ वर्षाणामष्टकं यावत् सम्भूष्य तत्पदं ततः । गत्वा जर्मनराष्ट्रे यस्तत्संस्कृतिमधीतवान् ॥ तत आगत्य सँछम्रो राष्ट्रकार्ये च सिकयम् । कारावासोऽपि सम्प्राप्तः येन स्वराज्यपर्वणि ॥ कमात्तस्माद् विनिर्मुक्तः प्राप्तः शान्तिनिकेतने । विश्ववन्द्यकवीन्द्रश्रीरवीन्द्रनाथभूषिते ॥ सिंघीपदयुतं जैनज्ञानपीठं यदाश्रितम् । स्थापितं तत्र सिंघीश्रीडालचन्दस्य सूनुना ॥ श्रीबहादुरासिंहेन दानवीरेण धीमता । स्मृत्यर्थं निजतातस्य जैनज्ञानप्रसारकम् ॥ प्रतिष्ठितश्च यस्तस्य पदेऽधिष्ठातृसञ्ज्ञके । अध्यापयन् वरान् शिष्यान् शोधयन् जैनवाष्त्रयेम् ॥ , तस्यैव प्रेरणां प्राप्य श्रीसिंचीकुलकेतुना । स्विपतृश्रेयसे चैषा ग्रन्थमाला प्रकाश्यते ॥ विद्वजनकृताल्हादा सचिदानन्ददा सदा । चिरं नन्दत्वियं होके जिनविजयभारती ॥

उदारात्मा क्षमामूर्तिः साधुश्रेष्ठो गुणिप्रियः। यो मम परमः पूज्यो गुरुवत्, शिष्यवत्सलः॥ यस्य शिक्षाप्रसादेन प्राप्ता मया विशिष्टहक्। यया दृष्टो अन्थराशिरीहक् पौरातनो महान्॥ सुगृहीतनाम्नस्तस्य प्रवर्तकशिरोमणेः। कान्तिविजयपादस्य पावने करपञ्चजे॥ अनन्यभक्तिभावेन विनम्रशिरसा मया। पुरातनप्रवन्धानां संग्रहोऽयं समर्प्यते॥



ुरातनप्रबन्धसंग्रहविषयानुक्रमणिका ।

	The state of the s						
707	प्रास्ताविक वक्तव्य			All in			१-२५
	प्रास्ताविक-टिप्पनीसूचितपरिशिष्टसं	प्रह		1 0		२१	4-33
. 2	. विक्रमार्कप्रबन्धाः					A 1.	157
7							
-	§१ विक्रमार्कसत्त्वप्रबन्धः (B.).		****	****	****	••••	\$
	§४ दरिद्रऋयप्रवन्धः (B. BR.)	****		****	****		2
	§५ वीकमद्युतकारप्रवन्धः (B.)		****	••••	****	****	3
-	§६ स्त्रीसाहसप्रबन्धः (B.)	****	****	****	****	• ••••	**
	👀 स्त्रीचरित्रप्रवन्धः (P.)		****	••••	****	****	8
	§८ देहलक्षणप्रबन्धः (В.)	****	••••	****	****	••••	**
	§९ मनि-मनुप्रबन्धः (B. Br.)	****	****	****	****	****	4
	§११ विक्रमपुत्रविक्रमसेनसम्बन्धप्रबन्धः	(B. G.		****	****	****	27
	§१२ विक्रमसम्बन्धे रामराज्यकथाप्रबन्धः	(B.P.C	1 .)	****	****	••••	6
3	§१३ G. संग्रहगतं विकमवृत्तम्		****	· ····	****	****	9
₹.	§१९ सातवाहनप्रबन्धः (P.)		••••	••••	****	••••	88
10	G. संग्रहे सातवाहनसम्बन्धि गाथावृ	त्तम.		****	****	****	- "
3.	§२० बनराजवृत्तम्. (G.)			•	****	****	१२
	§२१ लाखाकवृत्तम्. (G.)				****	••••	27
ч.	§२२ मुझराजप्रबन्धः (P.)		••••	••••	****		१३
ξ.	§२४ श्रीमानतुङ्गाचार्यप्रबन्धः (B. B	.)	****	••••	****	••••	24
	§२८ माघपण्डितप्रबन्धः (Br.)		****	••••	****	****	१७
	§३१ कुलचन्द्रप्रबन्धः (B.)		••••	••••	••••	****	36
9.	§३२ षड्दर्शनप्रबन्धः (B. Br.)		****	••••	****	****	१९
	§३३ नीलपटवधप्रबन्धः (B.)	••••	****	••••	••••	****	11
2.	§३४ मोज-गाङ्गययोः प्रबन्धः (B.)		••••	••••	****		२०
	§३५ भोजदेव-सुभद्राप्रबन्धः (B.)	****	••••		••••	••••	**
le le				Z	****	••••	"
3.	§४७ धाराध्वंसप्रबन्धः (B.)	••••	••••	****	****	4	२३
	§४९ सिद्धराजौदार्यप्रबन्धः (B.)	****	****	= ****	****	4	38
							100

34	. ९५१ मदनत्रक्ष-जयसिंहदेवप्रीतिप्रबन्धः (B.)	. २४
१६	. §५३ श्रीदेवाचार्यप्रबन्धः (Br.)	. 24
319	. ९५६ आरासणीयनेमिचैत्यप्रवन्धः (P.)	. ३०
38	, १५७ फलवर्द्धितीर्थप्रवन्धः (P. Br.)	् ३१
39	. §५८ मिश्रसान्तूप्रबन्धः (B. Br.)	,,,
२०	. §५९ मित्रउदयनप्रवन्धः (P.)	22
		. 33
33	. §६२ मं ० सजनकारितरैवततीर्थोद्धारप्रबन्धः (P.)	38
	. §६३ महं आंबाकारितगिरिनारपाजप्रबन्धः (P.)	,,
2	§६४ P. संग्रहे सोनलवाक्यानि	-
100	§६५ G. संग्रहे सिद्धराजसम्बन्धिवृत्तम्	- 9.
3	९७४ G. संग्रहे हेमचन्द्रस्रितंबन्धिवृत्तम्	30
28	, ९७९ जुमारपालराज्यप्राप्तिप्रवन्धः (P.)	,,
34	, §८१ राणक आम्बडप्रबन्धः (P.)	. 20
24	. ९८३ कुमारपालकारितामारिप्रबन्धः (B. P.)	
30	, ९८४ कुमारपालदेवतीर्थयात्राप्रबन्धः (B.)	83
36.	§८६ कुमारपालपूर्वभवप्रबन्धः (B.)	
39.	§८७ द्वात्रिंशद्विहारप्रतिष्ठाप्रवन्धः (Br.)	
+8	ि ८८ G. संग्रहे कुमारपालसम्बन्धिवृत्तम्	430.
30.	§१०४ अजयपालप्रबन्धः (P.)	
14	§१०६ G. संग्रहगतं अजयपालवृत्तम्	
₹१.	११०८ धर्मस्थेर्य सजनदण्डपतिप्रबन्धः (B.)	
	§१०९ मित्रयशोवीरप्रबन्धः (P.)	
6.9	G. संग्रहे यशोवीरोह्लेखः	
33.	§११२ विमलवसतिकाप्रबन्धः (B.)	
₹8.	8990 - CR Rp 1	. 47
₹4.	§११५ वस्तुपाल-तेजःपालप्रबन्धः (B. Br. P. Ps.)	63
3	8910 D mind	49
110	D sind	
	१९५८ G. ग्रंगरमतं	90
5	\$2\g	
200	\$9,010	- N-1-1
	ा भारत में भारत के जान	44

.35	388	विश्वासंद्यातकविषये न	न्दपुत्रप्रबन्ध	7: (B.)	in-	***			68
31	385	९ G. संब्रहे नन्दनृपोक्लेख	:	****					टर्
· 30.	\$29	• वलमीभङ्गम्बन्धः (J	2.)	**** ****		Louis I	1		
55	. 888	रे G. संग्रहे वलमीमङ्गवृ	तम्.	****		· · · · ·	S	P 447	63
₹€.	\$88	श्रीमाताप्रबन्धः	****	****	****	***	· 5		58
		9 G. संग्रहगतं श्रीमाताः		were bally		****		ī	12
		जगद्देवप्रबन्धः (G.		****	****	••••	2000		64
4 5 3		९ पृथ्वीराजप्रबन्धः (I			****	••••		****	८६
33	3. 10.113	G. संग्रहे पृथ्वीराजवि						••••	603
88		र जयचन्द्रप्रबन्धः		••••					23
		G. संग्रहे जयचन्द्रनृपः	वृत्तम्.	****					90
४२.		00		••••	****	****	****	****	,, -
				••••	****	- ****	****	***	98
		पादलिप्तस्रिरिप्रबन्धः (B.)	••••	••••			****	93
	§२१३	G. संग्रहे पादलिप्तस्वरि	वृत्तम्.	••••	••••	****	••••	****	88
84.	§२१४	अभयदेवस्र रिप्रबन्धः	(B. Br.	.)	****	****	****	••••	94
४६.	§२१६	वाग्भटवैद्यवृत्तम्. (7.)	****	****	****	****	****	98
80.	82.66	रैवततीर्थप्रबन्धः (P	.)	••••	1000	****	****	••••	30
86.	§२२०	देव्यम्बाप्रबन्धः (B.	Br.)	****	****	****	****	****	11
89.	§२२१	उज्जयन्ततीर्थात्मकरणप्र	बन्धः (P	.)	••••	****	****	****	36
40.	§२२२	वज्रस्वामिकारितशृञ्जञ्	योद्धारप्रबन्ध	1: (P.)	****	****		99
42.	§२२४	कपर्दियक्ष-जावडिप्रबन्ध	; (BR.)	****	••••	****	****	200
42.	§२२५	लाखणराउलप्रबन्धः (B. P.)	****	••••	****	- 0000	****	१०१
43.	§२२८	चित्रकूटोत्पत्तिप्रबन्धः (P.))	****	****	****	****	****	१०३
48.	§२२९	श्रीहरिभद्रस्रियवन्धः	(B)	****	****	****	A	****	"
44.	§२३१	सिद्धर्षिप्रबन्धः (B.]	Br.)	****	****	••••	****		१०५
44.	§२३२	श्चान्तिस्तवप्रबन्धः (P	.)	****	****	****	****	****	200
40.	र्श्व	न्याये यशोवर्मनृपप्रबन्धः	: (B. B	R. P.)	****	****	****	****	11
		अम्बुचीचनृपप्रबन्धः (••••	****	- ****		१०८
49.	§२३५	विधिविषये उदाहरणम्.	(P.)	**** 2	****	****	****		१०९
€0,	§२३६	परोपकारविषये उदाहरण	म्. (P.)	••••	****	****		2265
年2.	§२३७	उद्यमविषये उदाहरणम्.	(P.)	5	••••	****	****	****	上對

६२. §२३८ दानविषये उदाहरणम्. (P.)		6 868
६३. §२३९ कर्णवाराविषये उदाहरणम्. (P.)	****	···· ,,
§२४० G. संग्रहगता अविशष्टा प्रबन्धाः • • • • • • • • • • • • • • • • •		११२-११५
§२५८ परिशिष्टम् प्रबन्धचिन्तामणिगुम्फितकतिपयप्रबन्धसंक्षेपः	****	११६-१३४
G. संज्ञकसंग्रहस्थान्ते पातसाहिनामाविः	****	१३५
P. संज्ञकसंग्रहस्यान्तिमोह्नेसः	••••	१३६
पुरातनप्रबन्धसंग्रहस्य अकाराद्यनुक्रमेण पद्यानुक्रमणिका	-	\$\$<-5.18
पुरातनप्रबन्धसंग्रहान्तर्गतविशेषनाम्नां सूचिः		१84-१44
प्रबन्धचिन्तामणिप्रन्थान्तर्गतिविशेषनाम्नां सूचिः		8-6

....

or the

217.4

....

100

11.0

B 1 3 37

11-4

1118

1-12

4 - 2 8

460

12

....

110

पुरातन पवन्ध सङ्ग्रह



प्रणाम्ब्रथ्यव्यस्तिन्त्राचार्यप्रवास्थाकाश्चातातत्त्रम् र्गित्रक्षांगन्।।तस्य वक्रमनागरा एव नामाय रोदानानानारात्तरात्त्यानामानाम्यती। इ० गानम्यातिस्यमानिः अव वेत सिद्धाता निवाक ती। तेन द्यारिवी या गध्यताण निर्धान सम्यागिरितासा १ वर्न वच्या निद्धात्ववानि मर्थम् ताण्यं देशारिताके प्रचारी विता व यो के बाह श्रण्यित धरगात्रात्रीका लकाविकी ज्ञानमाविद्याधरातामगञ्जात्व मुर्जिनामन विगासममं विदेश मानगरी याग ने प्रिक्तियाज्ञाना प्रिक्तिस्य पारादेश पि खत्राष्ट्रिमी लावना नवनिता गताक्त् अपुर परव्यालम् विवादः शिखका संस् स्मागहनाष्ट्रिकारहोत तथायीतं अद्युक्त वाविव ग्रेंध्त कि।मतत्रि। खताकं युक्तां। मादादकं तंत्रताम्ब अव बतार जायोजाता प्तग्रत्या बाद्यस्य नाद्या संग्रंत्र मुगाव्यां माण तिनिक्काना। ततः ग्रञ्जादितवन्त्रस्थ निवस्तिक सार्वयनक समार्केद वात्रस्य समार् प्यु निकोमल्बागिरावता।यांबागि खत्रीयु मार्गेदातायान्या।इकाकातिहमदतागाना पुरुतिस्रज्ञेचाक्रथयतााञ्चशित्वष्टाम् अष्टिनाकालेनागंडवृत्रयवा नारं अनेवास्तमग्नीअवा अन्यतिमायुक्तम् का मनव होता ना ग्राइ इतिना सत्य वा ग्राव व योकेलाश्चनकललालस्यूद्रणीत्यं देशास्य स्थिताच्यस्य विद्यास्य स्थापन्य स्थापन्य स्थापन्य स्थापन्य स्थापन्य स्थापन ति पार्थपावता वालीपिस्स्य विद्याना त्राम्य स्थापन्य स्यापन्य स्थापन्य स्थापन



विवादन विद्यात्मारमधीत् विवाद स्पेतात्मा विवाद स्पेतात्मा विवाद स्वाद स् यवद्यक्षिण अविद । बद्यावविद्यायागाविसम्बितिविद्यायागाविसम्बितिविद्यायागाविसम्बितिविद्यायान्यविद्यायान्यविद्याय लग्वित नेप्यत्वेत्रकार्ति । त्रवत्राण्यानि निर्मास विन्तारमध्ये । सामाध्यान्यास्थान्याः स्वतास्थान्याः स्वतास् वर्गमनः कर्मस्यवप्रविविधिष्टकः देवदास्यविद्यातः॥। अस्यमानामस्यविद्यानस्यकिव्यक्तिम्। वस्यकिव्यक्तिम्। त्या गर्विना प्रतिकार्वितात्र सम्भागाम् सम्भागान् समिता सर्वे वृत्वास्त्राता सम्भाग द्वारा द्वारा सम्भागविता सम विणवाकायिनम्हणान्यस्मापतस्यक्षेत्राच्यात्राममग्रीतिर्वयक्षियायकः।यहिरागरियविष्यतिमस्मानकं कारस्यायनस्या म् अन्तर्राष्ट्र अन्तिया प्रतितिन कर स्थितेन कलेगातस्यस्य प्रियोवनरम् अविकार्वात्राम् सम्बद्धाना स्थापनि स्थित सम्बद्धाः न्धुननस्य अस्वावनाध्वत् तिक्रस्य स्थान्य नामान्यम् । प्रविज्ञाः तेषां मुगोपश्यते करवयमात्री कत्त्वस्य विवायास्य मानित्र विवाय स्थान्य स्थान्य स्थान्य स्थान्य स्थान वेवस्य वस्त्र मानिक्षान्य स्थानिक तेवाया वन्त्राजाणिसंतिनायन्याजाता कर्व उच्चारोपिरजानिते ! ॥निव्यतिकारेन्द्रनेष्ठियायानिरक्तिमभूस्यिविवार्याद्याद्याद्याद्या अतिपिममर्थवामाराजे याज्यालवारतेक् समाविश्वधराजयास्मा स्पपदं जाता यत्रः सत्यां वर्णवारा अर्चना इसपा वर्णवास्त्र त्यां व आर्थलानिहरू भुन्नवरमायानस्यामस्यास्य स्थिति। पर्माद्यामिर्नारकाह्यस्य उर्याधियोगाउरने नहते विकासी नलादक्षेत्र गर्गा बर रज्ञां व अस्यित्र भागता वंगारप्रदिनतर नदा लाउंगार बैजिन आबिजनार सारवम् आविभा इन्छ बस्याप्य नं भारताई वरंत्य सन्ति वाल्य वर्गान विभाव सार्थ महिद्दिरियं लगाउँ मा वितर्भ मासित् अयुक्ता के मानिस्याद्वित्र में निष्ठित्र मानवित्र सन्वादित्र सन्वादित्र सन्व

भिद्रिति देवलवास्या वित्र वेणास्य भागित्व केणास्य केणास्य स्याधिक स्थाधिक स्याधिक स्थाधिक स

मिनादिता रामानं कर्णाना कर्नामान्य कर्णा स्थान कर्णा स्थान स्थान

婚

SDE

गर्भक्तितिपान्न वर्षेत्व रेष्ट्रातं। जाने नष्त्र शतका अन्य गतं। महदः स्व भवस्त्रतं। खनर्षे आन्धरं कपणो जातः। को सुपि न प्रस्ति। खंदरकां वानप शंकारीष्ट्रणीवरास्याद्यअधावराम् विरागलका सकालगानी यम् तरेन्यांचा किता। अष्टिश्व वर्दे मेयाया एवंच एपा किकवी वर्ष ४५ मे प्रसानिक मंत्राप्युत्तधानादिग्रेश्वयेसगानाववद्यंमदेश्वकनानावयःशानकःभंनानाः॥ वित्यासद्वनावक्ववंधः॥ ॥६०॥ ॥ग्रवस्रावस्यप्त व्यवस्थानाम् ।। श्रीवस्थाप्नारवेताः एदितवस्य व्यवस्था मनस्यानावतः वसारः सदनमुक्तिसान्। वस्यस्य मः। यावारातास्य स्या कित्रम्य महाने जात अवविद्या के विकास के विकास के विवास का विद्या साम स्थाप के विद्या साम प्राप्त के विद्या इसिडपानः। श्रमः सप्तासाकश्नाकश्माकः अनाद वीधनाद गा पने प्रकाद स क्रिक्वारखवाधमंत्रीन्द्रिणियो।महादेवोपराय वस्य पातमहत्ती य छ व भागन्य वन हिड् विभाग विनन्त्रमं भागा स्थित नागरि स्थाप प्रतिमानाम रकारवारी पद्मनदेवीने पांकमाहिमाःसममोहर्या। २ धर्महि नि। तेतः एनस्पपं-बीध्यपमदेवानि प्रकाता॥ ४०, णिगमसदेवा ३५ त्या बाहर स्था। इन्। वस्तुपालपनी ललनाहेची निवित्र नाजग समावनाविवासमायंज्ञकतः। इनाचा प्रवाही वाराणिक गानाका श्रीसेव द्याचाना। ग्रामगात मंत्री धवलक मासाद्या। मवनामः कतः। नश्रामाग्रस्यकिकागानि।पदाविमानः सक्तनगोकि वयामीनि।यनानसमाय प सिनितारे बार्सामनियन पराष्ट्रिय हेना का विनयना सामिबाइसं वि नमञ्जो स्गामारनामः स्त्रमधानासि।तस्पादको तर्वारमवारध्यातो स्रातो स्त्रो त्वाप्रमारन वीरमसानो सञ्जा वियक्तो। स्रोपहरा प्रामवास्त्र व्यवित्र क्रिसीस्त्रोहि विकासना लगणियार । तसार पास्तरस्य एद संभायां प्रवित्रः क्रिसेविकः क्रिसीयेक्। विकासीयानिक ना कं। ग्राकारसार विश्वविना सर्वेनोको नसानिर्वेश्वर को पिनविग्रीना तो तक्या प्रसादन विनिना अने तसमको तको नाकन पर मस्यादण व हबारंसेदवानासी। यस कर्यंद्र याण्ड्रतिबिविय प्रकटोशानः तेनाताविनः। कि मधीसमाव्य क्रेनायाः प्रथ्यव्यानिर्वासायमे त्रपदिन।।इतः सक्ते प्रचा तरे व गजानभनः कतः।चालिवादना। प्रचानिवाकते प्रवृत्तः। त्रपत्रकाने विकतः। ग्रवतवाणु प्रसारे नगाना मास

्रीयाविनवर्द्धमाननपःकर्वेत्रारेखः।श्रीसंगवश्यस्यपार्श्वनात्रोभिगृदंबस्य हस्य।यनपभिश्लेदेशंबनस्कलपारणकंकविष्णानि।संश्लीत निर्वतेषुप्रिकाःसार्यभ्रोतास्य पिना एकस्यतारास्त्रलेदेवनमस्त्रत्याच्याना द्विन ष्टाः भ्रमाद्व श्रमादिशादाकाना नाः। जावेनवं निणोगनिष्ये व प्रिच्या। अजानाता मराविद्दर्शामा प्रधारमम्बन्य पृष्चामगवन्य प्राचनावः कर्ने । स्वामान्या राज्यविविद्दावन्य कलान्नाविज्ञयाक ⁹³री किएमी क्रफ बंदोना मन् प्रिनीतः।सर्तीतः।सर्तीतस्व विमेश्मियास्य प्रदेवीनी यः श्रेष्टिन खनास्यित् विनयेनीसा।साऽस्याविकाऽस्या िनदीकिमारेखानां प्रवीकारिसायः प्रिताकारेक्याति। इतित्वकां नारणाञ्चवत्वस्य पाराख्यसदेन्योप्रीतः प्रकरीकाः। इतिप्रावस्त्यपा लप्रवासायकपाष्याकिस्वितावयवः स्वव्याभा स्मञ्जा लक्सरम् वर्षेमा प्रिकंकिन प्रशानिय। प्रकंबशन्पवक मिर्श स्पंदनालचर पिलि किकानां॥ इपद्याना निषा शर्वाना दिनी नामस्वासनानां प्रिधितस्त्राध्य शासपीयनानां द्वियानी सहस्रे वानं सद खेबरिगंब्राणांग्इहिंब्राद्विमित्राविद्यानी का गारमास नानां च्या विभागावाना विस्त्री (तिस्त्रामधानां प्रहःस्वसाधा उरममाना । ६३ यही मही गाञ्च स्वः ज्ञाना निलक्षा स्वयास्त्र नि मानवानां। श्रीवस्त्र पालस्यक्तसञ्चयात्रासंस्वोद्य मानंदकरी उतानां॥ ॥ व्यक्तिया ब्रस्त ने का कि विजन जननी नापनी ब्रस्ट प्री भागो श्रीबस्यणलंककालयनियमाकायीमन विवेद्या योन्यकाय करार सक् लख्यतमानाश्चनासायिनोन्धस्माब्यदिन वनेतनानिख्य निवायकणोयाद्वयियाए प्रदिश्चास्मिदासादिपिवप्रिमगङ्ग्यनागिथवादः इ द्याचा न्छ पानं तितिधवसनिवंबोधसन्यार वणा अस्या अस्या अस्या केष्ठक वज्ञ नितः को विचापन्य दोषोवः वोषः वाष्ट्रनोकं छण उता नव नास्लतो नानीनायः॥१० खर्वस्य स्यान्यस्य निकालम् वियमेषिणो खरा। या तस्य पालन यतो वसम्यति हत्यस्य स्था । ११को विकेद निने देवले निविचनाधानप्रनापः अनः प्राधिका मिपिनियमर सिमहका नुष्टिने भूनाधिना। प्रकानावयन। हटानमभ संवक्षी देन्त्रमाद अस्तिवयना। सिय बार गराः श्रीम्खुपान प्रिसं । १ शनद्वेप सासान् रे ए। लक्नीनंदस्तां पतिकलसता विश्वं बसी कर्वता यक्ती पर ना सुनी खुरू माचि। वसनां ना प्रमा संस्

ने दिनाक्यन निवनीन सख्यस्य स्थाय क अवरंगशत्या साहन्। सन क्न संगाक दिव्या हप् सकताय विकामानाना हेर्नाल प्रसावा अनीह च-छुन्वी। १ उपानाकं ख्रुद्धे विसेन स्ट । एका न प्रचान स्रमना का चेपना का मर्दान प्याका प्रदेश । इस स्वापना विभाग व नागर्पनयुक्तप्रास्त्रावेसोरिनीः चित्रधनिष्ठासम्भागात्रामः अवस्थानीय गणिनानितः। इतिस्यानस्य स्वयः । । १६॥ । । अस्य स्तानोर्धस्यः । । वर्षास्यन्तिसम्बद्धनीत् । इतिसेनोपप्यस्यतम्। दिद्यस्यानिस्यस्यार्थस्य विद्यस्य गणिनस्य प्रति जी हर्नकारो। अस्त्र भार विकासी त्यान स्वार प्रेष्ठ से ध्या प्रप्त । साधिना प्रेस्ति विकास विचार का साधिना स्वार ली लाक लिनः जिला से गांडा एउत् गडक निप्रनीन गांध मजीव नविन:योगनायव नानगरसन्त्रेश्रिक्यकवित्रंदशभद्दशक्तात्रसाभवनसम् दम्बायन में इस्प्रधावानि देपे विणा ।। ५० मानियाशोपनिवासिक सहित्यनेवानिकालिक अगानितिकाले (भावकारकार सम्मानारकष्ट्रिक्व)।।ध्याविकारम ा क्रिकार्गितपुरम्बाङ्गनम्भारम्गात्वस्यात्वास्त्रम्भकंगार्द्धनाद्यः । स्टिन्गामानसम्बद्धनाप्रमा। स्ट्यादकंशिनसंग्रितवस्य निवस्य निवस्य निवस्य । नोपन्दक्षनिविष्यास्त्रात्वस्य स्ट्रिपोर्द्धनिस्य रक्तास्मादनसम्बद्धन्तम् सम्बद्धनम्भारम् वदनसम्बद्धाः स्ट्रिससम्बद्धाः स्ट्रिस्सम्बद्धाः स्ट्रिस्सम्याः स्ट्रिस्सम्बद्धाः स्ट्रिस्सम्बद्धाः स्ट्रिस्सम्बद्धाः स्ट्रिस्सम्बद्धाः स्ट्रिस्सम्बद्धाः स्ट्रिस्सम्बद्धाः स्ट्रिस्सम्बद् जिक्तगिनिष्यवाङ्गनेसारंगा। स्थापवास्त्रम् कंग्रीयद्य साध्य तात् चरुशायश्चनिकम्बाग्रहीत्वगमश्चामवरमातावित्वास विज्यात्वस् विसर्पारात्यसाति।एकस्त्रासनिचंद्रप्रशासावि जारणा अस्य । चारणामा न्ह्रस्याचान् । धारारान् धारणाच्यान् परिचारमाणा प्रभगारं नारास्योक्तानान् सद्यावणकान्सवासा त्रामनानान्। य्रानिलीत् पास्पनतान्यस्थानकः। यष्ट्रम् प्रनामकःभाग्यमान्त्रस्यदेभद्नवकःसाणेवाध्याकानावीपर्देष्ट्रासः। अन्य तस्यापिति चना सन्तात्वानका मितना। मत्रत्रोषिताचे हिन्याचकामाच्यामाचनम् यत्रवारणावदेशस्य असारकार

स्थानिक्षणितास्य विकास स्थापना विकास क्षेत्र के स्थापना के स्थापना किया है स्थापना के स्थापना के स्थापना के स् स्थापना के स and a manufacture of the second and a second The state of the s नाम नामिमार्ति संपालस्विक विकास स्थापनिक ति । वश्योति । वश्यो दिन या वश्योति । वश्योत का निवासिक व्यक्तिरीतिनिवन्द्रतयानाः विकासीर्वस्ता भाव प्रकारकः विभिन्नाधानस्तरे । विभन्नाधानस्तरे । विभन्नाधानस्तरे त्रामः क्रियानास्त्रम् प्रतिकारणाज्यस्य स्थापः । त्रामः क्रियान्य स्थापः स्थापः स्थापः स्थापः स्थापः स्थापः स् १९ १६६ - विक्रियः स्थापः स्यापः स्थापः स्यापः स्थापः स्थाप विभागताम् । विभागताम् । त्राव्यविभागताम् । विभागताम् । विभावतार । एकाम्या व इंट्रेमेन्स्य ३२ ग्रीप्रेस्ट मा अन्य स्थापियायवरिक वातर छावा द्वासार व देवता उत्तर समार विस् व व्यवस्थ हिन्तमात्राहित के तथ तथितात स्थलित । विशापन के निर्माण अस्तितात्राचानस्थित हिन्दान्य वर्षाहिताल । निर्माण के निर्माण स्थलित स्थलित स्थलित । विशापन स्थलित स्थलित स्थलित स्थलित स्थलित स्थलित स्थलित स्थलित स्थलित

विद्यालया विद्यालया के प्राप्त के विद्यालया के किया है जिस के किया के किया के स्थाप के किया के का किया के किया ।। विभ्यतिश्रान्तरणात<u>स्य नवश्रं</u>जिनस्याद्वास्त्रस्य अलब्बि नेवानतिलयणुग्नुस्त्रः।। श्रेद्धायात्रस्य मेरीच्याकतस्य प्रशास्त्रस्य । स्थापन्य प्रशास्त्रस्य णिक सबके दिनो स्वान्य विकास के प्राचना करणा है जिसके के साथ के स्वान्य के स्वान्य के स्वान्य के स्वान्य के स्व तात्वाद्रभीश्रीसाम्भविष्ठिनेविदेव क्रमान क्ष्माचार्य है । क्ष्माचार्य क्ष्माचार्य क्षमाचार्य क्षमाचार्य क्षमाचार्य क्षमाच्या विश्वास्त्र क्ष्माच्या क्षमाच्या क्राप्य क्षमाच्या क nonत्वन स्पेन मिने चंपरीरे सेन्यकंतन स्वतंत्वे अस्त्रनं वायवानं समान नापर्वे निर्माणाण्य मिन्नामं वात्वर स्वतंत्र विकास मान्यान स्वापना विकास विकास विकास विकास विकास के व विद्यामार्थे न न्यादिनकार्यं करा स्ट्रायालेक में वर्तनिक मसरिए कि बविधना क्रियान महिना विश्वास्थान स्थापन स्थाप यणकार वीजा लाम ग्रमां वाहें के रचरते मंगून त्रणार रच त्रामण के दिश्यों है । इसी बना इसमारियाम निवास से बहर कर व वाग्यवनावित्राजीतिक भनामभावाजामाना ननावित्वा अल्पका च्यानिक तार्वी समित्रमा नायितायतीयाच्याना व्यवस्था विश्वविद्या विश्वविद्या विश्वविद्या विश्वविद्या विश्वविद्या बरंदिकाव्यागवयात्र नातिम्दास्यामागगवन्ये स्ताववासा वान्यकारिक्कमा।रभिष्यलं प्राथसक्वाउने शेक्षस्य गरेशस्त्रिक ये स्वापारिले जेल्ल जनात्यस्यागवेषिक्षं देवदानादि। ममान्यपुर्वे क्रिनेनाना बहिन कार्यामिता वृत्रे। मनाधिकं वृत्यं क्षणां क्षणां विश्वास्त्र शती। महमाया विश्वास विश्वास विश्वास विश्वास विश्व दुता सम्माणने वक्र व्यक्ति । व्यासम्बद्धाः महिकातायव द्याताण्याने रिष्ट्रयणार्थात् । व्यासम्बद्धाः महिकातायव द्याताण्याने रिष्ट्रयणार्थात् । काराणदेवसमा राज्ञित्व वक्षाताण्यात् वक्षाताण्यात् ।

विकासका सम्बद्धान्त्रमञ्जूषा विकास स्थान । विकास स्थान स

अवविद्यालिक वर्षा अञ्चला विविधान स्वाधी समागत याचितराया ताच्या निवासी समाज्ञ वर्षा विकार मानव प्रविधानिक वर्षा विवास वर्षा विवास वर्षा विवास वर्षा विवास वर्षा विवास वर्षा वरम वर्षा वरम वर्षा वरम वर्षा वरम अधिपाराद्ध व जान्य विकास स्वासी में कार्य के विकास से कार्य कार्य के जाने के जाने के जाने कार्य भाषाचात्र सः स्थानम् तथाः साराज्यस्य विश्वस्य स्थानम् । स्थानम् स्थानम् स्थानम् स्थानम् स्थानम् । स्थानम् स्थानम् स्थानम् स्थानम् स्थानम् । स्थानम् स्थानम् स्थानम् स्थानम् स्थानम् स्थानम् । स्थानम् स्थानम् स्थानम् । स्थानम् स्थानम् स्थानम् स्थानम् । स्थानम् स्थानम् स्थानम् स्थानम् स्थानम् । स्थानम् स्यानम् स्थानम् स्थानम् स्थानम् स्थानम् स्थानम्यानम्यम् स्थानम्यानम्यम् स्थानम् स्थानम् स्थानम् स्थानम्यम् स्थानम् स्थानम् स्थानम्य वामार्विक्षक स्विभित्र व वा सेट्र इंदेरिकोसाम्ब्रीमबले कालाल स्वस्वक साराज्य सर्व कालिन कुछ विविधित्व राजिक काला किया

६— ब्रुकोनामध्यनीव रजेकातास्त्रते (त्रावसम्बद्धाः सरीसते दिवपत्तिः त्रेपतिः) एक रति छुङ्यात वास्त्रविद्धाते ।

अस्टेंह अशोषध्येतसम्बद्धाराजस्य विक्वश्रवणिवरामभ्यायति विक्वस्थिति विक्वश्रवणिकाः प्रतिक्रीतिकाः अस्ति । विक्रश **णसमित्रास्यो हेर कर्योत्रकोलीलस्त्रिमालिकहित्यालिहित्रकोलिसामानिकालस्त्रोणस्क्रीतस्त्रीहला अर्थादकार्यालाल कर्याल्यालालिहित्यालिहि** कं**रकार्यामा नात्रार्वार्वाति वेतरे प्रमा**चनवा**वक्री** यूनरूपाले कावस्ताल कावस्ताल कावपालिक विकास विवास विवास कावस सारा**म समाने सर्वेकर के प्रकारिक प्रभारिक के कि**र्वेकर किर्देश के लिए के समित को स्वीत कुछ के असे प्रकार के उने ियम्बन्धानं माणुरानान्तं वर्षस्यवदारिकान्ये द्वे स्टब्स्यानामान्यवद्यीयात त्यासारीप्याम वात्यवद्यारिकारियाति द सप्रकारवद्यानामान्यमानारामदश्यार आह्वात्ववद्यार स्वितान्तं विश्वाति ते छतः सप्यक्तः १९ व त्यानाम् स्वातिकार्यत्यार स्वतः । वर्षः २ वरस्यवाण्याते सुर्वित स्वतायसर्वातः सम्बद्धाः १ स्थानाविकार्यकार्यात्यस्य वतः स्वतः वतः स्वतः स्वतः स् १९७२ व समाजने इस सम्माजने बुत्र स्तित सःसम्बर्धामा सम्बन्धने के प्राचीत्र गति इस्त्रातः । इतिबन्धित स्वतिकान स वस्त्रात्तरे वक्ता समाजने दिविद्यास्त्र करताल स्वत्राण सङ्गणकालै कामकणित्र प्रिक्त विस्तृति हो स्वतिकार स्वतिक वाक्त्रकाम् अवानिते र नामने चे र स्था प्रिय वापविषाः वार्तान व्यवस्थान । वार्तान वार्त



G संग्रह-आदि और अन्तके पृष्टों की प्रतिकृतियां।

प्रास्ताविक वक्तव्य।

§ १. प्रवन्धैचिन्तामणिसम्बद्ध पुरातनप्रबन्धसङ्ग्रह

रातन-प्रबन्ध-सङ्ग्रह नामका यह प्रन्थ प्रबन्धचिन्तामणिके द्वितीय भागके रूपमें प्रकाशित किया जा रहा है, इसिलये इसका पूरा नाम हमने 'प्रबन्धचिन्तामणिसम्बद्ध-पुरातनप्रबन्धसङ्ग्रह' ऐसा रखा है।

प्रवन्धचिन्तामणिके सम्पादन करनेका जबसे हमने सङ्कल्प किया, तभीसे उसके साथ सम्बन्ध रखनेवाली. साहित्यिक और ऐतिहासिक, सब प्रकारकी यथाप्राप्य साधन-सामग्रीके सङ्ग्रित करनेका प्रयत्न शुरू किया। भिन्न भिन्न प्रकारके और भिन्न भिन्न विषयके जैन प्रन्थोंका अवलोकन करते हुए, हमने देखा कि कई उपदेशात्मक और कथात्मक प्रन्थोंमें भी इस विषयकी कितनी ही सामग्री छुपी हुई पडी है। कई प्रन्थ, जिनका मुख्य विषय तो है आचारप्रतिपादक, लेकिन उनमें भी, इस प्रकारकी कुछ इतिहासोपयोगी बातें लिखी हुई मालूम दी । इसलिये हमने सोचा कि यदि यह सब सामग्री, चाहे उसमें कुछ अधिक विशेषता या नवीनता न भी हो, उन उन प्रन्थोंमें से चुन चुन कर एकत्रित की जाय और उसे एक संप्रहके रूपमें प्रकट कर दी जाय, तो इस विषयके विद्वानों और विद्यार्थिओं-दोनोंको संशोधनादि कार्य करनेमें बहुत कुछ सरलता और नवीनता प्राप्त हो सकेगी। इस विचारसे प्रेरित होकर, हमने उन उन प्रन्थोंमेंसे इस सामग्रीको, एक एक करके चुनना ग्रुरू किया। हमारी पूर्व कल्पना थी कि इस सामग्रीको, प्रबन्धचिन्तामणिके परिशिष्टके रूपमें, उसी ग्रन्थके अन्तमें, दे दी जायगी। लेकिन एकत्रित करते करते हमें वह सामग्री इतनी विस्तृत माछ्म देने छगी कि जिससे उसको, प्रवन्धचिन्तामणि ही जितने बडे, अलग बन्ध के रूपमें, दूसरे भागके तौर पर, निकालनेका निश्चय करना पडा। उस निश्चयानुसार, प्रस्तुत द्वितीय भाग उस सामग्रीसे समलङ्कृत होता; लेकिन पाठक देखेंगे कि इसमें वह सामग्री भी नहीं है। इसमें जो सामग्री उपिथत की जा रही है वह उससे भिन्न संग्रह प्रन्थोंमेंकी है; और वह सामग्री, अब इसके बादके प्रन्थमें, तीसरे भागमें, प्रकाशित होगी। ऐसा होनेमें कारण यह है कि-ज्यों ज्यों हम इस विषयमें अधिक खोज करते गर्ये त्यों त्यों हमें कुछ और भी अधिक उपयुक्त और खतंत्र बन्थात्मक कितनीक सामग्री प्राप्त होने लगी। पाटण, पूना, भावनगर, अहमदाबाद, राजकोट वगैरह स्थानोंसे हमें कुछ ऐसे पुराने अन्थ मिल आये, जो खास कर प्रबन्धविन्तामणि-ही-के ढंगके स्वतंत्र संग्रहरूप मालूम दिये, लेकिन जिनमें कर्ता वगैरहका कोई उल्लेख नहीं पाया गया। इनमें कोई कोई संग्रह तो बहुत पुरातन मालूम दिये-शायद प्रबन्धचिन्तामणिकी रचनासे भी पुरातन। जब हमने इन संग्रहोंका परस्पर मिलान करके देखा तो, इनमें कुछ प्रकरण तो ऐसे मिले जो एक दूसरे संग्रहके साथ शब्दशः साम्य रखते हैं। कई प्रकरण परस्पर न्यूनाधिक वर्णनवाले माल्यम दिये। कोई प्रकरण किसीमें कुछ पाठ-फेर वाला है, तो कोई किसीमें कुछ भाषा-भेद वाला है। और, कितनेएक प्रकरण एक दूसरेसे सर्वथा भिन्न भी हैं और नवीन भी हैं। इनमें कोई कोई प्रकरण ऐसे भी दिखाई दिये जो प्रबन्धचिन्तामणिगत उस प्रकरणके साथ सर्वथा एकता रखते हैं। ईंछ प्रकरण ऐसे हैं जो प्र० चिं० में तो नहीं हैं लेकिन प्रबन्धकोशमें हैं। और कोई कोई प्रकरण प्र० जिं० या प्र० को० की पूर्तिके लिये ही लिखे गये हों ऐसे मालूम देते हैं।

• इस प्रकारके इन संप्रहों में से, हमने कुछ पूर्ण और कुछ अपूर्ण ऐसे समूचे ५ संप्रहों का प्रस्तुत प्रन्थके छिये, पृथक् तारण किया है। इनमें के प्रायः बहुतसे प्रबन्धों या प्रकरणों का सम्बन्ध, किसी-न-किसी रूपमें प्र० चिं० के साथ है। जो कुछ थोड़ेसे प्रकरण ऐसे भी हैं जिनका सीधा सम्बन्ध उक्त प्रन्थके साथ नहीं है, तथापि उनका रंगढंग और पु॰ प्र॰ प्रस्ता॰ १ ्विषय-वर्णन उसी प्रकारका है। इसिलये हमने उनको भी, अलग न निकालकर उनके सजातीय प्रकरणोंके साथ, इस संप्रहमें शामिल ही रखना उपयुक्त समझा है। इनमेंसे कुछ तो ऐतिहासिक प्रकरण हैं, जो, चाहे जिस दृष्टिसे महत्त्रके ही गिने जाते हैं; और कुछ लोककथात्मक हैं जिनका विशेषत्क, हमारे देशके प्राचीन सामाजिक संस्कार और लौकिक व्यवहारकी दृष्टिसे, अवदय ही अनुशीलनीय है।

§२. संग्रह ग्रन्थोंका सामान्य परिचय

पाठक देखेंगे कि, प्रस्तुत प्रनथके, प्रथम पृष्ठ पर, शिरोलेखके नीचे ही चतुष्कोण रेखाके भीतर

[P. B. Br. G. Ps. सञ्ज्ञकसङ्ग्रहग्रन्थेन्यः सङ्गृहीतः]

ऐसी पंक्ति हमने लिखी है। इसका अर्थ यह है कि-इस पुरातनप्रवन्धसंप्रहमें जितने प्रवन्ध या प्रकरण हैं, वे, जिनको हमने P. B. Br. G. Ps. ऐसी संज्ञा दी है उन पुराने लिखे हुए संग्रह प्रन्थों परसे सङ्कलित किये गये हैं। इन संग्रहोंमें ये सब प्रकरण या प्रवन्थ, उस कममें नहीं लिखे हुए हैं जिसमें हमने उन्हें यहां छपवाया है। यहां पर जो इनका कम दिया गया है वह प्रवन्धिचन्तामणिके अनुसरणके रूपमें है। प्र० चिं० में जो प्रवन्ध या प्रकरण जिस कममें आया है उसी कममें हमने इन प्रकरणोंको मुद्रित किया है। यह भी ध्यानमें रहे कि ये सब प्रकरण सभी संग्रहोंमें नहीं मिळते। कोई प्रकरण एक सिस संग्रहमें मिळता है तो कोई किसीमें। कोई कोई प्रकरण एक शिव संग्रहमें भी मिळता है। एवं कोई प्रकरण एक संग्रहमें एक ढंगसे लिखा हुआ मिळता है तो दूसरे संग्रहमें दूसरे ढंगसे। इस प्रकार इन ५ संग्रहोंमें परस्पर जितनी समानता है उतनी ही विभिन्नता भी है। एक हिसाबसे ये न एक-कर्नक हैं, न एक-कालिक हैं, न एक-कालिक हैं। तथापि हैं ये सब समान-उद्देशक और समान-विषयक। इनमें से कौन प्रकरण, किस संग्रहमें मिळता है उसका ज्ञापन करानेके लिये, प्रत्येक प्रकरणके शिरोलेखके साथ, P. B. G. आदि तत्तत संग्रहका निर्देशक सङ्कताक्षर दे दिया है। एकाधिक संग्रहमें जो कोई प्रकरण मिळा और यदि उसमें कुळ पाठ-भेद प्राप्त हुआ तो उसे हमने या तो पाद-टिप्पनीमें उद्धत कर दिया है, या प्रचळित पंक्ति-ही-में, चतुष्कोण रेखावृत करके, प्रक्षिप्त कर दिया है। अर्थानुसन्धानका ठीक विचार कर, जहां जैसा उचित माळ्म विचा वहां वैसा किया गया है।

§ ३. संग्रह ग्रन्थोंका विशेष परिचय

(१) P संज्ञक संग्रह — संघके भण्डारके नामसे पहचाने जानेवाले पाटणके प्रसिद्ध जैन प्रन्थागारमेंसे प्राप्त ३० पन्नोंका यह एक बहुत जीर्ण-शीर्ण प्रन्थ है। वर्तमानमें, इसकी प्राप्ति हमें, विद्याविलासी साहित्योपासक मुनिवर श्रीपुण्यविजयजीके द्वारा हुई है इसलिये इसका संकेत हमने, पाटण और पुण्यविजयजी दोनोंकी स्मृतिमें, P अक्षरसे किया है। इस प्रतिका दर्शन सबसे पहले हमको कोई सन् १९१४ – १५ में हुआ था जब हमने पाटणके उक्त भण्डारके सब प्रन्थोंका, एक एक करके, सूक्ष्म अवलोकन किया था और प्रशस्ति आदि ऐतिहासिक साधनोंके, सर्व प्रथम, टिप्पन करने शुरू किये थे। यह प्रति उस समय, उक्त भण्डारमें यों ही अनुद्धित्वत-सी और अज्ञात-सी पडी थी । हमने इस पर रेपर वगैरह चढाकर और उस पर प्रवन्धसंग्रह ऐसा नाम लिख कर व्यवस्थित रूपसे रख दिया। तब हमें यह खयाल नहीं था कि भविष्यमें, किसी दिन, इस प्रवन्धसंग्रहका हमारे ही हाथसे, ऐसा समुद्धार होगा। हमें इसकी स्मृति भी नहीं रही। पीछेसे, जब हमने इस सिंघी जैन प्रन्थमालाका प्रारम्भ किया और उसमें प्रवन्धचिन्ता-मणि-ही-को पहले हाथमें लिया तब, हमारी प्रार्थना पर उक्त मुनि श्रीपुण्यविजयजीने और और प्रन्थोंके साथ इस संग्रहको भी भेज दिया, जिसकी प्राप्ति हमें एक बहुमूल्य रक्षके जितनी प्रीतिकर प्रतीत हुई। इस संग्रहको मुख्य रख कर ही हमने इस प्रसावित संग्रहको संकलन करना आरंभ किया।

्र इस प्रतिके कुछ ३० पन्ने हैं। पहले पन्नेकी पहली पूंठी बिना लिखी—कोरी रखी गई है। दूसरी पृंठीके दाहिने मागपर ३ इंच चौडाई और ४ है इंच लंबाई वाला, जिनप्रतिमाका एक बहुरंगी चित्र आलेखित है। पाठकोंको

इस चित्रके देशनका प्रत्यक्ष लाभ हो इसलिये हमने, पन्नेके अतिरिक्त, चित्रकी पूरी नापका भी एक हाफ्टोन् ब्लॉक अलग बनवा कर उसकी छवी इसके साथ दे दी है। तदुपरान्त, १ ले, ११ वें और अन्तिम ३० वें पन्नेकी द्वितीच पृष्ठि (पूंठी) के चित्र, भी इस साथमें दे रहे हैं जिससे इस प्रतिके अक्षर, पंक्ति और लिखावट अप्रदिकी. पाठकोंको प्रत्यक्षवत् , ठीक ठीक कल्पना हो सके । प्रतिके पन्नोंकी लंबाई प्रायः १२ इंच और चौडाई ४ ईंच है। पंक्तियों और अक्षरोंका परिमाण सब पन्नोंमें एक-सा नहीं है। किसी पृष्ठ पर १३ पंक्तियां, किसी पर १४. किसी पर १५ और किसी किसी पर १९-२० तक हैं। अन्तिम पृष्ठपर लिपिकर्ताने जो अपनी परिचायक पंक्ति लिखी है उसे हमने प्रन्थान्तमें, पृष्ठ १३६ पर, मुद्रित कर दिया है। इस पंक्तिके लेखसे मालूम होता है कि-'संवत १५२८ वें वर्षके मार्गसिर मांसकी १४ - विद या सुदि सो नहीं लिखा - सोमवारके दिन, कोरण्ट गच्छके सावदेव सरिके शिष्य मिन गुणवर्धनने, मिन उदयराजके लिये इसकी प्रतिलिपी की'। लेकिन प्रतिका साद्यन्त अवलोकन करने पर ज्ञात होता है कि यह पूरी प्रति मुनि गुणवर्धनकी लिखी हुई नहीं है। इसकी लिखावट दो तीन तरहकी मालूम दे रही है। प्रथम पत्रसे लेकर १५ वें पत्रके प्रारम्भकी दो पंक्तियों तककी लिखावट किसी दूसरेके हाथकी है - और फिर उसमें भी दो तरहकी कलम माल्म देती है- और उससे आगेकी सब लिखावट मुनि गुणवर्धनके हाथकी है। प्रतिका लेख कुछ अञ्चवस्थित और अशुद्धप्राय है। कहीं कहीं ब्रुटित भी है। कई स्थलों पर लिपिकर्ताने अक्षरों तथा पंक्तियोंकी पूर्तिके लिये '..... 'इस प्रकारकी अक्षरशून्य कोरी जगह रख छोडी है। ७ वें पन्नेकी दूसरी पृष्ठि पर तो पूरी ४-५ पंक्तियां ही इस प्रकार खाली रखी हुई हैं। इससे दो बातें सूचित होती हैं - एक तो यह कि यह पूरी प्रति एक साथ और एक हाथसे नहीं लिखी गई; इसका प्रारंभ किसी दूसरेने किया और समापन किसी दूसरेके हाथसे हुआ। दूसरी बात यह है कि इसका मूल आदर्श भी कोई एक ही संग्रह न होकर जुदा जुदा दो तीन संबह होने चाहिए। सिवा इसके, मूल आदर्शींमेंसे कोई प्रति ऐसी भी मालूम देती है जो बुटित या खण्डित हो। ऐसा होना यह ज्ञात कराता है कि वह प्रति तालपत्रात्मक होनी चाहिए और उसका कुछ अंश नष्ट-श्रष्ट और कोई पत्र विलुप्त हो गया होना चाहिए। तालपत्र लिखित पुरातन प्रनथोंमें प्रायः ऐसा होता रहता है। उनके उद्धार खरूप, जो पीछेसे कागज पर प्रन्थ लिखे गये, उनमें ऐसे खण्डित या ब्रुटित भागकी सुंचना करनेवाले अनेक रिक्त स्थान, जिस उस प्रनथमें देखे जाते हैं। इसके उपरान्त, यह प्रति भी बहुत जीर्ण दशाको प्राप्त हो गई है और प्रायः प्रत्येक पन्नेका, वार्ये ओरका, उपरका कुछ हिस्सा, जो या तो आगसे कुछ जल गया हो या पानीसे कुछ सड गया हो, नष्ट हो रहा है। इससे हमको तत्तत् स्थलोंपर कुछ अक्षर या शब्द और भी अधिक छोड देने पडे हैं। पृष्ठ ११.१४.३४.३५.४१.४८.५० आदि पर जो पंक्तियोंके बीच बीचमें'ऐसे अक्षरच्युत बिंदुमात्र वाले पंक्लंश रखे गये हैं वे इसी बातके सूचक हैं। इस प्रतिका आयुष्य अब बहुत नहीं है। इसके लिखनेमें जो स्याही प्रयुक्त हुई है उसमें क्षारकी मात्रा बहुत अधिक होनेसे वह कागजको पूरी तरह खा गई है। जितनी दफह इसे हाथ लगाया जाता है उतनी ही दफह इसके कागजके दुकडे खिरते जाते हैं और पन्ने टूटते जाते हैं। सिर्फ प्रारम्भके ५-७ पन्ने कुछ ठीक हालतमें हैं; पिछले पन्नोंकी स्थिति उत्तरोत्तर खराव हो रही है।

§४. P संग्रहका आन्तर परिचय

हम उपर लिख आये हैं कि, प्रस्तुत प्रन्थमें प्रबन्धों या प्रकरणोंका जो कम दिया गया है वह मूल संब्रहोंके कममें नहीं है। यहां पर हमने उनको प्र० चिं० के कममें मुद्रित किया है। मूल संप्रहोंमें, वे, इससे भिन्न रूपमें, आगे पीछे; लिखे हुए हैं। प्रस्तावित संप्रहका कम कैसा है, और कौन प्रकरण किस पन्नेमें, कहांसे प्रारंभ होता है और कहां समाप्त होता है, इसका दिग्दर्शन करानेवाली सूची नीचे दी जाती है जिससे संप्रहगत प्रवन्धकम, और उसका आन्तरिक परिचय भी, पाठकोंको ठीक ठीक हो जायगा।

P संज्ञक प्रतिमें लिखित प्रकरणानुकम प्रस्तुत प्रैत्थमें मुद्रित-क्रम पत्र. पृष्ठि. पंक्ति प्रवन्धांक प्रकरणांक १ **पादलिप्ताचार्य प्रवन्ध { प्रा° १२ १ ० ० ० ० ० ० ० ० ० ० ० ० ० ० ० ० ०	प्रष्ठांक • • • • •
३ *रवश्यवस् गवन्त्रः (प्रा॰ ३११४	- 0-/
३ *रज्ञास्त्र रज्ञास्त्र (प्रा० ३११४	
7 700201440 8444	96-99
उ जनगन्तनीर्धभारमकरणा पठ प्रा॰ ५२६ ५० ६२२१	10 11
४ मुञ्जराज प्रबन्ध	23-24
(स॰ जार ६	
५ अमारिविषये कुमारपाल प्र० र्मा॰ १००० १०० ५ २६ १८३	४१-४२
६ राणकआंबड प्रबन्ध कि १ १ १ १ १ १ १ १ १ १ १ १ १ १ १ १ १ १	38-88
७ रामराज्योपरि कथा [†] शिष्ठ १०१ १ *†१ §१२	6-6
८-९ रैवततीर्थोद्धार तथा पाज प्रबन्ध रमा १०११ २२-२३ १६२-१६३	38
१० आरासणसत्कनेमिचैत्य प्र० र्याः १०र१० १७ १५६	30-32
११ रैवततीर्थ प्रवन्ध र्म र्था ११ ११ ११ ११ ११ ११ ११ ११ ११ ११ ११ ११ ११	99
१२ फलवर्द्धिकातीर्थ प्रबन्धः क्षि ११२३ १८ १५७	38
(00 3 00	25-63
The state of the s	09-32
	2-200
	89-48
१७ सीतवाहन प्रबन्ध र्भा॰ १६१ ६ २ ११९	28
१८ ज्ञान्तिस्तव प्रबन्ध र्म १६ १६ १२३२	200

^{*} ये दोनों प्रबन्ध, राजशेखर सूरिके प्रबन्धकोशमेंके हैं। पिछले प्रबन्धके अन्तमें उल्लेख है कि 'रत्नश्रावकप्रबन्धो विसर्जिताः (तः ?) श्रीराजशेखरसूरिभिर्मलधारिगच्छीयैर्विरचितः।' प्रबन्धकोशमें आ जानेसे अर्थात् ही हमने इनको प्रस्तुत प्रन्थमें स्थान देना अनावश्यक समझा।

† इस कथाके बाद, सिद्धराजकी स्तुतिविषयक निम्नलिखित सुप्रसिद्ध श्लोक लिखा हुआ है-

महालयो महायात्रा महास्थानं महासरः। यत्कृतं सिद्धराजेन क्रियते तन्न केनचित् ॥१॥

इसके बाद वे दो तीन पंक्तियां लिखी हुई हैं, जो प्रस्तुत संग्रहमें, विक्रमप्रबन्धके § १० वें प्रकरणमें हमने (पृष्ठ ५, पंक्ति १९-२३) दी हैं। इसमें प्रारम्भकी पंक्ति 'अन्यदा एकं पण्डितं द्विजं कणावचयं कुर्वाणं विक्रमादित्यः प्राह-।' इस प्रकार हैं; और दोनों गाथाओं में कुछ थोडासा पाठ-मेद भी नजर आता है। इस प्रतिमें ये गाथाएं इस प्रकार हैं—

निअउअरपूरणिम्म असमत्था किं च तेहिं जाएहिं। सुसमत्था जे न परोवयारिणो तेह(हिं)वि न किंचि॥१॥

तेह(हिं)वि न किंचि भणिए विक्रमराएण देवदेवेण। दिन्नं मायंगसयं एगा कोडी हिरण्णस्स ॥ २॥

*† विक्रमके साथ सम्बन्ध रखनेवाले, जितने प्रकरण हमको इन संप्रहोंमें मिले, उन सबको हमने, इस प्रन्थमें, 'विक्रमप्रवन्ध' ऐसा एक मुख्य बिरोलेख दे कर, उसके अवान्तर प्रकरणोंके रूपमें सङ्कित किया है। इसलिये यह 'रामराज्योपरि कथा'वाला प्रस्तुत प्रतिमेंका प्रकरण मी, इस १ संख्यावाले मुख्य प्रवन्धके अन्तर्गत एक प्रकरण-खण्ड है। ऐसा ही आगे भी वस्तुपाल आदिके प्रवन्धमें समझना चाहिए।

🙏 इस प्रबन्धके बाद, एक वह श्लोक लिखा हुआ है जिसमें, सिद्धराजने देवस्रिके कथनसे सिद्धपुरमें, एक चतुर्द्वारवाले जैन मन्दिरके

बनवानेका उल्लेख है। प्रस्तुत प्रन्थमें, वह श्लोक (क्रमांक ९६) पृष्ठ ३० पर, मुद्रित है।

- 0		
प्रास्ताविक	वक्ताव्य	1
- 40 - 141 4 4 4 4		

	शत्रुक्षय माहात्म्य प्रबन्ध	{ स॰	303 3	*34	§१२२ं-§१४८	96-89
	[वस्तुपाल प्रवन्धान्तर्गत उत्तर भागां]	-				•
	त्रृणिगवसही प्रबन्ध ' •	{ प्रा॰ स॰	२०११४ २०११८	×	×	. ५३१
28	मयूर सर्प प्रबन्ध	{ प्रा∘ स॰	२०११८ २०२ ५		•	•
22	मंत्रि उदयन प्रवन्ध	{ प्रा॰ स॰	२०२ ५	20	१५०-१६०	32
२३	वसाह आभड प्रबन्ध	{ प्रा∘ स॰	२१२ ६ २१२ २	28	§ ६ १	33
२४	श्रीमाता प्रबन्ध	{ प्रा॰ स॰	२१२२०	36	§ १ ९ ६	68
24-	२६ तारणगढपासादरक्षण तथा	{ प्रा॰ स॰	२१२२० २२२ ९	30	११०४-११०५	28-68
	अजयपाल प्रबन्धं					Church 167
20	वस्तुपाल प्रवन्ध					Marie F. K.
	[१] आशराज प्रवन्ध ⁸	{ प्रा∘ स∘	२२२१२ २२२१७	×	×	५३
	[२] वस्तुपाल प्रवन्धान्तर्गत पूर्व भाग	{ प्रा॰ स॰	२२२१८ २४२ ७	39	§११७– <u></u> १२२	48-46
	[३] वस्तुपाल प्रवन्धगत परिशिष्टात्मक- अन्तिम वर्णन ⁵	∫ प्रा॰ स॰	२४११८	"	§ १४९–§ १५७	\$6-08
					- 201	TRUSH CALL
26	विधिविषयक उदाहरण	्रप्रा ^० स०	२५२ १ २६१ ७	46	§ २३५	806-880
29	स्त्रीचरित्र प्रबन्ध	∫ प्रा॰ स॰	२६२ २	. ?	89	8

शहस प्रवन्धका समावेश वस्तुपाल अवन्धके अन्तर्गत होता है। यह इस जगह बिना किसी पूर्वसंवन्धके यों ही ग्रुरू होता है। इसका आदि वाक्य 'श्रीदाञ्जअयमाहात्म्यं लिख्यते' ऐसा है और उसके बाद, फिर वे सब पद्य लिखे हैं जो इस संग्रहमें १५७ से लेकर १६५ तकके कमांकमें दिये हुए हैं। इसके बाद, उसीके आगेके ९ १२३ वें प्रकरणवाला वर्णन चाळ होता है जो आखिरमें ९ १४८ वें प्रकरणके साथ, समाप्त होता है। यह एक प्रकारसे वस्तुपालप्रवन्धका उत्तरभाग है। पूर्वभाग आगे जा कर लिखा है, जो २७ वें प्रवन्धमें मिलता है।

 \P यह प्रबन्ध इस P संग्रहके अतिरिक्त B_R संग्रहमें भी लिखा हुआ है, और वह कुछ जरा विस्तृत रूपमें है; इसलिये हमने प्रस्तुत ग्रंथमें, उसीको मुख्य स्थान दिया है और इस प्रतिवाले प्रवन्धको उसकी पाद-टिप्पनीके रूपमें उद्धृत कर दिया है।-देखो पृष्ठ ५३ परकी पहली टिप्पनी।

1 इस प्रबन्धको हमने छोड दिया है। एक तो इसका सम्बन्ध, यों ही प्रबन्धिचन्तामणिगत विषयके साथ नहीं है; और दूसरा कारण यह है कि, प्रस्तुत प्रतिका वह पन्ना जिसमें यह प्रबन्ध लिखा हुआ है, एक किनारे पर इतना खिर गया है कि जिससे इसका पाठोद्धार करना सर्वथा अशक्य-सा हो गया है।

2 प्रतिमें तारणगढप्रासादरक्षणप्रवन्ध तथा अजयपालप्रवन्ध ये दोनों प्रकरण जुदा जुदा प्रवन्ध करके लिखे हैं। इमने

इनको एक ही 'अजयपालप्रवन्ध' के शीर्षकके नीचे दो जुदा जुदा प्रकरणोंके रूपमें मुद्रित किये हैं।

[बिक्रमंचरित्रान्तर्गत]

3 'आशाराजप्रवन्ध' वस्तुपाल प्रवन्ध-ही-का आदिम भाग होनेसे हमने इसे, उसी प्रवन्धके अन्तर्गत § ११६ वें अंकवाले प्रकरणके तौर पर रख दिया है। यह प्रकरण, इस प्रतिके सिवा Be और Ps संज्ञक संप्रहोंमें भी मिलता है और वह कुछ विशेष स्पष्टतावाला है इस 'लिये हमने मुख्य स्थान उसको दे कर, इस प्रतिवाले उल्लेखको पाद-टिप्पनीमें प्रविष्ठ कर दिया है।—देखो, वहीं, पृष्ठ ५३ परकी तीसरी टिप्पनी।

4 इसका प्रारम्भ, § ११७ वें प्रकरणके (पृष्ठ ५४, पंक्ति १२) "इतो व्याघ्रपछीयो राणक आना०" इस वाक्यसे होता है, और समाप्ति पूर्वोक्त शत्रुंजय माहात्म्यवाछे उल्लेखके (पृ० ५८, पंक्ति ११) पूर्ववर्ता "तत्र यात्रार्थे यतनीयमिति।" इस वाक्यके साथ होती है। 5 यह वर्णन, पृष्ठ ६९ पर मुद्रित, § १४९ वें प्रकरणके "अत्राग्नेतनः प्रबन्धः कथनीयः।" इस वाक्यसे प्रारंभ होता है और

पृष्ठ ७१ की ५ वीं पंक्तिमें मिलनेवाले "[सं०] १३०८ तेजःपालो दिवं जगाम ।" इस दक्षेत्रके साथ समाप्त होता है।

-			^		T .	
30	वलभी भंगप्रवन्ध	प्रा° स॰	२६२ २	0	5.	A 0
38	न्यायविषयक यशोवर्भन्य प्रबन्ध	्रप्रा° स॰	२७११० २७२ २	60	§ २३२	308-608
32	लाखणराउल प्रबन्ध	प्रा॰ स॰	२७२ ३ ०	द२	§ इंद ्र १२७	१०१-१०२
33	चित्रक्टोत्पत्ति प्रबन्ध	(प्रा° स॰	२८१ ९ २८२११	५३	§ २२८	१०३
38	परोपकारविषयक उदाहरण	प्रा° स°	२८२११ २८२१८	६०	§ २३६	११०
39	उद्यमविषयक उदाहरण	्रप्रा ॰ स॰	२८२१८	इ१	§ २३७	250
39	दानविषयक उदाहरण	(प्रा° स°	२९१ ५ २९११५	६२	§ २३८	888
39	अम्बुचीच रूप प्रबन्ध	प्रा° स°	२९११५ २९२ ४	46	§ २३४	१०८
36	कुमारपालराज्यप्राप्ति प्रबन्ध	प्रा° स॰	२९२ ४ ३०११५	२४	§ ७९–§८.º	39-39
39	कर्णवाराविषयक उदाहरण	प्रा॰ स॰	30994	६३	§ २३९	१११-११२
80	सोनलवाक्यानि ¹	्रप्रा° स॰	₹0₹99 ₹0₹99		§ ६ ४	38
_	पुष्पिकालेखात्मक गाथाइय ⁸			•••		१३६
-	,, पंक्तिद्वय°			••		१३६

इस प्रकार ये ४० प्रबन्ध इस संप्रहमें संगृहीत हैं। इस सूचीके अवलोकनसे ज्ञात होता है कि प्रथमके दो प्रबन्ध, राजशेखर सूरिके प्रबन्धकोशमेंसे लिख लिये गये हैं, और ३० वां प्रबन्ध, सम्भवतः मेरुतुङ्ग सूरिके प्रबन्धचिन्तामणि प्रन्थमेंसे नकल किया हुआ है। इनके सिवा, कुमारपाल और विक्रमचरित्रके सम्बन्धवाले कुछ प्रकरण, इसमें ऐसे हैं जिनका प्रबन्धकोशगत तत्तत् प्रकरणोंके साथ बहुत घनिष्ठ साम्य दिखाई देंता है। विशेष करके निम्न सचित प्रकरण तुलना करने योग्य हैं—

	पुरातनप्रबन्धसंग्रह ी	प्रबन्धकोश
कुमारपालप्रबन्धान्तर्गत प्रकरण	§ 63	896
विक्रमचरितान्तर्गत प्रकरण	§ १२	866

ये प्रकरण इन दोनों संप्रहोंमें, शब्द और अर्थ दोनों प्रकारसे, प्रायः समान प्रतीत होते हैं, लेकिन हैं ये मिन्न

6 यह प्रबन्ध, प्रबन्धचिन्तामणिके, पृष्ठ १०७-९ पर मुद्रित, प्रकरणांक २०२-२०३ वाळे इसी नामके प्रबन्धके साथ शब्दशः

मिलता है-और बहुत करके उसी प्रन्थमेंसे यह नकल किया गया है-अतः हमने इसे यहां पुनः मुद्रित करना निरर्थंक समझा है।

7 सिद्धराज जयसिंद्रके इतिहासके साथ सम्बन्ध रखनेवाले सोनलदेवीके ये वाक्य, जो गूजरात और सौराष्ट्रमें, लोक गीतके रूपमें ख्व प्रसिद्ध हैं और जिनके शब्दोंमें सिद्धराजके जीवनकी, घर घर गाई जानेवाली एक इतिहासानुश्लिखत, कलंकित कथा ओत्रोत हो रही है, विना किसी विशेषोक्षेखके इस प्रतिमें, अन्तमें, लिखे हुए मिलते हैं। हमने इनको, सिद्धराजके समयके प्रकरणोंके अन्तमें, पृष्ठ ३४ -पंक्ति ३० पर, एक गौण प्रकरणके ढंगसे, कमांक § ६४ के नीचे, सुद्दित किये हैं।

8 प्रस्तुत प्रन्थके पृष्ठ १३६ पर, प्रथम जो दो प्राकृत गाथाएं मुद्रित हैं, वे इस प्रतिमें, पत्र ३० की पहली पूंठी (पृष्णि=पार्थ) पर, सबसे नीचेकी पंक्तिमें लिखी हुई हैं। पंक्तिके प्रारंभमें 'x' ऐसा चिह्न दिया हुआ है जिसका अर्थ होता है, कि यह पंक्ति, ऊपरकी किसी पंक्तिमें लिखते लिखते लिखते लिखते लिखते लिखते हा नीचे (हांसियेमें) लिख दी गई है। लेकिन ऊपर किस जगह और कौन पंक्तिमें यह लिखनी-

रह गई इसका सूचक कोई चिह इस सारे पत्रेमें कहीं दृष्टिगोचर नहीं होता। इसकी विशेष मीमांसा आगे चल कर की है।

9 इन दो पंक्तियोंमें से, पहलीमें, सं० १४३० में खर्गवास प्राप्त करनेवाले किसी सावदेव सूरिका उल्लेख है। इसका पूर्वापर क्या सम्बन्ध है सो ठीक माल्स नहीं देता। दूसरी पंक्तिमें लिपिकर्ताका -जिसने इस प्रतिका कमसे कम उत्तरी हिस्सा लिख कर पूरा किया- समयादि सूचक निदेंश है। ये दोनों पंक्तियां भी प्रन्धान्तमें, पृष्ठ १३६ पर मुदित हैं।

भिन्न-कर्त् । हमारा अनुमान है, कि प्रबन्धकोशकी अपेक्षा प्रस्तुत प्रतिवाले इन प्रकरणोंकी रचना पुरातन है। राजशेखर सूरिने शायद कुछ थोडा बहुत भाषा-संस्कार करके इनको अपने प्रन्थमें सिन्निविष्ठ कर लिया है। क्यों कि, मस्तुत संप्रहगत इन प्रकरणोंकी भाषा, अधिक लौकिक ढंगकी—परिष्कार विहीन और शिथिल खरूपमें—है; और प्रबन्धकोशमें वह परिष्कृत और सुिन्निष्ठ रूपमें है। अतः, इससे यह सूचित होता है, कि राजशेखर सूरिके पहले, किसीने, इन प्रकरणोंको, किसी प्रथमाभ्यासी विद्यार्थीके पढनेके लिये, इस प्रकारकी बहुत ही सीधी-सादी भाषामें लिखा, और फिर राजशेखर सूरिने उनमें उक्त प्रकारका कुछ संशोधन-परिमार्जन किया। प्रवन्धकोशके कर्ताने अपने पहलेकी कृतियों मेंसे ऐसे कई प्रकरण ज्यों के त्यों, अथवा कुछ थोडा फेरफार कर, अपने प्रन्थमें किस प्रकार सिम्मिलित कर लिये हैं, इसकी कुछ आलोचना हमने उस प्रन्थकी मूमिकामें की है।

इसी प्रकार यदि, प्रस्तुत संग्रहके कुछ प्रकरणोंका मिलान, प्रवन्धचिन्तामणिगत उन उन प्रकरणोंके साथ किया जाय तो उनमें भी कुछ ऐसी शाब्दिक और आर्थिक समानता जरूर दिखाई देगी। यद्यपि वह समानता प्रवन्धकोशके जितनी विपुल और विशेषरूपमें नहीं है, जिससे यह स्पष्टताके साथ निर्णीत किया जा सके कि प्र० चि० के कर्ताने भी इस संग्रहके कुछ प्रकरणोंका अनुसरण किया है; तथापि उसके लिये कुछ अनुमान अवश्य किया जा सकता है। प्र० चि० प्रथित मुझराज प्रवन्ध, प्रस्तुत संग्रहलिखित उस प्रवन्धके साथ बहुत ही सहशता रखता है। इसी तरह कुछ और और प्रवन्धोंमें भी परस्पर कितनाक साम्य दिखाई देता है। निम्न सूचित प्रकरण इस दृष्टिसे मिलान कर देखने योग्य हैं—

प्रबन्धनाम	प्र० चिं०	प्रस्तुत यन्थ
उदयन प्रबन्ध	§ ९ 0	849
रैवततीर्थोद्धार प्रवन्ध	१०७	§ ६२
सोनलबाक्य	§ १०६	§ इप्र
अंबड प्रबन्ध •	§ १३७	\$28
अजयपाल प्रबन्ध •	§ १७ ५	8 808-

इस तुल्नासे यह बात स्चित होती है कि-प्रस्तुत संग्रहमें कुल प्रकरण या प्रवन्ध तो ऐसे हैं जो प्रवन्धिवन्तामणि या प्रवन्धकोशमेंसे लिखे हुए या उद्धृत किये हुए हैं, अतएव उनसे अर्वाचीन हैं; लेकिन कुल प्रकरण ऐसे हैं जो उन प्रन्थोंसे भी पुरातन हो कर, उक्त प्रन्थोंके कर्ताओंने, शायद इन्हीं परसे अपने प्रकरण गुम्फित किये हों। यह बात तभी सिद्ध हो सकती है जब इसका प्रमाणभूत कोई उल्लेख इस संग्रहमें दृष्टिगोचर होता हों। प्रस्तावित प्रन्थके पृष्ठ १२६ पर जो दो प्राकृत गाथाएं मुद्रित हैं वे, इस कथनके लिये, प्रमाणभूत कही जा सकतीं हैं। ये दोनों गाथाएं, इस संग्रहके ३० वें पत्रके प्रथम पृष्ठमें, सबसे नीचेकी पंकिमें, हासियेमें लिखी हुई हैं। इसके प्रारंभमें '×' ऐसा चिन्ह दिया हुआ है जिसका मतलब होता है कि यह पंक्ति, उपर चाल लिखानमें, लिखते समय, भूलमे छूट गई है जिससे इसको यहां पर हासियेमें लिखा गया है। लेकिन, उपर चाल लिखानमें, यह किस जगह छूटी हुई है इसका सूचक कोई चिन्ह कहीं नहीं दिखाई देता। इससे यह निश्चतत्त्रया ज्ञात नहीं होता कि यह पंक्ति यथार्थमें किस प्रकरणके या प्रवन्धके अन्तमें होनी चाहिए; तथापि, जैसा कि इस संग्रहकी पृष्ठवार दी हुई सूचिसे ज्ञात होता है, इस अन्तिम पत्रके प्रथम पार्थ पर कुमारपालराज्यप्राप्ति-प्रवन्ध समाप्त होता है, और उसके बाद कर्णवारा-विषयक उदाहरणभूत प्रवन्ध लिखा हुआ है। सो इस पंक्तिका स्थान, नियमानुसार, उक्त कुमारपालराज्यप्राप्ति-प्रवन्धके अन्तमें होना चाहिए। परंतु, हमारा अनुमान है कि इसका वास्तविक स्थान, या तो उसके आगेके कर्णवारा प्रवन्धके अंतमें होना चाहिए या उसके बाद जो राणी सोनलदेवीके वाक्यरूप १०–११ प्राकृत पद्य लिखे हुए हैं उनके अन्तमें अंतमें होना चाहिए या उसके बाद जो राणी सोनलदेवीके वाक्यरूप १०–११ प्राकृत पद्य छिले हुए हैं उनके अन्तमें

Centre for the Aris

होना चाहिए। कहीं भी हों, लेकिन है वह पंक्ति इसी संप्रहके साथ सम्बन्ध रखनेवालीं, इसमें कोई सन्देह नहीं है। हैन गाथत्ओंका अर्थ है यह कि-"नागेन्द्र गच्छके आचार्य उदयप्रभ सूरिके शिष्य जिनभद्रने, मंत्री-श्वर वस्तुपालके पुत्र जयन्तसिंहके पढनेके लिये, विक्रम संवत् १२९० में, इस नाना-कथानक-प्रधान प्रबन्धावलिकी रचना की।"

इस उहेखसे स्पष्टतया ज्ञात होता है कि प्रस्तुत संप्रहके लिपिकर्ताने जिन पुराने संप्रहोंमेंसे ये सब प्रवन्ध नकल किये उनमें 'नाना कथानक प्रधान प्रवन्धावित' नामका (या उसके सूचक वैसे ही किसी और नामका) एक संप्रह वह भी था जिसकी रचना, मंत्रीश्वर वस्तुपालके पुत्र जयन्तसिंहके पढनेके लिये, संवत् १२९० में उदयप्रभसूरिके शिष्य जिनभद्रने की थी। जिनभद्रकी इस नाना कथानकवाली प्रबन्धावलिका खतंत्र अस्तित्व अभी तक और कहीं हमारे देखनेमें नहीं आया इससे यह पता नहीं लग सकता कि इस प्रबन्धा बिलेमें सब मिलाकर कितने कथानक थे और कौन कौन विषयके थे। प्रस्तुत संग्रहके लिपिकर्ताने, जैसा कि ऊपर दी हुई सूचिसे ज्ञात होता है, इन प्रबन्धोंको कई भिन्न भिन्न प्रन्थों में से छिखा है और सो भी अस्तव्यस्त ढंगसे। इससे इसमें पुराने और नये प्रवन्धोंका एक साथ संमिश्रण हो कर उनकी एक तरहसे खिचडी बन गई है, जिससे यह जानना या निश्चय करना भी कठिन-सा हो गया है कि, इसमें उक्त गाथा-कथित जिनभद्रके रचे हुए प्रवन्ध कितने और कौन कौन हैं; तथा उसके पीछेके कितने और कीन कौन हैं?। तथापि भाषा और रचना-शैलीका सूक्ष्मतया निरीक्षण करने पर इसमेंके कितनेएक प्रकरणोंका कुछ कुछ विश्लेषण या पृथकरण किया जा सकता है। पूर्वोक्त राजदोखर सूरिके रचे हुए जो पादलिप्ताचार्य और रत्नश्रावक नामके दो प्रबन्ध इसमें संगृहीत हैं उनकी तथा प्रबन्धचिन्तामणिमेंसे नकल किये गये वलभी भंग प्रवन्धकी भाषा, और और प्रवन्धोंकी भाषासे विल्कुल अलग पड जाती है। मंत्रियशोवीर प्रबन्ध और वस्तुपाल-तेजःपाल प्रबन्ध-ये दोनों प्रकरण भी किसी दूसरेकी कृति होने चाहिए। क्यों कि इन दोनोंमें वर्णित कितनीक वस्तु-घटनाएं संवत् १२९० के पीछेकी हैं। यशोवीर प्रबन्धमें, संवत् १३१० में जलालुद्दीन सुल्तान द्वारा, मारवाड अन्तर्गत जालोरके दुर्ग सुवर्णगिरिपर किये जानेवाले आक्रमणका उद्धेख हैं; और इसी तरह, वस्तुपाछ प्रबन्धमें, संवत् १३०८ में होनेवाले मंत्री तेजपालके मरणका निर्देश है। अतः ये दोनों प्रवन्ध अर्थात् ही जिनभद्रके बाद की रचना है। इनके अतिरिक्त, और सब प्रवन्ध, यदि उक्त जिनभद्रकी क्रतिरूप मान लिये जांय तो उसमें कोई बाधक प्रमाण हमें नहीं दिखाई देता।

§ 4. P संग्रहके कुछ महत्त्वके प्रवन्ध

इस संग्रहमें, कुछ प्रबन्ध, ऐतिहासिक दृष्टिसे बडे महत्त्वके हैं। पृथ्वीराजप्रबन्ध (१३), जयचन्द्रप्रबन्ध (१४), मंत्रि यशोवीरप्रबन्ध (१६), बस्तुपालतेजःपालप्रबन्ध (१९, २०, २७), मंत्रिउदयनप्रबन्ध (२२), बसाह आभडप्रबन्ध (२३), अजयपालप्रबन्ध (२५-२६) और लाखणराउलप्रबन्ध (३२) आदि प्रकरणों इतिहासोपयोगी जो सामग्री मिलती है वह बहुत ही विश्वसनीय और विशेषत्ववाली है। इसका विशेष कहापोह करना यहाँ अप्रासंगिक है। इस ग्रन्थके अगले भागों में उसका यथेष्ट अवलोकन और आलोचन आदि करनेका हमारा संकल्प है ही।

हम यहां पर, एक बात पर विद्वानोंका लक्ष्य आकर्षित करना चाहते हैं; और वह बात यह है कि इस संग्रह गत पृथ्वीराज और जयचन्द विषयक प्रबन्धोंसे हमें यह ज्ञात हो रहा है, कि चन्दकिव रिचृत पृथ्वीराजरांसों नामक हिन्दीके सुप्रसिद्ध महाकाव्यके कर्नृत्व और कालके विषयमें जो, कुछ पुराविद् विद्वानोंका यह मृत है कि 'वह प्रन्थ समूचा ही बनावटी है और १७ वीं सदीके आसपासमें बना हुआ है' यह मत सर्वथा सत्य नहीं है। इस संग्रहके उक्त प्रकरणोंमें जो ३-४ प्राकृत-भाषा पद्य [पृष्ठ ८६, ८८, ८९ पर] उद्धृत किये हुए मिलते हैं, उनका पता हैमने उक्त रासोमें लगाया है और इन ४ प्रशोमें से ३ पद्य, यद्यपि विकृत रूपमें लेकिन शब्दशः, उसमें हमें मिल गये हैं। इससे यह प्रमाणित होता है कि चंद्र कि निश्चिततया एक ऐतिहासिक पुरुष था और वह दिल्लीश्वर हिंदुसम्राद पृथ्वीराजका समकालीन और उम्रका सम्मानित एवं राजकिव था। उसीने पृथ्वीराजके कीर्दिकला-पका वर्णन करनेके लिये देश्य प्राकृत भाषामें एक काव्यकी रचना की थी जो पृथ्वीराजरासोके नामसे प्रसिद्ध हुई। इस यहां पर, पृथ्वीराजरासोमें उपलब्ध विकृत रूपवाले इन तीनों पद्योंको, प्रस्तुत संबहमें प्राप्त मूलरूपके साथ

साथ, उद्धृत करते हैं, जिससे पाठकोंको इनकी परिवर्तित-भाषा और पाठ-मिन्नताका प्रत्यक्ष बोध हो सकेगा।

प्रस्तृत संग्रहमें प्राप्त पद्य-पाठ।

इक्क बाणु पहुवीसु जु परं करंबासह मुक्कओं, • उर भिंतरि खडहडिउ घीर कक्खंतरि चुक्कउ। बीअं करि संघीउं भंमर स्मेसरनंदण!, एहु सु गडि दाहिमओं खणर खुहर सरंभरिवणु। फुड छंडि न जार रहु लुब्भिउ वारद पलकउ खल गुलह। नं जाणउं चंदबलिइउ किं न वि छुट्टर रह फलह॥
—एष्ठ, ८६, पर्यांक (२७५).

अगहु म गहि दाहिमओं रिपुरायसयंकर, कूड मंत्र मम ठवओं एडु जंबूय(प?)मिलि जग्गर । सह नामा सिक्खवउं जइ सिक्खिविउं बुज्झई, जंपइ चंदबलिडु मज्झ परमक्खर सुज्झई । पहु पहुविराय सहंभरिधणी सयंभरि सउणई संभरिसि, कहंबास विआस विसद्विणु मच्छिबंधिबद्धओं मरिसि ॥ —पृष्ठ वही, पवांक (२०६).

त्रिण्डि लक्ष तुषार सवल पाषरीयहं जसु हय, वजदसय मयमत्त दंति गज्ञंति महामय। वीसलक्ष पायक सफर फारक धणुद्धर, स्टूसइ अरु बलु यान संख कु जाणइ तांह पर। छत्तीसलक्ष नराहिवइ विहिविनडिओं हो किम भयउ, जइवंद न जाणउ जल्डुकइ गयउ कि मूउ कि धरि गयउ॥

—पृष्ठ ८८, पद्यांक (२८७).

पृथ्वीराजरासोमें प्राप्त पद्य-पाठ।

पक बान पहुमी नरेस कैमासह मुक्यो ।
उर उप्पर थरहून्यो बीर कष्पंतर चुक्यो ॥
वियो बान संघान हन्यो सोमेसर नंदन ।
गाढो किर निष्रह्यो पनिव गड्यो संभिर घन ॥
थल छोरि न जाइ अभागरी गाड्यो गुन गर्ह अग्गरो ।
इम जंपे चंदबरहिया कहा निघट्टै इय मलो ॥
—रासो, पृष्ठ १४६६, प्रय २३६०

अगह मगह दाहिमो देव रिपुराइ षयंकर।
क्रूरमंत जिन करों मिले जंबू वे जंगर॥
मो सहनामा सुनौ एह परमारथ सुज्झे।
अष्ये चंद विरद्द वियो कोइ एह न बुज्झे॥
प्रथिराज सुनवि संभरि धनी इह संभिल संभारि रिस।
कैमास बलिष्ठ बसीठ विन म्लेच्छ वंध बंध्यो मरिस॥
—रासो, पृष्ठ २९८२, पद्यू ४७६.

असिय लष्य तोषार सजड पष्पर सायइल ।
सहस हस्ति चवसिट्ठ गरुअ गर्जात महावल ॥
पंच कोटि पाइक सुफर पारक धनुद्धर ।
जुध जुधान वर बीर तोन वंधन सद्धनभर ॥
छत्तीस सहस रन नाइबौ विही क्रिम्मान पेसो कियौ ।
जैचंद राइ कविचंद कहि उदिध बुड्डि के धर लियौ ॥
—रासो, पृष्ठ २५०२, प्रव २१६.

इसमें कोई शक नहीं है कि पृथ्वीराजरासो नामका जो महाकाव्य वर्तमानमें उपछव्ध है उसका बहुत बढ़ा भाग पीछिसे बना हुआ है। उसका यह बनाबटी हिस्सा इतना अधिक और विस्तृत है, और उसमें मूछ रचनाका अंश इतना अल्प और वह भी इतनी विकृत दशामें है, कि साधारण विद्वानों को तो उसके बारे में किसी प्रकारकी कल्पना करना भी किटन है। मालूम पड़ता है कि मूछ रचनाका बहुत कुछ भाग नष्ट हो गया है और जो कुछ अवशेष रहा है वह भाषाकी दृष्टिसे इतना अष्ट हो रहा है कि उसको खोज नीकालना साधारण कार्य नहीं है। मनभर बनाबटी मोतीके देरमेंसे मुट्टीभर सबे मोतीयोंको खोज नीकालना जैसा दुष्कर कार्य है वैसा ही इस सवालाख श्लोक प्रमाण-वाले बनावटी पद्योंके विशाल पुंजमेंसे चंद कविके बनाये हुए हजार पांच सौ अस्त-व्यक्त पद्योंको ढूंढ नीकालना

कठिन कार्य है । तथापि, जिस तरह, अनुभवी परीक्षक, परिश्रम करके, छाख झूठे भोतीयोंमें से मुद्दीभर सचे मोतीयोंको अलग छांट सकता है उसी तरह भाषाशास्त्र-मर्मज्ञ विद्वान इन छाख बनावटी श्लोकोंमें से उन अल्पसंख्य क सचे पद्योंको भी अलग नीकाल सकता है जो वास्तवमें चन्द कविके बनाये हुए हैं।

हमने इस महाकाय प्रन्थके कुछ प्रकरण, इस दृष्टिसे, बहुत मनन करके पढे तो हमें उसमें कई प्रकारकी भाषा और रचना पद्धितका आभास हुआ। भाव और भाषाकी दृष्टिसे इसमें हमें कई पद्य ऐसे अलग दिखाई दिये जैसे छासमें मक्खन दिखाई पडता है। हमें यह भी अनुभव हुआ कि काशीकी नागरी प्रचारिणी सभाकी ओरसे जो इस प्रन्थका प्रकाशन हुआ है वह भाषा-तत्त्वकी दृष्टिसे बहुत ही अष्ट है। उसके संपादकों को रासोकी प्राचीन भाषीका कुछ विशेष ज्ञान रहा हों ऐसा प्रतीत नहीं हुआ। विना प्राकृत, अपभंश और तद्भव पुरातन देश्य भाषाका गहरा ज्ञान रखते हुए इस रासोका संशोधन—संपादन करना मानों इसके अष्ट कलेवरको और भी अधिक अष्ट करना है। इस प्रन्थमें हमें कई गाथाएं दृष्टिगोचर हुई जो बहुत प्राचीन हो कर शुद्ध प्राकृतमें बनी हुई हैं; लेकिन वे इसमें इस प्रकार अष्टाकरमें छपी हुई हैं जिससे शायद ही किसी विद्वान को उनके प्राचीन होनेकी या शुद्ध प्राकृतमय होनेकी कल्पना हो सके। यही दशा शुद्ध संस्कृत क्षोकोंकी भी है। संपादक महाशयोंने, न तो भिन्न भिन्न प्रतियोंमें प्राप्त पाठान्तरोंको चुननेमें किसी प्रकारकी सावधानता रखी है, न खरे-खोटे पाठोंका पृथकरण करनेकी कोई विन्ता की है; न कोई शब्दों या पदोंका व्यवस्थित संयोजन या विश्लेषण किया गया है न विभक्ति अथवा प्रत्यका कोई नियम ध्यानमें रखा गया है। सिर्फ 'यादशं पुस्तके दृष्टं तादशं लिखितं मया।' वाली उक्तिका अनुसरण किया गया माल्यम देता है।

माल्म पडता है कि चंद कविकी मूल कृति बहुत ही लोकप्रिय हुई और इस लिये ज्यों ज्यों समय बीतता गया त्यों त्यों उसमें पीछेसे चारण और भाट लोग अनेकानेक नये नये पद्य बनाकर मिलाते गये और उसका कलेवर बढाते गये। कण्ठानुकण्ठ प्रचार होते रहनेके कारण मूल पद्योंकी भाषामें भी बहुत कुछ परिवर्तन होता गया। इसका परिणाम यह हुआ कि आज हमें चंदकी उस मूल रचनाका अस्तित्व ही विलुप्त-सा हो गया माल्म दे रहा है। परंतु, जैसा कि हमने उपर सूचित किया है, यदि कोई पुरातन-भाषा-विद् विचक्षण विद्वान, यथेष्ट साधन-सामग्रीके साथ पूरा परिश्रम करे तो इस कूडे-कर्कटके बडे ढेरमेंसे चन्द कविके उन रक्षक्षप असली पद्योंको खोज कर नीकाल सकता है और इस तरह हिन्दी भाषाके नष्ट-श्रष्ट इस महाकाल्यका प्रामाणिक पाठोद्धार कर सकता है। नागरीप्रचारिणी सभाका कर्तव्य है कि, जिस तरह पूनाका भाण्डारकर रीसर्च इन्स्टीट्यूट महाभारतकी संशोधित आवृत्ति तैयार कर प्रकाशित कर रहा है, उसी तरह, वह भी हिन्दी भाषाके महाभारत समझे जानेवाले इस पृथ्वीराजरासोकी एक संपूर्ण संशोधित आवृत्ति प्रकाशित करनेका पुण्य कार्य करें।

§ ६. (२) B संज्ञक संग्रह

३३ पैन्नोंका अभाव है। ७५ मेंसे ४२ पन्ने विद्यमान हैं। पन्नोंका नाप, प्रायः छंबाईमें १०ई इंच और चौडाईमें ४६ई इंच है। प्रत्येक पृष्ठि (पार्थ) पर १५-१५ पंक्तियां लिखी हुई हैं। अक्षर मुवाच्य और लिखान प्रायः गुद्ध है। अन्तिम भाग अप्राप्य होनेसे, यह प्रति कुब लिखी गई थी इसके जाननेका कोई निश्चित साधन नहीं रहा। प्रतिकी स्थिपिको देखकर अनुमानसे यह कहा जा सकता है कि कमसे कम कोई च्यार सौ वर्ष पहले की यह लिखी हुई जरूर होगी।

§ ७. B संग्रहका आन्तरिक परिचय

जैसा कि ऊपर सूचित किया गया है, इस संप्रहका अन्तिम भाग अनुपलब्ध होनेसे, इसका संप्रहकर्ता या संक-छनकर्ता कौन है और उसका क्या समय है इसादि बातें जाननेका कोई उपाय नहीं है। वैसे ही यह भी ठीक नहीं जाना जा सकता कि इस संप्रहमें सब मिला कर ऐसे कितने प्रबन्ध या प्रकरण संगृहीत थे। जो अन्तिम पत्र (७५ वां) विद्यमान है उसमें नीलपटवधप्रबंध [देखो प्रस्तुत प्रन्थका पृष्ठ १९, प्रबन्धांक १०, प्रकरणांक §३३] समाप्त हुआ है और आगे फिर देवाचार्यप्रबन्ध प्रारंभ हुआ है। नीलपटवधप्रबन्धका क्रमांक इसमें ६६ दिया हुआ है, लेकिन, जैसा कि आगे दी हुई सूचिसे प्रतीत होता है, उसका वास्तविक क्रमांक ७० होना चाहिए। यदि, इसके आगे लिखे हुए देवाचार्यप्रवन्धके साथ ही इस संग्रहकी समाप्ति होती हों तो, इस प्रकार इसमें कमसेकम ७१ प्रबन्धोंका संग्रह होगा। इस संग्रहगत प्रबन्धोंका आकार-प्रकार देखनेसे हमारा अनुमान होता है कि, उपदेशतरंगिणी अन्थके कर्ता रहामन्दिरगणीने, महामात्य वस्तुपालके कीर्तिदान प्रबन्धोंका वर्णन करते हुए, तद्विषयक विशेष ज्ञापनके लिये जिस २४ (चतुर्विशति) प्रबन्ध अर्थात् प्रबन्धकोश नाम प्रनथके साथ, (उसके जैसे ही विषयवाले) ७२ (द्वासप्तति) प्रबन्ध और ८४ (चतुरशीति) प्रबन्ध नामक जिन और दो प्रन्थोंका सूचन किया है, * उन्हींमें से यह एक प्रन्थ हों। यदि यह अनुमान सही हों तो, कमसेकम विक्रम संवत् १५०० के पहले इसका संकलन हुआ होना चाहिए। क्यों कि रत्रमन्दिर गणीके १६ वीं शताब्दीके प्रथम पादमें विद्यमान होनेके प्रमाण पाये जाते हैं । अतः उनके सूचित ७२ या ८४ प्रबन्धों के संप्रह अवश्य ही उनके पूर्व की रचनायें होनी चाहिए। लेकिन हमारा यह अनुमान तवतक विशेष बलवान् नहीं माना जा सकता, जबतक, कहींसे इसका समर्थक और कोई प्रमाण उपलब्ध नहीं होता।

§ ८. इस प्रतिमें प्रबन्धोंका संप्रह-क्रम कैसा है और हमने प्रस्तुत संप्रहमें उनको किस क्रममें मुद्रित किया है, इसका क्रमपूर्वक परिचय होनेके लिये यहां पर दोनों - लिखित और मुद्रित - संप्रहोंकी पृष्ठ-पंक्ति-आदि सूचक विस्तृत सूचि दी जाती है और उसके नीचे पाद-टिप्पनीमें जो कुछ विशेष ज्ञातव्य वस्तु माल्पम दी, वह भी, सूचित कर दी गई है।

^{*} उपदेशतरंगिणीमें यह उल्लेख इस प्रकार है—'इत्यादि श्रीवस्तुपालकीर्तिदानप्रबन्धाः शतशो यथाश्रुताः खयं वाच्याः ८४, २४, ७२ प्रबन्धेभ्यः । [यशोविजयजैनप्रन्थमाला, वनारस, में सुदित प्रति, ए० ७९]

[†] यद्यपि रत्नमन्दिर गणीने, उपदेशतरिकणीमें, अपना समय-सूचक कोई उल्लेख नहीं किया है, छेकिन इन्हींका बनाया हुआ एक भोजप्रबन्ध नामका प्रन्थ है उसके अन्तमें जो प्रशस्ति पद्य है उसमें, उस प्रन्थके बननेके समय आदिका निर्देश इस प्रकार किया हुआ है-

जातः श्रीगुरुसोमसुन्दरगुरुः श्रीमत्तपागच्छपस्तत्पादाम्बुजषट्रपदी विजयते श्रीनन्दिरत्नो गणी। तच्छिष्योऽस्ति च रत्नमन्दिरगणिभीजप्रवन्धो नवस्तेनाऽसौ मुँनि-भूति-भूते-रारोशृत् संवत्सरे निर्मितः॥

इस प्रथमें ज्ञात होता है कि वि॰ सं॰ १५९७ में रक्तमन्दिरगणीने भोजप्रबन्धकी रचना पूरी की थी। सिवा, इसके उपदेशतरंगिणीकी वि॰ सं॰ १५९९ के चैत्र शु॰ के दिनकी हस्तलिखत प्रति पूनेके, भाण्डारकर रीसर्च इन्स्टीट्यूट में, संरक्षित राजकीय प्रन्थसंप्रहमें विद्यमान है।

B संज्ञक प्रतिमें लिखित प्रकरणानुकम		•	प्रस्तत	त पुस्तकमें मुद्रित त्र	त्म * -
प्रवन्धनाम		पत्र. पृष्ठि. पंक्ति	प्रबन्धांक		पृष्ठांक
१-9 [विनष्ट'॥ १-9॥]		000.	0	, 0	
८ श्रीपुंजराजस्तत्पुत्रीश्रीमातावृ- त्तांतः ॥ ८॥	{ प्रा∘ स∘	 o997	0	۰	•
९ वराहमिहरप्रबंघः ॥ ९॥	{ प्रा॰ स॰	69 9	0	•	•
१० नागार्जुनोत्पत्ति-स्तंभनकतीर्थाव- तारप्रबंधः ॥ १०॥	{मा° स∘	?? ? 	•	٥	0
११ भर्तृहरोत्पत्तिप्रबंधः ॥ ११ ॥	{ प्रा॰ स॰	۵؟ ۱۲ ۹ ۱۰ ۱۰	0	•	0
१२ वैद्यवारभटप्रबंधः ॥ १२॥	{ प्रा∘ स∘	9990 9293	•	•	0
१३ पाद्लिप्तसूरिप्रबंधः॥ १३॥	{ प्रा∘ स॰	9213	88	§२१०-§२१२	65-68
१४ मानतुंगाचार्यप्रवंधः॥ १४॥	{प्रा° स°	992 8 92299	ę	§ २४–§ २७	१५-१६
१५ बीरगणीप्रबंधः ॥ १५॥	{मा° स॰	12212	0	•	. 0
१६ अभयदेवसूरिप्रबंधः ॥ १६॥	{म∘ स∘	185 8	४५	§ २१४-§ २१५	९५-९इ

1 प्रारंभके १ से ६ तकके पत्र अनुपलब्ध होनेसे, १ से ७ तकके प्रबन्ध विनष्ट हो गये हैं । ये विनष्ट प्रबन्ध किस किस विषयके ये इसके जाननेका कोई साधन नहीं है ।

2 यह ब्रुतात प्रवन्धिचिन्तमणि गत इसी नामके प्रवन्धिके साथ [इमारी आवृत्तिके पृष्ठ १०९-१९०; प्रकरणांक २०४-२०५] प्रायः शब्दशः मिलता हुआ है। इससे संभव है, कि इसके संप्राहकने यह प्रवन्ध उसी प्रन्थमें से नकल किया हो। संभव कहनेका कारण यह है कि इन दोनोंमें यद्यपि पाठकी समानता प्रायः शब्दशः मिलती हुई है, तथापि, किचित्, किचित् प्रकारका पाठमेद भी मिलता है; और यह पाठमेद उससे कुछ भिन्न प्रकारका है जो प्रवन्धिचन्तामणिकी अन्यान्य सब प्रतियोंमें मिलता है।

3-6 ये चारों प्रबंध भी प्रबन्धिचन्तामणि स्थित उन्हीं नामोंके प्रबन्धोंकी प्रायः शब्दशः नकल हैं। इनका कम भी बैसा ही है जैसा प्रकरण के हैं। [देखो, हमारी आवृतिके पृष्ठांक १९८ से १३२; और प्रकरणांक १९१८ से १२२४ तक] इनमें भी उसी प्रकारका कुछ पाठमेद मिलता है जो ऊपर वाली टिप्पनीमें स्चित किया गया है। प्रविच स्थित वराहमिहर प्रबन्धमें जो दो पद्य मिलते हैं [पद्यांक १६१-२६२] वे इस संप्रहमें नहीं हैं।

7 संग्रहका १३ वां पत्र अनुपलन्ध होनेसे इस प्रवन्धका विशेष भाग अप्राप्य है। विद्यमान १३ वें पत्रमें इस प्रवन्धकी निम्न उद्भृत पंक्तियां प्राप्त होतीं हैं—

श्रीमद्वीरगणस्वामिपादाः पांतु यदादरात् । कषायादिरिपुत्रातो भवेन्नागमनक्षमः ॥ १ ॥

श्रीमालं नगरं, तत्र धूमराजवंशीयो देवराजो नृपः। तत्र विणग्मुख्यः शिवनागो महाविणजः। अन्यदा श्रीधरणेंद्वाराधनात् परितोषे कलिकुंडकमं सर्वेसिद्धिकरं अष्टनागकुलविषहरधरणेंद्रावाप्ततन्मंत्रगर्भे धरणेंद्रस्तोतं चके।
तद्चापि जगति विषहरम्। तस्य पूर्णलता प्रिया। तत्युत्रो वीरः। अनेककोटिद्रव्याधिपः। पित्रा सप्त कन्याः परिणावितः। ततः पितरि मृते वैराग्याक्तित्यमेव श्रीवीरवंदनाय याति। अन्यदा मार्गे संजातचौरोपद्रवेन खशालकगृहं गतः।
तस्य माता शुद्धर्थमायाता। शालेन हास्याचौरवीरविनाशे......।

8 इस प्रबन्धकी प्रारंभकी ५-६ पंकियां, विनष्ट १३ वें पत्रमें विद्धात हैं ढेकिन BR संप्रहमें भी यह प्रबन्ध उपलब्ध होता है इस लिये उसमें हे इसकी पूर्ति हो जाती है। विद्धात पत्रमें, प्रारंभकी पंक्तिसे छे कर, प्रस्तुत मुद्रित संप्रह [प्र॰ ९५] की पंक्ति १४ बीमें आये हुए 'नवाज्ञानां युक्ति' शब्द तकका पाठ चला गया है।

					-	
१७	ऋषिदत्ताकथानकम् ॥ १७॥	{ प्रा॰ स॰	182 4	. 0	• •	
36	कुमारपालपूर्वभंवप्र०॥ १८॥	{ प्रा॰ स॰	98293	. 36 .	§८६	3 88
36	मोरनागप्रबंघः ॥ १८*॥	शिया ⁰ स॰	99 २ ३		•	0
२०	मदनब्रह्म-जयसिंहदेवपीति- प्रबंधः॥ १९॥	{ प्रा∘ स∘	962 ६ १८२११	१५	§५१–§५२	२४-२५
२१	श्रीमाताप्रबंधः॥ २०॥	{ प्रा॰ स॰	96998	35	§ १ ९६	68
22	विमलवसातिकाप्रबंधः ॥ २१॥	{श्रा∘	99994 209 &	- 33	§ ११२-११३	48-47
२३	ळूणिगवसहीप्रवंधः॥ २२॥	{ प्रा∘ स॰	₹0₹ ₹	\$8	§ ? ? ? 8	47-3
28	भोज-गांगेयप्रबंधः [॥ २३† ॥]	{ प्रा॰ स॰	₹0₹ १	28	§ इप्र	२०
२५	भोजदेव-सुभद्राप्रबंधः ॥ २४॥	शा ^० स॰	२०२१२	22	§ 34 .	70
२६	घाराध्वंसप्रबंधः॥ २५॥	{ प्रा॰ स॰	२१२ ५ २१२११	१३	28-68	23-28
29	सिद्धराजौदार्यप्रबंधः ।	{प्रा॰	२१२११ २२१ १	\$8	886-00	28
26	देव्यम्बाप्रबंधः॥ २५ ॥	{ प्रा॰ स॰	२२१ २ २२१ ९	98	§ 220	29-09
29	विक्रमार्कसत्त्वप्रबंधः॥ २६॥	{ प्रा∘ स॰	२२१ १० २३१ ७	? **	§ १−३	१-२
30	दरिद्रऋयप्रबंधः ॥ २७° ॥	{म्र° स॰	२३१ ७	77	88	2
38	वीकमन्यूतकारप्रबंधः ॥ २७ ॥	{प्रा∘	२३२ २ २४१ २	"	89	3
३ २	स्त्रीसाहसप्रवंधः॥ १२८॥	{ प्रा॰ स॰	२४२ ५	99	84	₹-8
33	मनिमनुप्रबंधः ॥ २९ ॥	{प्रा॰ स॰	२४२ ६ २४२११	. 8	\$9	, 4
38	देहलक्षणप्रबंधः"॥ ३०॥	{ प्रा॰ स॰	२४२११	77	\$6	8-4

¹ यह कथानक पौराणिक ढंगका है। इसकी कथावस्तुका, प्रस्तुत संप्रहके विषयके साथ किसी प्रकारका संबंध न होनेसे, हमने इसकी संप्रहके अंतर्भुत न रख कर, पृथक् परिविष्टके रूपमें इसी प्रस्तावनाके अन्तमें सुद्रित कर दिया है।

⁷ इस प्रबन्धके बाद वे दो पंक्तियां लिखी हुई हैं जो प्रस्तुत संप्रहके प्रष्ठ ५ पर, प्रकरण § १० वेंमें सुदित की हुई हैं।



² यह प्रवन्ध भी अनैतिहासिक होनेसे, इसको चाल कममें मुद्रित न कर, जगरके प्रकरणके साथ, परिविष्टके रूपमें दे दिया है।

^{*} अतिमें इस प्रबंधका कमांक भी, गलतीसे १८ ही दिया गया है। † इस प्रबंधका कमांक प्रतिमें लिखना रह गया है।

³ प्रतिमें प्रबंधका कोई नामामिधान नहीं दिया गया है। सिर्फ अंतमें '॥ २४ ॥' ऐसा कमांक लिखा हुआ है।

⁴ प्रतिमें इस प्रबंधका भी कोई नाम निर्दिष्ट नहीं किया गया; और न खतंत्र प्रबन्धका सूचक कमांक ही दिया गया है। इससे प्रतिके लेखानुसार, यह प्रकरण, इसके पूर्वके धाराष्ट्रंस प्रबंधके परिशिष्टके जैसा मालूम देता है।

⁵ इसका क्रमांक भी गलतीसे '॥ २५ ॥' दिया गया है। ऊपर घाराध्वंसप्रवंधका भी यही अंक है।

^{**} विकमार्क राजाके विषयके जितने प्रकरण हैं उन सबको हमने "विक्रमार्कप्रवन्धाः" इस नामके एक ही मुख्य शिरोलेखके नीचे दे दिये हैं,।

⁻⁶ इन दोनों प्रबंधोंका भी कमांक एक-सा '॥ २०॥ २०॥' लिखा हुआ है।

विक्रमपुत्र-	विक्रमसेनंसम्बन्धात्मका	*

	५ प्रबधाः					22
39	आचपुत्तलिकाप्रबंधः ॥ ३१ ॥	{ प्रा॰ स॰	२५१ ५	• * 33	§ 881	4
38	द्वितीय " " [॥ ३२॥]	{ प्रा॰ स॰	२५११२	33	"	9
30	तृतीय " " ॥ ३३॥	{प्रा∘ स∘		"	, , , , , ,	. 9
36	तुर्घ " " ॥३४॥		२६१ ४ २७१ ५	"	"	3-6
39	विक्रमसम्बन्धे रामराज्यकथा- प्रबंधः॥ ३५॥	{ प्रा∘ स∘	२७१ ५ २७२ ६	. ",	§ १२	6-9
80	विश्वासघातकविषये नन्दपुत्र- प्रबंधः ॥ ३६ ॥		२७२ ६ २८११०	36	\$?66	82
88	उद्यतन्त्रपत्रवंघः ।। ३७॥	{प्रा° स°	२८११० २९१११	o‡	•	0.
83	कुमारपालकृतामारिप्रवंधः॥३८॥	{ प्रा॰ स॰	२९१११ २९२ ६	२६	\$28	४१-४२
४३	कुमारपालकृततीर्थयात्रा- प्रबंधः॥ ३९॥		२९२ ७ ३०२ ६	२७	§ 68-§ 64	82-83
88	मंत्रिसांतूप्रबंधः॥ ४०॥		₹0₹ ₹ ₹19 ¥	36	846	३१-३२
४५	सज्जनदंडपतिप्रवंधः ॥ ४१ ॥	{प्रा∘ स॰	₹99 8 ₹9994	38	§ १०८	86
४६	आभडवसाहप्रबंधः ॥ ४२ ॥		३१११५ ३२१ ३	28	§ ६ १.	33
89	वस्तुपालप्रबंघः'; ,—वस्तुपालकाव्यानि ॥ ४३ ॥	,	३२१ ४ ४२१ ५	34	§ ११५- <u>०</u> १४८	५३-६९
28	न्यांचे यशोवर्मन्तपप्रबंधः॥४४॥	{ प्रा॰ स॰	४२१ ५ ४२११५	५७	§२३३	30-08
86	अम्बुचीचन्द्रपप्रबंधः ॥ ४५ ॥	{ प्रा॰ स॰	872 9 872 9	96	§ २३४	308

¹ यह प्रबन्ध, राजशेखरस्रि रचित प्रबन्धकोशमें उपलब्ध इसी नामके प्रबन्धके साथ [हमारी आवृत्तिके पृष्ठ ८६-८८, प्रकरणांक §१०३-९१०५] प्रायः शब्दशः मिलता है। संभव है कि प्रबन्धकोशकारने यह प्रबन्ध इसी संप्रहमें से नकल कर लिया हो। इस संभवतामें वही कारण स्चित किया जा सकता है जो अपरकी टिप्पनी नं. २ में उल्लिखित किया गया है। प्रबन्धकोशवाले पाठमें और इस संप्रहवाले पाठमें किंचित् किंचित् ऐसा पाठमेद उपलब्ध होता है, जो मात्र किसी लिपिकर्ताका किया हुआ न हो कर किसी विद्वान संप्रहकर्ताका किया हुआ प्रतीत होता है। और इसी लिये यह पाठमेद उन पाठमेदोंसे मिल है जो प्रबन्धकोशकी अन्यान्य प्रतियोंमें उपलब्ध होते हैं।

इस पंक्तिके बाद, वस्तुपालकी प्रशंसावाले वे २४ पद्य लिखे हुए हैं जो पृ० ७१ से ७३ पर, पद्यांक २२२ से २४६ तक मुदित हैं।

[🙏] प्रबन्धकोशमें उपलब्ध होनेसे इस प्रबन्धको हमने प्रस्तुत संप्रहमें पुनर्सुद्रित करना उचित नहीं समझा।

² इसका प्रारंभ 'अथ श्रीवस्तुपालप्रबंधो यथाश्रुतः।' इस वाक्यमे होता है। फिर वह पद्य लिखा है, जो पृष्ट ५३ पर, पद्यांक १४४ के तौर पर मुदित है।

प्रस्तुत आदर्शमें, पत्र ३४, ३५, ३६, और ३७ अनुपब्ध हैं। लेकिन यह प्रबंध BR. P. और Ps. संप्रहोंने भी किंचित पाठमेदोंके साथ, और कुछ वर्णन-भेदोंके साथ, उपलब्ध होनेसे त्रुटित भागकी पूर्ति उन संप्रहों परसे कर ली गई है। इसका समाप्तिवाक्य इस प्रकार है-

^{&#}x27;॥ इति श्रीवस्तुपालप्रवंधो गुरुपारंपर्याह्निखितो न पुनः खबुद्ध्या ॥'

0

838

1 ४३, ४४, और ४५ ये ३ पत्र बिलुप्त हैं इस लिये यह प्रबंध इस संप्रहमें अपूर्ण ही है। मुद्रित पृष्ठ ८६ की पंक्ति १२ में ''कष्ट मुक्तम् । इतः°' इस शब्दके साथ, आदर्शका ४२ वां पत्र समाप्त होता है ।

प्रा॰

40...9 ... 6

40 ... 9 ... 98

५० पृथ्वीराजप्रबंधः ॥ ४६॥

५५-५८ [विनष्ट⁸ ॥ ५१-५४ ॥]

कुलचंद्रप्रबंधः ॥ ५५ ॥

भोजप्रबंधः ॥ ५६ (१) ॥

2 ऊपरवाली टिप्पनीमें सुचित किये मुताबिक यहां पर आदर्शके ३ पत्र विद्धप्त हो जानेसे पृथ्वीराजप्रवन्धके बादके दो और प्रवन्ध संपूर्णतः नष्ट हो गये हैं । वे प्रबन्ध किस विषयके थे इसके ज्ञानका कोई साधन नहीं है ।

3 विनष्ट पत्र ४५ में इस प्रवन्धका आदि भाग नष्ट हो जानेसे, और, इस B संप्रहके सिवा अन्य P आदि संप्रहोंमें इसकी प्राप्ति न होनेसे प्रस्तावित संप्रदके चाळ कममें इसको स्थान नहीं दिया जा सका। पत्र ४६ में इसकी सिर्फ निन्नोब्दृत शेष पंकियां प्राप्त होतीं हैं।

.....व्याहृतम्-भवान् किमपि स्तरसि ? । तेनोक्तम्-न । तृतीयवेळायां मृतकेनोत्थाय योगिनः शिरदिछन्नम् । नाहडेन स ज्वालितः। वही निश्चितः। खयं तटस्थे प्रासादे स्थितः। प्रातरवलोकयति, योगी ज्वलितो न वा। तावत्सर्णे-पुरुषं दद्शी। तस्य बलात् क्रमेण राज्यं प्राप। अर्बुदाद्रौ नाहडतटाकं कारियत्वा गर्जनप्रतोल्याः कपाटमादाय तत्र प्रचिक्षिपे। तथा जावालिपुरे राजधानिः कृता। पंडितयक्षदेवस्य मातुलमिति भणित्वा भक्तिं कर्तुं प्रवृत्तः। एकद्। कापि कटके गद्रस्तत्र सर्वपरिकरो मारितः। मात्रा शुद्धिमलभमानया पंडितः पृष्टः। भागिनेयस्य सारा न प्राप्यते। पं० उक्तम्-एकाकी वस्त्रं विना मध्यरात्रौ समेत्य गुफायां स्थास्यति, तत्र चीवराण्यादाय जनः प्रेष्यः। स तत्र स्थितः। तस्य मिलितम् । वस्त्रपरिधानं कृत्वा मध्ये समायातः । मात्रा पंडितेनोक्तं कथितम् । तद्नु हृष्टः । एकदा पंडितेनो-क्तम्-वत्स ! अस्माकं योग्यं किमपि कीर्तनं कारय । भूमिं दर्शयत । पंडितेन भूमिर्दर्शिता । तत्र नाइडसरः कारितम् । पुनः पंडितो रुष्टः । चरणयोर्निपत्य राज्ञोक्तम्-अधुना कारियण्ये । तत्र दर्शितायां भूमौ नाहडवसहीति प्रासादः पं० यक्षदेवनाम्ना कारितः। एवं नमस्कारप्रभावाद् विपद् गता। सुवर्णपुरुषः प्राप्तः। स नाहडराज्ञा जावालिकुंडे निश्चिप्तः ॥ इति नाहडराजप्रबंधः ॥ ४९ ॥

4 मूल आदर्शके ४७, ४८ और ४९ ये ३ पन्ने विलुप्त हैं इसलिये इस प्रबन्धके समाप्ति-सूचक पत्रांकादि नहीं दिये गये। परंतु ४६ वें पन्नेमें जो इस प्रबन्धका अन्तिम शब्द उपलब्ध है उस परसे यह कहा जा सकता है कि अगले पत्रकी पहली ही पंक्तिमें यह प्रबन्ध समाप्त हो गया होगा। यह अन्तिम शब्द 'जींद्राज' है जो मुद्रित पृष्ठ १०२ की पंक्ति २८ में दृष्टिगोचर हो रहा है।

• 5 ५० वें पनेमें जो कुलचन्द्र प्रबन्ध उपलब्ध है उसका कर्मांक ५५ दिया हुआ है, इसलिये, ऊपरवाली टिप्पनीमें स्चित किये गये ४७, ४८, और ४९ इन ३ विनष्ट पन्नों में ५१ से ५४ तकके ४ प्रवन्ध विलुप्त हो गये हैं।

6 इस ५० वें पन्नेमें जो वर्णन विद्यमान है वह सब भोजप्रबन्ध विषयक ज्ञात होता है और उपर्युक्त कुलवन्द्र नामक प्रबन्ध भी उसीका एक अवान्तर-सा प्रकरण है। मुख्य प्रबन्ध जो भोज उप विषयक है उसका ३६ वां पद्य, इस ५० वें पत्रकी पहली पंक्तिमें समाप्त होता है। अन्तिम पंक्तिमें जो पद्य पूर्ण होता है उसका कमांक ६० है। इससे यह विदित होता है कि, पिछळे विनष्ट ३ पन्नोंमें से, कमसे ·कम॰४९ वां पत्र तो इसी भोजप्रबन्धके वर्णनसे व्याप्त होगा, और कुछ गद्य पंक्तियोंके साथ १ से ३६ तकके पद्य उसमें होंगे । शेष ४७ और ४८ इन दो पन्नोंमें किस किस विषयके प्रवन्ध थे उसके जाननेका कोई साधन नहीं रहा । इसी तरह यह भोजप्रवन्ध भी कितना वडा होगा, तथा अगढे कीनसे पन्नेमें समाप्त हुआ होगा; उसके ज्ञानका भी कोई उपाय नहीं है। क्यों कि ५० के बाद, ७० तकके एक साथ २०, पन्ने अप्राप्स हैं। इन पत्रोंमें भोजप्रबन्धके अतिरिक्त और भी ३-४ प्रबन्ध विनष्ट हो गये हैं। ७१ वें पत्रमें जो 'सिद्धसेनदिवाकर्प्रतिबोध-प्रबन्ध' पूर्ण होता है उसका क्रमांक ६० दिया हुआ है।

			0			0
5 १-	६३ [अनुपलन्ध ॥ ५७-५९ ॥]		000	0	. 0	0
88	सिद्धसेनदिवाकरमितवोध- प्रबंधः ॥ ६०॥	{ प्रा∘ स∘	 091 §	0	•	0
89	हरिभद्रसृरिप्रबंधः॥ ६१ ॥	{ प्रा॰ स॰	ه	48	§२२९-३०	703-04
88	सिद्धर्षिप्रबंधः ॥ ६२॥	{ प्रा∘ स॰	७२११३	99	§ २३१	१०५-०७
६७	[विनष्ट॥ ६३॥]		000	0	0	0
56	श्रीपालकविप्रबंधः ⁸ ॥ ६४ ॥		٥٤٩ ٩	• .	0	^ 0
50	षड्दर्शनप्रबंधः ॥ ६५ ॥	ी स॰	७५१ ९ ७५११४	, 6,	§ ३२	86
90	नीलपटवधप्रबंधः ॥ ६६ ॥	{ प्रा∘ स॰	ولا٦٩٤ ولا٦ ع	20	\$ ₹ ₹	36
७१	देवाचार्यप्रबंधः ॥ ६७॥	{प्रा° स°		१६	§५३–§५५	24-30

1 उपर्युक्षिखित टिप्पनीमें सूचित किये गये मुताबिक इस प्रबन्धकी सिर्फ ५-६ पंक्तियां ही, विद्यमान पत्र ७१ में, उपलब्ध हैं; इसलिये यह अपूर्ण प्रबन्ध प्रस्तुत संग्रहमें सम्मीलित नहीं किया गया।

2 ७२ के बाद ७३ और ७४ ये दो पत्र विद्धप्त हैं इसिलये यह प्रबन्ध अगले पत्रमें किस जगह समाप्त होता है सो अज्ञात है। इस आदर्शके सिवा Be संप्रहमें भी यह प्रबन्ध उपलब्ध होता है इसिलये इसकी शेषपूर्ति वहीं से की गई है। इस प्रतिमें, यह प्रबन्ध, मुद्रित पृष्ठ १०६ की पंक्ति २४ में आये हुए 'निवेदितः' शहके साथ खण्डित होता है।

3 विद्यमान ७५ वें पत्रमें इस प्रवन्धकी नीचे दी हुई सिर्फ अन्तिम ८ ही पंक्तियां उपलब्ध होतीं हैं। और सब विशेष भाग पिछले

बिद्धा पत्रमें विनष्ट हो गया है, इसलिये इस जुटित प्रकरणको भी प्रस्तुत संप्रहके चाल कममें स्थान नहीं दिया गया।

तेजिस्विवातसन्ये नभिस नयसि यत्प्रांशुप्रप्रतिष्ठाम् । . असिञ्जत्थाप्यमाने जननयनपथोपद्रवस्तावदास्तां सोदुं शक्यं कथं वा वपुषि कलुषतादोष एष त्वयैव ॥ ४॥

एकचक्षुर्विहीनोऽयं शुक्रोऽपि कविरुच्यते । चक्षुर्द्वयविहीनस्य युक्ता ते कविराजिता ॥ ५ ॥ नृषेणोक्तम्-किमपि परं पृच्छयताम् । भगवता समस्यार्षिता-'अन्ध ! कियन्ति वियन्ति भवन्ति ।'

> 'एकमनेकमिदं वियदासीन्मध्यमवाप्य घटप्रभृतीनाम् । तद्वत्तेषु घटादिषु नष्टेष्वन्घ ! कियन्ति वियन्ति भवन्ति ॥ ६ ॥

> > पुनरर्पिता-

वक चट तपसे त्वं शाखिनि कापि सान्द्रे श्रय झटिति तटिन्याष्टिहिभस्त्वं तटानि । इह सरसि सरोजच्छन्ननीडे समंता-छुळितगतिरिदानीं रंस्रते राजहंसः ॥ ७ ॥

भगवन्नत्तारके गत्वा स्थानमार्जारयोरमेध्यं युगलान्वितं सरस्ति प्रति होमं प्रारेभे । देव्युवाच-रे ! मम शारीरे स्फोटकान् किमुत्थापयसि । तेनोक्तम्-मया सप्त भवानाराधिता । पट्सु भवेषु स्तोकस्तोकमायुर्मत्वा सप्तमे बाहुन्यादायुप एवं याचिता 'यदहमजेयो भूयासं,' मयाऽत्र पत्तने श्रीदेवाचार्याणां पुरतस्तथा श्रीपालस्य पुरतो हारितम् । देव्याह-मया पत्तनं वर्जितमासीत्, कथं नु त्वसिहायातः । सनृपस्य छन्नं निःसृत्य गतः ॥ इति श्रीपालकवेः प्रबन्धः ॥६४॥

4 प्रस्तुत B संप्रहमें, इस प्रबन्धकी सिर्फ वे ही ६ पंक्तियां विद्यमान हैं जो मुद्रित पृष्ठ २६ की टिप्पनीमें दी गई हैं। आगेका भाग पत्नोंके विनष्ट होजानेसे खण्डित है। यह प्रबन्ध BR संप्रहमें भी, कुछ पाठमेद के साथ, उपलब्ध होता है इसिलये इसकी स्थानपूर्ति, उसी संप्रह परसे की गई है।

§९. (३) BR संज्ञक संग्रह

पाटणके सागरगच्छके 'उपाश्रयमें सुरक्षित प्रनथ-भण्डारमेंसे हमें इस संग्रहकी प्राप्ति हुई है। भण्डारकी सूचिमें इसका नाम आदाराजादिप्रवन्ध लिखा हुआ है। वर्तमान सूचिके मुताबिक, इसका डिज्बा नं० १८, और प्रति नं० ५० है। इसकी पत्रसंख्या कुछ ७ है। पत्रोंको नाप लंबाईमें प्रायः १० इंच और चौडाईमें ४ई इंच है। इसमें सब मिला कर कोई २३ प्रवन्ध लिखे हुए हैं जिनमेंसे ५-६ प्रवन्धोंको छोडकर शेष सब प्रायः उपर्युक्त B संग्रहके साथ पूर्ण समानता रखते हैं। इस संग्रहका लिपिकर्ता पंडित रिवचर्द्धन गणि है। यद्यपि लेखकने इस प्रतिके लेखनकालकी सूचक कोई मिति आदि नहीं दी है-केवल लिखितां पं० रिववर्द्धनगणिभिः।' इतना लिखकर अपना नामनिर्देश मात्र किया है-तथापि इनके हाथके लिखे हुए बहुतसे प्रथ और पत्रादि पाटण वगैरहके भण्डारोंमें जो हमने देखे हैं और जिनमेंसे कुछ पर संवत् मिति आदिका भी उड़ेख किया हुआ मिलता है, उससे इनका अस्तित्व विक्रमकी १८ वीं शताब्दीके पूर्व भागमें निश्चिततया ज्ञात होता है। इस कारणसे, यह संग्रह कोई ढाई सो पौनेतीन सा वर्षका पुराना लिखा हुआ कहा जा सकता है। विशेषतया B संग्रहके साथ समानता रखनेसे, और पं० रिववर्द्धनका लिखा होनेसे इस संग्रहका संकेत हमने BR अक्षरोंसे किया है। इसमें संग्रहित प्रवन्धोंके कमादिका सूचन करनेवाली संपूर्ण तालिका इस प्रकार है।

B	संज्ञक प्रतिमें लिखित प्रकरणानुक्रम		प्रस	तुत पुस्तक	में मुद्रित कम	
	प्रवन्धनाम	पत्र. पृष्ठि. पंक्ति	Bसंप्रहका क्रमांक	प्रवन्धांक	प्रकर्णांक	पृष्ठांक
3	कपर्दियक्ष-जावडिप्रबन्ध	· {प्रा॰ १२१७	•	48	§ २२४	200
2	आंदाराजप्रबन्धं का	{ प्रा० १२१७ स० १२२१	•	३५	§ ११६	५३
3	ांभर्तृहस्रेत्पत्तिप्रवन्ध	्रा० १२२२ स० २१ ३	88	0	0	•
8	मानतुङ्गसूरिप्रवन्ध '	{प्रा० २१ ३ स० -२१२५	\$8	ą	§ २४-§ २७	, १५
4	अभयदेवसुरिप्रबन्ध	र्मा० २१२५ स० २२१५	१६	४६	§ २१४-१५°	९५
Ę	*मोरनागप्रबन्ध	श्रा॰ २२१५ स॰ २२१८	86	0	0	0
9	ट्रिणिगवसहीप्रबन्ध	श्रा० २२१८ स० २२५	२३	\$8	8888	43
6	अम्बिकादेवीप्रबन्ध	श्रा० २२२५	36	28	§ २२०	60
6	दरिद्रनरऋयप्रवन्ध	र्मा० ३१ ३ स० ३१११	. 30	\$	88	7
१०	•मनइ मन इति प्रबन्ध	{ प्रा० ३१११ स० ३११४	३३	"	§ 9	a
55	नागार्जुनप्रबन्ध	{ प्रा० ३२ ३ स० ३२ ३	0	४३	§ 205-06	68
१२	महं सांतूपबन्ध	{ प्रा॰ ३२ ३ स॰ ३२१२	88	86	896	33

^{• 1} इस प्रबन्धकी समाप्तिके बाद प्रतिमें यहां पर वे २ पद्य लिखे हुए हैं, जो प्रस्तुत पुस्तक के प्र० ३१, पद्यां क ९७-९८ के साथ मुद्रित हैं। इनमें आरासणके नेमिनाथ चैत्यकी प्रतिष्ठाका वर्णन है।

[†] यह प्रवन्ध, प्रवन्धचिन्तामणिगत इसी नामके प्रवन्धकी प्रायः शब्दशः प्रतिकृति है इसलिये इसको प्रस्तुत संप्रहमें मुद्रित नहीं किया गया। देखो, उत्तर पृ॰ १२ की 3-6 वाली टिप्पनी।

^{*} देखो, ऊपर पृ॰ १३ पर की गई इसी प्रवन्थ परकी टिप्पनी।

पुरातनप्रबन्धस	THE R. L.
परातनप्रयन्यर	130
3	

23	वसाहआभडप्रबन्ध	प्रा० ३२१२ स० ३२२६	४६	58 .	. १६१	33
58	न्याये यशोवर्मप्रवन्धं •	शिष्ठ ४१ १ सुरु ४१ ८	28	49	§२३३	2009
१५	अंबुचीचप्रबन्ध	∫ प्रा० ४१ ८	. 86	46	§ २३४ -	20%
25		्रिया ४११९ स्व ४२ ३	•	79	e 5 ह	88
. ,	्रंबप्प भट्टिप्रबन्धान्तर्गतप्रकरण	्रिया ० ४ २ ४		•	•	
26	- 00	शा० ४२१०	६२	. 99	§ २३१ -	१०५
86	माघपण्डितप्रबन्ध	∫ प्रा॰ ५१ ६ स॰ ५२१३		- 9	§ २८-३०	29
20	भोजषड्दर्शनप्रबन्ध	शा॰ ५२१३ स॰ ५२१५	इद	9	§३२	36
28	देवाचार्यप्रबन्ध	र्पा० ५२१६ स० ६२२१	59	१६	६५३-५५	79
22	00 - 0	शा॰ ६२२२ स॰ ६२२५	. 0	.26	६५७	38
	जिनम्भसृरिप्रबन्ध	शा॰ ७३ ३	•	•	•	•

११०. (४) G संज्ञक संग्रह
राजकोट (काठियावाड) निवासी जैन गृहस्थ श्रीयुत गोकुछदास नानजीभाई गान्धीके निजी पुस्तक संग्रहमेंसे यह
प्रति हमें प्राप्त हुई है। गोकुछदास नामका सूचन करनेके विचारसे इस प्रतिका संकेत हमने G अक्षरसे किया है।
इसकी पत्रसंख्या कुछ १९ है, लेकिन वीचमें ८ के बादका १ पत्र विछ्ठत हो गया है इसिछिये अब इसके १८ ही पत्रे
विद्यमान हैं। ये पत्रे चौडाईमें ४ ई इंच और लंबाईमें १२ ई इंच जितने हैं। पत्रके प्रत्येक पार्श्वमें १५-१६ पंक्तियां
लिखी हुई हैं। लिखावट बहुत अच्छी है-अक्षर सुवाच्य और सुन्दराकार है। प्रति कहीं, कमी, पानीसे कुछ भींग
गई माछम देती है और इसिछिये किसी किसी पत्रेका कुछ कुछ हिस्सा एक दूसरे पंत्रेके साथ चिपक जानेसे, कहीं
कहीं कुछ अक्षर या शब्द नष्ट हो गये हैं। प्रस्तुत पुस्तकके पृष्ट ३५ और ४५ आदिमें जो खण्डित पाठ दिया हुआ
दिखाई देता है, वह इसी सबबसे है। प्रति अच्छी पुरानी है। लेकिन, खेद है कि लेखकके नामादिका कोई निर्देश
नहीं मिछता। इसके अन्तमें जो पातसाहिनामाविल लिखी हुई है उससे इतना अनुमान किया जा सकता है कि,
वि० सं० १४०७ के बाद, दिहीके बादशाह पेरोज (फिरोजशाह) के राज्यकालमें यह लिखी गई होनी चाहिये।

यद्यपि, यह संग्रह एक प्रकारसे संपूर्ण ही है-आद्यन्तका कोई भाग खण्डित नहीं है, लेकिन, इसके पन्नोंपर जो मूलभूत कमांक लिखे हुए हैं उनसे सूचित होता है कि यह एक किसी बहुत बडी पोथीका एक लोटासा हिस्सा मात्र है। पन्नोंके ये मूलभूत कमांक प्रत्येक पन्नेकी दूसरी पूंठी (पृष्ठि) पर, दाहिनी ओरके हासियेके मध्यभागमें, रेह्नआ रंगसे रंगे हुए चंद्रक पर लिखे हुए हैं। इसमें प्रथम पत्रका यह क्रमांक १२६ है और अन्तिम पत्रका १४४।

[‡] बप्पभिद्यस्तिके प्रवन्धमें का एक प्रकरण इस संग्रहमें लिखा हुआ मिलता है लेकिन अन्यान्य संग्रहोंमें इस विषयका कोई प्रकरण या वर्णन न होने से हमने इसको मूल प्रन्थमें सम्मीलित नहीं किया। बप्पभिद्यस्तिके सम्बन्धमें अनेक ऐसे छोटे वडे खतंत्र प्रवन्ध लिखे हुए मण्डारोंमें मिलते हैं, और इन सबका एक खतंत्र पृथक् संग्रह करनेका हमारा संकल्प है। इसलिये प्रस्तुत संग्रहमें इस प्रकरणको केवल संग्रहकी दृष्टिसे टिप्पनीके परिविध रूपमें दे दिया है।

[ा] जिनप्रमस्रिका सम्बन्ध प्रबन्धिचन्तामणि वर्णित व्यक्तियोंके साथ न होनेसे तथा विविधतीर्थंकल्प नामक प्रन्थ, जो इन्हींकी एक विविष्ठ कृति है और इस प्रन्थमालामें इतःपूर्व मूल रूपसे प्रकाशित भी हो चुका है, उसके द्वितीय भागमें इनके विषयका समप्र साहित्य एकत्रित करनेका निर्धार है, इसलिये, इस प्रबन्धको भी प्रन्थान्तर्गत नहीं किया गया । परंतु संप्रहमात्रकी दृष्टिसे टिप्पनीके परिविष्टमें मुद्रित कर दिया गया है ।

इससे ज्ञात होता है कि इस पोथीमें, इन पत्रोंके पहले, १२५ पन्ने और अवस्य थे। लेकिन जब तक वे कहींसे मिल न आवें तब तक, उन पन्नोंमें क्या लिखा हुआ था उसके जाननेका कोई उपाय नहीं है।

§११. G संग्रहका आन्तर परिचय.

यह संप्रह, ऊपरके P. B. Br. संप्रहोंके जैसा कोई सुसंकलित या सुप्रथित प्रन्थस्वरूप नहीं है। यह एक प्रकारका, पुरानी कथा वार्ता विषयक संक्षिप्त टिप्पणोंका प्रकीर्ण संप्रह मात्र है, जो किसी विद्वान्ने अन्यान्य प्रन्थोंमें पढ कर या अन्य जनोंके मुखसे सुन कर निजकी स्मृतिके लिये लिख लिया है। इसमें, प्रारम्भमें जो विकमादिल प्रवन्ध लिखा हुआ है वह एक मात्र किसी पुरातन लिखित-प्रबन्धकी अनुलिपि-रूप है; और बाकी सब इस संबहके लिपिकर्ताका स्वयं किया हुआ संक्षिप्त और अञ्चवस्थित संचयन है। इसमें, विक्रमादिस प्रबन्धको छोड कर कोई १३५-३६ कथा-वार्ताओंका संचय है। इसमें न किसी त्रकारका कोई कम है, न पूर्वापरका कोई सम्बन्ध है; न भाषाकी संस्कारिता है, न वर्णनकी व्यवस्थितता है। एक ही व्यक्तिके विषयकी कोई वार्ता कहीं लिखी हुई है और कोई कहीं। इनको कुछ व्यवस्थित रूप देनेके लिये हमने इन सबको अलग छांट छांट कर, प्रस्तुत पुस्तकमें, प्रबन्धचिन्ताम-णिगत विषयवर्णनके कममें संकलित की हैं। जैसे कि सिद्धराजके साथ सम्बन्ध रखनेवाली सब बातें सिद्धराजके वर्णनप्रसंगमें एकत्रित दे दी हैं और वस्तुपालके इतिवृत्तके साथ सम्बन्ध रखनेवाली बातें वस्तुपालके प्रबन्धके साथ . अधित कर दी हैं। वैसे ही प्रकीर्ण या फुटकर जो दृष्टान्तादि हैं उन सबको अवशिष्ट प्रकरणके रूपमें एक जगह संकलित कर दिया है (देखी, पृ. ११२ से ११५)।

इस संग्रहमें ये सब कथा-वार्ताएं किस कममें लिखी हुई है उसका यथार्थ बोध होनेके लिये, P. B. आदि संप्रहोंकी सचिके मताबिक इसकी संपूर्ण सचि भी यहां पर, उसी तरह विस्तारके साथ दी जाती है।

G संबक प्रतिमें लिखित प्रकरणानुकम					प्रस्तुत पुस्तकमें मुद्रित कम	1000
प्रबन्धनाम अस्त विकास निवाद न		पत्र.	पृष्ठि.	पंकि	प्रकरणांक	पत्रांक
†विक्रमार्कप्रबन्ध	प्रा° स°	१२६ १२७	3	- 3	§ ११	4-6
†विक्रमादित्यप्रबन्ध	प्रा ॰ स॰	१२७ १२८	3	99	§ १२	.6-9.
१ जयसिंहदेवसभाक्षोभवृत्तान्त	स°	१२८	3	१२	§७२ .	३६
२ सभाक्षोभविषयक अन्यवृत्तान्त	स°	"	3	१५	§२५२	358
३ जीव-इन्द्रियसंवादवृत्तान्त*	स°	"	7	2	•	0
४ गूर्जरविद्वत्ताविषयक डामर-भोजसंवाद	स॰	33.	2	8	358	28
५ अनुपमाकारितनन्दीश्वरप्रासादकथा	स°	"	2	88	§ १६ ५	94
६ भोजराज-सिद्धरसवर्णनवृत्तान्त	स॰	"	3	१५	\$8 §	२२
७ हेम्सूरिमातामरणवृत्तान्त	स°	१२९	3	8	§ 99	39
८ वस्तुपाल-नोडासइद धनवर्णन	स°	"	3	१०	§ १५८	७३
	स°	"	2	2	\$ 308	69
	स°	33.	2	Ę	\$ 908	89

^{• †} विक्रमविषयक इन दोनों प्रबन्धोंके लिये इस संप्रहमें कमसूचक संख्यांक नहीं दिये गये हैं; इसके आगेके सब प्रकरणोंके साथ 9. २. ३. ४. आदि क्रमांक बराबर दिये हुए हैं। इससे मालूम होता है कि ये दोनों प्रबन्ध किसी पुरातनकृतिके अनुलिपि मात्र हैं, और बाकीका सब लिखान, इस संप्रहके लेखकका निजका संकलन है।

🍍 इस कथाका विषय आध्यात्मिक हो कर, प्रस्तुत प्रन्थके विषयके साथ कोई सम्बन्ध नहीं रखता । इसलिये हमने इसको मूलमें प्रविष्ट

नहीं की, लेकिन संप्रद्की दृष्टिसे टिप्पनीके परिशिष्टके रूपमें पृथक् दे दी है।

					•		
- 88	वीसलदेवगीतशिक्षणवृत्तान्त	स°,	, 1	२ ११	- 1111.3	3088.	90
2=	र नागलदेवीगीतोपदेशवृत्तान्त	स°,	,	२ १३		.§ 209	90
१३	जगडूवसाहप्राप्तअश्ववृत्तान्त •	स°१३		. 7.	17.	११८इ	.60
१४	पृथ्वीपुरश्रेष्ठीवृत्तान्त‡	स° ,		8			
	गयणा-मयणा इन्द्रजालिकवृत्तान्त	स° ,	100.00 Fe	इ		800	\$6
	विक्रमरोगोत्पत्तिवर्णन	स°,		2 9		388	20
	मयणल्ला पापघटवृत्तान्त	स°,	113	११०		§६८	३६
	अभयदेवसूरिवृत्तान्त	स°,		१३		§ २४२	. 888
	वलभी-यवनागमनवृत्तान्त	स° ,		? -?		§ १९३	63
20	अमरचन्द्रकविवृत्तान्त	स° ,		2 6		6668	30
	कच्छदेशीयजिणहाव्यापारीवृत्तान्त	स° "		28		§ २५३	११५
	यशोभद्रसूरिपारणावृत्तान्त	स° ,		१ १३		§ २५४	११५
	कर्णाटचपपुलकेशिमृत्युवृत्तान्त	स° ,,		१५		§ इ ९	. 35
	जगडूदानवृत्तान्त	स॰ १३	- 10	Ę		8869	60
. 29		स° ,,	. 8	6		f	STEEL STREET
२६		₹° ,,		28		3998	64
२७		स° "	0			Walland.	
	सीतापण्डितावृत्तान्त	770	2			880	78
	हेमाचार्यछत्रशिलावृत्तान्त	स° ,,	-			\$96 .	:39
	भोजराजनमोविधानवृत्तान्त	स° "	2			888	२२
	कालीदाससमस्यापूर्तिवृत्तान्त	स° "	2			829	१०
	नागलदेवी-मयणसाहारवृत्तान्त	स° "	२			\$ \$ 2 \$	७९
	उदयमभसरखतीध्यानवृत्तान्त	स॰ १३	777	3		8200	७६
	कुमारपालराज्यप्राप्तिशकुनवृत्तान्त	₽° "	2	8		800	४६
	कर्णमातादेमतिमृत्युवार्ता	स° ,,	. 8	9		884	२३
38	भोजकुण्डलोत्कीर्णकाव्यवार्ता	स° "	9	9		885	72
39	हैमञ्चाकर णकर णवत्तान्त	स° "	?	\$8	1	808	30
36	भोज-भीम-कर्णयुद्धवृत्तान्त	स° "				§ ४६	. 93
30	लघुवाग्भटकृतौषिधवृत्तान्त	स° ,,	-			§ २१८	९६
80	वारभटजलोदररोगवृत्तान्त	स° ,,	-			§ २१ ३	९६
	श्रीमातावृत्तान्त	₹° ,,	2	१०		\$? ? 9	68
		17					

[‡] इस कथाका भी इतिहासके साथ कोई संपर्क न होनेसे, इसे भी टिप्पनीके परिशिष्टमें मुद्रित की है।

⁺ पद्यांक (२०१) के बाद जो ३ किंडकायें दी गई हैं और जिनमें कमसे (२०२), (२०३), (२०४), के पद्यांक दिये हुए हैं वे ही तीन किंडकायें ये २५, २६, और २७ संख्या वाली कथायें समझनी चाहिए।

100	प्रास्ताविक वक्तव्य ।	•	38
४२ वंराहमिहिरवृत्तान्त	स॰ ,, २१	\$ \$ \$ \$ \$ \$	90
85 *	स॰ ,, २ १	3	
४४ रामवनवासफलभक्षणवातों	स॰ ,, २ १९	4	•
४५ घृतवसतिकाउत्पत्तिप्रवन्ध	स॰ १३३ १	१	७५
४६ हेमसूरि-वादि-शब्दच्छलवृत्तान्त	स॰ ,, १	§ 94	. 39
४७ यशोधनव्यवहारिवृत्तान्त	₹° ,, ११	१	११२
४८ मयणसाहारनासाच्छेदनवृत्तान्त	स° ,, १ १८	\$ \$260	७९
४९ सारंगदेवप्रधानवृत्तान्त .	स॰ ,, ११७		११२
५० सिद्धि-बुद्धियोगिनीवृत्तान्त .	स॰ " २ ३	१७१	३ ६
५१ सिद्धराज-सान्तूमंत्रीवृत्तान्त	स॰ " २ ११		34
५२ उन्मत्तप्रधानवृत्तान्त	स॰ ,, २ १४	§ 288	११३
५३ मित्रचतुष्कवार्ता		§ २४ ५	. ११३
५४-६१ [विनष्टपत्रांक १३४ तमे नष्टा	रताः सर्वाः वार्ताः]	PASSES AND
६२ मुंज-भोज-बन्धमोक्षवृत्तान्त×	स॰ १३५ १ ७		२०
६३ भाग्यविषयकराजिलदृष्टान्त	स॰ १३५ १	§ २४ ६	223
६४ भोजराज-दामरवृत्तान्त	स॰ " २	० १३७	28
६५ वाक्पतिराजकविवृत्तान्त		§ २ ४०	११२
६६ रात्र्यन्धकथानक	स॰ ,, २ ९	्र १	883
६७ व्यवहारिसुताकथानक	स॰ " २ १	,,,	75
६८ चातुर्थिकज्वरवृत्तान्त	स॰ ,, २ ११	×400 = 200	100
६९ काचमयपेटीवृत्तान्त	स॰ ,, २ ११	THE RESERVE	2,58
७० राजपुत्रीकथानकं	स॰ १३६ १		A CONTRACT OF STREET
७१ भोजराज-खात्रपातकवृत्तान्त**	स° ., १ ७	antendalette,	11111

* सिर्फ आधी पंक्तिमें इस ४३ वें प्रवन्धकी सूचना है। इसमें कीनसी वार्ता या कथाका सूचन है सो स्पष्ट ज्ञात नहीं होता। जो आधी पंक्ति लिखी हुई है वह इस प्रकार है—

"विवाहयित्वा यः कन्यां० ॥ १ ॥ इति हेतोर्जलिधभुक्तराजपत्नीसुतसपादलक्षद्वीपार्पणप्रवन्धः ॥ छ ॥ ४३ ॥"

🙏 प्रस्तुत प्रनथमें उपयोगी न होनेसे इस वार्ताको भी हमने प्रन्थान्तर्गत नहीं किया । यह इस प्रकार है-

श्रीचित्रकृटपर्वते प्रथमवनवासे सौमित्रिणा वने भ्रान्त्वा वनफलान्यानीय श्रीरामदेवाग्रे मुक्तानि । तदा फलानि दृष्ट्वा दैवेद निगदितम्-

पृथिव्यामञ्जपूर्णीयां वयं च फलकांक्षिणः।

सीमित्र ! नूनमसाभिः पात्रे दत्तं पुरा नहि ॥ ४ ॥ × इस वृत्तान्तका प्रारम्भका कुछ कथन, विनष्ट पत्र १३४ में रह गया है इसलिये इसके प्रारंभमें......ऐसी खण्डित भाग सूचक

बिंदुराजि दी गई है।

** अमनशा, यह बत्तांत, मूल संप्रहमें मुद्रित होनेसे रह गया है, इसलिये, इसे यहां पर उद्धृत कर दिया जाता है-

अन्यदा श्रीभोजेन निशि सौधोपरिस्थितेन निजराज्यस्य स्फार्ति विलोक्य गर्वितेन प्रोक्तिमिति-चेतोहरा युवतयः सजनोऽनुकूलः

सद्धान्धवाः प्रणयगर्भ [गिरश्च भृत्याः। गर्जन्ति दन्तिनिवहास्तरलास्तुरङ्गाः....]



	•			•		
७२ गृढमहाकालोत्पत्तिवृत्तान्त	स° ,,	3	88		884	
७६+ क्षगद्देवदानवृत्तान्त	स° ,,	. ?	१३		\$? ? ८ †	- 69
७७ वराइमिहिरवृत्तान्त	स° ,,	2	. 2		१२०७	. 90
७८ वाग्भटवैद्यवृत्तान्त	स° "	3 2	8		§ २१७	. 95
७९ वीसलदेवचक्षुपीडावृत्तान्त	स° "	2	१०		११८२	90
८० कुमारपाल-कालिंगीयकवृत्तान्त	स° "	2	23		§ 93	४६
८१ " द्विकलत्रव्यवहारिवृत्तान्त		2			868	. 99
८२ सोमेश्वरकृत वस्तुपालप्रशंसा	स॰ १३७	१	3		§ १६१A	७४
० 'सातवाहनसम्बन्धिगाथावृत्तान्त	स° "	?	33		\$ 86	28
८३ जलोदररोगि-आचार्यवृत्तान्त	स° "	?	१३		8286	888
८४ शिवतपोधनकवितावृत्तान्त	स° "	3	१६		\$? \$	१०
८५ वस्तुपालअन्त्ययात्रावृत्तान्त	स° "	2			११७६	30
८६ कुमारपालशकुनप्राप्तिवृत्तान्त	स° "	2	4	-	§ 66	84
८७ कुमारपालराज्यनिवेशवृत्तान्त	स° "	2	38	- 1	898	- 29
८८ कुमारपाल-कडीतलारक्षवृत्तान्त	स॰ १३८	?	2	114	865	४६
८९ कुलचन्द्रक्षपणकवृत्तान्त	स° "	3	9	191	\$39	99
९० कुष्टरोगि-आचार्यवृत्तान्त	स° "	3	१२		§ 286	558
९१ सामुद्रिकशास्त्रवेदिवृत्तान्त	स° "	?	१४		888	१०
९२ लाखाकफुल्लडवृत्तान्त	स° ,,	2	8		\$ 78 .	१२
९३ वनराजजन्मवृत्तान्त	स° ,,	2	१२	-	§ 20	99
९४ जयसिंहकृतधाराभंगवृत्तान्त	स॰ १३९	?	8	· 111	§ इ. द	34
९५ , त्रिभुवनपालघातवृत्तान्त	स° "	3	9		§ 93	३६
९६ कुमारपालखर्णसिद्धीच्छावृत्तान्त }	स° "	3	9		\$ 20	४६
,, सिद्धराजगुणतुलनावृत्तान्त 🕽	"	3	9		\$96	89
९७ अम्बाकारितपद्यावृत्तान्त	स° "	3	\$\$		800	"
९८ अजयपाल-कपर्दिमंत्रीवृत्तान्तं	स° "	3	१३		११०६	86

वारं वारं पदत्रयमिति पठ्यमाने दरिद्रोपहुतेनैकेन पण्डितेन खात्रपातं कुर्वता इति पठितम्-"संमीलने नयनयोनिखिलं न किञ्चित्।"

इत्युक्ते राजा धीरां दत्त्वा प्रसादितः॥ ७१॥

+ मूल आदर्शमें ७३, ७४ और ७५ ये कमाइ छोड दिये गये हैं और ७२ के बाद ७६ का अंक दिया हुआ है। इसका कारण कुछ समझमें नहीं आता। क्या भूलसे ऐसा किया गया है या अन्य किसी विचारसे सो अस्पष्ट है।

ं पृ० ८५ पर जो जगहेव प्रबन्ध दिया हुआ है उसकी प्रथम कण्डिका मात्र ही [पंक्ति १० से १६ तक] इस कमांक वाळे वृत्तान्तका भाग है। शेष ३ कण्डिकार्ये ऊपर निर्दिष्ट २५, २६, २७, कमांक वाळे वृत्तान्तकी अंशभूत हैं।

A पृ० ७४ परकी पंक्ति १८ से २६ तकका अंश ।

1 इन गाथाओं के साथ कोई कमांक नहीं दिया गया है।

2 मूलमें इसका कमांक भी ९७ ही लिखा हुआ है और यह गलती आगेके सभी कमांकोंके साथ चलती रही है। इसी तरह आगे १०१ और ११६ कमांक भी दो दो दफा लिखे हुए हैं।

-4-0	
प्रांस्ताविक	वक्तव्य।

						•	
९९ आम्बङ्कृतमहिकार्जनवधवृत्तान्त	स°	१३९	2	4	\$ 9 9 9 9 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1	४६.	
१०० आम्बडोचारितप्रतिज्ञावृत्तान्त	स°	"	2	9	§ 9 9	"	
१०१ भृगुकच्छीयबालइंससूरिवृत्तान्त .	स°	"	2	20	§ १७ १	. 95	
१०२ राजीमतीछिपिकावृत्तान्त	स°	79	2	58	§ १८ ३	60	
१०३ हेमाचार्योक्तकुमारपालमृत्युवृत्तान्त	स°	"	2	१६	\$ 805	- 89	
१०४ कुमारपालमृत्युपसंगवृत्तान्त	स॰	380		3	§ १०३	"	
१०५ स्रोमेश्वरत्यक्तव्यासवृत्तिवृत्तान्त	स°	77	8	3	8888	60	
१०६ विक्रमादित्य-कार्पटिकवृत्तान्त	स°	19	?	4	§ ? ₹	9	
१०७ वस्तुपालदानवृत्तान्त	स°	22	8	8	§ १ ६२	७४	
१०८ खलकृतवस्तुपालनिन्दावृत्तान्त	स॰	"	?	38	§ १६३	- 99	
१०९ भोजराजपदत्तवैद्यग्रासवृत्तान्त	स°	53	2	2	§88	77	
११० लघु-वृद्ध-वाग्भटवैद्यवृत्तान्त	स°	"	2	9	§ 788°	69	
१११ षड्दर्शनसम्मेलनवृत्तान्त	स°	99	2	9	§ ३२	?9.	
११२ वस्तुपालमंडितचचरवृत्तान्त	स°	"	2	28	§ १ ३ ९	७इ	
११३ देपाकदत्तपुण्यवृत्तान्त	स॰	१४१	?	2	\$ 849	. 93	
११४ व्यवहारिजगडूवृत्तान्त	स°	99	?	2	§ १८ ५	60	
११५ पुञ्जराज-श्रीमातावृत्तान्त	स॰	33	8	ą	§ ? ? 9	82	
११६ पादलिस-नागार्जनवृत्तान्त	स॰	"	?	१०	§ २१३	68	
११७ वामनस्थलीयपण्डितवृत्तान्त	स°	77年	?	१२	१२५०	888	
११८ व्यवहारिमुख-उन्दक्तिवृत्तान्त	स°	"	?	88	§ 2 48	"	
११९ वलभीविनाशसूचनवृत्तान्त	स°	"	2	8	§ १९४- ९ ६	63	
१२० वस्तुपालकृतसंघामंत्रणवृत्तान्त	स॰	"	2	2	\$ \$ \$ \$ 6	७६	
१२१ वस्तुपाल-माणिक्यसूरिमीलनवृत्तान्त	स°	,, T	2	88	§१७२	98	
१२२ हरिहर-मदनकविद्वयवृत्तान्त	स॰	१४२	?	8	\$668	99	
१२३ कुमारपालसन्तत्यभाववृत्तान्त	स°	"	?	ą	\$69	89	
१२४ कुमारपालसोमेश्वरदर्शनवृत्तान्त	स°	33	3	9	\$ 200	89	
१२५ मयणल्लामोचितबाहुलोडकरवृत्तान्त	स°	"	3	9	§ इ. ७	38	
१२६ हेमसूरिसर्वरसवेदकवृत्तान्त	स°	55	3	१२	§ ७ ३	30	
१२७ रामकृतधान्यकुशलप्रच्छावृत्तान्त	स॰	"	3	१६	§ २ ५५	११५	
१२८ पादलिप्तसरिकतवादिपराजयवृत्तान्त		99	2	32	§२१३	९५	
1 / A TIME WILLIAM THE THE TELEVISION OF COLUMN	-	11		100			

³ प्रतिमं गलतीसे इसका कमांक दुवारा १०१ दिया गया है।

⁴ पृ॰ ९७ की पंक्ति ४ से ८ तकका अंश।

⁵ पृ॰ १९ पर मुद्रित षड्दर्शनप्रवन्धका संक्षिप्त सूचन मात्र किया गया है इसलिये यह पंक्ति संप्रहमें पुनर्मुद्रित नहीं की गई।

I पृ॰ ९५ पर, मुद्रित पंक्ति ३ से ७ तकका अंश ।

0 00						13		
.१२९ खरतराचार्यप्रदर्शितदयावृत्तान्त	स°	१४२	2	6	20	. १२५६	-ilta	334
१३० चारणकृतयशोवीरप्रशंसावृत्तान्त	स॰	77	2	33	C	\$ \$ \$ \$ \$ ×	11.5	् ५१
१३१ राज्ञीभ्रातृबुद्धिपरीक्षावृत्तान्त	स°	99	2	.28	- 40	§ २५७		380
१३२ पं० रामचन्द्रविपत्तिवृत्तान्त	स	१४३	?	2	Thin_	१०७	1 3	86
१३३ वस्तुपालसैनिकभूणपालवृत्तान्त	सः	22	8	a		§ १६०	10	. 98
१३४ सोमेश्वरकृतवस्तुपालस्तुति	स°	"	3	6		§ १६१		"
१३५ वामनद्विजकृतवस्तुपालचाडावृ०	सः	"	8	१६	TEST.	§ १६४		92
१३६ वस्तुपालकारितमूलराजहस्तच्छेदवृ०	स°	77	2	2		868§		. 99
१३७ पिप्पलाचार्यप्रदर्शितविनोददानवृ०	स॰	77	2	• 4		१३३७		७३
१३८ हरदेवचाचरीयाकवृत्तान्त	स॰	"	2	१२		§ १७६		30
१३९ पाटलीपुरीयनन्दन्यवृत्तान्त	स°	"	7	१५		\$ 326		८२
१४० जयचेन्द्रसपवृत्तान्त	स॰	१४४	3	9		§२०६		90
पातसाहिनामावलि	स॰	22	2	9	100	-		१३५

§१२. (५) Ps संज्ञक संग्रह

पाटणके संघके नामसे प्रसिद्ध मन्थ भण्डारमें ६ पन्नोंकी एक प्रति हमें मिली जिस पर वस्तुपाल-तेजः पालप्रवन्ध ऐसा नाम लिखा हुआ है। पाटणके संघका नाम सूचित करनेके लिये हमने इसका संकेत P3 अक्षरसे किया है। नाम मात्र देखनेसे तो ऐसा अम होता है कि यह वही प्रवन्ध होगा जो राजशेखर सूरिके प्रवन्धकोपमें अन्तिम भागमें प्रथित है; क्यों कि इस प्रवन्धकी स्वतंत्र प्रतियां भी कहीं कहीं दृष्टिगोचर होती हैं। लेकिन प्रतिका प्रयक्ष अवलोकन करने पर विदित हुआ कि यह प्रवन्ध राजशेखरकृत प्रवन्धसे सर्वधा भिन्न है। उतना ही नहीं परंतु इस प्रवन्धके प्रणयिताका उदेश तो उक्त प्रवन्धकोषणात वस्तुपाल-तेजपाल प्रवन्धमें जो जो वातें अनुष्टिखित रहीं हैं, खास करके उन्हींका संप्रह करनेका है। इस बातका उद्धेख प्रवन्धप्रणेताने स्वयं प्रकरणके प्रारम्भ-ही-में 'अध श्रीवस्तुपालस्य २४ प्रवन्धमध्ये यसास्ति तद्त्र किश्चित्विख्यते।' यह पंक्ति लिख कर किया है। इससे यह भी ज्ञात होता है कि इसका प्रणयन, राजशेखरकृत प्रवन्धके पश्चात् हुआ है। इसका प्रणेता कौन है सो ज्ञात नहीं होता। प्रतिमें कहीं भी कर्ताका नामनिर्देश किया हुआ नहीं मिला। संघके भण्डारकी यह प्रति है बहुत पुरातन। यद्यपि इसमें लिपिकर्ता वगैरहका कोई उद्धेख नहीं होनेसे इसका लेखन-समय ठीक निश्चित नहीं कर सकते; तथापि इसकी स्थिति देखते हुए, संभवतः वि० सं० १५०० के पहले या उसके आसपास इसका समय सूचित किया जा सकता है। इस प्रवन्धके प्रणेताने, प्रवन्धगत वृत्तान्तोंमें बहुतसे तो B और P संज्ञक पुराने संप्रहों ही परसे नकल किये माल्य देते हैं। सिर्फ कहीं कहीं कुछ वृत्तान्त या पंक्तियोंमें न्यूनाधिकता दृष्टिगोचर होती है।

§१३. (६) परिशिष्ट

प्रस्तुत संग्रहके अन्तमें, पृष्ठ ११६ से १३४ तक, प्रबन्धचिन्तामणिगुम्फितकितपयप्रबन्धसंक्षेप इस शिरोलेखके नीचे जो १ परिशिष्ट दिया गया है उसकी मूल प्रति हमें अहमदाबादके डेलाके उपाश्रयवाले भण्डारमेंसे प्राप्त हुई है। इसकी पत्रसंख्या ५ है। अन्तमें 'श्रीजयसिंहप्रबन्धाः।' ऐसा पुष्पिकावाक्य लिखा हुआ होनेसे भण्डारकी सूचिमें 'जयसिंहप्रबन्ध' के नामसे इसका निर्देश किया हुआ है। परंतु प्रतिका साद्यन्त अवलोकन करने पर स्पष्ट हो जाता है कि इसमें, प्रायः प्रवन्धचिन्तामणिसंकलित कितनेएक मुख्य मुख्य प्रवन्धोंका किसी विद्वान्ते संक्षिमी-

[×] इस कण्डिकाका अन्तिम भाग,-पृ० ५१ की पंक्ति १२ से १७ तक।

करण किया है। इस संक्षेपका कर्ता कौन है सो अज्ञात है, वैसे ही प्रतिके लेखन-समयादिका सूचक भी कोई उल्लेख प्राप्त नहीं हुआ। प्रतिका रूप रंग देखते हुए अनुमान कर सकते हैं कि कोई ३००-४०० वर्ष जितनी प्रतिन तो जरूर होगी। प्रतिके हांसियोंमें कई भिन्न भिन्न प्रकारके हस्ताक्षरोंमें टिप्पनादि किये हुए दृष्टिगोचर हो रहे हैं इससे ज्ञात होता है कि इसका पठन वाचन कई जिज्ञासुओंने किया है।

§ १४. उपसंहार

इस प्रकार प्रस्तुत संप्रहका संकलन करनेमें हमने मिन्न भिन्न ऐसे ६ संग्रह प्रन्थों का सम्पूर्ण उपयोग किया है; जिनमें ५ तो खतंत्र प्रबन्ध-संग्रह हैं और १ प्रबन्ध-बिन्तामणि-ही-के कुछ भागका खल्प संक्षेप मात्र है । एक Ps संग्रहको छोड कर शेष पांचों प्रतियों के कितनेएक पत्रों के हापटोन च्लाक बनवा कर उनकी प्रतिकृतियां इसके साथ संलग्न कर दी गई हैं जिससे पाठक प्रतियों के वर्णनगत परिचयके साथ इनके आकार-प्रकार आदिका प्रत्यक्ष दर्शन भी कर सकेंगे। अन्तमें हम इन प्रतियों के संरक्षक, और इस प्रकार यह समुद्धार करने में हमें पूर्ण सहानुभूति पूर्वक इनका यथेष्ठ उपयोग करने में सुलभता प्राप्त करा देने वाले सज्जनों के प्रति हम अपनी आदरपूर्ण कृतज्ञता प्रकट करते हैं। इनमें P प्रतिके साथ विद्वान सुनिवर श्रीपुण्यविजयजी महाराजका, तथा G प्रतिके साथ उसके संप्राहक श्रीयुत गोकुल्दास नानजी भाई गान्धीका नाम निर्देश हमने ऊपर स्पष्ट कर ही दिया है। यहां पर B प्रतिके संरक्षक, स्वर्गत सुनिवर श्रीभक्ति-विजयजी के सुशिष्य और साहित्यप्रिय सुनि श्रीजसविजयजी महाराजके प्रति हम अपना सविशेष कृतज्ञतभाव प्रकट करते हैं जिन्होंने कई वर्षों तक इस प्रतिको हमारे पास पड़ी रहने देनेकी उदारता बतलाई है तथा और और भी पुस्तकादि प्राप्त करने-कराने में जो सदैव हमारे प्रति सोत्साह प्रेरणा एवं प्रयत्न करते-कराते रहते हैं।

महानीर जन्मतिथि, चैत्र, सं० १९९२. भारतीनिवास; अहमदावाद.

जिन विजय

SANS 089.912 POR



प्रास्ताविक-टिप्पनीस्चितपरिशिष्टसंग्रह

[१] अ संग्रहगत ऋषिदत्ता कथानक।

रथमईनं नगरम्, राजा हैमरथः, सुयशा राज्ञी, पुत्रः कनकरथः। इतश्च कौबेरी नगरी, राजा सुन्दरमाणिः, राज्ञी बासुला, सुता रुक्मिणी। प्राप्तवरा जाता, कनकरथस्य दत्ता। ततः परिणेतुं तस्यागच्छतो देशसीम्नि आवासेषु दत्तेषु केनापि पुरुषेण इति विज्ञप्तम्—यत्, अस्य देशस्य स्वामी राजा अरिदमन इति ज्ञापयित—मम सीम्नि राजचिन्हानि मुक्त्वा त्वया पुकाकिना गन्तव्यम्। अन्यथा युद्धसज्जो भव। तथा तस्य दूत[स्य] मुखादमुं श्लोकं श्रुत्वा—

यदि मत्तोऽसि मतंगज! किममीभिरसारसरलद्रुनैः। हरिमनुसर खरनखरं व्यपनयति स करटकण्ड्रतिम्।। १।।

स्रोकमाकर्ण्य युद्धाय समागतः ।

एयति घोडा एअ बल एअति निसिआ खग्ग ।

इत्थ मुणीस जाणीअइ जो निव वालइ वग्ग ॥ २ ॥

धडु घोडइ सिरु धरणिअलि अंतावलि गिद्धेहिं ।

महु कंतह रिणसामीअह दिन्नं तिहु खंधेहिं ॥ ३ ॥

स राजा कुमारेण जितः । आज्ञाविधायी जातः । स व्रतं पालियत्वा मुक्तिं जगाम । कुमारेण श्रीनेमितीर्थं [प्रति] प्रयाणं कृतम् । एकसिन्निप सरिस आवासेषु जातेषु वनमध्ये काञ्चित्कन्यकां हृष्ट्या गतां ज्ञात्वा परिश्रमन् श्रीयुगादिचैत्यं गतः । देवस्तवनानन्तरं यावत्पद्यायां निविष्टः, तावदेको वृद्धतपोधनः कन्यासिहतः पूजोपचारयुतो हृष्टः । कन्या कुमारं विलोकयेति चिन्तितवती—

किमिन्द्रः किम्रु वा चन्द्रः किम्रु वासौ दिवाकरः । देवः किमथवा साक्षादयं मकरकेतनः ॥ ४ ॥

अथवा

कलङ्की रजनीजानिस्तपनस्तपनः पुनः । अनङ्गस्तु मनोजन्मा तत्कोऽयं सुभगात्रणीः ॥ ५ ॥

अथ कुमारेण स नमस्कृतः । मुनिना इत्युक्तः—त्वं कस्य सुतः १, केन कारणेनात्रायातः १ । कुमारस्य भट्टेन पूर्ववृत्तान्तः कथितः । कुमारेणापि मुनेः पार्धादिति पृष्टम्—कथमत्र १, के यूयम् १, का कन्या १, कथमत्र देवगृहम् १ । कारणं कथयत । ततो मुनिना देवपूजाऽनन्तरं कुमारं निजाश्रये नीत्वा स्वचित्रमिति कथितम्—वत्स । श्रूयताम् , अस्मिन् भरते मंत्रिवती पुरी, हिरिषेणो राजा, प्रिया प्रियदर्शना, पुत्रोऽजितसेनः । कदाचित्स राजाऽश्वापहृतो वनेऽस्मिन् कच्छ-महाकच्छानुक्रमे कुरुपतिं विश्वभृतिं प्रणम्य उपविष्टः । आशीर्वादः प्रदक्तिन । राजन् !

यसांश्रयोः खेलति कुन्तलाली श्रियेस्तु वः स प्रथमो जिनेन्द्रः । गम्भीरसंसारसमुद्रमध्यादुनमञ्जतः शैवलवछरीव ॥ ६ ॥

ततोऽनन्तरं रुक्षणैर्नृपं विज्ञाय मुनिना पृष्टम् कृतो यूयमेकािकनः ?, कथिमहागताः ? । तेन वृषमान्वयेन श्रीआिदनाथः प्रासादः कािरतः । मुनिना तस्य विषापहो मंत्रो दत्तः । ततः स राजा स्वपुरं गतः । तत्र समये मंगलावती पुरी, त्रियन् दर्शननरेन्द्रस्य प्रीतिमती दुहिता । केनचित् पुरुषेण राज्ञः सर्पद्षा कथिता । ततो हरिषेणस्तत्र गत्वा, तां निर्विषीकृत्य परिणीय च सपुरं समायातः । कियत्यपि काले वृद्धत्वे भार्यया सह तापसी दीक्षां जम्राह । तां प्रकटगर्मा निरीक्ष्य, राजिषमुपालभ्य कुल्पितरन्याश्रमं तौ त्यक्त्वाययौ । तेन दुःखितो यावदास्ते तावत्पुत्री जाता, राज्ञी मृता च । पश्चात्तेनाष्टवर्षाण यहषभद्रता

सुता पालिता । ततस्तां रूपवर्ती ज्ञात्वा लोकापहारभयेनादृश्यीकरणमञ्जनं दत्तम् । सा बाला, या, हे राजकुमर! त्वया दृष्टा । तया च त्वं दृष्टः । परस्परानुरागतः सांप्रतं मम् सुतामिमां त्वं परिणय । तेन सा ऋषिदत्ता परिणीता । ऋषिणा कुमारं प्रत्युक्तम्—अस्यास्त्वं जीवितेशवत् इति ज्ञेयं भवता ।

युक्तोऽसि अवनभारे मा नम्रां कन्धरां कृथाः शेष!।
त्वय्येकसिन् दुःखिनि सुखितानि भवन्ति अवनानि ॥ ७॥
सम्प्रति न कल्पतरवो न सिद्धयो नैव देवता वरदाः।
जलद! त्विय विश्राम्यति जगतोऽपि हि जीवितारम्भः॥ ८॥

मुनिः पुत्रीं प्रति शिक्षां ददाति-

रक्खाकंडयमंतोसंहीभि मा खिवसु पुत्ति । अप्पाणं ।
छंदाणुवत्तणं पिअयमस्स एअं वसीकरणं ॥ ९ ॥
कुळवध्वा विधातव्यं श्वश्रुशुश्रुणवतम् ।
दैवतं हि पतिः स्तीणां माता तस्यापि दैवतम् ॥ १० ॥
संसारभारनिर्वाहे वामा वामाङ्गवाहिनी ।
प्रसादपात्रं मोहस्य तेनैवालमलंकृता ॥ ११ ॥
अभ्युत्थानसुपागते गृहपतौ तद्भाषणे नम्नता
तत्पादार्पितदृष्टिरासनिविधिस्तस्योपचर्या स्वयम् ।
सुप्ते तत्र श्रयीत तत्प्रथमतो जह्याच श्रय्यामिति
प्राच्यैः पुत्रि निवेदिताः कुलवधूशुद्धान्तधर्माश्रमाः ॥ १२ ॥
इति शिक्षा प्रदत्ता ।

मा भूः सुखे च दुःखे च बत्से! धर्मपराब्युखी। धर्म एव हि जन्तूनां पिता माता सुहृत् प्रश्चः ॥ १३॥

पश्चान्मुनिः राजसुतं सुतां मुत्कलाप्य स्वयं नमस्कारपरः सन् अमो प्रविष्टः । तत आत्मीयकल्यं रुदिन्नवार्य प्रेतकृत्यं कृत्वा तत्स्थाने वेदीं विधाय निजपुरं प्रति कुमारश्चलितः । तया मार्गे सर्वत्रापि देवतादत्तवीजैर्वृक्षा रोपिताः, उद्गताश्च । प्रयाणैः पश्चाद्वहं गतौ । पित्रा मात्रा वर्द्धापनं कृतम् । सुखेन तिष्ठन्ति ।

इतश्च, राजसुता रुक्मिणी ऋषिदत्तां परिणीतां श्रुत्वा कुमारं वाञ्छती महादुःखिता योगिनीं सुलसामिधां षट्टकर्मिनिरतां सपत्र्यास्त्यागाय रथमईनपुरे पेष्य तयाऽवखापिनीं विद्यां दत्वा पुरुषवध-नरमांसमक्षणे ऋषिदत्तायाः करुंकमारोप्य श्वशुरपाश्चीद् देशमध्यानिष्कासिता । सा केनापि सार्थेन सह औषध्यमावेण पुरुषवेषं विधाय खजन्मभूमो पैत्रिकं वनं गता । सा योगिनी खपुरं गता । तया रुक्मिण्या अभे सर्व निवेदितम् । ततो रुक्मिण्या पितुरभे ऋषिदत्तामृतवृत्यान्तं कथित्वा पाणिम्रहणार्थं कुमारस्याकारणाय विश्वसेन जनकेन मनुष्यान् भेष्य स्रतादानं विधाय प्रगुणितः । तैर्मनुष्यैः समं पाणि महीतुं पूर्ववनं याव-कुमारः समायातः, तां पूर्वभूमिकां दृष्टा ऋषिदत्तागुणान् स्मृत्वा मुक्तकण्ठं रोदनं विधाय यावचैत्यं गतः, ताबद्क्षणाङ्गस्फुरणं विचार्य, अत्र किं शुभं भावि १ इति किञ्चिन्तयन् यावदास्ते तावत्युष्पो[प]हारहस्तः तपिस्वकुमारस्त्रपधारी कोऽपि मुनिः समायातः । रूपपरावर्तेन पुष्पाणि कुमारस्य समर्थं खयं देवपूजादिकृत्यं विधाय इति चिन्तितम्—यत् एष परिणेतुं गच्छिति । ततः कुमारेण स मुनिः पृष्टः—कुतो यूयम् १ कथमत्र १ । मुनिनोक्तम्—अत्राश्रमे पूर्वं हरिषेणराजितः सुतां ऋषिदत्तां कस्यापि आगतस्त्र राजकुमारस्य दत्वा काष्टमक्षणं कृतवान् । अस्मिन् शून्याश्रमेऽहं तस्य शिष्यतुत्रसः देशान्तरे तीर्थयात्रां विधाय समागतः । पञ्चवर्षाणि बसूवः । निजगुरुतीर्थमोहेन अत्राश्चमेऽहं तस्य शिष्यतुत्रसः देशान्तरे तीर्थयात्रां विधाय समागतः । पञ्चवर्षाणि बसूवः । निजगुरुतीर्थमोहेन अत्राश्चमेऽहं तपःकुर्वाणोऽस्ति । ततः कुमारोऽतीव सेहोहासात्तं मुनि

स्नेहाट्यभाषणपूर्व भोजनवस्नाभरणादिदानं विधाय कीवेशी प्रति तेन मुनिना समं गृहीत्वा गतः । रुक्मिणी परिणीता । तया रुक्मिण्या एकान्ते महास्नेहे जाते पतिः ऋषिदत्तावृत्तान्तः पृष्टः । तेन कथितम् –ऋषिदत्तायाः शीलगुणो विनयगुणो रूपगुणा-दिकोऽनिर्वचनीयस्तत्र किं कथ्यते । उक्तं च-

> रूपलक्ष्मीयुषो यसाः समसा कामकामिनी । कर्णिका-मेनिका-नागयोषितः पदपांशवः ॥ १४॥ जाते तद्विरहे दैवाहासी त्वमिस मे प्रिया। यत् श्रीरेण विना घृष्टिरपि प्रीतिकरी न किम् ॥ १५॥

तदभावे त्वं मया परिणीता । यथा षट्रसपेशळस्य भोजनस्याप्तस्य किं कथितानं न भुज्यते । तद्वचनं श्रुत्वा गृहवासमवगणय्य सा रुक्मिणी पूर्वकारितं निजं पौरुषं सर्वं कथितवती । कुमारस्तदाकण्यं महासकोपस्तामङ्कान्यवस्ता, रे! पापिष्ठे!
आत्मानं मां च नरके कथं क्षिपसि गण्छ, मम नेत्रादपसर । अदृष्टमुखी भव । सा रूपवती महासती कथाशेषी कृता ।
कोकद्वयविरुद्धमपेक्ष्य तदा मुनिस्तद्वचनं श्रुत्वा निजकळङ्कगमनेनातीव हृष्टः । निशान्ते राजाङ्कणे चितां कारयित्वा कुमारः
काष्ठमक्षणाय श्रुरेण लोकेन च वार्थमाणोऽपि यावचितितः, तदा सर्वलोकवचनोपरोधात्तपसिमुनिनेत्वक्तम्—हे कुमार!
कोऽपि मृत्वा कर्मवशाद् भिन्नगतिक आत्मिष्रयस्य मिलितः । इति वारितोऽपि यदा न तिष्ठति तदा मुनिनेत्वक्तम्—हे कुमार!
कोऽपि मृत्वा कर्मवशाद् भिन्नगतिक आत्मिष्रयस्य मिलितः । इति वारितोऽपि यदा न तिष्ठति तदा मुनिनेत्वक्तम्—हेव ! तव खेहाकृष्टा सा मृताऽपि मिलिज्यति, इति ज्ञानेन जानामि । कुमारः पृच्छिति—भवद्भिः कापि सा दृष्टा ज्ञाता वा । कथं किंवा
हास्त्रपद्म श्रु-इति पृष्टे यमपुरे कृतान्तमन्दिरे तव प्रिया विद्यते । यदि तस्याः स्थाने महणके कौऽपि मुच्यते, तदा समिति ।
इत्युक्ते कुमारश्चित्तातुरः तत्र को याति, किस्तिष्ठति १; इत्युक्ते मुनिनोक्तम्—देवाहं यास्यामि । यतो दुस्त्याः क्षेहस्त्वया समम् ।
यदि भवान् ममादेशं दास्यति तदाहं यास्यामि । कुमारः प्राह—मयाग्रे तुभ्यं जीवितव्यं हृदयं दत्तम्, शेषं जीवितव्यं विद्यते
तद्गि गृहाण । तेनोक्तं पुनर्मते कार्ये यत्किञ्चिदहं याचि (१) तिक्षपेधयितव्यं निहे । ओमित्युक्ते प्रतिश्चते समुनिलक्षसंस्थलोकसमक्षं पटान्तरे प्रविष्टः । क्षणान्तरे मुक्तं पूर्वम् । दृष्टः क्षिता । ततोऽतीव हृष्टः कुमारः । ऋषिद्वायुतः श्रुरेण
पूजितः । निजा सुता निर्मारिता । अकुत्यकारिणीति भणित्वा । पश्चात्मयाणकसुहूर्ते ऋषिद्वाया अमे इति भणितम्—अहं
समित्रं यममन्दिरे तत्र (व?) स्थाने मुक्ता कथं यामि गृहम् । अहं मित्रसमीपे गमिष्यामि । तदा हिस्त्वा प्रिया प्राह—
देव ! एतस्पर्वे जनकद्यौषधितस्य। भवद्विरन्यन्यावधारणीयम् । परं यथा रुक्तम्यणं प्रसादो भवति तथा करैन्यम् । यतः—

न हसंति परं न थुणंति अप्पयं विष्पिअं पि न चवंति । एसो जाण सहावो नमो नमो ताण पुरिसाण ॥ १६ ॥

प्रियावचनं श्रुत्वा हृष्टः । श्रशुरेण पेषितः । प्रियाद्वययुतो निजपितृगृहं ययौ । ततो हेमरथो राजा निजापराधविरुक्षो बच्चमनुनीय कुमारं राज्ये संस्थाप्य भद्राचार्यपार्श्वे वतं गृहीत्वा मुक्तिं गतः ।

ततः कनकरथस्य पृथ्वीं पालयतः ऋषिदत्तायाः सिंहरथो जातः । हर्षपूरितस्य राज्ञः कियत्यपि गते काले गवाक्षोप-विष्टस्य मेघमण्डलं संपूर्णे हृष्ट्वा प्रचण्डपवनेन खण्डीकृतं गलितं च विज्ञाय चेतिस विरागवान् जातः संसारोपरि । इति चिन्तयित—

> जजरइ जहा देहं खणेण तहा जोवणं विणासेइ। खणदिइनइरूवा इह इट्टसमागमा सबे॥ १७॥

ऋषिदत्तायाः समं यावत् रात्रौ इति चिन्तयति, तावत्यभाते उद्यानपालकेन तत्रायातसूर्यागमनं कथितम् । ततः प्रियया सह गुरुं प्रणम्य देशनां श्रुत्वा प्रियाया सक्षसीकलङ्ककारणं निष्कारणं पृष्टवान् । उक्तं च- इह भरते गंगापुरे गंगदत्तराज्ञः गंगाकुक्षिसमुद्भवा गंगसेना मुताऽऽसीत् । चंद्रयशासाञ्जीसमीपे मुता सम्यक्तवसारं धर्म प्राप्यातीव सदाचारचतुरा वर्भूव । कदाचित्रतेव पार्थं गंगामिधा तपोधना तपस्तपति । तां लोको नमति सौति च । अस्याः सदशी तपःपात्रं साध्वी कापि न दृश्यते जगति—इति प्रशंसांवाक्यं श्रुत्वा गंगसेनाऽसहमाना लोकाग्ने इति कथयति—इयं गंगा दम्भपरा दिवा तपः करोति रात्रौ राक्षसीव मृतकमांसं भक्षयति । अस्या नामापि न प्राप्तम् । सा गंगा क्षमापरा सती सर्व सहते न किमपि वदति । तदलीकदूषणेन दूषिता गंगसेना महत्तपः कृत्वा मिध्यादुःकृतस्यादानात् मृत्वा स्वर्गं गता । पश्चाद् भवं आन्त्वा मुहुर्मुहुः, गंगापुरे राज्ञः मुता जाता । ततो मुनिमुत्रततीर्थनाथस्य पार्थं धर्मं प्राप्य सकपदं विकटं तपो विधाय पर्यन्तेऽनालोच्यानशनाम्मृत्वा ईशानेन्द्रस्य प्रिया जाता । ततः पश्चाद् हरिषेणमहीपतेः मुता जाता ऋषिदत्तामिधाना । अस्याः स कलक्क उदयं गतः । सा गंगा साध्वी भवान् आन्त्वा रुविमणिसपत्ती जाता । तेन कलंकोऽ-द्वायि रुविमण्याः । अतो भवशतैरिप कर्मभ्यो न कुळवते । ततः सूरिवचनाज्ञातिसरणतः पूर्वमवस्तरुपं विज्ञाय राजा मुतं सिहरशामिधानं राज्ये संस्थाप्य सकलत्रो वतमग्रहीत् । ऋषिदत्तासाध्वी भिद्दलपुरे श्रीशीतलतीर्थे[श्र]जन्मभूमो केवलज्ञानं प्राप्त मुक्तं जगाम ।

॥ इति ऋषिदत्ताकथानकं समाप्तम् ॥ १७ ॥

[२] B और Ba संग्रहस्थित मोरनागप्रबन्ध।

एकदा श्रीशत्रुंजये राजादनतरोरघः श्रीआदिनाथे (Br श्री ऋषभदेवे) समवस्रते मयूरमुखात् सर्पश्चरणात्रे पपात । मयूरः पृष्ठिमाययो । खामी विस्तितः । वैरं दृष्ट्वा तयोर्भगवानाह—मोः ! पूर्वभवाभ्यासादिहापि वैरमारव्यम् । शृणुतः— बालाकदेशमध्ये मुप्रामप्रामे दत्तः श्रेष्ठी । तस्य हो मुतो । एकदा श्रेष्ठी अनशनं जगृहे । निर्व्यंजनं मत्वा लघुना कटाहिः कृष्टा । इतो बृद्धो आता आययो । तेन दृष्टा....गार्थे कल्रहं कृत्वा मृतो । तत्रैव सर्पी जातो । युद्धा मृतो । तृतीयनरकं गतो । तद्नु संदो जातो । मिलितो, युद्धा मृतो । तदनु सर्प-मयूरो जातो । अत्रापि तदेवारव्यम् ! । ततो जातजातिस्मृती भगवता दत्तमनर्शनमादाय मृतो । चतुर्थदेवलोकं गतो ॥

॥ इति मोरनागप्रबन्धः ॥ १८ ॥

[३] BR संग्रहोपलब्धबप्पभिद्युरिकथाप्रकरण।

एकदा प्रेक्षणे जायमाने गुरूणां बप्पभिट्टसूरीणां पुस्तकं(?) दृष्टिस्तिमिरेणावृता बप्पभिट्टसूरिभिर्नर्त्तक्या नीलीकंचुके दृष्टिः क्षिप्ता । आमनृपेण ज्ञातं मम मित्रस्वेतस्यामिलाषोऽस्ति । अत्र किं दुष्करम् । कांठुलीमाहूय रात्रौ मम मित्रमठे वसनीयम् । इतः सा रात्रौ छन्ना मठं गत्वा गुरूणां चरणसंवाहनं चके । गुरुभिरुक्तम्—का त्वं ? । अहं नर्तकी देवेन प्रहिता । इतो गुरुवो रोदितुं प्रवृत्ताः । तथा ज्ञातं दशम्यां कामावस्थायामेते । यथा—

नयनप्रीतिः प्रथमं चित्तासङ्गस्ततोऽथ सङ्कल्पः । निद्राच्छेद्स्तनुता स्वभावव्यत्यस्वपानाशः ॥ उन्मादो मूर्च्छा सृतिरित्येताः स्मरदशा दशैव स्युः ॥

तयोक्तम्—मित्र साधीनायां किमिति रुवते ?। ताभ्यामु(तैरु ?)कम्—अस्माकं गुरवः स्मृताः । कथं ? -शिशुत्वे गुरूणां पाश्चात्पपदेशेषु छठनं तव पयोधरैः स्मृतम् । तदनूकम्—

चक्षुः संवृणु वक्तवीक्षणपरं वक्षः समाच्छादय रुन्द्रि स्फूर्जदनेकभिक्क चतुरं शृङ्काररम्यं वचः । अन्ये ते नवनीतिपण्डसदृशा मर्लो भवन्ति क्षितौ मुग्वे ! किं परिखेदितेन वपुषा पाषाणकल्पा वयम् ॥



प्रातर्नेपेण पृष्टा-

गयइ (१) वइकेरइ देव मिंह नहु केणइ परिभुत्त । निचोरइ गुजररिज्ञ जिम पाय पसारिव, सुत्त ॥

नृपेण प्रातश्चरणयोर्छगित्वा मानिताः।

[४] BR संग्रहस्थितजिनमभसूरिपवनध*।

खरतरपक्षे श्रीजिनसिंहसूरितः श्राद्वादिभेदेन पश्चद्वयमजिन । ततः श्रीजिनसिंहसूरिभिः पद्मावतीदेव्याराधनार्थं पणमासान् यावदाचान्छतपः स्मज्ञाने गत्वा तदाराधनं चके । ततः प्रत्यश्वीभूतया पद्मावतोचे-किमर्थमाराद्वा १ । तैरुक्तम्-राज्ञः प्रतिवोधशक्ति देहि । देव्योक्तम्-तव पण्मास्येवायुः । तेन कि नृपवोधशक्त्या १ । तथापि वागडदेशे गच्छ । तत्र प्रामे दश भ्रातरः सन्ति, तत्रैकस्य छष्टुः सप्ताष्टवार्षिकः सुतोऽस्ति, पादे किञ्चिन्यूनांगुलित्वेन छंघायमानः । तान् प्रतिवोधय । तस्य च स्वत्पाराधनेनाप्यहं प्रत्यक्षा भाविनी । स च नृपप्रतिवोधकः शासनप्रभावको भावी- त्युक्त्वा तिरोद्धे देवी । स च सूरिः सर्वं तथा कृतवान् । तं चादीश्चयत् । स्वायुःप्रान्ते तस्य चायं पदम्पि दृदे योग्यतां ज्ञात्वा । ततः श्रीमहिषेणसूरेः स्याद्वादमञ्जरीकर्तुः पार्थेऽधीतवान् । [स]श्रीजिनप्रमसूरिः । तस्य च यदा यदा भाणने संशयो भवति तदा तदा निद्रायमाण इव किञ्चित् विस्वति । तदा सन्यग् बुध्यते च । ततो धूर्मा(ण १)- सरस्तती तस्य नाम तावता दत्तम् । श्रीजिनप्रमसूरिस्तु कियद्प्रन्थाध्ययनानन्तरं बहुशुद्धप्रज्ञत्वेन तद्घूर्णनावसरे तमर्थ लिखति सन्यग् बुध्यते च । ततो गुरुभिस्तं तथा कुर्वन्तं हृष्ट्वा तस्य प्रत्यक्षसरस्तती विरुदं ददे । स क्रमेण म्लेच्छाधिराज पा० पीरोजादिप्रतिवोधकश्चाभूत् । तेन च साहाय्येन स्वाद्वादमञ्जरीवृत्तिः स्वगुरोः कृतिरिति शोधिता । ततः "श्रीजिनप्रभसूरीणां सहायोद्विक्रसार्भे"त्यादि तत्रशस्तौ तैन्यंसम् ॥ इति श्रीजिनप्रभसूरीणामुत्पत्तिप्रविक्रयार्थः ॥

एकदा सभास्थे सुरत्राणे सूरिभिः समं धर्मगोष्ठीं कुर्वाणे कोपि सुलाण आगतः। तेन निजटोपिका आकाशे स्थापिता। तदा च सभासदां चमत्कारः समजनि। तद्नु सुरत्राणेन सूरेर्मुखं विलोकितम्। ततः सूरिणा निजरजोहरणसुच्छात्य टोपिका पातिता, परं रजोहरणं नभसि स्थितम्। गुरुणोक्तम्—यस्य कस्यापि शक्तिरस्तु स पातयतु। परं केनापि नापाति। ततसौरेव दक्षिणकरेणात्राहि। द्वितीयदिने तेनैव सजलकुम्भो नभसि स्थापितः। ततो गुरुणा सुरत्राणानुज्ञया रजो-हरणेन कुट्टियत्वा घटो भगः, पानीयं तत्रैव मोदकाकारेण स्थितम्। तेन चमत्कारेण जिनशासने महती प्रभावना जाता। एकदा सुरत्राणेनोक्तम्—भोः सभ्याः! शर्करा कस्य मध्ये क्षिप्ता मिष्टा स्थात्। ततः सभ्यैः स्विध्योक्तं परं तन्मनिस न चमत्करोति। ततस्तेन सूरिः पृष्टः। सुखमध्ये। तेन रिक्षतः। अन्येद्युः स्वसुद्रिकां स्वयं पर्यद्वपादतले संस्थाप्य सूर्ति प्रति प्राह—मम सुद्रिका गता सम्प्रति कास्ति १ सूरिणोक्तम्—योगिनीपुरमध्ये। पुनः पृष्टे, राजभवनान्तः। पुनः पृष्टे, सभा-मध्ये। पुनः पृष्टे पत्यद्वे पादचतुष्टयमध्ये। तत एकं पत्यद्वपादसुत्पाद्यांगुल्यिर्तां। तेन स रिज्ञतः।

एकदा पृष्टम्—दुनीमध्ये किं पुष्पं वृद्धम् ? । सभ्यैः स्विधयोक्तम्—परं तन्न मनश्चमत्कारकारि । सूरिणोक्तम्—दुणिफलं वृद्धम् । येन नवसंडपृथ्व्या छज्ञा ढंक्यते । तेन हेतुना जगढंकणीति विरुदं दत्तम् । एकदा ततः सुरत्राणः ससुत्थाय सूरिणा सह स्वावाससोपानकानुङंध्यमानः, एकस्मिन् सोपानके श्रीवीरिविम्बं म्लेच्छैः स्थापितमस्ति, तदुपरि सूरिणा पादो न दत्तः) सुरत्राणेनोचे—कुतोऽस्मिन् प्रस्तरे पादं न ददासि ? । तेनोचे—महावीरोऽसौ कथ्यते । सुरत्राणोऽनक्यस्यसावीहग् नाम विरुदं धत्ते तदा कस्मान्मौनेन स्थितः । सूरिराह—हे देव ! यतः कथितं देवेभ्योऽपि दानवा बलिनः स्यः । दुरवस्थापतितानां सर्वेषामीहगवस्था स्थात् । तदनु सुरत्राणेन निजनरा निष्कासनहेतवे प्रहिताः परं सहस्रेरिष् न निःसरति । तदनु सुरत्राणेन पृष्टः सूरिराह—यदि स्वयमेव गत्वोत्पाट्यते तदा निस्सरति नान्यथा । तथा कृत्वाऽऽक-

^{*} एप प्रवन्धः BR सङ्कहे लिखितो लब्धः । तथैवैकस्मिन् अन्यकथासङ्कहेऽप्युपलब्धः । अतोऽस्य पाठमेदा अपि अत्र सङ्कहीताः सन्ति । 1 रविवर्द्धनप्रतौ 'देवी' नास्ति । ौ एतदन्तर्गता पंक्तिः प्रतिता प्राचीतादर्शे । 2 प्रवन्अंगुलीयमर्पितम् ।

र्षितः । निज्ञानाससम्मुखं प्रौढं जिनालयं कारयित्वा स्थापितः । पृष्टम्-भोः सूरे ! श्रीवीरः पृष्टस्सन् किमप्युत्तरं दत्ते न वा । सूरिराह-सर्वं कथयति । तदनु, अन्ते अवनिकां बद्धा सुरत्राणेनोक्तम्-अस्मित्रगरे कियन्तः सुरत्राणा आताः ?। वीरेषोक्तम्-सर्वेषां नामायूराज्यपदपालनपूर्वकं संख्यादि । तेनातीव हृष्टोऽभूत् । पुनः पृष्टम्-भवन्तः कियन्तः सहित ?। वीरेणोक्तम् वयं ऋषभप्रभृतयः २४ संख्याः साः । तद्नु अतिहृष्टेन तेन पंचाशतं द्रम्माणां प्रतिदिनं भोगपुष्पादि मूरितम् । परमेतत्सर्वं सूरिध्यानबलेनैव । तस्मिन्मेले जिनालयं कारितं येन निजावासिक्षतो नित्यं प्रणामं करोति । एकदावसरे सूरिणा विजययश्रप्रभावः प्रोक्तः । तदनु पंचाशतद्रम्मैः स कारितः । सुरत्राणेन पृष्टम्-कः प्रभावः ? । सूरिणा कथितम्-यत्रायं यत्रो भवति तत्रारिः कोऽपि नायाति । ततः सुरत्राणेन निजच्छत्राधराखुर्न्यस्तः । ततो मार्जारी मुक्ता परं छत्रच्छायायां कथमपि औतुर्नेति । अपरः प्रभावः -यस्य देहे असौ वध्यते तस्य प्रहारो न छगति । तद्तु सुरत्राणेन छागमानाय्य तस्य देहे विजययश्चो वद्धः । बहवः खङ्गप्रहारा मुक्ताः परमेकोऽपि न उम्रः । एकदा सुरत्राणो गूर्जरधरित्रीं प्रति यात्राभिप्रायेण सूरिं प्राह-पांडे ! अई कस्यां प्रतोल्यां निस्सिरिष्यामीति पृष्टे सूरिणा चिठडिकां लिखित्वा सर्ववृत्तान्तयुतां गोलकान्तस्तां क्षित्वा मुद्रां दत्त्वाऽर्पितो गोलकः । हे देव! त्वया योगिनीपुरबहिर्गत्वा गोलकं स्फोटयित्वा वाचनीयमिति प्रोक्तम् । सुरत्राणेन तथा कृतम् । यत् सुरत्राणः काकराख्यकोटस्य एकत्रिंशच्छराणि पातयित्वा निस्सरिष्यति । तेनाभिज्ञानेन स हृष्टः । सच्छायमंजरीफळश्राजिष्णोराम्रस्य तले सर्वकटकं मेलयित्वा . प्रस्थानं साधितम् । तेन सूरिः पृष्टः-भो पांडे! की हशो नयनानंदकारी सहकारोऽस्ति ?। सू० सत्यमेतन् । ततः सूरिणा स वृक्षः प्रयाणद्विकं सुरत्राणोपरि छायां कुर्वन् सार्द्धं चालितः । सूरिः सुरत्राणेन पृष्टः-भो पांडे ! असौ वृक्षः कस्मा-त्सार्द्धं समिति ?। सूरिणोचे-यदि सुरत्राणो विदाहिं ददाति तदा पश्चाद्वलित्वा स्वस्थाने याति नान्यथा। तद्नु सुरत्राणेन विसर्जितश्रुतो निजस्थाने गतः । स सूरिः कियत्प्रयाणैर्नागपुरादिमार्गेण मरुखल्यां प्राप । प्रतिप्रामं तन्निवासिना-र्योऽक्षतनालिकेरकुसुममालाचन्दनादिभिः [सूरिराजं] सुरत्राणं च वर्द्धापयन्ति । स ताः सर्वा विलोक्य कंचन पार्श्वस्थं नरं प्राह-एताः श्चियो विभूषणपट्टकूलमौक्तिकादिमिर्विवर्जिताः कथम् ?। केनापि दंडिता वानीपाते पातिता वाः येनेट-शीनिःश्रीका दृश्यते । (?) तद्तु तेन नरेणोचे-हे देव ! अयं देशो निर्द्धनः खभावेनैव, अन्यत्किमपि कारणं नास्ति । ततः सुरत्राणेन परोपकारिया प्रतिस्त्रियं द्वीनारटङ्ककाः खर्णमयाः समर्प्य प्रणामं कृत्वा स्वगृहे प्रहिताः । एवं प्रतिप्रामं समस्ति द्धिनजनानामाशाः सफलयन् पत्तनं यावत्पूर्वरीत्या प्रापः । जंबरालनगरे बहिः कटकमुत्तरितम् । श्रीजिनप्रभ-सूरयः पत्तननगरं गच्छन्तः तपापक्षश्रीसीमप्रभसूरिशालायामीयुः । श्रीसोमप्रभसूरिभिस्तेषां प्रशंसा कृता । श्रीप्रभूणां प्रभावादेव सम्प्रति श्रीजिनधर्ममाहात्म्यमस्ति इति । तैः प्रत्युक्तम्-वयमविरताः सुरत्राणेन सार्द्धं रात्रिंदिवं व्रजामः । सर्वदाऽस्वतन्त्राः। यूयं चारित्रिणः। युष्माकमाघारे चारित्रमस्तीति। एवंविधप्रसावे साधुभिः प्रतिलेखनार्थं सिकिको-त्तारिता। एकस्य साधोः सिकिका मूपकैर्जग्या। तद्वचः श्रुत्वा श्रीसृरिभी रजोहरणं श्रामितम् । ततः सर्वे मूषकाः शाला [तो बहिः] निःसृत्य सूरेरप्रे उपविष्टाः। सूरिभिरुक्तम्-अहो आखव! एते साधवः कीटिकाया अपि विरूपं न चिन्त-यन्तिः भवद्भिः कस्माद्विनाशोऽकारि ? । पुनरुक्तम्-वयं कस्यापि विरूपं न चिन्तयामः, एवं यः कश्चिद्पराधी स तिष्ठतु, अन्ये गच्छन्तु । ततस्तस्य मूपकस्य देशपट्टो दत्तः, शालान्तर्न स्थेयम् । ततः स द्वारेण निःसृत्यान्यत्र गतः । कियद्दिनानि पत्तने स्थित्वा गूर्जरत्राव्यवहारिभिः सह सुराष्ट्रां प्रति चलितः । एकदा सूरिः ष्टष्टः-भो पांडे ! हीन्दूजनमध्ये किं तीर्थं बृहत् ?। सूरिराह-राजाद्नो दुग्धेन वर्षति । तदनु पातसाहिना संघपतीभूय पूजामहाध्वजाऽऽवारिकारात्रिकादिकं कृत्वा संघेन सार्छ सहस्रठोकेन सूरिभिः सह त्रिः प्रदक्षिणां कृत्वा राजादनितरोरधः स्थितम् । तावता सूरेर्ध्यानवलेन संघसहितसुरत्राणोपरि कुंकुमकेसरकर्प्रमिश्रं दुग्धं राजादनितो ववर्ष । ततश्चमत्कृतचित्तेन सुरत्राणेन सह गिरिनारं प्रति चिलतः। तीर्थासन्नगतेन तेन सूरिः पृष्टः-अस्य तीर्थस्य कः प्रभावः ?। सूरिराह-अच्छेद्योऽभेद्योऽयम्। किन्तु वन्नमयी

¹ प्र०-कोष्टस्य । 2 प्र०-वदाहि । 3 प्र०-'वलित्वा' नास्ति । 4 प्र०-नागपुरनगरमार्गेण । 5 प्र०-एतत्पर्द नास्ति ।

मूर्तिः। ततः मुरत्राणेन मुद्ररघाते इत्तेऽप्रिस्फुलिंगाः प्रकटीमूताः, परं न भगः। तेन प्रभावेण रिक्तिन स्थालं टक्कैभूत्वा नेमिर्वर्द्धापितः। रात्रो केनापि म्लेच्छेन सर्वाः इयामलप्रतिमा एकत्र मध्ये संस्थाप्य रात्रो सुप्तम्। एवं च व्यवहारिपाममे कथितम्—यद्येते भूता रात्रो ममे प्रत्ययं द्र्शयिष्यांति तदा छोटयिष्यामि नोचेत्सर्वाश्चर्णाकरिष्यामि। एवं
कथित्वा सुप्तः। परं कालवद्येन कोऽपि चमत्कारो न दृष्टः। प्रातः श्राद्धजनेन म्लेच्छव्यतिकरं विम्पव्यतिकरं च
सुरत्राणामे निवेदितम्। सुर० स आहूतः पृष्टश्च—भो! तवामे भूतैः किमपि कथितं न वा !। तेनोक्तम्—निह निह। ततः
सुरत्राणेनोक्तम्—सर्वेर्भूतैर्ममान्ने मीनितः कृता, अयं दुष्टः अस्मानिभवति तेन त्वया शिक्षा दातव्या। ततः स भृतो
निर्घातनार्थं श्राद्धैः कुच्छेण मोचितः। एवं प्रकारेण गमनागमने सर्वजनात्रां पूर्यन् योगिनीपुरे सूरिमिस्सह महामहोत्सवपूर्वकं प्रावीविशत् सुरत्राणः॥

॥ इति श्रीजिनमभसूरीणां प्रबन्धोऽयं ॥ लिखितं पं० रविवर्द्धनगणिभिः ॥

[४] प संग्रहस्थित जीव-इन्द्रियसंवादकथा।

अन्यदा जीवस्थेन्द्रियैः सह विवादः । तानि भणन्ति—वयं भव्यानि, अस्मिद्धिना न स्युः किञ्चन । स जीवो भणे-दहं चारः । एवं सित जीवेनोक्तम्—यान्तु भवन्तः । गते नेत्रे । ताभ्यां विनापि भ्रमणादिकाः क्रियाः कुरुते । ततः कर्णों गतौ । ताभ्यां विनापि जातं सर्वम् । नाशिकापि जिह्वापि गता । स्वादं न छभते । गतैः सर्वैरिप जीवः सर्वोनपि व्यापारान् कुरुते । ततो जीवेनोक्तम्—आयान्तु भवन्तः । अहं यामि । तथा कृतम् । जीवो वपुषो दूरे स्थित्वा स्थितः । ततः मृत इव स्थितः । वाछोव्यां (१) भणत—को गरीयान् १। तैरुक्तम्—भवान् । एवं निर्णयः झकटकस्य । अतो जीवो नरके न क्षेप्य इन्द्रियाणां स्वार्थं साधियत्वा ॥ ३ ॥

[५] G संग्रहगत धनश्रेष्ठीकथानक।

पृथ्वीपुरे धनश्रेष्ठी । तस्य चत्वारः पुत्राः । श्रियमाणेन पित्रा श्रय्याधः स्थिताश्चत्वारः कलशा विभज्य समर्पिताः । तेषु रजो-ऽस्थि-भूर्ज-हेमादि विद्यते । ततः पितुर्भृतेरनन्तरं ते परस्परं विवादं कुर्वाणाः पशुपालेनैकेन वारिता एवम्-रजः सेत्रम्, अस्थि पशुअश्वमनुष्यादि, भूजं लेख्यादि, कलाहीनः किमपि न वेत्ति सुवर्णम् ॥ १४ ॥

प्रबन्धचिन्तामणिसम्बदः-

॥ पुरातनप्रबन्धसङ्ग्रहः ॥

[P. B. BR. G. Ps. सञ्ज्ञकसङ्ग्रहग्रन्थेभ्यः सङ्गृहीतः ।]

१. विक्रमार्क-प्रबन्धाः।

विक्रमार्कसत्त्वप्रबन्धः (B.)

(१) अकार्षीदन्द्रणामुर्वी विक्रमादित्यभूपतिः। खर्णे प्राप्ते तु है रंकस्तुरष्काकुलितां व्यधात्॥

(२) हूणवंदो समुत्पन्नो विक्रमादित्यभूपतिः। गन्धर्वसेनतनयः पृथिवीमनृणां व्यधात्॥

११) उज्जयिन्यामुच्छित्रवंशो विक्रमादित्यनामा जननीसहायोऽस्ति। तस्य भट्टमात्रो नाम मित्रम्। स एकदा द्रव्यार्जनाय मित्रेण सह जननीमाएच्छ्य चचाल। वजाकरं स्मृत्वा तदुपरि प्रस्थितः। क्रमेण रोहणाचले ज्यातस्तत्र ग्रामे रात्रौ वसितः। प्रातः स्वनित्रमादाय रोहणाद्रौ गतः। तत्र कोपीनमाधाय त्रिवेलं 'हा दैव' इत्युक्त्वा ललाटं करेण हत्वा घातो दीयते। अतो भट्टमात्रेण चिन्तितम्—असौ सच्चवानस्ति। अपूर्ववार्तां विना न 'हा दैव' इति वक्ष्यति। अतो भट्टमात्रेणोक्तम्—देव! उज्जयिन्या एको जनः समायातस्तेन तव मातुरनिष्ट- मुक्तम्। इति श्रुत्वा विक्रमार्केण 'हा दैव' इत्युक्त्वा करात्कुहालकः श्विप्तस्तस्य संघातेन दिव्यं रत्नं प्रादुरास। विक्रमार्केण करान्यक्तं गृहे, कोऽपि नायातः। तिहं कथमलीकमुक्तम् १। तदनु इमं श्लोकं पठता 10 विक्रमार्केण करान्यक्तं दूरे—

(३) धिग् रोहणगिरिं दीनदारिद्यत्रणरोहणम् । दत्ते हा दैवमित्युक्ते रत्नान्यर्थिजनाय यः ॥

इत्युक्त्वा यथागतं ययो। पुनरुजयिन्यामायातस्तत्र पटहो वाद्यमानः श्रुतः। कमि नरं पत्रच्छ—को हेतुरत्र १। तेनोक्तम्—अत्र राजा विलोक्यते। कथम् १। योऽत्र राजा भवति स रात्रौ विपद्यते। विक्रमेणोक्तम्—अहं भविच्यामि। इत्युक्ते प्रधानै राज्ये स्थापितस्तेन सन्ध्योपिर नैवेद्यानि कारितानि। पुष्पाद्यपस्करः सकलोऽपि सजी-15 कृतः। पल्यङ्कपार्श्वे पुष्पगृहं तत्र नाना नैवेद्यानि ढोकियत्वा खयं सङ्गमाकृष्य जाग्रन्नस्ति। इतो गवाक्षविवरात् धूमो विस्तृतः। कमेण वर्षरो वेतालः प्रकटीभृतः। नैवेद्यं सेच्छ्या श्रुक्तवान्, विलेपनं च। पश्चान्तृष्टः सन् विक्रममाह्यं वभाषे—राजन् । तव भक्त्याऽहं तुष्टः। त्वं राज्यं कुरु। परिमयिदिने दिने देयम्। तस्मिन् गते नृपः सुप्तः। प्रातर्नृपकर्षकाः समाजग्धः। ते नृपं जीवन्तमालोक्य हर्षकोलाहलं चक्तः। प्रधानपुरुषेनृपोऽमिषिक्तः। नित्यं नित्यं तावन्नवेद्यं निष्पद्यते। एकदा नृपेणोक्तो वर्व्वरः—कस्त्वम् १। तेनोक्तम्—इन्द्रसेवकः। तिर्हं महाक्यादिन्दं 20 पृष्टा कल्ये वाच्यम्—यद्विक्रमस्य कियदायुः। स द्वितीयदिनेऽवादीत्—वर्ष १ शतम्, नाधिकं न न्यूनम्। तिर्हं इन्द्रपार्थान्मे वर्षद्वयमधिकं कुरु। तेनोक्तम्—इन्द्रणाप्यनेनायुरिषकं न भवति। तिर्हं वर्षद्वयं न्यूनं कुरु। तदिष न भवति। इति विमृत्य द्वितीयदिने नैवेद्यं नाकार्षात्। स श्लुधितः सन् नृपं प्राह—त्वं स्ववाक्याच्युतः। अतः शक्तं कुरे। शक्ते कृते नृपेण भूमौ पातियत्वा कण्ठे चरणः प्रदत्तः। तेनोक्तम्—मा मारय। तवाहं किंकरः। स्मृतेरत्त समेष्यामि॥

Could for the Arts

- § २) एकदाऽग्निकवेतालेनोक्तम्—त्वं नारीहृद्यं वेत्सि परं चरित्रं न । एकदा नृपलदन्वेषणस्य चलितः । किसिश्चित्पुरे गतः । तत्रैको द्विजलत्सुता कुमारिकाऽिल्तः । नृपेण भोजनार्थे द्विजोऽभ्यर्थितः । कुमार्या.....(अत्र कियन् पाठो मूलादर्थे पतितः प्रतिभाति)...चिन्तितम्—मृत्युरुप्रस्थितः । सेवोक्ता । तव किङ्करः । मां किं मारयित । तयोक्तम्—तिर्दे अवाञ्चुखो भूत्वा पत । तया दिघकरम्बोऽग्रे त्यक्तः । मुखं च खरित्तम् १ जनेन पृष्टं किमिदम् १ । असी देशान्तरिको भोजनाय भणितोऽस्य ऊर्द्धं गाढं जातं अतो प्तकृतम् । सस्ये जाते जनो गतः । तयोक्तम्—त्वं स्नीहृद्यं वेत्सि परं चरितं न वेत्सि । नृपः स्नीहृद्यपरीक्षां कृत्वा खराज्ये गतः ॥
- § ३) इत एकदा नगरमध्ये दन्तकः श्रेष्ठी नृपमान्योऽस्ति । तेन गृहार्थे भ्रात्ता । स्त्रधारानाह्मोक्तम्—
 ताद्दग्गृहं मण्डयत यत्र सप्तान्वयिनः खादिन्त पिवन्ति च । द्रव्यं खेच्छया दास्यामि । निर्मित्तज्ञानाहृय ग्रुअसुहूर्ते
 गर्नाप्रः कृतः । भव्येष्टिकासश्चयेन भव्यकाष्ठैः कृत्वा सप्तपणः (खण्डः) प्रासादो नृपप्रासादसहृकारितः ।

 10 पूर्णे निष्पने सत्त्रधारेरुक्तम्—एप ईद्दशोऽस्ति याद्दशे धनिकभाग्यात् सुवर्ण्णपुरुषः पति । तेन सत्कृतास्ते
 सत्त्रधाराः । निमित्तज्ञेर्स्रहूर्तं दत्तम् । तत्र प्रवेशे प्रारव्धे राजपर्यन्तो जनो भोजितः । द्वजातीनां दानं दत्तम् ।
 तदन्ता रात्रौ सप्तस्तदा 'पतामि' इति वचनमश्यणोत् । चिन्तितमभिनवगृहे धृंसकः । द्वितीयवेलायासुक्तम्—पतामि ।
 तावत्परिजनं प्राह—रे ! रे ! उत्तिष्ठत वहिनिस्सरत् । एप पतिष्यति । यावदुत्तिष्ठति तावत्पतामीति श्रुत्वा
 निःसृतः । कुपितो गत्वा नृपं प्राह—देव ! तव राज्ये सत्रधारैनिमित्तज्ञेश्च स्रुपितः । कथम् ? । खरूपसुक्तम् । नृपेण

 15 सत्रधाराः पृष्टाः । देवासौ निद्रांष ईद्दशोऽस्ति यसात्सुवर्णनरः पति । निमित्तज्ञेर्धहूर्त्ते निद्रांपतोक्ता । राज्ञोक्तम्—
 कियद्वयं लग्नम् ? । वससि नवा । तेनोक्तम्—देव ! त्राति । इति प्रतियक्तम् । खद्वाप्रे सुवर्णपुरुषः पपात ।
 प्रातन्तिण सर्वेषां दन्तकस्य च दर्शितः । सपश्चात्तापः स प्राह—देव ! याद्दग् तव भाग्यं तव सत्त्वं च, ताद्दग् न कस्य । इति सुवर्णनरप्राप्तिः सत्त्वात् ॥ इति श्रीविक्रमार्कसत्त्वप्रवन्धः ॥

20 दरिद्रक्रयप्रबन्धः (B. Ba.)

१४) अथैकदा सर्वत्र देश-देशान्तरे इयं वार्ता-यदुजियन्यां सर्वं विकयमामोति। एकेन राज्ञोक्तम्-तदहं प्रेपिय्यामि यत् कोऽपि न लाति। तेनायोमयो दिरद्रनरः कारितः। एकिसन् करे सर्व्यमन्यसिन् प्रमार्जनी। एवं कृत्वा व्यवहारिणोऽपितवान्। उजियन्यां गतः सर्वं वस्तु विकीय एप दर्शनीयः। लक्षं मूल्ये वाच्यम्। यदि कोऽपि न गृह्वाति तदा नृपप्रतोल्यां शब्दं क्षित्वा पुरस्य दोपं दन्त्वा व्यावर्त्तनीयम्। तेन तत्र गत्वा सर्वं विकीतम्। व्यवहारिभिरुक्तम्-किमसिन् शकटे १, उद्घाव्यताम्। तेन दिश्तिते दरिद्रनरः। किमिदम् १। नाम्न्युक्ते सर्वः कोऽपि नेत्रे निमील्य नष्टं प्रवृत्तः। तेनोक्तम्-लक्षं दन्त्वेष गृह्वाताम्। पुर्या दोपं नानयतेति वदतोऽपि जनो दूरं गतः। तेन नृपद्वारे नीत्वा व्याहतम्-असाकं दरिद्रनरं न कोऽपि गृह्वाति। पुरद्षणं दन्ता यामः। नृपेणाकृतः। दरिद्रपुत्तलः समानीतः। समाजनस्तु नेत्रे निमील्य स्थितः। नृपेण लक्षं दन्ता कीतः। माण्डागारे स्थितः। इतो रात्रेः प्रथमे यामे सुप्ते पुमानेकः समेल्य नृपं प्राह-देवाहं यामि। कस्त्वम् १। गजाधिष्टाता। कथं अवासि १। दरिद्रक्रयात्। यत्र दारिद्यं तत्र गजाः क्ष १। तिहं याहि। तिस्तन्ति दितीये यामेऽप्येकयोक्तम्-देव । सुत्कलापयामि। का त्वम् १। श्रीः। कथम् १-दारित्रे कीते श्रीः क्ष। मत्संघातो याति। सत्वरं याहि। इतस्तुरीययामे पुमानेत्य वभापे-देव ! सुत्कलाप्यसे। कस्त्वम् १ साहसपुमान्। नृपेणोक्तम्-त्वं मा त्रज्ञ। कथं त्वया दारित्रं क्रीतम् १। यत्र तत् तत्र साहसं क १। नृपेणोक्तम्-यदि सन्त्वमासीत्तदा क्रीतम्। येषां न, तैः कथं न क्रीतम्। यदि यास्यति तदा विक्रमादित्ये मृतेः इत्युक्तवा क्षुरिका कृष्टा। तेनोक्तम्-देव ! मैवं कुरु। सकलः सार्थो मिये विक्रते स्थितः। प्रातर्नृपेण दरिद्रपुत्तलकं सभायामानाय्य रात्रिवृत्तान्तं निवेद्य द्रिकृतः। इति दरिद्रक्रयप्रवन्थः।।

वीकमद्यूतकारप्रबन्धः (B.)

६५) तथैकदा नुपतिरन्थकारपटमावृत्य पुरे अमन्नेकां दिव्यरूपां स्त्रियं दृष्ट्वा प्राह-देवि! क यासि?। तयो-क्तम् तव पार्थे । तेनोक्तम् चल । साऽग्रे नृपः पृष्ठे । एकस्मिन् प्रासादे गतौ । तत्र प्राहरिका आकृष्टखङ्गा उपविष्टाः सन्ति, परं चित्रलिखिता इव । तत्र शुनः सन्ति [तेऽ]पि तथैव । सा मध्ये प्रविष्टा, नृपोऽपि । सा तं पञ्चमभूमौ निनाय । तत्र स्नानसामग्रीं कृत्वा स्नापितो नृपः । सा तु च्छन्नना नृपं विश्वत्वा मध्ये पल्यङ्के 5 विवेश । नृपस्तु द्वारमागत्य ऊर्ज्बीभृय स्थितः । पल्यङ्कद्वयं दृष्ट्वा सन्देहपरः कं पल्यङ्कं श्रयामि । तत्र स्त्रीयुग-मुपविष्टनस्ति । नृपे सन्देहपरे मुख्या जगाद-रे! कोऽयं नृपशुः समानीतः । बहिः कृष्ट्वा कमपि नरमानय । चेटी उत्थाय नृपं बहिर्निनाय। तदनु नृपेष चिन्तितम्-मां विनाऽन्यं विदग्धं कमानेष्यति। तदनु चतु-ष्पथान्तर्भ्रमति । इतो वीकमो धृतकारी धृतादुत्थितः । कान्दविकगृहे दत्ते, बहिः स्थित्वा द्वारमुद्धाटयेत्याह । तेनोक्तम्-कस्त्वम् ?। वीकमओं इत्युक्ते स आह-कस्ते द्वारमुद्धाटयति । मम किं त्रङ्गटकं ग्रहीतुकाम्ः ?। तेनो-10 क्तम्-बाढं बुश्वितः । द्रव्यमर्पय, बहिः श्वस्वैवानं दश्चि । तेन किञ्चिदर्पितम् । कान्दविकेनोक्तम्-कथं गृह्णासि ?। भाजनमर्पय । तेनोक्तम्-गृहीत्वा यातुकामः । तर्हि कर्परे कृत्वा समर्प्यताम् । तेनार्पितम् । आदाय प्रपां प्रति बजन तां चेटीं यान्तीं प्राह-रे! दासि क यासि ?। तयोक्तम्-तवानयनाय। तर्हि भोज्यं गृहाण। तयोक्तम्-परित्यज । तत्रापि भविष्यति भोज्यम् । तया सह चिलतः । नृपः पृष्ठे लग्नः । तत्र नीतः स्नापितश्रीवराण्य-र्पितानि भोजितश्च । नृपस्य पञ्यतस्सा तदृष्टिं वश्चयित्वा पल्यङ्के उपविष्टा । नृपे चिन्तातुरे स मध्ये प्रविश्य 15 एकसिन्यल्यङ्के उपविष्टः । सा स्त्री उत्थिता । पत्राण्यादायाग्रे कर्त्तनं कृत्वाऽर्पितवती । तेन विण्टकर्तनं कृत्वा पुनर्रापतानि । तयोक्तम्-शयनं कुरु । स पल्यङ्के किश्चिदृष्टिं दन्त्वोच्छीर्षके मस्तकं कृत्वा सुष्वाप । नृपो विस्सितः । कथमनेन खामिनी ज्ञाता, कथं पत्राण्यर्पितानि, कथमुच्छीर्पकं ज्ञातम् ?। स क्रीडितुं प्रवृत्तः। नृपस्तु खस्थाने गतः । प्रातवींकमो निष्कासितः । प्रपां गत्वा सुप्तः । रात्रिवृत्तं पृच्छ्यमानोऽपि न वक्ति । नृपेण शूलोपरि प्रहितः। यदि रात्रेर्वृत्तं वक्ति तदा न क्षेप्यः। स शूलोपरि नीयमानोऽस्ति। आरक्षकस्त्वित वक्ति-यन्नृपो रात्रि-20 वृत्तं पृच्छत्यसौ न वक्ति। तया नार्या गवाक्षस्थया शब्दः श्रुतः। स दृष्टः। चेटीं प्राह-अरे दृष्टौ विल्वयुगं भञ्ज। तया तथाकृते तेनोक्तम्-कथयिष्यामि नृपनीतः। नृपेणानायितः। रे! कथय-मया सा चेटीति [न] व्याहृताः त्वया चेटी किमिति ज्ञाता ? । तेनोक्तम्-देव ! चेटीजनस्य सुरभिवस्तुप्राप्तिः प्रस्तावे भवति । अतोऽस्याः श्ररी-रेऽम्लो गन्धः । अतथेटीत्युक्ता । तत्र प्राहरिकाणां किं कृतमस्ति यत्ते न श्वसन्ते? । धूपवशात् । कथं खामिनी-चेटी-पल्यङ्को ज्ञातः ? । देव ! उत्तमस्य मनुष्यस्य गृहस्य दक्षिणे भागे पल्यङ्कः स्यात् । पत्राण्यग्रं छित्त्वा तवार्षि-25 तानि, त्वया तु बिंटमपाकृत्यः तित्कम् ?। तयोक्तम्-अहं तव खहृदयमर्पयामि परं बहिर्न वाच्यम्। मया व्याहृ-तम्-युत् शिरो याति, परं न विन । तर्हि कथं कथयसि ? । तथैवोक्तम् । तया कथम् ? । चेटीं प्रेष्य महृष्टौ बिल्वं बिल्वेनाहत्य भग्नम् । अत उक्तम्-तत्कथय । पल्यङ्के उच्छीर्षकं प्रान्तो वा कथं ज्ञातः? देव! उच्छीर्षके चूर्णोन पादः खरिंटतो भवति । एवं तस्य वचः श्रुत्वा राज्ञोक्तम्-यूतं त्यज । त्वया सदैव मत्समीपे स्थेयं मत्पुत्रवत् । 30 स प्रसादपात्रं कृतः । इति वीकमध्तकारप्रबन्धः ॥ स्त्रीसाहसप्रबन्धः (B.)

्रिक्) एकदा विक्रमादित्ये जननीं नन्तुं गते माता तस्याशिषं ददौ—वत्स! स्त्रीणां ते साहसं भवतु । नृषे-णोक्तम्—मातः! किमिदं साहसम्? स्त्री तृणसमा । देव्याह—दर्शयिष्यते वत्स! प्रातः प्रतोलीद्वारे आवासान् दत्त्वा स्थियम् । नृपस्तत्र गतः । अथ देव्या मालिन्येका पृष्टा—रे! कोऽत्र व्यवहारी मुख्यः?। कस्य गृहे बाढं गृहिणीरक्षा ?। तयोक्तम्—देवि! सोमभद्रश्रेष्टिनः । तत्र त्वं यासि ?। तयोक्तम्—पुष्पाण्यादाय यामि । तस्या 35 गृहिण्याऽग्रे वाच्यम्—यद्विक्रमार्कस्त्वामभिल्पति । तया तत्र गत्वा निवेदितम्। तयोक्तम्—अहं सप्तमभूमेरध उत्त-रितुं न लेमे । तया देच्यप्रे च्याहृतम् । देच्या द्वितीयदिने प्रेपिता । अहं रखुं प्रेपिप्थामि, तत्प्रयोगेण त्वयाऽऽगन्तच्यम् । तया मानितम् । मालिनी पुष्पथ्याने रखुमादाय गता । तस्या अप्रिंतः । तया साम्भे बद्धा बिहिः श्विप्तः । देच्यादेशाद्राज्ञा गुइरस्य साम्भे बद्धः । सा भत्तिरि सुप्ते दवरकेण भृत्वा बहिर्गता । नृपश्चय्यान्ते उत्तीर्य ग्रिता । नृपण पृष्टा—का त्वं देवि । व्यवहारिपत्ती । राज्ञोक्तम्—सभर्तकां नाहमभिल्पामि । सा तेनैव प्रयोगेण गृहं गता । सुप्तं पति हत्वा पुनरागता । नृपणोक्तम्—पतिमारिकां न भेजे । तयोक्तम्—देव ! यजातं तन्नान्यथा भवति । परं प्रातमें साहसमवलोकनीयम् । सा वेश्वमिन गता । रज्जं श्विष्ट्या पूचके—यत् धावव धावत, श्रेष्ठी केनापि हतः । कलकले जाते जनो मिलितः । किमिदं न ज्ञायते । सा मुक्तकेशा काष्टारोहणे सजा जाता । जनो वारयति सा तु न निवर्चते । इतः प्रातर्नृपस्तत्र जनाज्ज्ञात्वा तद्वासे आयातः । नृपणोक्ता—रात्रिवृत्तं तत्, 10 आधुनिकमिदं निवर्तस्व । मद्रपुरलंकुरु । कोऽपि न ज्ञास्यति । देव ! नैतद्वक्तच्यम् । बीटकं देहि । अस्य त्रतस्ति देवोद्यापनम् । सा विसर्जिता । पत्या सहाग्रौ प्रविष्टा । नृपस्तु जननीं नन्तुं गतः । वत्स ! स्त्रियः साहसं तेऽस्तु । नृपेणोक्तम्—देवि ! तथ्यमिदं दृष्टम् । इति स्त्रीसाहसप्रबन्धः ।। स्त्रीचरित्रप्रबन्धः (२०)

§ ७) कएदा नृपविक्रमेण देव्ये धावनाय वामपादः पूर्वमर्पितः । तयोक्तम्-यदि स्त्रीचरितं वेत्सि तदा वामं 15 पादं प्रक्षालयामि । नृपत्तमन्वेष्टं चचाल । मार्गे किसंश्रितपुरे जलहारिणीमेकां दद्शे । तया व्याहृतं कुतः समायातः ? तेनोक्तमुज्जयिन्याः । क यास्यसि ? नारीचरितमन्वेष्टुम् । तर्हि मया सह महृहे एहि, यथाऽत्रैव ज्ञापयामि । परमहं यद्वचिम तत्त्वया पृष्ठानुगेन वाच्यम्। नृपो गृहे नीतः । सकलेऽपि कुटुम्बे इति व्याहृतम्-एष मद्भाता बाल्याद्पि मातृशाले वर्द्धितः । अधुना मम मिलनाय समायातः । राज्ञा नितः कृता । तित्रयो भगिनी-पतिरिति कृत्वा नतः । गौरवेण भोजितः । तया रात्रौ स्वपतिरुक्तः - यदावयोः सम्बन्धो जन्मावधि । परम-20 द्यतनो दिनो आतालभ्यः । एकान्ते भृत्वाऽस्य पार्श्वात्पितृगृहवार्त्तां शृणोमि सुखदुःखकरां च । दिवा वक्तमपि प्रस्तावो नाऽभृत । उपवरकान्तर्नृपस्य शय्या । राजा भगिनीपतिना सह वार्त्ता कृत्वा शय्यायां गतः । सा खयं पृथकं शय्यां क्षित्वा मध्ये विवेश । पत्युर्ग्ने प्राह-तालकं दन्ता स्वं समीपे गृहाण । मा जनापवादो भवत । तेनोक्तम्-को जनापवादो मिय सित ?। तयोक्तम्-एवं कुरु। तथा कृते वार्चाप्रसङ्गादनु तयोक्तम्-मदिभलिपतं कुरु । राज्ञोक्तम् -त्वं मे भगिनी । तयोक्तम्-कुतः ? त्वं पथिकः । को भ्राता का भगिनी । तयो(तेनो)क्तम्-25 जिह्नयोक्ता, तदहमकुत्यं [कथं] करोमि?। न विधास्यसि, तर्हि पश्य यद्भवति। तया पूत्कृतम्-धावत धावत सत्वरम्। द्वारमुद्धाटयत । नृपेण विनष्टमपि सिश्चित्योक्तम्-मा मार्य यत्कथयसि तत्करिष्ये । तर्द्धधःपत श्वासस्तु न प्राह्मः। तया पादेनाहत्य करम्बकरोटं पूर्वभृतं त्यक्तम् । नृपवदनं खरिडतम् । तावत्पत्या द्वारमुद्धादितम् । दीपः कृतः । जनेन पृष्टम्-किमिद्म् ? । पापाहं किं जाने । अस्य मद्भातुः पानीयरसो जातः । उदरंच्यथाऽस्य रवात्पपात । मया तु भीतया पूत्कृतम् । जलमानीय वदनं क्षालितम् । शकटिकामाधाय उदरसेकः कृतः । 30 नृपस्तु श्वासमेव न गृह्णाति । सर्वः कोऽपि निष्कासितो मध्यात् । क्षणं सुखासिकाऽस्ति । यदि निर्जनं भवति तदा निद्रा एति । इति कृत्वा जने गते द्वारं दन्वोक्तम्-इदं स्त्रीचरितम् । ज्ञातं न वा ? । राज्ञोक्तम् खकुलादि आगमनकारणं च । प्रातम्रिकलाप्य स्त्रियो मुद्रारतं दत्त्वा खपुरे गतः । पत्न्यै वृत्तान्तमावेदितवान् । तयोक्तम्-कथं वामपादमर्पयसि ? । तेनोक्तमतः परं न । इति स्त्रीचरितप्रबन्धः ॥

देहलक्षणप्रबन्धः (B.)

35

[§] ८) एकदा नृपो राजपाव्यां व्रजन् केनापि पण्डितेन दृष्टः।तं दृष्टा पण्डितः श्चिरःकम्पं चक्रे। नृपस्तु राजपाटीं

कृत्वा धवलगृहे गतः । केनाप्युक्तम्-देव ! पण्डितः कोऽपि देशान्तरीयश्रतुष्पथे साम्रद्रिकशास्त्रपुक्तकानि ज्वालयन्निक्ति । नृपेणाकारितः । कथं ज्वालयसि ! । देव ! मया जन्मावधि इदमेवाभ्यस्तम् । तव देहँमालोक्य
एषु 'विरक्तिर्जाता । तव देहे तृष्ठक्षणं नास्ति भेन कापि भद्रवेला भवति । त्वं तु राजराजेश्वरोऽसि । राज्ञोक्तम्—
पुनर्मे सर्वश्रीरलक्षणान्यवलोक्य । देहद्शिते तेन विशेषतो मुखमोटनं कृतम् । नृपेण पृष्टम् । देव ! किमिदमुच्यते, किमिप न पश्यामि । पुनः किमिप गुप्तं प्रकटं वा सर । तेनोक्तम्—यदि वामकुक्षौ कर्नुरमन्त्रं भवति तदा 5
सर्वमेवास्ति । तन्न ज्ञायते । देवेनोक्तम्—ज्ञास्यते । क्षुरिकां कृष्टा यावद्विदारयति कुक्षि तावत्तेन करे धृत्वोक्तम्—
देव ! सर्वलक्षणानि सन्ति । कथम् ! । यदि सन्त्वमस्ति, तत्सर्वाण्यपि । देव ! भिक्षुरहम्, मद्वचसा प्रवृत्तः । उक्तं
च "सर्व सत्त्वे प्रतिष्ठितम् ।" नृपेण प्रसादं द्न्वा विसृष्टः । इति देहलक्षणप्रवन्धः ॥
मनि-मनुप्रवन्धः (B. Br.)

- §९) एकदा विक्रमार्को भट्टमात्रं प्राह-भो ! 'मिन मनु' इति किम्रच्यते । देव ! दर्शयामि । पुरोपान्ते पाद-10 मवधारयत । द्वाविप पुरो बाह्ये गतौ । तदवसरे एकः काष्ट्रभारवाहको दृष्टः । भट्टेनोक्तम्—देव ! अस्रोपिर तव चित्तं कीद्यम् ! न वर्यम् । स भट्टेन चोदितः—अरे ! कस्ते काष्ट्रानि लास्यति । अद्य नृपः परामुरासीत् । तेनोक्तम्—बिल्ते जिह्वाया अद्य विशेषतो मम काष्ट्रानि महार्घ्याणि विकेष्यन्ते । बहवो जनाः काष्ट्रभक्षणं करिष्यन्ति । अग्रे चिलतौ । अग्रे महीरीआ एकाऽभ्यति । भट्टेनोक्तम्—अये मध्ये क यासि ? । अद्य नृपः परोक्षो जातः, कस्ते दिघ लासिति ! तया तत्कालं गोलिका त्यक्ता । रुदितुं प्रवृत्ता । भट्टेनोक्तम्—तव नृपेण किं 15 दत्तम् ? । न किमपि । स पृथिच्या आधार आसीत् । भट्टेनोक्तं नृपस्य । अनेन नरेण पश्चादागतेन क्षेममुक्तम् । सा हृष्टा । नृपेण मुद्रारतं दत्त्वा प्रहिता । अतो मनिस मनो भवति । नृपः स्वगृहे गतः । इति मनि-मर्जु-सम्बन्धप्रवन्धः ॥
 - § १०) एकदा राजपाट्यां राजा त्रजन् द्विजमेकं कणावचयं कुर्वाणं दृष्ट्वा प्राह-
 - (४). निअउअरपूरणंमि वि असमत्था किं पि तेहिं जाएहिं।
 - [द्विज:-] सुसमत्था वि हु न परोवयारिणो तेहि वि न किं पि॥
 - (५) 'तेहि वि न किं पि' भणिए विकमराएण देवदेवेण। दिसं मायंगसयं जचसुवन्नस्स दो कोडी॥

विक्रमपुत्र-विक्रमसेनसम्बन्धप्रबन्धः (B. G.)

- §११) अथ विक्रमार्के दिवं गते विक्रमसेनकुमारस्य राज्याभिषेकसमये पुरोधसाऽऽशीर्वचः प्रोक्तम्—यन्तं 25 महाराजः ! विक्रमार्कस्याधिको भावी । तदा राज्याधिष्ठात्रीभिर्देवीभिरिधिष्ठताभिः सिंहासनस्थाभिश्वतस्रभिः पुत्तिकाभिरीषद्वसितम् । राज्ञा पृष्टाः—िकमिति हस्यते ?। ताः प्रोचुः—देव ! तेन सह साम्यमि न घटते, कृतोऽधिकत्वम् ?।
- 1. आद्याह-तव पिताऽपूर्वां वार्तां श्रुत्वा [G वार्ता कथकाय]दीनारपंचश्चतीं ददाति । एवं श्रुत्वा खापरकां-चौरेण दीनारपंचश्चती याचिता । [G वार्ता चैका कथिता] देव ! पातालविवरं गन्धवहश्मशानतीरेऽस्ति । तत्र 30 विवरे देवीहरिसिद्धिक्षप्तो दीपः पतन्मया दृष्टः । तस्यानुपदिकेन मयापि झम्पा दत्ता । पाताले दि्व्यं सौधं दृष्टम् । तत्रोत्कलमाना तैलकटाहिका दृष्टा । तत्पार्श्वे एको नरो दृष्टः । पृष्टश्च किमर्थमिह ? । तेनोक्तम्-अत्र सौधे

20

¹ प्रत्यन्तरे—जानेऽमुं पापं मारयामि । तर्हि पश्यताम् । 2 प्र॰—मनइं मन । 3 G खर्परक॰ ।

5 2. द्वितीययोक्तम्-एकदा काशीतो द्वौ द्विजौ समागतौ। नृषेणापूर्वं पृष्टौ। ताभ्यामुक्तम्-असादेशे [G पाताल]विवरमित । तत्रान्धो राक्षसोऽित । असादेशस्वामी यशोवर्मसौलकटाहिकायां झम्पां दत्ते [G दत्त्वा स्वमांसेन
राक्षसस्य पारणं कारयति] स राक्षसस्तं पुनर्जीवयति । प्रतिदिनं रात्रौ सप्तापन्नरिकाः सुवर्णाः करोति ∤ नृपस्तु
प्रातर्दत्ते । इदं श्रुत्वा तयोद्विजयोदीनारसहस्रमदात् । नृपस्तत्र गत्वा कटाहिकायां झम्पां ददौ । राक्षसेन मित्रतो
प्रातर्दत्ते । राक्षसस्यान्ध्यशापस्यान्तोऽभृत् । नेत्रैनिरीक्ष्य विक्रमं प्राह-तुष्टोऽस्यि तव सन्वाद् । विक्रमार्कः-परं
गीवतश्च । राक्षसस्यान्ध्यशापस्यान्तोऽभृत् । नेत्रैनिरीक्ष्य विक्रमं प्राह-तुष्टोऽस्यि तव सन्वाद् । विक्रमार्कः-परं
विक्रमादिषकस्त्वं भवसि ।

3. तृतीययोक्तम्-एकदा केनाप्युक्तम्-देव! त्वं परकायप्रवेशविद्यां न वेत्सि । नृपेणोक्तम्-को जानाति ?। श्रीपर्वते भैरवानन्दोऽस्ति, स जानाति । नृपः खल्वाटं कुम्भकारमादाय तत्र गतः । योगी मिलितः । स शुश्रुषया तुष्टः प्राह-विद्यां गृहाण । पूर्वं मम मित्रस्य देहि । तेनोक्तम्-असौ कुपात्रं विद्यायोग्यो न । नृपेणाग्रहाद् 15दापिता । नृपस्त्ववन्त्यां गतः । नृपस्तु द्वारे श्थित्वा कश्चित्ररं नगरस्य शुद्धिं पप्रच्छ । तेनोक्तम्-नृपस्य पट्ट-इस्ती अद्य विपन्नः । नृपस्त्वन्तः पुरपरीक्षायै मित्रं प्राह-भो ! यदि मम शरीरं रक्षसे, तदाहं परीक्षां करोमि । तैनोक्तम्-करिष्ये। शरीरमेकान्ते मुक्त्वा तं प्रहरके मुक्त्वा गजे प्रविश्य गजं सजीवमकरोत्। स स्वपादैः पुरान्त-र्मातः । इतो मित्रेणाचिन्ति-अमुं भुण्डतरं त्यक्त्वा नृपद्मरीरमिष्ठाय भोगान्भोक्ष्ये । स स्वद्मरीरं त्यक्त्वा नृप-शरीरे प्रविश्य मध्ये आयातः । नृषे आयाते गजो जीवितः-इति वर्द्धापनकान्यभूवन् । गजेन चिन्तितम्-असौ 20 पापो ममोपरि चटिष्यति । इति सश्चिन्त्य गजः स्तम्भग्रुन्मृत्य बहिर्गत्वा प्राणानौज्झत् । इतः प्रत्यासन्ने आखेटक एकः शुकान् व्यापादयन्नस्ति । नृपजीवस्त्वेकस्य शुकस्य देहे विवेश । स शुको छुव्धकं प्राह-रे ! रे ! शुकान्मा मार्य । मां गृहाण । यदि ते द्रव्यस्पृहा पुरे चल । परमहं यत्र कथयामि तत्र विकेयः । सर्वोऽपि जनो याचते । शुको न वक्ति । मुख्यदेवीचेट्या याचितः । तेन पृष्टम्-दिश्व ? । देहि । तेन दीनारानादाय चेट्या अर्पितः । सा देवी शुकं दृष्ट्वाऽऽकृष्टा । सुवर्णपञ्जरे चिक्षेप । नृपोऽन्तः पुरमाययौ । देवी तं दृष्ट्वा खिन्ना सती प्राह-देव! त्विय 25 देशान्तरं प्रस्थिते मया चिन्तितं क्षेमेणागतेऽपि देवे ततोऽपि मासं यावह्रह्मचर्यम् । तदनु कुलदेवीपूजनं कृत्वा नियममपाकरिष्ये । स पश्चाद् गतः । जनस्तु चिन्तयति-कथं नृपतिरन्य एव जातः ? । देहमस्ति परं सम्यग् न ज्ञायते । देवी शुकेन वाढं संस्कृत-प्राकृतकाव्यैस्तथा रिक्कता यथा त्विय जीवित जीवामि । इतो देव्या शुक आकारितः । तेनोक्तम्-देवि ! मार्जार्या विभेमि । देव्याह-यदि मरिस तदाहमपि त्वामनु मरिष्यामि । एकदा शुकोऽपि परीक्षार्थं मृतां गृहगोधां दृष्ट्वा शुकदेहमुत्सृज्य तत्र विवेश । सा भित्तौ चिटता । शुकं मृतमालोक्य देवी 30 तेन सह काष्टािथरोहणसञ्जा नृपेण वारिता । सा वक्ति यदि शुको जीवति तदा जीवामि, नान्यथा । नृपस्त्वपव-रिकां प्रविक्य देहमुत्सृज्य ग्रुकदेहे प्रविष्टः। इतो विक्रमार्कः पछीदेहमुत्सृज्य स्वश्ररीरमादाय बहिरायातः। ग्रुको जीवितः, परं देव्या दृष्टोऽपि न सुखायते । नृपं दृष्ट्वा तत्कालमभ्युत्थानं चक्रे । नृपेण शुको भाषितस्तेनोक्तम्-देवाहमदृष्टव्यमुखः। मां वामपादेन हत्वा मुश्च। नृपेणोक्तम्-तव सान्निध्येन मया देवीपरीक्षा लब्धा। स

कीरदेहो दिजो गतः।

¹ G कन्ययासौ मृतेन जीवितः। 2 G राज्यस्वरूपं। 3 G निर्वन्धात्तस्यापि दापिता।

(६) विषे प्राहरिके नृपो निजगजस्यां केऽविदादि स्या,
 विप्तो भ्पवपुर्विवेश तद्नु की डाशुकोऽभूत्ततः ।
 पछीगात्रनिवेशितात्मिन नृपो व्यासृद्य देव्या सृतिं
 विप्तः कीरमजीवयिक्ततनुं श्रीविक्रमो लब्धवान् ॥

एवं यः परोपकारी कथं तेन समी भविष्यसि ।

4. तुर्ययोक्तम्—एकदा विक्रमार्केण उत्तमं सौधं कारितम्। राजा तत्र गतः। तत्र चटकयुग्ममितः। चटकेनोक्तम्—सुधु सौधमितः। चटकयोक्तम्—याद्यं स्नीराज्ये लीलादेच्या बाह्यगृहमितः ताद्यमेतत्। राज्ञा श्रुतं तत्।
नृपत्तत्र गमनोत्सुकः। स्थानं तुं न वेति। सचिन्तं नृपं दृष्ट्वा भट्टमात्रस्तदाश्यं परिज्ञाय तत्स्थानविलोकनाय
चितः। तन्मार्गे लवणसमुद्रः। तम्रुत्तीयग्रिं रात्रौ मदनायतने स्थितः। निशीथे हयहेषारवस्चितं दिव्यालङ्कारभूषितं दिव्यं स्नीष्टन्दं आगतम्। तत्स्वामिन्या कामपूजनं कृतम्। व्यावर्त्तमानानां तासामेकस्थाश्यस्य पुच्छे लिगत्ता 10
तत्र गतः। दासीभिर्दष्टः। स्वामिनीसमीपे नीतः। तया स्नानादि कारितः। रात्रौ तत्रैव सुप्तः। तया स्वपन्त्योकम्—मम विक्रमार्कः पतिभीवी, किं वा मां यश्रतुभिः शब्दैर्जागरयति। इत्युक्त्वा सुप्ता। तेन चिन्तितम्—
चतुर्भिरपि शब्दैर्न जागित्तं तिर्हे एनामहमेव जागित्व्यामि। शब्दाः कृताः। न जागित्तं। तदा पादाङ्गुस्त्रश्चिम्पतः।
तया पादेनाहत्य तत्र श्विप्तः, यत्र विक्रमार्कः त्रसुप्तौऽन्ति। राज्ञा पृष्टं किमिदम्—तेन वृत्तान्तः प्रोक्तः। राजाऽग्निकवेतालमारुद्य तत्र गतः। वेतालश्लमं स्थितः। राजा दासीभिस्तत्र नीतः। तयोपचरितः। तदृपदर्शनात्सरागा 15
जाता। परं श्यानया पूर्ववत्प्रतिज्ञा कृता।

A. राज्ञा दीपस्थो वेताल उक्तः—भो दीप! तावदद्य कुवासको जातः। यस्या गृहे आगताः, सा वक्त्येव न। अतस्त्वं कामि कथां वद। तेनोक्तम्—देव! कोऽपि विप्रस्तस्य सुता चतुर्णां वराणां दत्ता। एकस्य पित्रा, परस्य । मात्रा, एकस्य मातुलेन, एकस्य भाता। एवं चतुर्णां दत्ता। चत्वारोऽपि आगताः। विवादे जाते कन्यया काष्टभक्षणं कृतम्। एकश्वितायां तामनु विवेश। एको देशान्तरं गतः। एकस्त्वस्थीन्यादाय गङ्गां गतः। एकस्तु उटजं कृत्वा 20 तत्र स्थितः श्मशानं रक्षति। देशान्तरिणा सङ्घीविनी विद्या शिक्षिता। चत्वारोऽपि मिलिताः। देशान्तरिणा विद्यया जीविता। पुनर्विवादो जातः। सा राज्ञश्वतुर्णां मध्ये कस्य पत्नी १। राज्ञोक्तम्—नाहं वेशि, बृहि। स आह—यश्वित्तायाः सहोत्थितः स भ्राता। योऽस्थिनेता स पुत्रः। येन जीविता स पिता। यो भसरक्षकः स भर्ता, पालकत्वात्।

B. द्वितीययामे राज्ञा ताम्बूलस्थिगिका पृष्टा-रे ! कथां काश्चित्कथय । वेतालाधिष्ठाता साऽप्याह-कापि पुरे एका मृता ब्राह्मण्यस्ति । तस्या जारेण सह सुता जाता । सा तां त्यकुं रात्रौ बहिर्गता । इतस्तत्र कोऽपि 25 शूलाक्षिप्तो जीवन्नस्ति । तस्याः पादेन स्वलितः । तेनोक्तम्-कः पापी दुःखिनोऽपि दुःखम्रुत्पादयित १ । तयोक्तम्-

* G सञ्ज्ञके सङ्ग्रहे एषा कथा किञ्चिद्भिन्नक्रपेण लिखिता लभ्यते। यथा-

तृतीययोक्तम्-एकदा विक्रमाकों निजपूर्वास्वयखल्वाटकुम्भकारयुक्तो देशान्तरं गतः। परकायाप्रवेशविद्यावेदी योगी मिलितः। स आवतृतीययोक्तम्-एकदा विक्रमाकों निजपूर्वास्वयखल्वाटकुम्भकारयुक्तो देशान्तरं गतः। परकायाप्रवेशविद्यावेदी योगी मिलितः। स आवजिंतः। तुष्टश्च विद्यां दातुमारेमे। राज्ञोक्तम्-प्रथमं मम मित्रस्य। तेनोक्तम्-अयोग्योऽसौ। निर्वधात्तस्यापि दत्ता। अवंतीं गतो राजा राज्यं
करोति। एकदा पद्दाश्चो मृतः। विद्यापरिक्षार्थं राज्ञा स्वजीवस्तत्र क्षिप्तः। कुंभकारेण स्वजीवो नृपदेहे। कुंभकारो राज्यं करोति। अश्चो
मारणाय चितितः। नृपजीवस्तु पूर्वमृतयुक्तदेहे प्रविष्टः। युक्चोऽपि सोमदत्त्रअष्टिमार्या-प्रोषितभर्तृका-कामसेनागृहं गतः। सा तच्चातुर्येण
मारणाय चितितः। नृपजीवस्तु पूर्वमृतयुक्तदेहे प्रविष्टः। या राज्ञीसमीपं गता। अनागमनकारणं पृष्टा। युक्चातुर्येकारणं प्रोक्तम् । तया
दृष्टा'। राज्ञीसमीपं न गच्छिति। श्रेष्टी समागतः। सा राज्ञीसमीपं गता। अनागमनकारणं पृष्टा। युक्चातुर्येकारणं प्रोक्तम् । तया
दृष्टा'। राज्ञीसमीपं न गच्छिति। श्रेष्टी समागतः। सा राज्ञीस्तर्याच्याचितः सः। सा राज्ञिता तेन-यथा राज्ञा पूर्वमेकदा युक्चेन भूत्वा राज्ञीस्त्रहपरिक्षार्थं गृहगोधिकादेहे गतः। राज्ञ्या तिह्योगेन काष्टमक्षणयाचितः सः। सा राज्ञिता तेन-यथा राज्ञा पूर्वमेकदा युक्चेन सर्वो वृत्तांतो राज्ञ्ये कथितः। राज्ञ्या कुंभकारस्यावर्जना कृता। तेन तुष्टेन
मारव्यम् । नृपजीवेन युक्चे जीवापितः। सा व्यावृत्ता। युक्चेन सर्वो वृत्तांतो राज्ञ्येकम्पते। राज्ञोक्तम्-न भेतव्यम्, नाहं व्यत्समो भावी।
सङ्गपोऽस्मि। त्वं सुक्चं जीव चर पिव। ततः कथं तेन समो भविष्यसि।

अस्य किं दुःखम्?। देहपींडादिकमेकमपुत्रत्वमपरम्। चौरेणोक्तम्-त्वमपि कथयं का त्वम् ? कथिमहागताासे?। निजचिस्तं तयोक्तम् । ग्रूलास्थनरेणोक्तम्-मां विवाहयेमाम् । मया पुरादाहृतं भृक्षिप्तं द्रव्यं गृहाण च कये । ब्राह्मणी आह-त्वं मरिष्यसि । सुता रुष्वी, पुत्रः क ? । तेनोक्तम्-अस्या ऋतुकाले कस्यापि द्रव्यं दत्त्वा पुत्रमुत्पाद्येः । तया सर्वं कृतम् । यावत्पुत्रो जातः । मात्रा छन्नं नृपद्वारे मुक्तः । केनापि राज्ञे निवेदितम् । 5 नृपेणापुत्रेण पालितः । राज्यं दत्तम् । राजा मृतः । स पितुः श्राद्धं कर्तुं गङ्गायां गतः । जलात्करत्रयं निर्ययौ । राजा विस्तिः। कसिन्करे पिण्डं मुश्चामि। वेतालेनोक्तम्-देव ! वद । स पिण्डं कस्य करे मुश्चतु । राज्ञोक्तम्-चौरस्य। येन परिणीता यस्य बित्तम्।

C. राज्ञा सुवर्ण्णपालकं जिल्पतम् । तदिप कथां प्राह-कसिन्निप ग्रामे कंथित् कुलपुत्रः । स परिणीतोऽन्य-ग्रामे । तत्पत्नी श्रञ्जरगृहे न याति । स जनैईस्यते । एकदा जनत्रेरित आनयनाय गतो मित्रान्वितः । मार्गे 10 सरस्तीरे यक्षदेवकुलम् । तत्र यक्षं नत्वा प्राह-देव! यदि मे पत्नी समेष्यति तदा वलमानस्ते शिरो दास्यामि । तत्त्रभावाच्छुशुरकुले सत्कृतः । सा हृष्टा तेन सह चलिता । स चलन् मार्गे वाहिन्या उत्तीर्य यक्षं नन्तुं गतः । यक्षाग्रे स्त्रीलाभाच्छिरञ्छेदितम् । स नायाति । मित्रं तु तमनुगतम् । विनष्टं दृष्ट्वा जनापवादात् भीतेन तेनापि शिरिक्छन्नम् । तस्मिन्नप्यनागच्छति, सा गता । द्वावपि तदवस्थी दृष्टी । चिन्तितम् जनोऽग्रेऽपि मां पतिद्वेपिणीं कथयति । अधुना पतिर्झी कथयिष्यति । ततः सापि शिरक्छेत्तं प्रवृत्ता । यक्षेणोक्ता साहसं मा कुरु । तयोक्तम्-15 द्वाविप जीवापय । तेनोक्तम्-निज २ कबन्धे शिरोदानं कुरु । तयोत्सुकभावादन्यान्यकबन्धयोर्न्यस्ते । द्वाविप जीवितौ । परस्परं भार्याविवादो जातः । एको मदीयां वक्ति, द्वितीयस्तु मदीयाम् । तेनोक्तम्-देव! सा कस्य भवति ? । नृपेणोक्तम्-यस शिरस्तस भार्या । ['सर्वस] गात्रस शिरः प्रधानिम'ति वचनात् ।

D. वेतालवशात्कर्पूरसमुद्रकः पृष्टः-रे! कामपि कथां कथय । देव! कुतोऽपि पुराचत्वारः कलाविद्ग्धा-श्रेलुः । एकः काष्ट्रघटकः सूत्रधारः । अपरः स्वर्णाकारः । तृतीयः शालापतिः । तुर्यो द्विजः । कापि वने रात्रौ 20 स्थिताः। प्रथम[यामे] सत्रधारः प्रहरके स्थितः। काष्टमयी पुत्तलिका कृता। स सुप्तः। द्वितीयप्रहरे सुवर्ण्णकार उत्थाय [यामिके] स्थितः । तेन सा पुत्तलिकाऽऽभरणैर्मण्डिता । तृतीये .शालापितिस्तेन दुक्लं परिधापिता । चतुर्थे द्विजेन सजीवा कृता। प्रातः सजीवां दृष्ट्वा विविदतुं प्रवृत्ताः। इतस्तेन वैतालेनोक्तम्-देव ! विक्रमादित्य ! सा कस्य भवति ?। [G नाम श्रुत्वा सा चुक्षोम] राज्ञोक्तम्-नाहं विश्वि, यदियं सुप्ता वेत्ति । [G तयोरकथ-यतीश्र तया जल्पितम्-भो राजन्!] कस्य सा ?। राज्ञोक्तम्-स्वर्ण्णकारस्य। पति विना को नारीं मण्डयति। 25 [G सा पप्रच्छ-के यूयम् ? । दीपस्थेन वेतालेनोक्तम्-असौ स विक्रमादित्यः ।] सा हृष्टा, राज्ञा परिणीता च । [G तामादायावन्तीमागमत् ।] य ईद्या हे महाराज! तत्समः कः ?; आधिक्ये तु का कथा इति हसितम् । इति श्रुत्वा विक्रमसेनेन गर्वस्त्यक्तः। इति विक्रमसेनगर्वत्यागप्रबन्धः॥

विक्रमसम्बन्धे रामराज्यकथाप्रबन्धः (B. P. G.)

§१२) अथैकदा विक्रमसेनः पुरोधसमप्राक्षीद्-यदेताः काष्टपुत्रिका मम पितरमद्भुतगुणं वर्णयन्ति, तर्हि स 30 एव लोके प्रथमः । [G तत्प्रथमतयोत्तमत्वेनावतीणों भविष्यति । प्राक् तु न कोऽपि ताद्दगुत्तमोऽभृत्-इति ब्रूमः ।] पुरोधाः प्राह-राजन् ! अनादिर्भृ रत्नगर्भेयम् । [G अनादिश्रतुर्युगी ।] युगे युगे रत्नानि जायन्ते । अहमेव प्रधान इति गर्वो न श्रेयःकारी [द न निर्वहते]। तव पितुर्मनिस एकदा इत्यभृत्-यथा रामेण जनः सुखी कृतः तथाऽहमपि करिष्यामि [G ततो रामायणं व्याख्यापितम् । तत्र यथा-] रामस्य दानं सत्रागार-स्थापनं वर्णाश्रमव्यवस्थादि गुरुभक्त्यादि तथा सर्वमारब्धम् । ततोऽभिनवो राम इत्यात्मानं पाठयति । मित्रिभि-

35 रचिन्ति-असावनुचितकारी । [G असत्प्रभुर्यो गर्वादात्मानं तद्वन्मनुते] यतः-

• (७) *उत्क्षिप्य टिहिमः पादावास्ते भङ्गभयाद्भवः। स्वन्वित्तकल्पितो गर्वः कस्यान्यस्य न विचते॥

[G उपायेनोत्तारियतव्यः प्रस्तावे] एफद्म राज्ञोक्तम् स कोऽप्यस्ति योऽश्वतपूर्वा रामकथां कथयति । एकेन बुद्धमित्रणा प्रोक्तम्-राजन् ! कोशलायामेको बुद्धद्विजोऽस्ति । स पारम्पर्येण कामपि रामवार्त्ता विक्त । [G आहूय पुच्छचते] स राज्ञा सगौरवमानीतः पूजितश्च । पृष्टं च-हे बृद्ध ! कांचिद्रामवार्त्ता [नव्यां] वद । सोऽभाणीत- 5 देव! कोशलायां यद्यागच्छिस तदा किमप्यपूर्वं दर्शयामि [G इह स्थितस्य तु वक्तं न पारयामि]। राजा मिश्रेषु राज्यं न्यस्य ख्वयं कटकेन सह कोशलां प्रति चचाल । तत्र गत्वा बहिःस्थितः । बृद्ध ! दर्शय । देव ! अत्र जन-पार्धात्त्वानय । तथा कृते, खर्णकलशः प्रकटो जज्ञेः तदनु हैमी मण्डपिका च । पुनः खनिते एकश्रण-द्विक्षण-तृतीयक्षण-चतुर्थक्षणे प्रकटीकृते महती खर्णीपानदेका प्रकटी जाता। खर्णवालकगुम्फिता सर्वरत्नखचिता। विस्मितेन गृहीत्वा हृदि कण्ठे च दत्ता नृपेण । वर्णनं कुर्वति, द्विजेनोक्तम्-देव ! चर्मकारपश्या उपानदेषा न 10 स्प्रष्टुमर्हति । नृपेणोक्तम्-सा चर्मकार्यपि धन्या, यसा ईद्युपानत् । परं कथ्यतां कथम् ? । देव ! श्रीरामे सत्यत्र चर्मकारगृहाण्यासन् । इदमेकस्य गृहम् । तत्पत्नी लाडबहुला, अतः सगर्वा । विनयं न करोति । सा भर्ता हिकता शिक्षिता च । उक्तश्च-मद्भहाद् याहि । सा वाणहीमेकां पतितां मुक्त्वा एकां च पादे कृत्वा पितृगृहं गता । . पत्युरपमानमूचे । पित्रा दिनद्वयं स्थापिता पश्चादुक्ता-वत्से ! कुलिखयः पतिरेव शरणम् । त्वं तत्र याहि । सा द्वित्रिवारं भणिताऽपि न याति । तदा पित्रा प्रोक्तम्-वत्से ! श्रीरामः सलक्ष्मणः सप्रियश्च त्वामनुनेष्यति । 15 साऽप्यलीकाऽभिमानिनी प्राह-यदि समेष्यति तदैव यास्यामि [G नापरथा]। इयं वार्चा छन्नेर्नृपपुरुषैः श्रुता । तैर्नृपाय न्यवेदि । अशिरामस्ततः श्रुत्वा तद्गेहद्वारे स्थितः । तेन कथितम् -देव ! पादमवधार्यताम् । मम रङ्गस गृहेऽद्य कल्पद्धमागमनम् । तव पुत्रीमानयितुं वयमागताः सः । मात्रा सा त्वरितं पत्युर्गृहे नीता । तस्या औत्स-क्येन व्रजन्त्या. इयमत्रैवोपानद्विस्मृता । श्रुत्वा देवस्तु खस्थानं गतः । देव ! रामराज्यमीदशमासीत् । तच्छत्वा विक्रमादित्यः गर्वं त्यक्त्वा निजपुरीं प्राप् ।। इति विक्रमादित्यविविधप्रबन्धाः ॥

(G.) सङ्ग्रहगतं विक्रमवृत्तम् ।

§ १३) श्रीविक्रमादित्यसत्रागारे नित्यं कार्पटिका विनश्यन्ति । तदपवाददोषभयेन राजा प्रच्छन्नः स्थितः । तावता

^{*} ति नास्त एष श्लोकः । ‡ एतदन्तर्गतपाठस्थाने ति सङ्घद्दे कियानिधको विस्तृतश्च पाठः प्राप्यते । यथा—
ततो देवः श्रीरामः प्रजावस्सलः प्रातः ससीतः सल्ह्मणः समागत्य तक्षमंकारभवनमगात् । तन्मध्यं प्रविदः पूजितः कारुमिविसितै
विज्ञसश्च-देवायमस्मान् कीटकान् प्रति कियान् प्रसादः कृतः । स्क्षोऽपि नेदं संभाज्यते, षहेवोऽस्मानुपतिष्ठते । कि कारणमागमनस्य ।
श्रीरामः प्राह्-त्वरपुत्र्याः स्वगुरकुलप्रेषणायायातोऽस्मि । तस्या हि वराक्यास्त्रथाविधा सम्धाऽऽसे । ततो हृष्टसज्ञनकः । अपवरकं गत्वा दुहितरमार्द्ध सा-मुग्धिके ! तव प्रतिज्ञा पूर्णा । रामदेवोऽप्यायातः सदेवीकः । पृहि वन्दस्त तं जगत्पतिम् । ततस्तुष्टा रामान्तिकमागता । ववन्दे
तम् । आलापिता प्रजातातेन-वत्से ! गच्छ स्वगुरमन्दिरम् । तया भणितम्-आदेशः प्रमाणम् । ततो पृत्(पति)गृहम् । रामः स्वस्थानमयासीत् । श्रीविकमस्य द्वितीया उपानत् तत्रापि गृहे स्वन्यधोमाने (अधःस्वन्यमाने) लप्यते । स्वामिस्त्रायाति तत्र सान्यते । गतो राजा
तत्र । स्वानितं तत् । रुव्धा द्वितीया उपानत् । दृष्टं हेमगृहम् । पृत्रमन्यान्यपि तेन विप्रेणासानयिषत । लातं तद्वेम । राज्ञा विष्रः पृष्टःविप्र !श्वयोदशं सम्यग् जानासि ? । विप्रेण गित्तम्-पूर्वजपारंपर्योपदेशात् ज्ञातं तुम्यमुर्कं च । परं गर्व माधाः । स रामः स एव । तस्यास्वर्था जलञ्चलनौ स्तंभ्यते सा । पतन्त्यो दत्तायां तदाज्ञायां न पेतुः । स्नुता द्वित्वारिक्तं, अभ्याद्याः समुर्विवातिः, स्कोटिका अष्टोत्या जलञ्चलनौ स्तंभ्यते स्व । पतन्त्यो मित्तयो दत्तायां तदाज्ञायां न पेतुः । स्नुत्वारिश्चत्, अन्वगद्याः समुर्विवातिः, स्कोटिका अष्टोतरं शतं, विद्वराणि दोषाश्च सर्वे व्यनेशन् । या तु तदेवी सीता, ये तद्रातरः, ये तद्र्या हन्मस्तुशीवादयस्त्री महिमानं वर्षशतेनापि
वान्पतिरिषे वक्तं न शक्तः । इति श्रुत्वा विक्रमेण गर्वो मुक्तः । विद्वित्तं (अभिनवरामः) इति । पुनक्रस्रयो महिमाच प्रवर्गतिस्वार्योऽपिकारे । वतोऽपिकास्य परे कोटकोटयोऽभूवन् । इत्याकण्यै विक्रमसेनो विवेक्यभूत् ॥

भोगीन्द्रः समागतः। राज्ञा पृष्टं-कथं त्वं कारणं विना नित्यं तीर्थंकरणप्रवणपात्राणि मारयसि। तेनोक्तं-[कथय] किं पात्रं ?। राज्ञोक्तं-'भोगीन्द्र ! बहुधा ।' इति तुष्टो मनुष्यपात्राणि ररक्ष।

ई-१४) केनापि साम्रद्रिकशास्त्रवेदिना मध्याहे चतुःपथे कस्प्रापि काष्ट्रभारवाहकस्य चरणलक्षणानि भ्रवि प्रतिविवितानि वीक्ष्य शास्त्रं वितथमिति विचार्य पुस्तकैः सह राजद्वारे काष्ट्रभक्षणं प्रारब्धम् । ततो राज्ञा पृष्टं-मम ठलक्षणानि कथय । तेनोक्तं-नैकमपि । तत्कथं राज्यम् १ । पुनरुक्तं-यदि वामकुक्षौ करडांत्रं भवति । तदा राज्ञा भ्रुरिकामाकृष्योक्तं स्थानं दर्शय । तेनोक्तं-सन्त्वेनैव राज्यम् १ । राज्ञापि दरिद्रमुखे कणिकगोलिकाप्रयोगेन तालुनि काकपदं दर्शितम् ।

§ १५) अन्यदा सिद्धसेनदिवाकरेण गुरुचरणसंवाहनां विधीयमानेन गुरव उक्ताः—यदि यूयमादेशं ददत, तदाहमागमं संस्कृतेन करोमि । गुरुभिरुक्तं—तव महत्पातकमजिन । त्वं गच्छयोग्यो न, गच्छ ! । तेनोक्तं—प्रायश्चित्तं

10 ददत । गुरुभिरुक्तं—यत्र जिनधम्मों न तत्र जिनप्रभावनां विधाय पुनः समागन्तव्यं । इत्यवधृतवेषेण चित्तः ।
ततः सप्तवर्षानन्तरं मालवके गृहमहाकालप्रासादे शिवाभिमुखं चरणौ विधाय सुप्तः । तत्र वारितोऽपि तथैव ।
अत्रान्तरे राज्ञा रक्षकपुरुषान् प्रेषयित्वा उपद्वतः । तावतान्तःपुरे प्रदीपनकं लग्नम् । ततो राज्ञा समागत्य पृष्टः—
कथं शिवनमस्कारं न विद्धासि ? । तेनोक्तं—मम नमोऽसौ न सहते । राज्ञोक्तं—विधेहि । तेन सकललोकसमक्षं
द्वात्रिशतिका विहिता । तदा लिंगमध्यादवन्तीसुकुमालद्वात्रिशत्यत्विकारितप्रासादे श्रीपार्श्वनाथिकम्बं प्रकटीभृतम् ।

15 तन्नमस्कृतम् । असन्नमस्कारमसौ सहते । तदाप्रभृति गृहमहाकालोऽजिन ।

§ १६) अन्यदा सकलकवीनां दानं द्दानं राजानं वीक्ष्य शिवतपोधनचतुष्टयं कविताकृतेऽरण्यमगमत् । तत्र

गुजवर्णनमारब्धं तैः, एकैकेन प्रहरेण एकैकश्वरणो विहितः । तद्यथा-

(८) च्यारि पाय विचि दुडुगुसु दुडुगुसु, जाइ जाइ पुणु रुडुगुसु रुडुगुसु । आगलि पाछलि पुंछु हलावइ,.....

20 तुर्ययामे तुर्यपादो न भवति । तदा श्रीकालिदासकविना वृक्षान्तरितेन चतुर्थश्ररणः पूरितः.....अंधारउं किरि मूला चावइ ॥

तुर्यतपोधनेनोक्तं-मम सरस्वतीप्रसादो जातः । तैर्नृपो विज्ञप्तः । नृपेणोक्तं-तुर्यचरणोऽमीषां न भवति । इदग्रुप-मानं कालिदासस्वेव नान्यस्य ।

§ १७) अथ कुमारसम्भवमहाकाव्ये नविभः सग्गेः शृंगारसुरतवर्णनकुपितयोमया कालिदासकवेः शापो दत्तः।

25 यत्—त्वं स्नीव्यसनेन मरिष्यसि। तेन वेश्याव्यसनी बभूव। राज्ञा श्रीविक्रमेण व्यसनिनं मत्वा तिरस्कृतः। वेश्यासदने स्थितः। अत्रान्तरे राजपाटिकायां गतेन राज्ञा सरिस कमलं कम्पमानं विलोक्योक्तं—'पवनस्थागमो नास्ति…।'

कैरिप कविभिः प्रत्युत्तरं न दत्तम्। राज्ञा नगरे पटहो वादितः। यः कोऽपि समस्यां पूर्यित तस्य सुवर्णलक्षं दिष्ठ ।

इति वेश्यया कालिदासस्य निवेदितम्। तेनोक्तं—अहं पूरियत्वा तव समर्पयिष्यामि। पूरिता। तया सुवर्णलोभेन
स मारितः। तदनु तथा राज्ञोऽग्रे न्यगादि समस्या। यत्—'पावकोत्सिष्टवर्णाभः शर्वरी०।' राज्ञोक्तं—केन पूरिता?।

30 तथोक्तं—मया। 'कांते॰' इति पदेन त्वया न बद्धा। ततस्तयोक्तं—कालिदासेन। स च मया मारितः। राज्ञो

विषादोऽजनि।

§१८) अन्यदा श्रीविक्रमस्य रोगः समजिन । वैद्येन कुचेष्टां वीक्ष्य काकमांसभोजनेनाऽऽरोग्यं कथितम् । राज्ञोक्तं-भवतु । ततो वैद्येनोक्तं-राजन् ! धर्मीषधं विधेहि । त्वं प्रकृतिव्यत्ययेन न जीवसि ॥

॥ इति विक्रमप्रबन्धः ॥

२. सातवाहनप्रबन्धः (P.)

११९) मरहट्टदेशे प्रतिष्ठानपत्तनम् । नरवाहनो नृपः । सुभटोऽङ्गरक्षः । तत्पत्नी मनोरमा । गर्भाधाने सित शुभदोहदे जाते नैमित्तिकाः पृष्टाः । तैरुक्तम् सतो भावी, परं पोडश्चवर्षाणि भूमिगृहे स्थाप्यश्चनम् । तेन तथा कृते, पञ्चवार्षिकः कलाभ्यासं करोति । इतश्च नृपो राज्यद्वें स्नीविलापं श्चत्वा प्राहरिकानाह [कोऽत्र १] सुभटेनो-क्तम् —देवाहमस्मि । इमां पृष्टा समागच्छ कथं रोदिति १। स गतः । पुरे आन्त्वा समेतः । देव ! नगरमध्ये कापि व हष्टा । तिईं वहिर्गत्वा विलोकय । पृच्छां कुरु । स विद्युत्करणात्सनृपस्तत्र गतः । वने स्नियं दृष्टा पप्रच्छ—कथं रोदिषि १ राज्याधिष्ठात्री देवी । विईं कथं रोदिषि १। तया क[थितम्] पण्मासान्ते नृपः पञ्चत्वं प्रयास्यति ।

(९) वैधव्यसदृशं दुःखं स्त्रीणामन्यन्न विद्यते।धन्यास्ता योषितो यास्तु ब्रियन्ते भर्त्तुरव्रतः॥

तत्कथं निवर्तते ? इति सुभटे पृष्टे तयोक्तम् –यदि चामुण्डाग्रे द्वात्रिंशहक्षणो वध्यते, तदा नृपस्य क्षेमम् । इत्युक्त्वाऽदृश्या जाता । नृपाग्रे उक्तम् । नृपः स्वस्थानं प्राप्तः । प्रातनृपेण सुभटाग्रे उक्तम् –यदि द्वात्रिंशहक्षणं 10 नरमानयसि तदाऽर्द्वराज्यं ददामि । तेन गृहे गत्वा स्वपत्ती पुत्राय याचिता । पोडशवाह(हाय)नः सुतो दत्तः । नृपायोक्तम् –देव ! स्थाने कृतोऽ निवधन स्वयस्य नेपथ्यधरं कृत्वा चामुण्डाग्रे नीतः । नृपस्तत्र गतः । नैवधन सह कल्पितः । मात्रा केशैर्धतः पित्रा खङ्गं कृष्टम् । तेन द्वसितम् ।

(१०) राजा खयं हरित मां यदि जीवितार्थे द्रव्येच्छयान्धविधरौ पितरौ मदीयौ। त्वं देवता मनुजमांसरसस्प्रहासि प्राणाः खयं हसत किं [प]रि[दे]वितेन॥

देवी सत्त्वेन तुष्टा। वरं वृष्टा। याचितः - किमर्थमिहानीतः?। देच्या खभाव उक्ती, तेनोक्तम् - नृपाय राज्यं देहि, त्वं जीववधाद्विरमख । तयोक्तम् - राज्यं मया दत्तं राज्ञे, [जीवे] व्वभयः । जीववधानिवृत्ता । सर्वोऽपि । खस्थानं गतः । प्रातलोंकापवादमसहता नृपेण राज्यं सर्वं सातवाहनाय दत्त्वा खयं तापसीं [दीक्षां] जगृहे । स्थांऽपि राज्यं कुर्वन् समाताअस्त (?) । अन्यदा नृपेण मत्री पृष्टः - ममाज्ञा कियतीं भूमिं यावदस्ति?। देव ! मथुरायां न वर्तते । नृपेण कटकं अहितम् । जाते मिश्रमिद्धिंधा कृतं तेन मथुराद्वयम् । स्थांद्ये पुत्रजन्म-20 वर्द्वापनम् । द्वितीये प्रहरे वापीमध्यात् कोटि ९ सुवर्णलाभः। तृतीये प्र० दक्षिणमथुरा। चतुर्थे प्र० उत्तरमथुरा वर्द्वापनम् । एवं दिवसमध्ये वर्द्वापनचतुष्के जाते नृपो हृष्टश्चिन्तयित - किं मया पूर्वभवे पुण्यमकारि?। प्राता राजवर्द्वापने । एवं दिवसमध्ये वर्द्वापनचतुष्के जाते नृपो हृष्टश्चिन्तयित - किं मया पूर्वभवे पुण्यमकारि?। प्राता राज्यां गतः । हदे गोदावर्यां मत्स्यहसने विस्तितो गृहे गतः। सर्वः कोऽपि पृष्टः परं कोऽपि न वेत्ति । इतश्च पाट्यां गतः । हदे गोदावर्यां मत्स्यहसने विस्तितो गृहे गतः। सर्वः कोऽपि जत्रेव काष्टवाहकस्तेन सक्तुभिरि-श्रीकालिकाचार्यागमं विदित्वा वन्दित्वा ते पृष्टाः। तैः क[थितम्] - त्वं पूर्वभवे अत्रैव काष्टवाहकस्तेन सक्तुभिरि-श्रीकालिकाचार्यागमं विदित्वा वन्दित्वा ते पृष्टाः। तैः क[थितम्] - त्वं पूर्वभवे अत्रैव काष्टवाहकस्तेन सक्तुभिरि-श्रीकालिकाचार्यागमं विदित्वा वन्दित्वा वन्दित्वा । अतो जलदेवतया हसितं मत्स्थिमपत् । तव दानप्र[भावा]त् वर्वापनं जातम् ॥ इति सातवाहनप्रवन्धः॥

(G.) सङ्ग्रहे सातवाहनसम्बन्धिगाथावृत्तम्।

- (११) ताण पुरओं य मरीहं कयलीथंभाण सरिसपुरिसाणं। जे अत्तणो विणासं फलाइं दिंता न चिंतंति॥१॥
- (१२) जह सरसे तह सुके वि पायवे घरइ अणुद्गिं विंझो । उच्छंगसंगयं निग्गुणं वि गरुया न मुंचंति ॥ २ ॥
- (१३) सरिसे माणुसजम्मे दहइ खलो सज्जणो सुहावेइ। लोह चिय सन्नाहो रक्खइ जीयं असी हरइ॥३॥

30



10

15

20

- (१४) सयलजणाणंदयरो सुक्कस्स वि एस परिमलो जस्स । तस्स नवसरसभावंमि होज्ज किं चंदणदुमस्स ॥ ४ ॥ -इति गाथाचतुष्टयं श्रीसातवाहनेन राज्ञा चतुःकोटिभिर्गृहीतम् ।
- (१५) हारो वेणीदंडो खडुग्गलियाइं तहय तालु ति । सालाहणेण गहिया दहकोडीहिं च चउगाहा ॥ १ ॥
- (१६) मागु चिय अलहंतो हारो पीणुन्नयाण थणयाण । डब्बिंबो भमइ उरे जउणाणहफेणपुंज व ॥ २॥
- (१७) कसिणुज्जलो य रेहइ०....। है॥
- (१८) परिओससुंदराई सुरए जायंति जाई सुक्खाई। नाई चिय निवरहे खडुग्गलियाई कीरंति॥४॥
- · (१९) ना किं करोमि माए खज्ज सालीउ कीरनिवहेहिं०॥ ५॥
 —इति गाथाचतुष्टयं कोटिमिर्दशभिर्गृहीतम्।
 - (२०) अहलो पत्तावरिओ फलकाले मुयसि मृढ! पत्ताइं। इण कारणि रे विड विडच मुद्ध! तुय एरिसं नामं॥ १॥
 - (२१) निव्वृद्धपोरिसाणं असचसंभावणा वि संभवह। इक्काणणे वि सीहे जाया पंचाणणपसिद्धी॥२॥
 - (२२) आसम्ने रणरंभे मूढे मंते तहेव दुव्भिक्खे। जस्स मुहं जोइज्जइ सो चिय जीवउ किमम्नेण॥३॥

-इति गाथात्रयं कोट्या गृहीतम्।

३. वनराजवृत्तम् (G.)

\$२०) आंबासणवास्तव्यचापोत्कटज्ञातीयचंड-चाग्रंडाभिधौ आतरावभूताम्। ततः केनापि नैमित्तिकेनोक्तम्—
चाग्रंडपत्नीगर्भेण चंडो मरणमगमिष्यदिति सा सगर्भा परिहृता। ततः सा पंचासरग्रामं गता। ओष्ट्छवृत्त्या जीवति।
अन्यदा श्रीशीलगुणसरिभिर्वाद्यभूमौ गतेर्वणच्छायामनमन्तीं वीक्ष्य सुलक्षणं वालकं दृष्ट्वा च सा निजचैत्ये स्थापिता। कियतापि कालेन वार्यमाणोऽपि वनराजो मृषकमारणं कुर्वन् गुरुभिर्निर्वासितः। चरडः सन् सेहर-सेष25 राभ्यां सह संखेश्वर-पंचासरग्रामान्तरे चौर्यवृत्तिं वितन्वन् शरद्वयभञ्जकं श्रेष्ठिजाम्बाकं पप्रच्छ। तेनोक्तं—यूयं त्रयः।
अतो द्वयं भग्रम्। तेन वाणत्रयेण परीक्षा दिश्वता। तेन प्रीतिर्जाता। अन्यदा काकरग्रामे श्रेष्ठिगृहे क्षात्रपातं कृत्वा
सर्वस्वं गृह्णतस्त्रस्य करो मंजूपान्तर्दिश्वभांडे पतितः। ततस्तेन सर्वमपि ग्रुक्तम् । प्रातः श्रीदेव्यास्तत्पत्या पंचागुलीप्रतिविम्वं दिश्च वीक्ष्य कुलीनः कोऽपि चौरोऽयं इति विज्ञाय, चौरे मिलितेऽहं भोक्ष्ये, इति अभिग्रहो गृहीतः। स
सप्तमे दिने समेत्य तां भगिनीमिति नमश्रके । अन्यदां श्रीकन्यकुव्जदेशीयमहणकराज्ञ्याः [पश्चकुलं] गृर्जरधरोद्वा30 हणके गच्छति। अन्तरा युद्धं विधाय वनराजेन सर्वं जगृहे। ततः शश्चकेनैकेन स्वानमंगाभिज्ञानेऽणहिष्ठपञ्चपालेनापिते वीरक्षेत्रेऽणहिष्ठपुरस्थापना। श्रीदेव्या वर्द्वापनकं कृतम्। गुरुभिमंत्राभिषेकश्च।।

४. लाखाकवृत्तम् (G.)

§ २१) परमारवंशे सम्रुत्पन्नया प्रासादे रममाणया कामलया स्तम्भभ्रान्त्या फूलडाभिधः पशुपालो इतः ।

तत्सुतों लापाकः । स कच्छेश्वर एकविंशतिवारत्रासितमूलराजः समजि । द्वाविंशतिवेलायां किपलकोटिस्यतो लापाको रुद्धः । माहेचनाम्नः पदातेराकारणं महितम् । सोऽन्तराविंशतिभीमूलराजिभिक्षैः महरणानि मृहीतः । ततः तिंसन् निरायुधे समागते लापाकेन राज्ञा, समं युद्धमकृत । लापाको रगश्चिव पतितो राज्ञा रोपाचरणेनाहतः । ततो लापाकस्य मात्रा राजा शक्षः । ततः प्रांते स्फोटिका समजि । ततो राज्ञा तांबृलमध्येऽलिका विलोक्य सार्ताः शुभमरणं पृष्टाः । तैरुक्तं—इंगिनीं साधय । तथा विहिते सप्तमिदेने खिवमानमायांतं वीक्ष्य सुदितः । उ पुनरन्यतो गोकार्यमृतखपाकमानियत्वा (१) समेते तत्र पुनः सार्ताः पृष्टाः । एवं सित सुखमुत्यो कथं मम कष्टमृत्युरुपदिष्टः । तैरुक्तं—राजन् ! कस्तव भूमौ गोग्रहं तनोति । एवं विपनः ॥

५. मुञ्जराजप्रबन्धः (P.)

§ २२) श्रीउजायिन्यां नगर्यां सिंहो नृपः । स एकदा मृगयां गतः । तत्र श्रावणमध्ये [बालः] पतितो दृष्टः । नृपेण गृहीतः । प्रच्छन्नमन्तःपुरे प्रहितः । देव्यैकया स्रातिकर्माणि कृतानि । बालस मुझ इति नाम द्त्रम् । स्रोहेन 10 वृद्धिं गतः । इतो नृपस्थापरस्यां पत्न्यां सिन्धुलनामा पुत्रो जातः । उभाविप निरवशेषभावेन वृद्धिं गतौ परिणीतौ च । इतो नृपो बृद्धो जातः । एकदा मुझावासे गतः । आवासान्तर्मुझः सपत्नीकोऽस्ति । नृपेण बहिःस्थेनोक्तम् रे मध्ये कोऽप्यस्ति ?। नृपशब्दं श्रुत्वा मुझश्शंकितः । प्रियां मद्रासनाधो निवेश्य व्याहृतवान्-देव! मध्ये पादमवधारयत । नृपः सिंहासने उपविष्टः । कुमारः प्रणम्य भद्रासने निविष्टः । आदिश्यतां कार्यम् । नृपेणो-क्तम्-राज्यं कस्य दीयते ? । मुझः प्राह-तातः प्रमाणमत्र । वत्स ! त्वं मम पालितः पुत्रः । सिन्धुलस्त्वङ्गजः । 15 व्यतिकरे उक्ते मुझेनोक्तम्-मम आतुर्देव ! राज्यं भवत्वहं तस्य सेवां तावत् करिष्यामि । नृपेणोक्तम्-एवं मा भण । राज्यं तवैव । अधुना परावर्ते कृते जनो न मन्यते । परं मम शिक्षां शृष्णु । सिन्धुलो नापमान्यः । मन्नी रुद्रादित्यो न पृथकार्यः । गोदावरीं तीर्त्वा परतीरे न गम्यम् । तेन सर्वं मानितम् । नृपे बहिर्गते भेदभयाद्राज्ञी खद्गेन पातिता । तस्या आकर्न्दं श्रुत्वा नृपो वितः । वधूं पतितां दृष्ट्वा प्राह−रे पाप ! किमकार्यमकार्षाः ? अपरा-मपि शिक्षां न करोषि । अतोऽनर्होऽपि निवेश्यः, वाक्यभङ्गभयात् । मुझस राज्यं जातम् । नृपो दिवं यंयौ । 20 स सिन्धुले सदा प्रसादपरो वर्तते । जनः सर्वोऽपि सिन्धुलेऽनुरक्तः । एकेन मित्रणा प्रोक्तम्-देव ! सिन्धुलात्तव विनाशो भावी । नुपेण तद्वचनमङ्गीकृत्य ग्रासो निषिद्धः । सिन्धुलः खावासे तिष्ठति । एकदा नृपो राजपाट्या गजारूढो व्रजन् सिन्धुलगवाक्षाधः प्राप्तः । सिन्धुलेनोपरि निविष्टेन दक्षिणकरे आदर्शे सित वामकरेण करी वर-त्रया धृतः । तद्तु पुच्छे धृतः । पद्मपि न चलति । आधोरणे नैष्टिष्ट । नृपेणोक्तम्-करी किं न चलति १ देव नृसिंहेणाक्रान्तः । तावत्कुमारो दृष्टः । वत्स ! मुश्च । तेनोक्तम्-अहं देवपादानां केनाभक्त उक्तः, यद्भासः स्थितः । 25 गजं मुख, द्विगुणं गृहाण । सिन्धुलेनोक्तम्-एष गजस्त्रुटितः, अपरमानयत । नृपस्तु द्वितीये निविष्टः । करी तत्रैव पतितः । नृपेण बलं बन्धोर्दृष्ट्वा वर्द्धापनं प्रारब्धम् । पिश्चनेन मित्रणा देव उक्तः-एष त्वां हनिष्यत्येव । नृपेण देशपट्टी दत्तः । सीऽर्बुदे कासहदग्रामे गतः । दीपदिने क्मशाने गतः । तत्र स्रकरं वीक्ष्य बाणसन्धानमकरोत् । इतो र्जन (१) सुप्तः। तेन प्रत्यासन्नं मृतकं जानोर्धः प्रदत्तम्। तत् सलसलितम्। तेन वामकरेण वारितम्-वाणेन शुकरो विद्धः वित्साहसेन तुष्टः, वरं याचस्व । तेनोक्तम्-मालवराज्यं देहि । तव भाग्यं न, परं तत्र याहि । तव पुत्रस्य ३० भविष्यति । पुनर्नृपाहूतः खघरे गतः। राज्ञा दुर्जनवचसा नेत्राकर्षणं कृतं सिन्धुलस्य । तत्पुत्रो भोजः।स नृपसा-तीव वल्लभः। यौवनाभिम्रुखो जनेनानुरागात् सेन्यते । अतस्तेन कूटमित्रणा नृपस्योक्तम्-देव! त्वां इत्वा कुमारो राज्यं महीप्यति । राज्ञा रुद्रादित्येन मित्रणा छत्रमाज्ञापितः । मित्रणा एकान्ते नीत्वा नृपाज्ञा उक्ता । क्रुमारेणो-क्तम् -शीव्रं कुरु । किमपि राज्ञः कथापयसि ? । तेन 'मान्धाते'ति लिखित्वा पत्रिकाऽर्पिता । काले दर्शनीया ।

Central for the Arts

मित्रणा प्रोक्तम्-त्विय मारिते राज्यं निमजति । अतर्रेछत्रं तिष्ठ । मित्रणा कार्यं कृतं निवेदितम् । तेनापि 'किम-प्युक्तम् १' तदा पत्रिका दर्शिता । नृपः काष्टारोहणाय गतः । मित्रणा कुमारो दर्शितः । अथ नृपो हृष्टः ।

§,२३) अथ कर्णाटे उरङ्गलपत्तने तैर्लपदेवो नृपः। तस्य मन्नी कमलादित्यः। स मालवेशेन सह वैरप्रारम्भं कर्जुं स्वां नासां कर्णाविप बुध्या अपाकृत्य नृपेणापमानितो गुञ्जनृपमाययौ। देव! मया स्वामिनोंऽग्रे उक्तम्5 गुञ्जेन सह वैरं त्यज । तेनाहमपमानितः। नृपेण सत्कृतः। रुद्रादित्येन नृपो वारितः। याविद्वत्तं (इ हितं?) न
शृणोति तावद्वद्वा[दित्यो]मुत्कलाऽप्य स्थितः। गोदावरीतटे नृपः कमलादित्यवचसा कटकं सम्मील्य चिलतः।
रुद्रादित्योऽपि चितां प्रविष्टः। कमलादित्येन कटकं सम्मुखमाकारितम्। मन्त्रिणो वचसा कोऽपि न युध्यति। मुञ्जो
नष्टः। बुभुक्षितः कस्मिन् वासे गतः। तत्र शीताशनं याचन् महीआरीं गर्वोद्धतां दृष्ट्वा पपाठ-

(२३) मा गोलिणि मन गच्यु करि पिखि वि पडुरूआई। पंचइ सई बिहुत्तरां मुंजह गय गयाई॥

10 इति पठन् नृपचरैरानीतः। नृपायापितस्तेन गुप्तौ क्षेपितः। मृणालवती चेटी परिचर्याकृते मुक्ता। नृपस्तस्यामासक्तो जातः। इतो धारायां रुद्रादित्येन भोजो राज्ये मुख्यः कृतः। स सैन्यं कृत्वा गोदावरीतीरमागत्य
स्थितः। भोजेन सुरङ्गा दापिता सिद्धा च। पुमानेको नृपानयने प्रहितः। स सुरङ्गाद्वारेण गत्वा नृपमाह—चल्यताम्। राजाऽऽह—प्रतीक्षस्त, यावन्मृणालवती आयाति। देव! किं चेट्या?, चल्यताम्। नृपे स्थिते, विनष्टं नृपं
मत्वा गतः। चेटी आयाता। भोजनमादाय नृपं सचिन्तं वीक्ष्य पप्रच्छ—देव! किं चिन्ता?। न विक्ति। तया
15 भोजनमध्ये लवणमुष्टिः क्षिप्ता तेन नाज्ञायि। तया निर्वन्थेन पृष्टः प्राह—चल्यताम्, त्वां प्रतीक्ष्यमाणोऽसि।
तयोक्तम्-आभरणान्यादाय त्वरितमेमि। गत्वा तैलपदेवाय सुरङ्गाद्यमुक्तम्। नृपेणागत्य बन्धितः। स बध्यमानः प्रोचे—

अच्छ(अत्राद्शें गाथाप्रमाणा पङ्किरक्षरशून्या मुक्ताऽस्ति।).....।

भिक्षां भ्रामयित्वा वनमध्ये नीत्वा शूलाप्रोतः कृतः।

20(२४) यदाःपुञ्जो मुञ्जो गजपतिरवन्तीक्षितिपतिः सरखत्यावासः समजिन पुराविष्कृतगितः । स कर्णाटेदोन स्वसचिववुध्यैव विधृतः कृतः श्रूलाप्रोतस्त्वहह विषमाः कर्मगतयः॥

(२५) गय गय रह गय तुरय गय गय पाइक अनु भिच । सम्माद्विय करि मंत्रणउं महँता रुद्दाइच ॥

(२६) मुंज भणइ मिणालवइ केसा काइं चुयंति । लढुउ साउ पयोहरहं बंधण भणीअ रअंति ॥

(२७) मुंज भणइ मिणालवइ गउ जुवण मन झूरि । जइ सकर सयखंड किअ तोइ स मिट्टी चूरि ॥

25(२८) इच्छउ इअरमणोरहाण मणवंछिआण संपत्ती। न पहुप्पइ बंधणदोरिआ वि दिवे पराहुत्ते॥

(२९) झोली तुद्दवि किं न मूच न हूच छारह पुंज। घरि घरि भिक्खभमाडीइ जिम मंकड तिम मुंज॥

(३०) मा मण्डक! कुरूद्वेगं यदहं खण्डितोऽनया। रामरावणभीमाद्या योषिद्भिः के न खण्डिताः॥

(३१) वेसा छंडि वडाइ ती जे दासिहिं रचंति । ते नर मुंजनरिंद जिम परिभव घणा सहंति ॥

(३२) आपद्गतान् इसिस किं द्रविणान्धमूढ ! लक्ष्मीः स्थिरा न भवतीति किमत्र चित्रम् । "

उठ एता न पर्यसि घटीर्जलयञ्चचके रिक्ता भवन्त्यविरतं भरिताश्च रिक्ताः॥

(३३) क तरुरेष महावनमध्यगः ॥ (३४) उत्तंसकौतुककृते तु विलासिनीभिर्द्धनानि ॥

^{1 &#}x27;यः कृतिरिति' इति प्र० चि॰ ग्रुद्धपाठः।

(३५) इयं कटी मत्तगजेन्द्रगामिनी०॥ (३६) लक्ष्मीर्यास्यति गोविन्दे०॥

ग्रुज्जे धृते राजपुत्रीवाक्यम्-'चिन्तामिमां वहसि किं गजयूथनाथ०'॥

सिन्धुलवाक्यानि-(३७) अद्भां अद्धां नयणलां जह मुं मुंज न लिंत।

सत्तह सायर सधर धर महि सिंधलु भंजंत॥

(३८) पश्चाद्यात्पश्चवर्षाणि षणमासाश्च दिनत्रयम्०।

॥ इति मुझराजप्रबन्धः ॥

६. श्रीमानंतुङ्गाचार्यप्रबन्धः (B. Br.)

(३९) प्रभोः श्रीमानतुङ्गस्य देशनायां रदत्विषः। जयन्ति ज्ञानपाथोधिशारदेन्दुसहोदराः॥

§ २४) वाणारसां हर्षो राजा। तत्र ब्रह्मक्षत्रियो धनदेवः श्रेष्ठी। मानतुङ्गः सुतः। सोऽन्यदा दिगम्बर्यन्थे जिनं नत्वा गुरुपादान्ते गतः। प्रतिबोध्य दीक्षितः। चारुकीर्तिर्नाम । स्रीम्रक्ति-केवलिश्चक्तिनं मन्यते। दिगम्बरत्वं 10 दुष्करं कुर्वन् भगिनीपतिलक्ष्मीधरेण सगौरवं निमंत्रितो गृहमायातः। अञ्चद्धर्यावत् कमंडलुजलेनाचमनं गृह्णाति, तावद् भगिन्या श्वेताम्बरभक्तया पूतरानालोक्य तद्वतं निन्दियत्वा श्वेताम्बराणां पश्चसमित्यादि स्तुत्वा प्रतिबोध्य किथितम्—समायातान् जैनाचार्यान् मेलियिष्यामि । परिमदं पयो यसाजलाश्यादानीतं तसिन्नेव श्विप । यथान्यान्यजलसंपर्कात् पूतरका न मियं[ते]। अन्यदा श्रीअजितसिंहस्ररीणामागमने गङ्गातीरोद्याने भगिन्या किथिते मानतुङ्गः पूर्विषसामाचारीश्रवणात् तदीक्षां गृहीत्वा समग्रसिद्धान्तमधीत्य गुरुभिर्दत्तस्ररिपदः सुललितं 15 काव्यकर्ता वभूव।

§ २५) इतश्र तत्र पुरि मूर्तांब्रह्मा मयूरो नाम महाकविरस्ति । तस्य श्रीनाम्नी पुत्री रूपवती ।

(४०) षङ्के पङ्कजमुज्झितं कुवलयं चापारनीरे हदे विम्बी चापि वृतेर्बहिः प्रकटिता क्षिप्तः दाद्गी चाम्बरे। यस्याः पाणिविलोचनाधरमुखान् वीक्ष्य खसृष्टिं विधि-रुद्विष्टेव पुरातनी समभवदैवाद्विधा येहताम्॥

तदनुरूपं बाणनामानं कविमुद्धाहिता। ततः श्रीहर्षस्य मेटियत्वा तस्य धान्यादि पृथक् धवलगृहं च कारितम्। अन्यदा बाणपत्नी सञ्जातकलहा पितृगृहं गता। बाणेनागत्य प्रदोपेऽनुक्लियितुमार्ज्धा।

(४१) मानं मुश्र खामिनि रात्रं जगतो विनाशितखार्थम्। सेवक-कामुकपरभवसुखेच्छवो नावछेपभृतः॥

अमानिते पण्डितं गृहाद् बहिः प्रेषयित्वा सखी तां जगाद । तथापि न मानयति । उक्तं च-

(२२) लिखन्नास्ते भूमिं बहिरवनतः प्राणद्यितो निराहाराः सख्यः सततस्वितोच्छूननयनाः।

परित्यक्तं सर्वे हसितपठितं पञ्जरशुकैस्तवावस्था चेयं विस्रज कठिने मानमधुना ॥

सख्या बहिरागत्य कथिते विभातसमये वाणेन गत्वा-

(४३) गंतप्राया रात्रिः कृशतनु शशी शीर्यत इव प्रदीपोऽयं निद्रावशमुपगतो धूर्णित इव । 3 प्रणामान्तो मानस्तद्पि न जहासि मानमधुना कुचप्रत्यासत्त्या हृदयमपि ते सुभु कठिनम्॥

20

25

Della Unioni Mationa
To-plan for the Arts

इति मित्तिपुरतः सुप्तेन मयूरेण-सुभुशब्दस्थाने चण्डीत्याख्यां कथय, यतोऽस्या दृढकोषाः । अथितः । इति पितुर्वचनेन कृषिता लिजता भर्तृवचनं मानियत्वा सतीत्वप्रभावेण पितरं कृष्टीभदेति शप्तवती । सञ्जातकृष्टेन मयूरेण राजभणितेन सूर्याराधनाय पद्पादं रञ्जयत्रं बद्धा खिदराङ्गस्रचितां काराप्य तत्स्तवने एकैकवृत्ते छुरि-क्या एकैकरञ्जूपादच्छेदे यावता पश्च च्छिनाः । पष्टच्छेदे सूर्यपरितोषे नव्यदेहद्गिनेन मयूरप्रमोदे बाणपक्षीयैरुक्तं उराजसभायाम्-

(४५) यद्यपि हषोंत्कर्षं विद्वाति मधुरा गिरो मयूरस्य। बाणविजृम्भणसमये तदपि न परभागभागिन्यः॥

राझोक्तम्-यूयं गुणिषु मत्सरिणो यस शक्तिर्भवित किमप्यधिकं दर्श्यते । ततो बाणेनोक्तम्-मम इस्तपादौ छेदय, यथा नव्यान् करोमि । ततिश्चिनेषु चण्डिकास्तुतौ सप्तमाक्षरे नव्या जाताः । तथाप्युभयोविवादे राझो10 क्तम्-काश्मीरे श्रीसरस्रती विवादं भञ्जयति । यो हारयति तेन पुस्तकानि ज्वाल्यानि । इति प्रतिज्ञाय राजपुरुषैः समं काश्मीरगमने देव्या समस्याऽर्पन्त । पदे पृष्टे बाणस्य शीघ्रपूरणे मयूरस्य सविलम्बे-तथाहि-

(४५) दामोदरकराघातविह्नलीकृतचेतसा । दृष्टं चाणूरमल्लेन दातचन्द्रं नभस्तलम् ॥
मयूरेण पराभूतत्वादागत्य पुस्तकन्वालने श्रीसर्यशतकपुस्तकेऽदग्धे उभयोर्मानदानैः राजप्रसादः ।

\$ २६) अन्यदा राज्ञा मिन्नसम्मुलं भणितम्-पश्य भूमिदेवानां कीद्दक् प्रभावः १। मिन्नणोक्तम्-जिनशासनेऽपि

15 महाप्रभावोऽस्ति । यदि कौतुकं ततः श्रीमानतुङ्गारूयं स्रिमाकार्य विलोकय । राज्ञोक्तमाकारयस्व । ततो मिन्नणा

गत्वा भक्तिवचनैर्दर्शनप्रभावार्थं निरीहा अपि तत्रानीताः । राज्ञो धर्मलाभाशिषं दत्त्वा यथोचितासनसमासीनाः ।

नयुर-वाण-प्रशंसापूर्वं राजोवाच-यदि भवतां काचिच्छक्तिरस्ति तत्किञ्चित् कौतुकं दर्शयत । गुरुभिरुक्तम्-अस्माकं

किमपि कार्यं निह । जिनमते मोक्षार्थं एवाभ्यस्यते । तथापि शासनोत्कर्षाय दर्शयामः । ततो राज्ञा तमसि

आपादमस्तकं चतुश्चत्वारिश्चछोहग्चंखलाभिनियंत्र्यापवरके श्विश्वा तालकं दत्त्वा मोचिताः । ततो 'भक्तामरस्तवः'

20 कृतः । एकैकवृत्तपाठे एकैकनिगडभङ्गे निगडसंख्यया वृत्तभणनम् । स्रयो स्तकला जाताः । तालकं भग्रम्, स्वयं

कपाठोवृद्याटने निर्गत्य सभायां राज्ञ आशीर्वादं ददुः । राज्ञाऽनेकस्तुतीः कृत्वा सविनयं नत्वा कृत्यादेशेन प्रसीदत्त । स्रिणोक्तम्-अस्माकं कापीच्छा निह । परं तव हिताय वृपः-जिनधमं प्रपद्यस्व । राजाऽङ्गीचकार । दान
पात्रीचित्यात्रिधा दानं देयं-जीणोद्धारे(रं) नव्यविम्बकारणं चैत्यादिधर्ममादिश्य प्रभावनां कृत्वा स्तरयः स्वाथयं

गताः । तदाख्यातो 'भक्तामरस्तवः' अद्यापि सर्वोपद्रवहर्ता । अन्यदा कर्मवशात् सञ्जातकुष्ठोऽनशनाय धरणेन्द्रं

उत्रससार । प्रत्यक्षीभूयायुःशेषतया धरणेन्द्रोऽष्टादशाक्षरं पार्श्वनाथमञ्चं दत्तवान् । स्रयः सर्वोपद्रवहरं तन्मचगर्भितं
 भयहरस्तवं' कृत्वा प्रनर्वततां प्राप्ताः ।

§ २७) एकदा तन्नगरेशसैन्ये परदेशं प्राप्ते तद्रिपवस्तमल्पबलं ज्ञात्वा सम्भूय भूरिसैन्यैस्तन्नगरमावेष्ट्य तर्स्थुः। पौरजने व्याकुले, भयभीते राज्ञि, गोपुरेषु पिहितेषु राज्ञा बाण-मयूरादिषु पण्डितेषु तदुपसर्गोपशमनायादिष्टेषु पातालप्रवेशार्थमिव भूमिमालोकयत्सु श्रीसरयो धवलगृहसूर्द्धानमारुद्ध 'भयहरं' प्रकटीचकुः। तत्प्रभावात् तेषु अवैदिषु स्तम्भितेषु गुरोराज्ञया तेषां घातमकुर्वन् सर्वस्वं हस्ति-हयाद्यं जग्राह नृपः। ततः सूरि राजानं नत्साऽऽज्ञां प्रपद्य प्रसादं च प्राप्य स्वं स्वं स्थानं ययुः। ततो 'भयहरस्तवः' पत्र्यमानो भयहर्ता सर्वेषाम्। इत्थं प्रभावशां कृत्वाऽन्तसमयं प्राप्य श्रीगुणाकरसूरिं न्यस्य पदेऽनशनमरणेन सूरयो दिवं ययुः।

॥ इति श्रीमानतुङ्गसूरिप्रवन्धः ॥

७. माघपण्डितप्रबन्धः (Br.)

§२८) अथ दत्तसनोमांघसोच्यते । माघस जन्मनि पित्रा जातकं कारितम् । आयुर्वर्षाणां चतुरशीतिः, परं प्रान्ते चरणशोफेन मृत्युः । पित्रा ऋद्धिप्राग्भारकिलतेन पोडशवर्षाद्क्षं दिनदिनसम्बन्धी लिट्टितो हारको द्रम्माणां मुक्तः । अतिव्ययवानपीयता सुखं निर्विहिष्यते । स प्रौढः सन् पिठतुं प्रवृत्तः । कवित्वं कृत्वा पितुर्दर्शयति । ईद्यानि कवित्वानि कुरुषे, पूर्वकवित्वानां शतांशेनापि न प्रभवन्ति । पुत्रेण शिशुपालवधो नाम- क्राच्यं कृत्वा चुल्हकोपिर च्छन्नं धृतम् । एकदा पितुः पुत्तकं जीर्णप्रायं धृमेन कृत्वा दर्शितम् । पिता वाचयन् शिरोऽवधूनन् आह—वत्स ! ईद्यानि कवित्वानि कियन्ते । तेनोक्तम्—तात ! भव्यानि ? । किमुच्यते । तिर्हे मया कृतानि । जनकेनोक्तम्—मया छलः कृतोऽत्सते इयता कवित्वसीमा जाता । अतःपरं तव कवित्वं न । स

अधीत्य पितर्युपरते विलसितुं प्रवृत्तः । जन्मपत्रिकां दृष्ट्वा सिश्खं हारकं व्ययीकुरुते ।

§ २९) तस्य भोजनुपतिना मालवाधीशेन मैत्री जाता। एकदा श्रीभोजेन मिलितुमाकारितो माघस्तत्र गतः।10 नृपेण सगौरवं धवलगृहे स्थापितः । स्नानं कुर्वता पण्डितेन मुखं कृणितम् । नृपेण भोकुमुपविष्टस दिंव्यरसवती-समाना रसवती परिवेषिता । स मुखमेव कूणयति । नृषेण चिन्तितम् खगृहे किमसौ भ्रुनिक्त । उत्थितः । पृष्टो नृपेण-रसवती की दशी? । देव! कदशनेनोदरं पूर्तम् । भव्यशीतरक्षा पार्श्वे हसंतिका च रात्रौ सुप्तः । पण्डितो नृपस्य नातिदूरे । रात्रौ पण्डितः शय्यायां पुनः पुनः पार्थे घातं करोति । नृपेण-किमसौ भ्रनिक्त, कथं शेतेऽस्य गृहे ?। अवलोकनीयं गत्वा एतत्। प्रातरुत्थिते नृपेण पृष्टम्-सुखेन निद्रा समायाता ?। देव! रासभवद्भारितानां 15 निद्रा कृतः । दिनचतुष्कं स्थित्वा पण्डितेन नृपो मुत्कलापितः । राज्ञा श्रीमाले भोजस्वामिप्रासादः कारितः । तस्य पुण्यं पण्डितस्य प्रदाय पण्डितः सम्प्रेषितः । पण्डितेनोक्तम्-देव! कदाचिन्ममोपरि प्रसादं विधायासत्पुरे पाद-मवधारणीयम् । एवमित्यभिधाय सम्प्रेष्य नृपः प्रत्यावृत्तः, खगृहमायातः । इतो द्वितीये शीततौं नृपः प्रौढकटकेन श्रीमालं प्राप्तः। माधेन सम्मुखं गत्वा नृपः खगृहे एव सकटकोऽप्युत्तारितः। नृपस्तु आवासमवलोकितुं प्रवृत्तः। स्थाने स्थाने विचित्रकौतुकानि पैश्यन्, स्थाने स्थाने धृपघटीपरिमलमाजिघन्, सञ्चारभूमिमतीव परिमल्खां 20 दृष्ट्वा पृष्टवान्-किमेष देवतावसरोपवरकः?। देव! एष सञ्चारकोऽपवित्रः। नृपो लिखतः। इतो मजनावसरे पूर्व मर्दनिकैर्मर्दनं दत्तं यथा नृपोऽतिरञ्जितः । स्नानपीठे खर्णमये महाविच्छित्या स्नानं कारितः। तद्नु देवदृष्यसमानि नासानिःश्वासहार्याणि वस्त्राण्याजग्धः । महद्भा देवान् नत्वा भोक्तुमुपवेशितः । खर्णस्थाले द्वात्रिंशत्कचोलकैर्द्वते मण्डिते श्रीरमयं पकानं परिवेषितम् । श्रीरतन्दुलमयः कूरः। एवं वटकान्यपि तस्यैव । अपराणि नानाच्यञ्जनानि परिवेषितानि । नृपश्चिन्तयित स-य ईदृशीं रसवतीं भुनिक्त तस्य मे रसवती कथं रोचते । भुक्तोत्तरं पश्चसु-25 गन्धिनामताम्बूले जाते वार्चां विद्धतो रात्रिरजनि । सर्वोपरितनभूमौ नृपाय पल्यङ्कः सजितः । राज्ञोक्तम्-मित्र ! शीतकालं न जानीथ ? । देव ! जानीमः । चन्दनं सजितम् । नृपस्तत्र शय्यामलंचके । तत्र महान् तापश्चन्दन-मर्पितम् । तालवृन्तैर्विज्यमानस्य निद्राऽऽयाता । प्रातः पण्डितेन पृष्टम्-देव! शीतकाल उष्णकालो वा ?। उष्णकाल इति प्रत्युत्तरं ददौ । पण्डितप्रीत्या कियन्ति दिनानि स्थित्वा मुत्कलाप्य नृपः खपुरीं ययौ ।

§३०) क्रमेणैवंविलसतः पण्डितस्य धनं श्लीणं वार्द्धक्यमपि चागमत् । इतः पण्डितेन प्रिया उक्ता-(४६) न भिक्षा दुर्भिक्षे पतित दुरवस्थाः कथमृणं लभन्ते कर्माणि क्षितिपरिवृहान् कारयति कः।

अदत्त्वापि ग्रासं ग्रहपतिरसावस्तमयते क यामः किं कुर्मी गृहिणि! गहनो जीवनविधिः ॥ इति निर्वाहमिवमृत्रयेतो माघेन माघकाव्यपुरत्तकमर्पयित्वा प्रिया माल्हणादेवी नाम्नी धारायां नृपसमीपे प्रहिता—यदम्रं ग्रन्थं ग्रहणकेऽङ्गीकृत्य लक्षत्रयं द्रम्माणां ददत । सा तत्र गता नृपेण शुद्धिः पृष्टा । पुरतकम-पितम् । लक्षत्रयी याचिता । राज्ञा शलाका क्षेपिता । प्रातर्वर्णने पण्डितस्वरूपस्चकं काव्यं निस्मृतम्—

पु॰ प्र॰ स॰ ३

15

25

(४७) कुमुदवनमपश्चि श्रीमदम्भोजखण्डं त्यजित मदमुद्धकः प्रीतिमांश्चक्रवाकः। उदयमहिमरिइमर्याति शीतांशुरस्तं हतविधिललितानां ही विचित्रो विपाकः॥

नृपेण विमृत्य ही इति अक्षरस्य लक्षत्रयं दत्तम् । ग्रन्थस्तावत् द्रेऽस्तु काव्यं च । पण्डितपत्र्या नृपकुलादुत्तरन्त्या पण्डितविरुदान्यधीयानानां लक्षत्रय्यपि दत्ता । नृपेण पुनराहूयोक्ता-पुनर्द्रव्यं गृहाणेत्युक्तो- व्याच-अधिकं नानायितमतोऽहं न गृह्रे । सा क्रमेण खगृहं प्राप्ता । यथा गता तथा आगता । पण्डितेनोक्तम्- पुस्तकं राज्ञा किमिति नात्तम् ? । तया वृत्ते उक्ते पण्डितेनोक्तम्-सत्यं आवयोगोंगो विधिना कृतः । अद्य त्वं परीक्षाशुद्धा निवृत्ता । एतावन्ति दिनानि चेतस्येवं विकल्प आसीत् यन्मे गेहिनी ममानुरूपा न वा । अद्य सन्देहो भग्नस्तव दानेन । यत्त्वया गृहदौस्थ्यं न गणितम् ।

(४८) अर्था न सन्ति न च मुश्रिति मां दुराशा दानान्न सङ्कचित दुर्ललितः करो मे । याच्या च लाघवकरी खवधे च पापं प्राणाः खयं व्रजत किं परिदेवितेन ॥

इतो दर्भस्रस्तरसुप्तः चरणयोः श्वयथुर्जातः । असिन्नवसरे कोऽपि विष्रः श्रुधार्था पण्डितावासे प्रविष्टः । भोजनं याचितम् । पण्डितेनोक्तम्-

> (४९) श्चुत्क्षामः पथिको मदीयभुवनं पृच्छन् कुतोऽप्यागतः तिन्कं गेहिनि ! किञ्चिदस्ति यदसौ भुङ्के बुभुक्षातुरः । वाचाऽस्तीत्यभिधाय सत्वरपदं प्रोक्तं विनैवाक्षरं स्थृलस्थूलविलोललोचनगलद्वाष्पाम्भसां विन्दुभिः॥

> > इतोऽर्थी विम्रखीभूय गतः। पण्डित आह-

(५०) व्रजत व्रजत प्राणा अर्थिन व्यर्थतां गते । पश्चादिष हि गन्तव्यं क सार्थः पुनरीहदाः ॥
इति कथनादनु प्राणैस्त्यत्यजे । पत्यानु सहगमनमकारि । इतः श्रीभीजराजो वित्तस्य करमीर्भृत्वा
20 त्वरितमाययौ । पृष्टम्-पण्डितः क ? । जनैईत्तमुक्तम् । नृपः प्राह-रे रे इदं श्रीमालं नं, भिल्लमालिमदम् । यत्र
मम मित्रस्य मिय सत्यपि केनाप्युद्धारकेऽपि किमिप नार्पितम् । अतः पुरेष्विप [अप]वित्रमिदम् । शेषकार्याणि
तस्यार्थस्य व्ययेन विधायेति विमृशन् मनसि-

(५१) दाशिदिवाकरयोर्ग्रहपीडनं गजभुजङ्गविहङ्गमबन्धनम् । मतिमतां च समीक्ष्य दरिद्रतां विधिरहो बलवानिति मे मतिः॥

क्रमेण खपुरीं गतः।

(५२) उदयति यदि भानुः पश्चिमायां दिशायां विकसति यदि पद्मं पर्वताग्रे शिलायाम् । प्रचलति यदि मेरुः शीततां याति वह्निः तदपि न चलतीयं भाविनी कर्मरेखा ॥

॥ इति माघपण्डितप्रबन्धः ॥

८. कुलचन्द्रप्रबन्धः (B.)

(५३) एकदा श्रीभोजो वीरचर्यायां भ्रमन् दिगम्बरं मठोपिरस्थं इति वदन्तमशृणोत्—
 (५३) तिक्खा तुरिअ न माणिआ भडिसिरि खग्ग न भग्ग ।
 एह जम्म नग्गहं गयउ गोरी कंठि न लग्ग ॥



20

नृपेण चिन्तितम् - नैष सामान्यः । प्रातराहूय उक्तः - तव किं नाम ? । देव ! कुलचन्द्रः ।

(५४) देव! दीपोत्सचे रम्ये प्रवृत्ते दिन्तिनां मदे। एकच्छत्रं करिष्यामि सगौडं दक्षिणापथम्॥ राज्ञा गृहिवेषं प्राहितः। इतो राजकुमारी तैसिन्नजुरका जाता। सा एकदा वर्षारात्रौ प्राह-

(५५) नव जल भरिआ मग्गडा सजल घडुकइ मेहु। इअ वारि जइ आविसिइ तउ जाणीसिइ नेहु॥

द्वारस्थेन श्रुतम् । स कटकमादाय गूर्जरत्रोपरि गतः। पत्तनं भप्रम् । नृपस्तु नंष्ट्वा गतः। वलमानस्य स्तम्भनकौचार्यैर्घाटे रुद्धे, घाता जाताः। तेन सङ्कटस्थेन भोजं प्रति पत्रिकामादाय [नरः] प्रहितः। तत्र-

(५६) विस्फारस्फारधन्वा मृनयुरनुपदं पार्श्वयोदीवदाघः

क्ष्वेडानादः पुरस्तात् तपित च तपनो मूर्झि तापर्ज्यतीवः। अन्तःशल्यं शिरस्सु स्थपुटगिरिनदी दुस्सहा श्चर् तृषार्ति-दुईवादय जातं वजतु हि हरिणः कां दिशं कांदिशीकः॥

राज्ञा दृष्ट्वा 'कां' स्थाने 'किं' कृत्वा प्रहितः । स तु युद्धा मृतः ॥ इति कुलचन्द्रप्रवन्धः ॥

९. षड्द्रीनप्रबन्धः (B. Br.)

§३२) एकदा श्रीभोजराजेन दर्शनानि सम्मील्य उक्तम्- मोक्ष एकः पन्थानः पश्च। एकसम्मती भव। लिक्क्तिताः। कः कं मन्यते। कः कं न। इतस्तिर्नृपो विज्ञप्तः—देव! देवी भारती पहदर्शनानां सम्मता। सा तव 15 प्रत्यक्षाऽस्ति तां पृच्छ । नृपेण उपोषितेन पूजापूर्वं प्रत्यक्षीकृता। देवी उवाच- कथं स्मृता?। नृपेणोक्तम्- मम तथ्यं कथय, कस्मिन्मार्गे यामि। देवी आह-

(५७) श्रोतव्यः सौगतो धर्मः कर्त्तव्यः पुनराईतः। वैदिको व्यवहर्त्तव्यो ध्यातव्यः परमः शिवः॥ इत्यभिधाय देवी अदृश्याऽभूत् । प्रातर्नृपेण सर्वे सम्भूय सत्कृत्य प्रहिताः॥ इति पहदर्शनप्रवन्धः॥

१०. नीलपटवध-प्रबन्धः (B.)

§३३) श्रीभोजराजवारके नीलपटा दर्शनिन आसन् । ते तु, एका स्त्री एकः पुमान् नीलीं दोटीं प्रावृत्य मध्ये नग्नीभूय विजहतुः । एकदा धारायां प्राप्तासत्त्रापूर्वान् दृष्ट्वा सर्वः कोऽपि तेषां समीपे याति । ते त्वित्थं प्ररूपयन्ति-वयमीश्वरस्य तथ्याः सन्तानिन अर्द्धनारीश्वरत्वात् । इतश्च कौतुकाद् भोजपुत्री समागमत् । कर्तव्यं पृष्टम् । तैरुक्तम्-

(५८) पिब खाद च चारुलोचने ! यदतीतं वरगात्रि ! तन्न ते । नहि भीरु ! गतं निवर्त्तते समुद्यमात्रमिदं कलेवरम् ॥

तया व्याहतम्-भवन्मतमङ्गीकरिष्ये । नृपं म्रुत्कलापितुं गता । ताताहं नीलपटानां धर्ममङ्गीकरिष्ये । नृपेण/आहूताः, पृष्टाश्र- सुखिनः स्थ ? । मुख्येनोक्तम्-

(५९) न नद्यो मद्यवाहिन्यो न च मांसमया नगाः। न च नारीमयं विश्वं कथं नीलपटः सुन्ती॥
नृपेणोक्तम्- यूयं कियन्तः स्थ १। एकोनपश्चाशद् युगलानि। नृपेणोक्तम्- सर्वानप्याकारयत, अहं त्वद्भक्तो ३०
मविष्यामि। ते सर्वे मिलिताः। नृपेण पुरुषाः सर्वे मारिताः, स्त्रियश्च निष्कास्य मुक्ताः। अतस्तेषां वीजमपि
नाशितम्॥ इति नीलपटवधप्रबन्धः॥

dira Candin National Centra for the Aris

११. भोज-गाङ्गेययोः प्रबन्धः (B.)

्रश्र) एकदा वाणारसीपतिः श्रीगाङ्गेयकुमारो गजसहस्र १ शत् ४ एवं १४००, तुरङ्गमलश्च ३ जीणसालाहान्, द्वयं उद्घाटं एवं लक्ष ५, मनुष्यलक्ष २१; एवं सामध्या मालवपति भोजं प्रति चचाल गोलातिरे
आवास्य स्थितः। इतो भोजन्योऽपि तुरङ्गसहस्र ४४, मनुष्यलक्ष ५, गज २००; एवं सामध्या सम्मुखो गोदावरीतिरे आवासान् ददौ। इतो गाङ्गेयस्य पण्डितेन परिमलेन भोजं प्रति 'बकोटित' काच्यं प्रहितम्। नृपः क्रुपितः।
परं किं कुरुते। इतो भोजेन काष्ट्रधवलोपिर स्थित्वा विलोकितम्। बहु सैन्यं दृष्टा छित्तिपमहामात्यं सन्ध्यर्थमप्रैपीत्। स तत्र नृपसदिस गतः। नृपेणोक्तम्—अरे! तव स्वामी मत्सैन्यं न पत्र्यति, यदिभमुखः समाययौ?।
देव! सैन्यस्य को गर्वः?। इति वार्चायां सत्यां कटके कलकलं नृमोऽश्रोपीत्। पृष्टम्—रे! किमिदम्?। देव!
हस्ती परवशो जातस्तस्य कलकलोऽयम्। नृपसदाकण्यं उत्थाय काष्टपञ्चरे प्रविश्य भुजार्गालां ददौ। छित्तिपस्तु
विश्वनैरपसृत्य 'कथिमहे'त्यार्या वाणद्दीतले इङ्गालेन लिखित्वा जनमप्रैपीत्। स उपानहं नृपायादर्शयत्। नृपः
सञ्जीभूय गाङ्गेयसैन्ये पपात। सर्वमानम्। नृपोऽप्यन्तस्थो धृतः। सुवर्णानगढे क्षिप्त्वा गजमिशरोप्य धारायामानीतः। धवलगृहेऽपरे सिंहासने निवेशितः। पण्डितपरिमलोऽपि राजवर्गेण सहायातः। राज्ञा भोजेनोक्तम्—
पं० उपविश्वत । परमासनं न मोचयति। "इह निवसित मेरुः शेखरो भूधराणां०"। मोजेनोक्तम्—कोटकः (१)।
किं तस्य चिरतें(तं)। मं(पं)िहतेन "अयं वरामेके०" इति उक्ते "जन्मस्थानं न खलु विमलं०" इत्युक्तवता—
विश्वति उक्तः—पारितोपिकं याचस्य। देव! अयं नृपतिर्भुच्यताम्। भोजेन सिंहासने निवेश्य तिलकं कृत्वा
पुनर्वाणारसीराज्ये प्रहितः ॥ इति भोज-गाङ्गेययोः प्रवन्यः।।

१२. भोजदेव-सुभद्राप्रबन्धः (B.)

§ ३५) इतो गोपगिरीश्वरो नरवर्मदेवस्तत्सुता सुभद्रा । सा भोजराजस्य 'अभिनवार्जुन' इति विरुदं पट्यमानं श्रुत्वा जनकं प्राह्—तात! मां प्रेपय । भोजो राधावेधं कृत्वा मां परिणयते, विरुदं वा सुश्चित । सा
20 निर्वन्धे जनकमापृच्छ्य तुरगसहस्रेद्वादशिमः सह चचाल । नृपाप्रे कथापितम्—यदहं त्वां वरीतुमागतेति । श्रुत्वा
नृपश्चिन्तातुरो जातः । सा तु गोदावरीतीरमेत्य स्थिता । राधावेधं कुरु विरुदं वा त्यज । एवं श्रुत्वा नृपः
सम्मुखं प्रयाणमकरोत्, अभ्यासमारव्धवांश्व । सर्वः कोऽपि कौतुकान्वेषी सन्धेर्वार्चामिष को न विधत्ते ।
पण्मासान्ते तया कन्यया भिर्तितः साहसमवलम्ब्य गोदावरीतीरमायातस्तत्र राधावेधो मण्डितः । तस्याधस्तैलकडाहिरुत्कलित । नृपस्तस्यास्तीरे स्थानं स्थितः । कवीन्द्रैर्नानावर्ण्यनमारब्धम् । तत्र द्युद्धसरस्वतीति नाम्नाऽ25 चार्या नृपसेवकाः सन्ति । "तैर्विद्धा विद्धा शिलेयम्०" इत्युक्तम् । नृपेण राधावेधे कृते कन्यया वरमाला क्षिप्ता ।
नृपेण काव्यस्य दूषणं पृष्टे कोऽपि न वेत्ति । नृप आह—"विद्धा विद्धा" इति मत्वा मया चिन्तितम्—मम् कार्य
• सृतम् । "भवत् कार्मुकक्रीडितेन" अनेन भोजस्य पण्मासान्ते सृत्युः । स्वामिन्निति । प्रसीदेति । अस्यदाचार्याणां
पण्मासमायुः । "धारा ध्वस्ता" इति प्रकटम् । मालवश्चाप्रधानो विनंक्ष्यित । तदनु सा परिणीता । पष्टे मासे
नृपोऽतीसारान्सृतः । सुभद्रया सहगमनं कृतम् ।

30(G.) सङ्ग्रहगतं भोजनृपवृत्तम्।

§ ३६) *.....भोज जातके "पंचाशत्पंच वर्षाणि" इति श्लोके तेन गणको निषिद्धः। इतश्च मुझेन स एव गणकः सन्तानहेतोः पृष्टो भवान् अपुत्र एवेत्यवादीत्। श्रावणसुदि पंचम्यां प्रथमप्रहरे यो भवत्समस्यां प्रयिता

^{*} एतस्य सङ्ग्रहस्वात्रैकं पद्मं त्रुटितं तस्मित्रस्य वृत्तस्य कियान् भागो नष्टः ।

स एव राजा भविता । इति निर्णीते दिने कस्यापि सौधस्योपिर पतिः कृष्णः पत्नी गौरीति वीक्ष्य राज्ञः समस्या सम्रत्पन्ना—'दुल्लउ सामलउ धण चँपावन्नी०।' केनाप्यपूरिते भोजेन पठता पूरितेति—'छज्ञइ कणयारह कसवट्टइ दिन्नी०।' पण्डितेनोक्तम्—मया पूरिता। सा राज्ञो दर्शिता। अर्द्धराज्ययोग्यं तं ज्ञात्वा भोजं विहाय यावत् युवराज्याभिलापश्चिन्तयति, तावज्ञालन्धरेण राज्ञी सुस्नाता प्रोक्ता। ततो निर्घृणश्चम्मा मारणायाप्पितः। भोजेनोक्तम्—''मान्धाता स महीपितिः०।'' इति तुष्टेन पुनर्मोचितः।

- § ३७) अन्यदा श्रीभोजेन श्रीपत्तनाधिपतेः श्रीमीमस्य गाथाहस्ताः पण्डिताः प्रेपिताः । तथा गाथा-''हेलानिइलिय॰ ॥" तत्प्रत्युत्तरेऽज्ञायमाने नृपो विषि(ष)ण्णो जातः । पण्डितैस्ततो विगोपनाय गाथायां संस्कार्य-माणायां सूरिभिरुक्तं-जीवमाना कथं मार्यते । भविता भवतां स्त्रीहत्या । इति निषिद्धे राज्ञा सन्मान्य गुरवः प्रत्युत्तरं पृष्टाः । तथा चोक्तं-"अंघयसुयाण कालो० ॥" इति प्रत्युत्तररुष्टेन भोजेन पत्तनोपरि बाह्यावासा दत्ताः । श्रीमीमेन तत्परिज्ञाय डामरनामा सान्धिविग्रहिकः प्रहितः । राज्ञा भोजेन तं कुरूपं वीक्ष्य हसितम् । उक्तं च-10 ''योष्माकाधिप० ॥" ततो राज्ञा स्नानोत्तीर्णोन गलद्भिः केशैः पृष्टं-मित्रन्! भीमडाको नापितः किं करोति । तेनोक्तं-अश्वपति-गजपति-नरपति-नृपत्रयस्य शिरांसि भद्रितानि । चतुर्थस्य शिरसि साद्रींकृते क्षरमा-चालयन्निस्त । रिञ्जितेन कौतुकिना राज्ञा स कौतुकवादी आत्मनः समीपं स्थापितः । नित्यं कौतुकवकृत्वेन राजानं रञ्जयति । अन्यदा राजविडम्बननाटके कारिते भीमे रूपे मार्दंगिके मृदंगं वाद्यमाने राज्ञोक्तं-मन्त्रिन् ! भीमडाकस्य करौ मृदंगपुटे भव्यौ पततः । तेनोक्तं-देव! पुरा भीमेन पार्वतीपुरस्ताण्डवे क्रियमाणेऽभ्यस्तम् । एवं 15 विधावेव भीमस करों कठोरौ वर्तेते । अन्यदा तैलपदेवरूपे समागते मन्त्री प्रोक्तः-मन्त्रिन्! भवदेशीयोऽयं राजा उपलक्ष्यताम्। एवमुक्ते तेनोक्तं-अभिज्ञानं नास्ति। "मत्स्वामी तैलपदेवो यदि०॥" इति प्रोक्ते रुप्टेन राज्ञा पितृच्यवैरीति तदैव सैन्यं तैलपदेवस्थोपरि चालितम् । चलिते राज्ञि मित्रणोक्तं-राजन् ! श्रीभीमः पार्षणिघातं विधासति। राज्ञोक्तं-यात्वा वारय। वचनेन न स्थासतीत्युक्ते ततः अश्वसहस्र ४, जात्यगज ४, सुवर्णालक्ष ९-एतत्सर्वं प्राभृते प्रेपितम् । मन्त्री सार्थे गृहीतः । तस्यैव बुद्ध्या योजन १६ शिक्षितगतिभिर्नवभिः तुरगसहस्रैः 20 पाद्रदेवतां नमस्कुर्वन् तैलपदेवो धृतः ॥
- §३८) एकदा मन्निडामरस्याग्रे उक्तं-विद्वान् यावान् लोकः श्रीमालवकेऽस्ति, न तादृशोऽपरदेशेषु । ततो डामरेणोक्तं-नृप! यादृशो लोको गोपाल-विश्वयादिको विद्वानिस्त गौर्जरे, न तादृगत्र । नृपो मौनेन स्थितः । डामरेण चिन्तितं-राज्ञा धूर्त्तत्वेन स्थितम् । पुनः कदाचिदेषा वार्त्ता कर्त्ता । अतो भाणितं स्वनृपाग्रे । यदेका विद्वपी स्त्रीपण्डिता देशसीमायां स्थाप्या । एको विद्वान् गोपालरूपो देशसीमायां स्थाप्यः । ततोऽन्यदा भोजे-25 विद्वपी स्त्रीपण्डित । प्रधानैरानीतौ तावेव । प्रथमभेटायां राज्ञोक्तं-भण पण्डित! वर्णय किंचन । स आह-भोक्तं-आनयत । प्रधानैरानीतौ तावेव । प्रथमभेटायां राज्ञोक्तं-इह किं । साह-"पृच्छंति० ॥"
- § ३९) अन्यदा निशीथे भोजराज्ञा परिश्रमता कुलचन्द्र नामा क्षपणक एवं पठन् श्रुतः—"तिक्ला तुरिअ न मा॰ ॥" "नव जल भरिआ॰ ॥" ततो राजा निजपुत्रीखरूपं दृष्ट्वा प्रातराकार्य गूर्जरदेशोपरि सेनाधिपत्यं दृज् । तदा तेनोक्तम्—"देव दीपोत्सवे॰ ॥" ततो गूर्जरदेशो विनाशितः समग्रोऽपि । श्रीपत्तनचतुष्पथे ३० कपर्देका उप्ताः । ततस्तस्यागतस्य राज्ञोक्तम्—रम्यं न कृतम् । अद्यप्रभृति मालवदेशदण्डः श्रीगूर्जरं यास्यति । कपर्दका मालवदेशीयनाणकम् ।

§ ४०) धारानगर्यां सीता नाम रन्धनी । केनापि द्रदेशान्तरिणा तस्या गृहेऽत्रं कारितम् । तया निशि घृत-कुम्पकव्यत्ययेन कांगुणीतैलकुम्पकात् तैलं परिवेषितम् । स मृतः । तं तथा विलोक्यापवादभीतया तया तदे-

Contro for the Jrs

20

वान्नमुपभुक्तम् । तत्त्रभावात्सारस्वतमजिन् । राज्ञो मानपात्री सीता पण्डिता जाता । एकदा राज्ञा तस्याः स्तनपुर्गं वीक्ष्यापाठि—

(६०) किं वर्ण्यते कुचद्रनद्गमस्याः कमलचक्षुषः । सप्तद्वीपकरग्राही भवान् यत्र करपदः ॥ सीतया उत्तराई पठितम् । तथा राज्ञा पुनः पठितं-"सुरताय नमस्तसै ०॥" अन्यदा तर्या जालान्तरे 5 चन्द्रकरस्पर्शे इदमपाठि-"अलं कलंकशृंगार०॥"

§४१) अन्यदा राजपाटिकायां गच्छतो राज्ञो भोजस्य सर्वेरिप नमो विहितम्। परमेकेन पुरुषेण हट्टमध्य-स्थितेन राजा न नमस्कृतः। ततो राज्ञा तत्सम्मुखमालोकितम्। तेनांगुलित्रयमूर्ध्वांकृतम्। राज्ञा चिन्तिलम्-कि-मनेनांगुलित्रयेण का सञ्ज्ञा विहिता। द्वितीयदिने तथैव तेनांगुलिद्वयम्, तृतीयदिने एकांगुलिः। आकार्थ राज्ञा पृष्टम्। तेनोक्तं-राजन्! दिनत्रयं चूणिरिस्त, किं राज्ञा। इति तुष्टेन तसे वर्षाश्चनं दत्तम्।

§४२) केनापि पण्डितेन श्लोकद्वयमिदमपाठि— "ग्रासादर्द्धमपि ग्रासमर्थिभ्यः०॥१॥" "यदनस्तमिते सूर्ये०॥२॥"

एतत् द्वयमपि राज्ञा भोजेन कुण्डलयोः सम्रुत्कीर्णम् । द्वयसापि दाने लक्षद्वयी दत्ता ।

§४३) श्रीभोजेन सिद्धरसिद्धिहेतोः सुवर्णसप्तकोटीर्भक्षिताः । रित्तकामात्रापि न सिद्धिरजनि । ततो रस-विडम्बननाटकममिण्ड । तत्र पात्राण्यागत्य विजल्पन्ति−

(६१) कालिका नट्टा नट्टा कस्स कस्स नागस्स वा वंगस्स वा। नहि नहि धम्मंत फुक्कंत अम्ह कंत सीसस्स कालिम...॥१॥

इति राजा हसति । अत्रान्तरे सिद्धरसयोगी तिन्नशम्य समागतः । प्रदीपिकाधूमवेधेन राज्ञस्ताम्रमण्डिका सुवर्णीकृता । राज्ञा दृष्टं किमेतिदिति ? आन्तेन नाटकनिवारितम् । राज्ञोक्तं—तदा भोक्ष्ये यदा स सिद्धयोगी मिलिष्यति । एवं दिनत्रयेण मिलितः । तेनोक्तं—राजन् ! रसो दैवतम् ।

(६२) अत्थि कहंत किंपि न दीसइ। [नित्थ] कहउ त सुँहगुरु रूसइ। जो जाणइ सो कहइ न कीमइ। अज्ञाणं तु वियारइ ईमइ॥

इत्यवगत्य मानितः।

१४४) श्रीभोजेन लोकोपकारकरणाय संप्तोत्तरशतवैद्यग्रासो विहितः। चतुष्पथचत्वरके जयघण्टा बन्धापिता। इत्युक्तं च-रोगिणा घण्टा वादनीया। यथा वैद्या मिलन्ति, चिकित्सां कुर्वन्ति च। अपरं च रोगिणा वलहडेष्ठ अभजान्नादि ग्राह्मम्। एवं कियति काले गते सित एकदा कोऽपि जलोदरी समेतः। घण्टारवादागतेन भिषजाऽसाध्यः कथितः। ततो रोगी राज्ञो मिलितः। राज्ञापि कृपयोक्तं—वैद्या! अम्रं जीवयत। राजन्! असौ न जीवत्येवासाभिः। इत्युक्ते दीनारपंचश्रतीं दत्त्वा रोगी प्रस्थापितः। स निदाचे मध्यन्दिने सार्थरिहते मथि वटच्छायायां विश्रामायागमत्। तत्र सर्ण एक अग्राच्छन् तहुर्गन्धेन नष्टः। स च विषि(प)ण्ण आत्ममरणाय पृष्ठे धावितः। ततस्तेन सर्णवान्तगरलिसार्कपत्राणि मिल्लतानि। तैविरेको लग्नः। ततः कयाचिन्नायिकया खग्रहं उग्नीत्वा निरामयो व्यधायि। पुनर्व्यावत्त्य घण्टारवो विहितः। तन्नादागतैर्भिषग्मितं सञ्जं वीक्ष्य प्रोक्तं—त्वया कथं घण्टारवोऽकारि। तेनोक्तं—मम राजैव वेत्ति। तैस्तत्रानीतः सः। राज्ञा पृष्टः—को रोगोऽस्ति?। तेनोक्तं—अ्हं वैद्यमुक्तः स एव जलोदरी। त्वत्प्रसादाजीवितः। किमेतदिति दोषज्ञवैद्यमुख्येनोक्तं—स एवायम्। परमेकौषध-साध्य एव। तदौषयं कर्मयोगेनैव मिलितम्, नार्थेन। किमौषधम्?। राजन्! निदाघमध्यादे कृष्णसर्णस्वयंमुक्त-गरलिसान्यर्कपत्राण्येव। तदौषयं विना यदि जीवितो भवति तदा मम काष्टानि। इत्युक्ते राज्ञा पृष्टं—किमेहो?। अर्वतोक्तमेवमेव। ततो राज्ञा द्वयसापि प्रसादो दत्तः।

- §४५) अन्यदा डाहलदेशीयकर्णमात्रा देमतया सिद्धयोगिन्या प्रहरं यावत् शुभलप्रकृते प्रसवसमये कपा-लासनेन गर्भो धृतः । कर्णो जातः । सा तु मृता । शुभलप्रप्रभावात् पद्त्रिंशद्धिकशतराजचकाधिपत्मे किय-माणे राजा रोदिति । मन्त्रिभः कारणं पृष्टम्—"मा स्म सीमन्तिनी कैाचित्० ॥"
- § ४६) अन्यदा श्रीकर्णन श्रीभोजं प्रति कथापितम्-यत् भवतश्चतुरुत्तरशतं प्रासादाः, गीतवद्धप्रवन्धाश्च वर्त्तन्ते।अतस्तुरगद्धन्द्वयुद्ध-विद्यात्यागयुद्धेन मां विजित्य एकं प्रासादं प्रवन्धाधिकमुररीकुरु । ततः पंचाशद्धस्त- ज्ञासादप्रतिज्ञायां भोजे जिते मित्रिभिराह्यमाने शरीरापाटवे सित घाटमार्ग्गेषु बद्धेषु रुद्धेषु श्रीभीमेन श्रीकर्णस्य शुकचर्णेन कृत्वा लेखः प्रस्थापितः । "अंबय फलं० ॥" इति यौगपद्येन मालवभंगे कृते भागहेतोर्डामरेण श्रीकर्णो बन्दी कृतः ॥ इति विविधा भोजनृपप्रवन्धाः ॥

१३. धाराध्वंसप्रबन्धः (B.)

§ ४७) मालवमण्डले उज्जयिनी पुरी अपरा धारा । तत्र राजा यशोवर्मा । इतश्च पत्तने श्रीजयसिंहदेवः । स 10 मालवं जेतुं प्रयाणमकरोत् । समीपभूमौ गतः प्रतिज्ञामकरोत्-यद् धारां लात्वा भोक्ष्ये । इतो धारायां गव्युति ५ मध्येऽयोमयाः क्षुरिकाः क्षिप्ताः सन्ति । प्रतोल्यो दत्ताः । कपाटेषु योजितेषु सम्मुखानि नाराचानि । तत्र गज-स्याप्यवकाशो नास्ति । धारायाः प्रत्यासन्नैरि भवितुं न शक्यते । अथ सिद्धराजप्रधानैः कणिकाया धारा कृता । तस्या भङ्गे ५०० परमारा युद्धा मृताः। द्वादशवार्षिके विग्रहे सिद्धनाथे खिन्ने वर्व्वरको वेतालः प्राह-देव! यदि यशःपटहः करी किराहूवास्तव्यो जेसलपरमारस्तत्र प्रेष्यते, गजारूढेन तेन धारा गृह्यते अन्यथा न । राज्ञोक्तम्-15 स करी कास्ते ?। कान्त्यां मद्नब्रह्मनृपतेरस्ति । जयसिंहदेवस्तु कियता परिकरेण तत्र गतः । वर्षाकालोऽस्ति । पुर्या द्वारे स्थितः। मांइदेवमत्त्रिणो मिलितः। आदिश्यतां कार्यम्। नृपदर्शनमवलोक्यते। नृपो महानवम्यां विना दर्शनं न ददाति । जयसिंहदेवः स्थितः । इतो गाढे घर्मेऽभिजायमाने नृप उपरितनभूमौ आकाशे प्राप्तः । पुरम-वलोक्य पुराद् बहिर्दशं ददौ । मदनकपटैः कृष्णान् चतुरकान् दृष्टा प्राह-अरे ! पूर्वारे किमिदं दृश्यते ? । देव ! गूर्जरत्रानृपतिर्देवदर्शनार्थी प्राप्तोऽस्ति । अरे! नृपो न किन्त्वेष कवाडी । य एवंविधे वर्षाकाले आम्प्रति । 20 आकार्यताम् । जयसिंहदेवस्तूपायनमादायाययौ । श्रीमद्नब्रक्षेण राज्ञा सत्कृतः । आगमनकारणं पृष्टम् । राज्ञो-क्तम्-यशःपटहः करी विलोक्यते । किमर्थम् ? । देव ! तेन विना द्वादश्ववार्षिको विग्रहो न भज्यते । राज्ञो-क्तम्-गजानानयत । जनैरुक्तम्-प्रसिद्धानां मध्ये स नास्ति । सिद्धराजः कृष्णवदनो जातः । इत एकेनाघोरणे-नोक्तम्-देव! स यशःपटहः करी । तं समानाय्यत । नृपेणोक्तम्-यद्यमुना कार्यं सरित तदा गृहाणान्येपि हस्त्यश्चादयः । देव ! पूर्णमनेनैव । राजा परिधाप्य करिणं दत्त्वा चोक्तम्-अतः परं विग्रहो न कार्यः । यतः 25 खल्पायुपि जीवलोके राज्यस्य सौख्यं नानुभूयते तत्तस्य को गुणः । नृपस्तु धारायां गत्वा सगौरवं जेसलपरमार आहूतः । तं दृष्टा चारणेनोक्तम्-

(६३) तुह मूंडिए घणेहिं धार न लीजइ कर्णउत्त!। जिम जे हेडे(?)प्रऊंचेहि जोइ न जेसल आवतउ॥

र्स यशःपटहमारुद्य प्रतोलीं गतः। कपाटयोर्नाराचानि सम्मुखानि तैः करी विध्यते। स पश्चात् स्थितः। जेस-30 लेनं हिकतः। करी कुपितः। कपाटाध ईपत् शुण्डाप्रवेशं प्राप्योद्धृतवान्। प्रतोली अतिबलेन पतिता। धारा गृहीता। नृपतिर्यशोवर्मा धृतः। श्रीजयसिंहदेव उपकारिणो जेसलसौर्द्धदेहिकं कृत्वा बलितः।

§ 8८) यावत्क्रमेण वृद्धनगरमायातस्तत्र त्राह्मणैः प्रवेशोत्सवे कारिते श्रीयुगादिदेवप्रासादाग्रे नृपे प्राप्ते, द्विजैरुक्तम्-देव! देवं नमस्कुरुत । किमसौ ब्रह्मा १। देव! असौ युगादिदेवप्रासादः । किमन्नापूर्वम् १। देव!

> norra andi Na Gi Comissioni i Aris

असाकं पुरे एप देवो मुख्यः । नृपस्तु मध्ये गत्वा देवं नमस्कृत्य ध्वजां प्रासादोपिर दृष्ट्वा जनानाह—मया मालवे स्त्रमहाकालं विना ध्वजा कापि न दृष्टा । अतः कथमत्र १ द्विजैरुक्तम्—उत्तारके चलत यथोच्यते । ततो नृपितिर्म्बदेवकुले गत्वोत्तारके गतः । तद्व ब्राह्मणैः श्रीयुगादिदेवभाण्डागारात्कांस्यतालाई गोष्टिकैरानीय नृपाय दिर्घितम् । देव ! असौ स प्रासादो यत्रैवं कांस्यतालान्यासन् । एवं प्रासादाः २१ सकलशा भूगताः सन्ति । एष इद्वाविद्यतितमः । नृपस्तु चमत्कृतः । देवायाधिकं ग्रासं दन्त्वा पत्तनं गतः ।। इति धाराध्वंसप्रबन्धः ।।

१४. सिद्धराजीदार्यप्रबन्धः (B.)

§ ४९) अथैकदा गुप्तिस्थाय यशोवर्मनरेश्वराय सिद्धराजेन पत्तनं दर्शितम् । तेन प्रासादपरम्परां दृष्ट्वा उक्तं च-देवासाकं वैरं सुखेन वलिष्यति । कथम् १ । एषु देवकुलेषु मानाशीतो ग्रासोऽस्ति । पाश्वात्यास्तं लोपयिष्यन्ति । अतो देवद्रव्यभक्षणाद्विनक्यन्ति । सहस्रलिङ्गं दृष्टा प्राह—वयं देवद्रव्यभक्षकाः, यूयं शिवस्नातजलपायिनः । अत 10 एवावां तुल्यो ।

(६४) न मानसे माद्यति मानसं मे पम्पा न सम्पादयति प्रमोदम्। अच्छोदमच्छोदकमप्यसारं सरोवरे राजति सिद्धभर्त्तुः॥

§५०) अथैकदा सिद्धनृपितर्नगरचिरतं ज्ञातुं छत्नं अमित स । व्यवहारगृहश्रेणौ एकसिन्नावासे बहून् दीपानालोक्य प्रातस्तस्याकारणं प्रहितम् । तेन भयभीतेन कारणं पृष्टम् । आकारकेणोक्तम्-नाहं जाने । स गतः । 15 नृपेण पृष्टम्-कियन्तस्ते गृहे दीपाः १ । तेनोक्तम्-चतुरशीतिः । नृपेण भाण्डागारात्षोडशलक्षान् दत्त्वा ध्वजा कारिता, दीपका विध्यापिताश्च ।

१५. मद्नब्रह्म-जयसिंहदेवप्रीतिप्रबन्धः (B.)

§५१) कान्तीपुरी सर्वपुरश्रेष्ठा । तत्र चतुरशीतिश्रतुष्पथानि । चतुरशीतिर्जेर्नाः प्रासादाः । तावन्तो माहे-श्वराः । तावन्त्यो वाप्यः । ८४ उद्यानानि । ८४ सरोवराणि । एवं ८४-८४ं स्थानानि । तत्र मदनब्रह्मा राजा । 20 तस धवलं गृहम् । योजनप्रमाणः प्राकारस्तत्र धवलगृहं सप्तदशभूमिकम् । तस्य पाश्चात्यप्राकारमध्ये सर्वऋतूपयोगि उद्यानम् । तत्र सप्त[द्या ?]भूमौ गवाक्ष ४ । आदौ विमानविश्रमः पूर्वस्याम् । उत्तरस्यां कैलाशहासः । दक्षिणस्यां पुष्पाभरणः । पश्चिमायां गन्धर्वसर्वस्वः । एते चत्वारो मुख्या गवाक्षाः । सर्वे स्वर्णमयाः । नानाकौतुकोप-शोभिताः । अपरे ११६ । एवं १२० तहुर्गे । वाप्यश्रतस्रश्रतुर्दिश्च । क्षीरोदवापी १, कमलकेदारा २, हंसविश्राम-वापी २, सुधानिधिः ४ एवं । तदनु पुरमध्ये चन्द्रज्योत्स्ना तटाकिका धवलगृहप्रवेशप्रत्यासन्ना नानारत्रैर्निबद्धा । 25 तस्याश्रतुर्दिक्षु वाटिकाधारागिरिः सर्वर्जूपयोगिभिर्वश्चेविराजितः । तस्य राज्ञोऽन्तःपुरसहस्र ५ । एवं ३६००० प्रिंड-विलासिन्यः । मुख्यदेव्यश्रतस्रः । वावन १, [चन्दना २,] सुमाया ३, सींघण ४ । वावनदेवीवाहिगि सुगति १, इंसगति २, सुललित ३, लीलावती ४ मुख्य। चन्दनावाहिगि ४ साऊ १, सुसीला २, दक्षमणी ३, वछुभा ४। समयावाहिणि ४-कांऊ १, कपूरी २, कामल ३, कस्तूरी ४। अमृतमयी १, अमृतवत्सला २, वचन-वत्सला २, सहसकला ४-सींघणदेवीवाहिगि । मेरी १, हम्मीरी २, फत् ३, फल् ४-एता ग्रुख्याः रेज् 30 प्रसादपात्राणि । आलि १, आलित २, अलिव ३, अलवेसरि ४, वील् वामणी कौतुकपात्राः । गज ३३३०, तुरंगम लक्ष ५, पदाति लक्ष २१। सर्वमित्रिश्रेष्ठो मांईदेवः सर्वग्रुद्राधिकारी । सेनापतिः सांईदेवः । बार्ओलगउ माधवदेवः । तथा वर्षमध्ये सर्वावसरः २-एको महानवस्याम्, अपरश्रेत्राष्टम्याम् । एवमिन्द्रसमानो राज्यं पालमृति । सोलही सोल १६ नृत्यं सदा नृपाये कुर्वन्ति ।

६५२) एकदा गूर्जरत्राधिपतिर्जयसिंहदेवो दिग्विजयं विधाय व्यावृत्तः कान्तीपरिसरे प्राप्तः । चिन्तितम्-मम रणश्रद्धा केनापि नापूरि। "पुष्पेषु जाती नगरेषु कान्ती ..." सा तावदिलोकनीया। परिप्रहोऽप्यतु-त्साहोऽपि नृपमनुययौ । क्रमेण पुरीद्वारभूबावावासान् दत्त्वा स्थितः । मध्ये कोऽपि न वेति । नृपेण वहिःस्थेन पुरीप्राकारे केनककपिशीर्षाणि देष्टानि । प्रासाददण्डकलशैः सर्वसुवर्णमयी लंकेव भाति । सिद्धराजेन चिन्तितम्-बयमविमृश्य प्राप्ताः । इतः सेनानीः सन्नद्धीभूय पुराद्वहिर्निर्गत्य फेरकं दत्त्वा मध्ये याति । अमात्येन पुरीरोधः 5 कृतः । सैन्यसामग्री च सर्वा विहिता । इतो मित्रणा लेखद्वारेण नृपो विज्ञप्तः-देव ! किमपि सैन्यं द्वारि केनापि हितुनाऽगृतमस्ति । नृषेणोपरितनभूमिस्थितेन दृष्टम् । द्वारावलगकस्य प्रति स्वरूपपत्रमर्ष्पितम् । मित्रणा स्वरूप-मालोक्य पोडशतुरङ्गमानपरवस्तु नृपयोग्यमर्पयित्वा माधवदेवद्वारावलगकः प्रहितः। स सिद्धनाथं गतः। नृपेणो-क्तम्-किमिदम् ? । मित्रणाऽतिथ्यं भवतां प्रहितम् । प्राघुणका यूयं सत्कारार्हाः । नृपेणोक्तम्-वयमातिथ्यार्थिनो न, किन्तु युद्धार्थिनः । स तत् श्रुत्वा मित्रणे निवेदितवान् । मित्रणा नृपो विज्ञापितः । राज्ञा पत्रकेण द्वारि 10 कथापितम् । भव्यमेतत् । आगामिके मङ्गलवारे तव श्रद्धां पूरियावः। मित्रणा द्वारि रणक्षेत्रं नृपस जयसिंह-देवस्य वचनात्सजीकृतम् । चतुर्दिक्षु वृक्षादि क्षत्रियैश्छित्रम् । मित्रणा युद्धार्थे सैन्यसामग्री कृता । नृपादेशमेव विलोकमानिस्तष्टिति । नृपस्तु किमपि न कथापयित । इतो निर्णातिदिनोपरि जयसिंहदेवेन जगदेवस्य परमारवंशो-द्भवस्य पट्टबन्धः कृतः । पश्चद्श चान्येऽपि तत्सदशाः सजीकृताः । इतो मङ्गलवारिदने नृपः प्रवृद्धो दन्तशौचं स्नानं शृङ्गारं च विधाय देवतावसरमकरोत् । तत्र प्रेक्षणीयं जातम् । पश्चाद्रसवती निष्पन्ना । मोजनं विधाय 15 ताम्बूलमादाय तुरगान् सजीकृत्य खयं सन्नाहं जगृहे। पोडश नार्यः सन्नाहं ग्राहिताः। तदनु ताभिर्युक्तो युवत्या भृतातपत्रो द्वाभ्यां वीजितवालव्यजनः स्थाने २ प्रेक्षणकान्यवलोकयन् पुर्यन्तरेवाष्टौ दिनानि कौतुकेनैव [निर्गम्य] नवमदिने बहिरायातः । इतो रणभूमौ पटो विधृतोऽन्तरा तावज्ञयसिंहदेवसुभटाः सन्नश्च समाजग्धः। याव-त्पटोऽपाकृतः, तावन्नारीवेष्टितं नृपं दृष्ट्वा जगदेवाद्याः पश्चाद्ववतुः । नृपेणोक्तम्-किमिति भन्नाः स्य । जगदेवे-नोक्तम्-केन सह युध्यते ?। ख्रयमवलोकयतु देवः। तावजयसिंहदेवः ख्रयं सम्मुखे धावितस्तुरङ्गं मुक्त्रा पाद-20 चारेण । मदनब्रह्मनृपोऽप्युत्तीर्णः । द्वयोरालिङ्गने जाते द्वयोरिप प्रीतिर्जाता । प्रवेशमहोत्सवे जायमाने सिद्धनाथ-स्त्वनेकानि कौतुकानि विलोकयन्ननेकानि वाद्यानि शृण्वंश्र राज्ञा समं प्रतोल्यामागतः। एवं नवभिर्दिनैश्रन्द्र-ज्योत्स्नातटाकिकायां प्राप्तौ । तत्र स्नातौ । सुत्रर्णवेष्टितपादपां धारागिरिवाटिकामवलोकयन्तौ धवलगृहद्वारमा-यातौ । मत्रिणा कारितमङ्गलोत्सवौ धवलगृहं प्राप्तौ । सिद्धनाथस्तु सर्वरमणीयतामालोक्य ग्रामीण इव विस्मया-तुरः स्थितः । भोजनाद्या सर्वा सामग्री तथा जाता यथा बाढं चेतसि चमत्कृतः । मासान्ते मुत्कलापयामास 125 राज्ञा हस्त्यश्वादीन्युपढौकितानि । जयसिंहदेवस्तु पात्राष्टकं ययाचे । नृषेणार्पितम् । राजा मुत्कलाप्य पत्तनोपरि चिलतः । पात्राष्टकं यावत्पुरप्रतोल्यामागतं सुखासनादि संहत्य.....तावित्रर्गमे उक्तम्-अग्रे पत्तनं क ?। जनैरुक्तम्-'पत्तनं दूरे' इति श्रुत्वा षण्णां हृदयसङ्घट्टो जातः । इतो द्रयसोपर्याच्छादनं दत्तम् । द्वयं जीवितम् । तन्नुपेण सह क्रमेण पत्तने प्राप्तम् । माऊनाम एकखाः, परस्याः पेथू । अद्यापि माऊइराणि पेथूहराणि च पात्राणि श्रुयन्ते । एवं श्रीजयसिंहदेवः कान्तीं गत्वा समायातः ॥ इति मदनत्रक्षनृपतेर्जयसिंहदेवस्य ग्रीतिप्रवन्धः ॥

१६. अथ श्रीदेवाचार्यप्रवन्धः (Br.)]

(६५) वस्त्रप्रतिष्ठाचार्याय नमः श्रीदेवसूरये । यत्प्रसादमिवाख्यान्ते सुखप्रश्रेषु साधवः ॥ (६६) नग्नो यत्प्रतिभाष्यमीत् कीर्तियोगपटं त्यजन् । हियेवात्याजि भारत्या देवसूरिर्मुदेऽस्तु सः॥

IGNCA RAR

^{*} अत्र पद्यस्य पूरणार्थे मूलाद्शें तत्प्रमाणा पंक्तिः रिका मुकाऽस्ति । पु॰ प्र॰ स॰ 4

- (६७) प्रभाधिनाथैर्मुनिभिः कलाभृत् मुख्यैरुपेतो गुरुतारकौधैः। अनन्तलीलाकलितः किलास्ते गच्छो बृहद्गच्छ इति धतीतः॥
- (६८) तत्र चित्रचरितः परितापं हर्तुं मेघ इव भव्यजनानाम् । शिष्यवृद्धिकरसंवरवानप्युज्वलोऽजनि गुरुर्धुनिचन्द्रः॥
- (६९) दुःषमाजलधौ येन मग्ना सुविहितस्थितिः । हेलयेव समुद्धे धरित्रीवादिपोत्रिणा ॥
 तस्त्रिष्यः- (७०) पडिबोहिअमहिवलओं निन्नासिअक्रमतिमिरखरो ।

तिच्छिष्य:- (७०) पडिबोहिअमहिवलओं निन्नासिअकुमतिमिरखरो सबक्रपबोहकरो जयउ जए देवसुरिरवी॥

- (७१) तावचिअ गलगाजिं कुणंति परवाइमृत्तमायंगा । चरणचवेडचमकं न देइ जा देवसूरिहरी॥
- 10 १५३) तस्य चरितारम्भः-*धन्याधारदेशे महाहहपुरे वीरणागश्रेष्ठी प्राग्वाटज्ञातीयो वसति । तिस्रया जिनदेवी । साऽन्यदा स्वमे चन्द्रं मुखे विश्वन्तं ददर्श । अथ गुरूणां श्रीम्विनचन्द्रस्रीणाम्चलम् । तैरुक्तम्-चन्द्रवत्सौम्यः
 सुतो भावी । सा समये शुभदिने सं० ११४३ वर्षे वैशाखशुद्धदशम्यां सुतमस्त । पूर्णचन्द्र इति नाम कृतम् ।
 कदाचिन्महाहहेऽशिवमुत्पन्नम् । लोको दिशोदिशं गतः । वीरणागोऽपि भृगुकच्छे गतः । पूर्णचन्द्रस्तु अष्टवाविकः सन् शुष्कभिक्षकां विक्रीणाति । गुरवस्तत्रायाताः । स शुष्कभिक्षकां विक्रेतुं कस्यापि गृहे गतः । तद्गृहे15 शोऽपि निधानद्रच्यमङ्गाररूपं त्यजन् पूर्णचन्द्रणोक्तः-स्वर्णं किं त्यजसि १ । तेनोक्तम्-मम भाग्यादङ्गारा जाताः,
 त्वं स्वकरे कृत्वा ममार्पय । तेनार्पितम् । धनिकेन कनकं दृष्टम् । धनिकेन शुण्डो भृत्वा स्वर्णस्यापितः । तेन पितुरिपतः । पित्रा गुरूणामुक्तम् । स्वरिभिक्कम्-एष न सामान्यः, यद्यसाकं ददासि तदा प्रभावको भावी । पित्रोकम्-अहं दृद्धःः तथा एकस्ततो निर्द्रच्यः । पूज्यानां च वचोऽन्यथा कर्तुं न शक्यते । गुरुभिरुक्तम्-मम तपोधनानां पश्चशत्यस्ति ते सर्वे तव सनवः । स दियतां पृष्टा पुत्रं गुरूणां ददौ । सं० ११५२ वर्षे दीक्षा । प्राइ20 त्वात् समग्रशास्त्रपारङ्गतो जातः । रामचन्द्र इति नाम दत्तम् । स महावादी जातः । पृत्रभिरक्तम् । सन्यो नाम
 द्विजो जितः । काश्मीरदेशीयो द्विजः सत्यपुरे सागरो जितः । नागपुरे गुर्णचन्द्रो दिगम्बरो जितः । चित्रकृटे
 शिवभृतिर्भागवतो जितः । गोपिगरौ गंगाधरो द्विजः, धारायां धरणीथरः, पुष्करिण्यां पद्माकरः । इतो विमरुचन्द्र-हरिचन्द्र-पार्श्वचन्द्र-सोमचन्द्र-शान्तिकलश-अशोकचन्द्राद्याः सहायाः सञ्चाताः । गुरुभिः सं० ११६२ वर्षे
- 25 न्वितेन त्रतमात्तम् । पुत्र्याश्चन्दनबालानाम्ना गुरुभिर्महत्तरापदमदायि ।

 § ५४) अन्यदा धवलकके विहारे गताः । तत्र ऊदाश्रेष्ठिना श्रीसीमन्धरप्रासादोऽकारि । तस्यायमभिप्रायः—

 यत् सीमन्धरो यं कथयति तेन प्रतिष्ठां कारयामि । उपवासत्रयं जातम् । सङ्घो मिलितः । शासनदेवी स्पृता ।

 कार्ये निवेदिते, देव्या उक्तम्-श्रीसङ्घः कायोत्सर्गं करोत् । तस्य बलात देवी तत्र गता । श्रीसीमन्धरं नत्वा

पदे स्थापित:-देवस्रिर इति नाम जज्ञे । तथा वीरणागश्रेष्टिना जिनदेवीसहितेन तथा सरस्रतीनाम्या पुत्र्याऽ-

^{*} B सङ्ग्रहे पतचरितस्यारम्भः किञ्चिद्धिन्नपाटकमेणोपलभ्यते । यथा-

मङ्गाहडिम नयरे निवसइ सेठी अ वीरणागु ति । सिरिपोरवाडवंसे जिणदेवी तस्स भजा य ॥
तयोस्तन्जः शुभस्वमस्वितो रामचन्द्र नामास्ति । अन्यदाऽवृष्टौ सत्यां दुर्भिक्षवशात् भृगुपुरे सुभिक्षं श्रुत्वा श्रेष्ठी तत्र गतः । राम-चन्द्रस्तु नौवित्तवाट्यां वाणिज्याय यदि तद्प्यादाय याति । एकदा श्रीमुनिचन्द्रस्र्रयो विहारेणाजग्मः । वीरणागो वन्दनायायतः । इतो रामचन्द्रेण पोडशवर्षदेशीयेन पाषधागारमागत्योक्तम्—तात ! मया चणकान् द्त्त्वा तावत्यो द्राक्षाः समानीताः । गुरुभिर्लक्षणान्यवलोक्य श्रेष्ठी उक्तः—श्रेष्ठित् ! पुत्रो महाभाग्यवान्, त्वद् गृहे सन् तव कुलस्थिव द्योतको भावी; परं गृहीतदीक्षः सकलस्वापि जिनशासनस्य धोतको भविता । ततः श्रेष्ठिना श्रेष्ठिन्या च क्षमाश्रमणं दत्तम् । भगवन् ! सपुत्रयोरप्यावयोदीक्षया प्रसादं कुरु ।...(इतोऽग्रे B सङ्घहः खण्डितः)

15

20

पप्रच्छ-भगवन् ! धवलकपुरे श्रेष्ठिना ऊदाकेन भवतां प्रासादः कारितः । तस्य प्रतिष्ठां कः करोतु ? । स्वामिना उक्तम्-श्रीदेवाचार्याः कुर्वन्तु । निवृत्य उक्तम् । कायोत्सर्गः पारितः श्रीसङ्घेन । प्रतिष्ठा जाता । ऊदावसद्दीति नाम जज्ञे ।-इत्याद्यनेकवर्णनानि, तथापि किश्चित् खण्डितसम्बन्धा लिख्यन्ते ।

§५५) अथ कर्णावतीसङ्घर्षार्थनया कर्णावतीं गताः। चतुर्मासकं स्थिताः। तत्र श्रीमदरिष्टनेमिनः श्रासादे व्याख्यानं भवति । इतः कर्णाटनृपगुरुश्चतुरशीतिवादान्-एवं देशे देशे जित्वा मालवमण्डलस्य मध्ये भूत्वा उ गूर्जरत्रां प्रति चचाल । क्रमेण आसापह्यामाययौ । तस्य वादाः-

(७२) मंभ अह नव बुद्ध भगव अहारस जित्तय, सइव सोल दह भद्द सत्त गंधव विजित्तय। जित्त दिगंबर सत्त च्यारि वित्तिय दुय जोइय, इक धीवर इक भिल्ल भूमिपाडिओं इक भोईओं। ता कुमुदचंदि इय जित्त सवि अणहिल्लपुरि जओं आइयओं। वडगच्छतिलइ पहुदेवसूरि कुमुदह मदु उत्तारियओं॥

वासुपूज्यचैत्ये स्थितः । इतो धावँसत् श्राद्धोऽमन्दतरमायातः । कुमुदेनोक्तम्-किं चिरेण दृष्टः १ । तेनोक्तम्-श्वेताम्बरश्रीदेवाचार्यपौषधागारे समर्थनमजिन । तत्र वेला लग्ना । कुमुदेनोक्तम्-मयि आगते श्वेताम्बराणां समर्थनमेव युक्तं न त्वारम्भणम् । तेनोक्तम्-मैवं वद ।

(७३) आस्तां सुधा किमधुना मधुना विधेयं, दूरे सुधानिधिरलं नवगोस्तनीभिः। श्रीदेवसूरिसुगुरोर्यदि सुक्तयस्ताः पाकोत्तराः श्रवणयोरतिथीभवन्ति॥

इति श्रुत्वा सकोपः सन् साहारणं नाम भट्टमाहूय प्राहिणोत् । स पौषधागारे कुम्रुद्विरुदान्यवादीत्—सकल-वादिवेताल, वादितरुप्रवलकालानल, वादीन्द्रमानपर्वतदावानल, वादिगजघटापश्चानन, वादिसिंहशार्दूल, मुक्तिनि-तम्बिनीकण्ठकुन्दलालंकारहार, श्वेताम्बरदर्शनप्रहसनस्त्रधार, षद्दर्शनपाठी जयति वादीन्द्रश्रीकुमुद्चन्द्र ।

> (७४) इंहो श्वेतपटाः किमेष कपटाटोपोऽस्ति सण्टिङ्कतैः संसारावटकोटरेऽतिविकटे मुग्धो जनः पास्यते । तत्त्वातत्त्वविचारणासु यदि वो हेवाकछेशस्तदा सत्यं कौमुदचन्द्रमङ्कियुगलं रात्रिन्दिवा ध्यायत ॥

ततः प्रभोः शिष्येण माणिक्येनोक्तम्-

(७५) कः कण्ठीरवकण्ठकेसरसटाभारं स्पृश्चात्यंहिणा कः कुन्तेन शितेन नेत्रकुहरे कण्डूयनं काङ्क्षति। कः सन्नद्यति पन्नगेश्वरशिरोरत्नावतंसिश्रये यः श्वेताम्बरदर्शनस्य कुरुते वन्यस्य निन्दामिमाम्॥

यः श्वेताम्बरदर्शनस्य कुरुते वन्यस्य निन्दामिमाम् ॥ अन्यदा प्रभोर्भगिनी सरस्वती तनुगमनिकायां गता। कुमुदः प्राह—केयं गंडरिका श्वेताम्बरी है कुमुदेनोक्तम्— आर्थे । नृत्यं कुरु । नप्राट ! त्वं मृदङ्गं वादय । ततः सा पौषधागारे गत्वा रोदितुं प्रवृत्ता । गुरुभिनिंमित्तं पृष्टा तयोक्तम्—

(७६) हा कस्स पुरोहं पुक्करेमि असकन्नया महं पहुणो। नियसासणनिकारे जोऽवयरइ वरं सुगओ॥

दिगम्बरविडम्बना उक्ता । गुरुभिश्विन्तितम्-

25

30

婚

15

25

30

(७७) आः कण्ठशोषपरिपोषफलप्रमाणो व्याख्याश्रमो मयि बभूव गुरोर्जनस्य । एवंविधान्यपि विडम्बनविड्वराणि यच्छासनस्य हहहा! मस्रणः स्रणोमि ॥ दुर्वाद्चक्रगजसंयमनाङ्कशश्रीः श्वेताम्बराभ्युद्यमङ्गलबालद्वी । श्रीदेवस्ररिसुगुरोर्भुकुटिर्ललाटपटे स्थितिं व्यतनुत प्रथमावतारम् ॥

5 तदनु नयसारभट्टमाहूय प्रेषितः। स दिगम्बराग्रे गत्वा जगौ-

(७८) दिगम्बरिशोमणे! गुणपराश्चुको मास्म भूगुणग्रहफ्लं हि तत् वसति पङ्कजे यद्रसः। ततस्यज मदं कुरु प्रशमसंयतान् खान् गुणान् दमो हि मुनिभूषणं स च भवेत् मदो व्मत्यये॥

(७९) नास्माकं हृदि दर्पसर्पगरलोद्गाराः स्थिति तन्वते न्यत्कारं च न शासनस्य कलयाऽप्यालोकितुं शिक्षिताः। तत्तूर्णं समुपेहि सिद्धन्यतेरग्रे हरिष्यामहे तीक्ष्णेर्युक्तिमहोषधव्यतिकरैस्त्वज्ञण्डकण्डूं वयम्॥

यदि तव वादेच्छा तत् श्रीपत्तने वज । तत्रावयोर्वादः । इत एकदा माणिक्यं दृष्ट्वा दिगम्बर आह-

(८०) श्वेताम्बराः कलितकम्बलयष्टयोऽमी गोपालतामविकलां मुनयो वहन्ति । उच्छुङ्खलं विचरतां भुवि निर्गुणत्वात् युष्मादशामनदुहां परिरक्षणाय ॥

(८१) तथा—नग्नैर्निरुद्धा तरुणीजनस्य यन्मुक्तिरत्नप्रकटं रहस्यम् । तिर्देक वृथा कर्कशतर्ककेली तवाभिलाषोऽयमनर्थमूलः॥

इतः स शकुनैर्वार्यमाणोऽपि श्रीपत्तनं प्रति चचाल । पूर्वं सम्मुखा श्चत् जज्ञे, विडाली दृष्टा उत्तरिता च, कृष्णसर्पः सावइ जगाम । एवं शकुनैर्वार्यमाणोऽपि पत्तने गतः । नृपद्वारे प(ख)डपानीयं चिक्षेप । देव ! मया सह
वादः कार्यताम् । अहं सिद्धचक्रवर्त्तीति विरुदं न सहे । विवेकचृहस्पतिर्गूर्जरत्रेति च नरसमुद्रं पत्तनं च-एतानहं
20 न मन्ये । विद्वांस आहूयोक्ताः । देव ! न स कोऽप्यिक्त पुरे योऽनेन सह वादं कुरुते । तैस्सवैरिप्युक्तम्-देव !
देवाचार्यान् विना कस्यापि शक्तिर्नास्ति अम्रं जेतुम् । तदनु नृपेणाहूय श्रीसङ्को भणितः—यत्तथा कुरुत यथा
श्रीदेवाचार्याः कर्णावत्याः समायान्ति । श्रीसङ्कोन विज्ञप्तिका प्रहिता, आप्तपुरुषाश्चानेतुम् । तैः खरूपमर्पितम् ।

(८२) तत्र-गुणचन्द्रजयांजनतः प्रवादिनकाकुले भवाम्भोधौ। त्वं वत्स कर्णधारो जिनशासनयानपात्रस्य ॥

(८३) देवाचार्यवेलात् युक्तः शासनस्य किलाईताम्। प्रभावनासरोजाक्ष्याः पाणिग्रहमहोत्सवः॥

स्वरूपं विलोक्य ग्रुभिद्देने ग्रुभशकुनानुक्र्ल्यात्पत्तनोपिर चेलुः।

(८४) नयनविषयं यातश्चाषः श्चतं शिविशन्दितं विषमहरिणश्रेणी हर्षात् प्रदक्षिणमागता । तुहिनकिरणक्षेत्रे भानुर्महोदयमाश्चितः प्रकृतिमृदुलो वायुः पृष्ठानुगश्च व्यजृम्भत ॥

कमेण पत्तने प्राप्ताः । नृपेण प्रवेशोत्सवः कारितः । कुमुदचन्द्रेण लश्चां दत्ता बारही परावर्त्तिता । भाण्डा-गारिककपदिनं विना शल्यहस्तं बाहुकनामानं मन्त्रीश्वरं बाहुडदेवं च विना । तदा कुमुदचन्द्रेण नृपसं भातुर्म-

¹ पक्षे बृहस्पतिबलात् (-िटप्पणी)।

***	11313131	
यणलदेच्या अम्रे उक्तम-अहं जयकेशिनरेश्वरस	पेयस्तर्व आतुः । इतः करणे ख-खमतख्यापनाय पत्रं लेख-	•
यितुं गतौ । इतो गांगिलपण्डितेन श्रीदेवस्रीनुहिक्य	हासं कृतम्।	
(८५) वेषः कोऽपि तुसब्कसन्त	तिभवः कक्षान्तरे लम्बित-	•
• इक्षायामाश्रयते गता	ग्रुकपद्योर्जीणींर्णकापोद्दलः।	
अन्धानामिव यष्टिका व	रतले मण्डं समुल्लीतं	5
	नमलं यद्वस्रखण्डावृतम् ॥	
. (८६) दन्तानां मलमण्डलीपरि		
कत्वा भैक्षमजिक्रिय	गमविरतं शौचं किलाचाम्लतः।	
नीरं साक्षि शरीरशुद्धि	वेषये येषामहो कौतकं	
तेऽपि श्वेतपटाः क्षित	श्विरपुरः काङ्क्कन्ति जल्पोत्सवम्॥	10
ततः प्रभुराह-(८७) यादोऽङ्गशोणितकषायित	चीवराणां सन्मांसभक्षणविचक्षणदक्षिणानाम्।	
विद्याचिकायजननिन्दनक	विदानां पावित्यमुत्तममहो द्विजसत्तमानाम्॥	
(८८) एतस्याः कुक्षिकोणे विद	धति वसितं कोटयः खर्गधान्ना-	
	दे तनुभृतो वैतरण्यास्तरन्ति।	
		15
	गुणमि निविडं ताडयन्त्युग्रदण्डैः॥	
इत्युक्त्वा पौषधा(?) त्रृपेण गांगिलस देशपट्टी द		
इत्युक्तवा पापपा(र)श्रुपण गागिरत प्रशाहा प	मे वदतु वदतु वादी विद्यते यस्य शक्तिः।	~
(८९) इह रुपातसमाया बाहुरू द्वाहाता	णे जलिंघवलयमध्ये नास्ति कश्चिद्विपश्चित्॥	
(९०) बृहस्पतिंस्तिष्ठतु मन्दबुद्धिः	गरन्दरः विं करने नगरः ।	20
(१०) बृहस्पातास्तष्ठतु मन्दवाद्	संहे नैवाक्षरं वेत्ति महेश्वरोऽपि॥	
	सह नवादार वारा महत्वराज्य ॥	
श्रीदेवाचार्यैः कुमुदं प्रति-		
(९१) न लाभयामी ललना न भ	ज्यं सुगन्धिसर्पिः ष्ठतसुष्णमद्मः । स्वशासनोद्योतकृते च कुर्मः ॥	
		25
स्व-स्वमतख्यापनाय पत्रकमलेखि । कुमुदेनोक्तम		23
(९२) केवलिहुओ न भुंजइ चीव	र्सहियस्स नित्थ निवाणं।	
इत्थीहुआ न सिज्झइ मर	ामय कुमुदचन्दस्स ॥	
देवाचार्येणोक्तम्-	0 0 0 0 0 0 0 0 0 0 0 0 0 0 0 0 0 0 0 0	
(९३) केवलिहुआ वि मुजइ,	वीवरसहियस्स अत्थि निवाणं ।	30
इत्थीहुआ वि सिज्झइ		30
गूर्जरत्राया विवेकबृहस्पतित्वम्, नृपस्य सिद्धचा	क्रेत्वम्, पत्तनस्य नरसम्बद्भत्वमसहन् विवदते । सं० ११८२	
वर्षे वैद्याखपूर्णिमादिने वादहेतोराहूतौ । दिगम्बरः पूर्वं गतः । श्रीदेवस्तरिः शुभशकुनैः प्रेर्थमाणः पश्चाद्भतः । क्रमेण सभायां गताः । क्रमुदेनाशीर्वादो दत्तः, प्रश्वभिश्च । तदनु गद्यपश्चशती उपन्यस्तते, तस्याः प्रत्युत्तरं पश्च-		
क्रमेण सभायां गताः । कुमुदेनाशीवादो दत्तः, प्रभु	भिश्च। तदनु गद्यपञ्चश्चता उपन्यस्यत, तस्याः प्रत्युत्तर पञ्च-	_
श्रत्या दीयते । पुनर्गद्यपश्चशती उपन्यसते । एवं त	त्र पञ्चिवंशतिदिनानि विवादो जज्ञे । कुमुदो वारत्रयं निग्रह-	7

Traffic Company Matters Coupling for the Arts

15

स्थानमायातः। ऋमेण सर्वेर्नृप-राज्ञीप्रमुखैर्मानितम् कुमुदचन्द्रो हारित-इति कृत्वा देशानिष्काञ्चितः। कुमुद-स्थाशोकवनिकां गतस्य हृदयास्फोटो जातः। राज्ञा तत्सर्वस्वमादाय प्रभूणां प्रासृतीकृतम्।

(९४) च्यारि जोड नींसाण हय हिंसइ पंच पंच्यासी,
इग्यारह सइं सुहड सीस सइं दुन्नि च्छिआसी। '
बलदह सइं चिआरि कम्मकर पंचछहुत्तर,
अत्थ लक्ख पणवीस दम हुइ लक्ख बहुत्तर।
ता चमर छत्त तुहर बिरुद सुखासण वाहण लियओं।
बडगच्छतिलइ पहुदेवस्रि नग्गओं वलि नग्गओं कियओं॥

श्रीगुरुं प्रति नृपः प्राह-भगविन्दं भवद्भिरेवार्जितं तत् गृह्णीत । स्रिराह-

(९५) भुश्रीमिह वयं भैक्षं जीर्णवासो वसीमिह । दायीमिह महीपीठे कुर्वीमिह धनेन किम् ॥ नृपेण महोत्सवपुरस्सरं पौषधागारे स्रयः प्रेषिताः ।

(९६) श्रीसिद्धपुरे रम्ये सिद्धन्तपो देवस्तरिग्ररुवचसा । तुर्यद्वारं चैत्यं कारितवान् तुर्यगत्यर्थम् ॥ [*श्रीवादिदेवस्तरिसदुपदेशवासितचेतसा सिद्धराजजयसिंहदेवेन सं० १८८३ वर्षे पत्तनमध्ये श्रीऋषभप्रासादः

कारितः ८४ अङ्गलऋषभविम्बयुग् राजविहारनाम्ना ।]

॥ इति देवाचार्यप्रबन्धः ॥

१७. आरासणीयनेमिचेत्यप्रबन्धः (P.)

९५६) अथैकदा आरासणपुरात् महं गोगासुतः पासिलो दौर्वल्यात् कूपिकामादाय पत्तनमाययौ । तत्र राय-विहारे देवं नत्वा विम्वमपने लग्नः । इतः ठक्करछाडापुत्र्या देवकुलमागतया दृष्टः पृष्टश्र-भ्रातरेवं विम्बप्रमाणं गृह्णासि, किं नूतनमेवंविधं करिष्यसि ?। तेनोक्तम्-भगिनि ! यदि कार्यते तदा प्रतिष्ठायामागन्तव्यम्। एवमस्तु। 20 स खपुरे गतः । विम्बरचनेऽन्यमुपायमलब्ध्वा, अम्बाविदेवीप्रासादे गत्वा लङ्कितुमारेभे । दश्मिरुपवासैर्देवी प्रत्यक्षीभूयोवाच-वरं वृषु । तेनोक्तम्-देवि ! तथा कुरु यथाऽहं नृपविहारसमं प्रासादं कारयामि । देव्या स्थान-मक्तम्-खानिर्दर्शिता । परं पोडशप्रहरैस्ते मनोरथः सेत्स्यन्ति, तदनु न । इतो लब्धवरः सङ्घेन सह वजन् बुद्ध्या चतुष्पथमध्ये उपविष्टः। इयन्ति दिनानि देवीनिमित्तम्, अतः परं सङ्घोपरि। कथम् १। यदि सर्वः कोऽपि स्वतो जनेन स्वसम्रदायेन पोडशप्रहरान सानिध्यं करोति तदा भुक्षे नान्यथा । सङ्घेन मानितम् । पारणकादनु जनं 25 सम्मील्य खनौ गतः । खननं प्रारब्धम्-प्रहरत्रयं जातं खनताम् । अतस्तस्य गुरवस्तनुगमनिकायां प्रश्चिताः । पासिलेन वन्दिताः। तैरुक्तम्-पूर्णा मनोरथाः ?। तेनोक्तम्-देवगुरुप्रसादात् । देवी रुष्टा मम प्रसादो न किन्त्वे-तेपाम् । सत्वरं निःसरत । खानिः पतिता । दीनारसहस्र ४५ विमली निर्गतः । इष्टिकामयः प्रासादः प्रारब्धः । विम्बं कारितम् । चन्द्रमा सहस्र २ अवशिष्यन्ते । चिन्तितं विम्बग्रुपवेशयामि । इति ध्यात्वा पत्तनं गतः ठकुर-छाडावासे प्रतोल्यां स्थितः । प्रवेशमलभमानो महता स्वरेण पूत्करोति । ठकुरेण मध्ये मोचितः । नमस्कारे 30 कृते ठक्करेणोक्तः-कृतः समायातः ?। छाडापुत्री बाई हांसी तस्या मीलनाय। ठक्करेण पुत्री आहृता। बत्से 🛴 तव श्राता । तेन नमस्कृत्योक्तम्-मां न वेत्सि ?, राजविहारे विम्बं मपन् दृष्टः सोऽहम् । मया विम्बं कारितम् , प्रतिष्ठायामागच्छत । ततः श्रीदेवस्रिरिभिः समं श्रेष्ठिपुत्री चलिता, पित्रा प्रेषिता । तत्र प्रतिष्ठा जाता ११९३ । तत्र तया शेषं सम्पूर्णं कृतम् । मण्डपस्तया भगिनीत्वेन कारितः । लक्ष ९ द्रव्यलागिः । स च मेघनादः ।

^{*} एकसिमन्यादर्शे एषा कोष्ठकगता पंक्तिः प्राप्यते ।

(९७) गोगाकस्य सुतेन मन्दिरमिदं श्रीनेमिनाथप्रभो स्तुङ्गं पासिलैसञ्ज्ञकेन सुधिया श्रद्धावता मिन्नणा।
 शिष्यः श्रीमुनिचन्द्रस्रिससुरोर्निर्यन्थर्वेडामणे विदीन्द्रैः प्रभुदेवस्रिरगुरुभिनेंमेः प्रतिष्ठा कृता॥
 (९८) रामनन्दशशिमौलिवत्सरे माधवे च दशमीतिथौ सिते।
 वाक्पतेः सुदिवसे प्रतिष्ठितोऽरासणे पुरवरे शिवाङ्गमः॥
 ॥ इति आरासणसत्कनेमिचैत्यप्रवन्धः॥

१८. फलवर्डितीर्थप्रबन्धः (P. Br.)

६५७) अथैकदा श्रीदेवाचार्याः शाकंभरीं प्रति विजहुः । अन्तराले मेडतकपुरपाट्यां फलवर्डिकाग्रामे मासकल्पं स्थिताः । तत्र पारसनामा श्राद्धस्तेन जालिवनमध्ये श्रीपार्श्वतीर्थं प्रादुःकृतम् । तेनैकदा वनं निरीक्ष्यमाणेन 10 जालिवनमध्ये लेष्ट्रराशिर्द्धः । अम्लानशितपत्रिकापुष्पेः पूजितः । लेष्ट्यो विरलीकृताः । मध्ये बिम्बं दृष्टम् । तेन श्रीदेवस्रिभक्तेन गुरवो विज्ञापिताः । तैः स्रिभिर्धामदेव-सुमितिप्रभगणी वासान् दन्त्वा प्रहितौ । धामदेव-गणिना वासक्षेपः कृतः । पश्चादेवगृहे निष्पन्ने श्रीजिनचन्द्रस्रयः खशिष्याः वासानपियत्वा प्रहितौ । वामदेव-गणिना वासक्षेपः कृतः । पश्चात्तत्र प्रासादेऽजमेरीयश्रेष्ठिवगों नागपुरीयो जाम्बंदवर्गः समायातः । ते गोष्टिका जाताः । संवत् ११९९* वर्षे फागुणशुदि १० गुरौ विम्बस्थापनम् । संवत् १२०४ वर्षे माहसुदि १३ शुके कलश्चवारोपः ॥ 15 ॥ इति फलवर्डिकातीर्थप्रवन्धः ॥

१९. मन्निसान्तप्रबन्धः (B. Br.)

१५८) श्रीपत्तने जयसिंघदेवस्य मन्नी सान्त्नामा सर्वमुद्राधिकृतः श्रीदेवस्रिणां भक्तः। तेन धवलगृहानुकारी आवासः कारितः। गुरवोऽवलोकनायाकारिताः। मन्निणा अग्रेसरेण भूत्वा दिश्तः। पृष्टम्-प्रभो ! कीहगा-वासः !। इतः शिष्यमाणिक्येनोक्तम्-यदि पौषधशाला भवति तदा वर्ण्यते। मन्निणा क्षमाश्रमणं दत्तम्। एवा 20 पौषधशालैव भवतु। तद्तु सा मुख्यपौषधशाला जाता। तत्र पट्टशालायामुभयोः पार्श्वयोरादर्शाः पुरुपप्रमाणा आसन्। श्रावका धर्मध्यानादनु यथा वक्ताण्यवलोकन्ते। तथा वांका-निहाणाभिधानयोग्रीमयोद्धौ प्रासादौ कारितौ। एकसात्त्वपनं कृत्वा मुख्या गव्यृतिमितया द्वितीये गम्यते। एकदा मन्निणो राज्ञा सहाऽप्रीतिर्जाता। मन्नी रूसणके मालवदेशं प्रति सपरिच्छदोऽचालीत्। राज्ञा ज्ञातमेषो मध्यवेदी। सैन्यं सत्वरमानियध्यति। छन्ना नरा राज्ञा तेन सह प्रेषिताः। तत्र गतोऽसौ किं कुरुते। मन्नी उज्जयिन्यां गतो नृपमन्दिरे, परं नृपस्य नमस्कारं न 25 करोति। पार्श्वस्थरुक्तम्-मन्निन् ! नमस्कारं [कथं] न कुरुषे !। देव ! देवं मत्वा श्रीवीतरागो नमस्कृतः, गुरुत् भणित्वा मुसाधवः, नृपस्तु जयसिंघदेवः। अन्यस्य कस्य श्रिरो न नाम्यते। राज्ञोक्तम्-मन्निन् ! मुद्रां गृहाण । देवास्माकं स्वामी केनापि कारणेन रुष्टोऽस्ति। कल्येऽप्यस्मानाकारियध्यति। तदनु राज्ञा गौरवेण स्थाप्रितः। छन्नपुरुषेः पत्तने गत्वा नृपाय निवेदितम्। नृपेण सत्वरमाकारणं प्रहितम्। मन्नी नृपं मुत्कलाप्य चलितः। मालव-मेवाडसन्यौ आहडमामे महं० सान्त्योग्यं पाश्रात्यप्रहरे मृत्यः। मन्निणा तदैव क्षामणाद्यं कृत्वा 30 पुत्रस्य शिक्षां दन्वाऽनशनं गृहीतम्। पुत्रीवयज्ञ् तथा प्रदत्तम् । तात ! किमवशिष्यते ! एष्टे, वत्से ! तपोधना-दर्शानाईन्यन्न किमपि। तथा वण्ठस्तपोधनवेषं कारियत्वाऽग्रे नीतः। उक्तम्। तद्दर्शनान्मित्रणा हपेन नमस्कृतः

¹ BR कारापितं। 2 BR बिम्बप्र । 3 BR लेषूनि विरलीकृतानि । 4 BR सेठिवर्गो । 5 BR जाबड । * P 1146 ।

तन्मुलान्नमस्कारं प्राप दिवं ययौ । स तथैव समुद्रो निवेश्य स्थितश्रलनवेलायामुक्तः-रे वेषं मुश्च, खकर्माणि कुरु । तेनोक्तम् यत्प्रसादानमञ्जी सान्तू चरणयोर्निपतितस्तं वेषं न मोक्ष्ये। क्रिमेण पत्तने नीतो गुरूणां पार्श्वे दीक्षितः। नृपेण पुत्रस्य महं ॰ देवलस्य महन्मानोऽदीयि ॥ इति मन्त्रीसान्त्रप्रवन्धः ॥

२०. मन्त्रिउदयनप्रबन्धः (P.)

§५९) श्रेष्टीबोहित्थपुत्र अश्वेश्वरः । पुत्रयक्षना[ग]-पुत्रवीरदेव-पुत्रउदयनः । तत्पुत्रो मन्त्रिगुरुर्वाहडदेवः ।

श्रीकरणम् । लाटाह्वयदेशकरणमपि तस्य अर्पयति सा नरेन्द्रो, येन वशेकरणपश्चकमनुष्यः (१) ॥ मरुखल्यां जावालिपुरसमीपे वाघराग्रामे श्रीमालज्ञातीय उदयनो वणिक् । भार्या धवलकक ठ० साम्बपुत्री सुहादेवी । स कूपिकां करोति । अन्यदा घृतकूपं मस्तके कृत्वा धनुरादाय मेघान्धकारयामिनीं विभातप्रायां मत्वा रामशेनोपरि चचाल । इत एकसिन् क्षेत्रे कलकलं श्रुत्वा, धनुरारोप्य, पृष्टवान्-के यूयम् ? । अस्य क्षेत्रधनिकस्य 10 कमा । उदयनेनोक्तम्-असीव स्युः किं वा अन्यस्थापि ? । भवन्ति, परं स्थानान्तरिताः । मम क सन्ति । तैरु-क्तम्-आञ्चापल्ल्यां कर्णदेवोऽपरः शालापतिस्तिहुणसीहः। स ततः श्रुत्वा पश्चाद् व्यावृत्त्य, महिलामुत्थाप्य, सुत-बाहड-चाहडान्वितः आशापर्क्षीं गतः । तत्र चैत्ये सुंडु मुक्तवा देवं नन्तुं मध्ये गतः । तत्र तिहुणसिंहस्य पत्नी चेटीवृता देवं नन्तुमागता । अपूर्वान् दृष्ट्वा वन्दनां चकार । पृष्टं कस्यातिथयः ? उदय०-आदौ देवो दृष्टः, पश्चा-चम् । ततः खसार्थे स नीतः । सा घरं (गृहं) मध्ये गता । द्वारपाल उदयनं न मुश्चित । प्रतोल्युपरिस्थेन शाला-15 पतिनोपरि आनायितः । उदयनेन नमस्कार् कृते, पृष्टम्-कुतः प्राघुणकाः ? । मरुखल्या भवन्तं ध्यात्वा वर्तना-यागताः । भन्यं जातम् । भोजनाय सकुदुम्बो [उपवे]शितः । भोजनादनु पृष्टम्-मध्ये स्थास्यथ पृथग्वा ? । तेनो-क्तम्-पृथग् । स्तोकमपि स्थानमर्प्यताम् । तेन गृहद्वारेऽपवरको दर्शितः । तत्र भूमिशुद्धिं कृत्वा यावद्वारं ददाति तावित्रधानं निर्गतम् । स विलसति । तन्नुपस्य सारा जाता । शालापतिराहृतः । याचितं तत् । देव ! मदीये [गृहे] मारुक एक आगतः । तस्य गृहे किञ्चिनिस्सृतम् । तदहं न वेद्यि । ततः स नरैर्थत्वा नीयमानो निरो-20 धार्थं शून्यं हट्टं विवेश । तत्रापि निधानं दृष्टम् । राजकुले गतः । राज्ञा पृष्टम्-रे निधानं दृश्य । तेनोक्तम्-देव ! बुधुक्षितेन भक्षितम् । ततो गुप्तौ क्षेपितः । स यदा शरीरचिन्तायां याति तदा निधानमेव विलोकयति । अन्यदा नृपेणोक्तम्-रे अर्पयसि ? । तेनोक्तम्-कियन्ति दर्शयामि । राज्ञोक्तम्-एतत्किम् ? देव ! यत्र यत्र यामि तत्र तत्र निधानानि । दर्शय । तेन ५-१० दर्शितानि । तं भाग्यवन्तं ज्ञात्वा खमुद्रा दत्ता भूपेन, राणिमा च ।

§६०) एकदा मन्त्रिपत्नी विनष्टा । वाग्भटेनाचिन्ति-मम पिता दुःखितः । कापि कन्यां विलोकयामि । 25 वायडपुरे कोऽपि व्यवहारी तस्य सुता बृद्धाऽस्ति । सा वाग्भटेन खयं तत्र गत्वा याचिता । तेनोक्तम्-कस्यार्थे ? किं तेन ? ममैव देहि । तेन दत्ता । इतो वाग्भटदेवेन राणक उक्तः-तात ! वायडपुरे जीवितस्वामिनं श्रीमुनि-सुत्रतमपरं श्रीवीरं नन्तुं चलत । सङ्घं सम्मील्य ततो गतः । तत्र गत्वा, पूजां विधाय, भोजनवारा प्रारब्धा । इतो वाग्भटदेवसङ्केतात् कोऽपि स्थालं न मण्डयति । मित्रणोक्तम् स्थालानि किं न मण्ड्यन्ते ? । यदि सङ्घवचः प्रमाणीकुरुत तदा सर्वः कोऽपि अनक्ति । आदिशत । यत्परिणयनं मन्यध्वम् । मन्त्रिणोक्तम्-सप्तति वर्षाणि ³⁰ जातानि । अतः कोऽवसरः ? अवसरं विना न शोभते । अतो वाग्भटेनोक्तम्−ज्ञातिर्वलीयसी । उदय०**−क⊹क्न्यां** प्रयच्छति । सर्वं निष्पन्नम् , भवतां वांक्यमेव विलोक्यते । ततः परिणीतः । तस्याः सुतो रायविङ्वार आम्बेडो जातः । उदयनेन खङ्गारो जितः । पश्चान्मेलगपुरे साङ्गणडोडीआकेन सह युद्धं जातम् । घाताः लगाः । तत्राभि-ग्रहद्वयम् रात्रु अयोद्धारे द्विवेलं भोजनम्, श्रीमुनिसुत्रतप्रासादोद्धारे स्नानम् । अभिग्रहद्वैविष्यं सत्यास्य कालं

कृत्वा सुगतौ प्राप्तः ॥ इति मन्त्रिउद्यनप्रवन्धः ॥

२१. अथ वसाह आभडप्रबन्धः (B. BR. P.)

६२) श्रीअणहिल्लपुरे नागराजंश्रेष्ठी कोटीध्वजः। तस प्रिया लीकादेवी। अन्यदा श्रेष्ठी आपन्नसंत्त्वायां पत्यां विद्युत्तिकातो यतः । तद्यु नृपपुरुषे गृहसारमपुत्र इति कृत्वा गृहीतम्। श्रेष्ठिनी धवलकके पितृगृहे गता। तत्र तस्या अमारिदोहदो जज्ञे । स पित्रा पूरितः। क्रमेण प्रत्रो जातः। तस्याभयकुमार इति नाम दत्तम्। स क्रमेण पश्चवर्षायो जातः। पठनाय क्षिप्तः। अध्ययनं करोति। अथैकदा बालकैर्निस्तात इति कथितः। स मातरं उपप्रच्छ-मातः! को मे तातः । तया खपिता दर्शितः। तेनोक्तम्-एष ते, मम क ? तया खमावे उक्ते, तेनोक्तम्-पत्तने यास्यामि, अत्र न स्थास्यामि। इत्याग्रहमादाय स्थितः। मातामहेन सम्प्रेषितः। पत्तने गतः । तत्र खगृहे स्थितः। क्रमेण व्यवसायः प्रारव्धः। लाङ्कलदेवी भार्या परिणीताः। किमपि निधानं पूर्वजसर्कां लेमे। व्यवसायात् पितृतुल्यो जातः श्रिया। सुतत्रयं जातम्। अथ कर्म्मदौर्वल्यात् श्रीर्गन्तुं लग्ना। मन्दं मन्दं निर्द्रनत्वमाययौ । पत्नी पुत्रानादाय पितृगृहं गता। आमडोऽप्येकाकी मणिकारहहे घुर्घरकान् घर्षति। यवानां माणकं 10 लभते। तेन चृत्तिः। । तं पीष्य स्वयं पकरवाऽश्वाति। एवं दुरवस्थां गमयति। यतः-

(९९) वार्द्धिमाधवयोस्सौधे प्रीतिष्रेमाङ्कधारिणोः । या न स्थिता किमन्येषां स्थास्यति व्ययकारिणाम् ॥

एकदा कुलगुरूणां हेमाचार्याणां पौपधागारे गतः । जनान् परिग्रहप्रमाणं गृह्णतो वीक्ष्य सोऽपि ययाचे ।
गुरुभिर्द्रम्मान् पृष्टः । योग्यतां ज्ञात्वा टिप्पने द्रम्मलक्ष ९ कृताः । एवं शेपवस्त्नि । टिप्पनमपितम् । तेनी-15
क्तम्—कस्यापि पुण्यवत इदम् । ममैवं योग्यता निह । गुरुभिरुक्तम्—भिवण्यति । शेपं धम्में देयम् । क्रमेण द्रम्मप्रश्चकं ग्रन्थों कृतम् । एकदा चतुःपथान्तरे ‡एकामजां दीनार ५ जग्रह । गले आभरणं सार्थे क्रीतम् । तस्य पापाणस्य दलानि वैकटिकात् कारितानि । क्रमेण धनी जातः । कुटुम्बं मिलितम् । तपोधनानां विहरणे घृतघट १ दिनं प्रति । तथा सत्राकारस्त्ववारितः । नित्यं प्रासादेषु पूजा । सदैन साधिर्मिकाणां वात्सल्यं सत्कारः ।
वर्षं प्रति सकलदर्शनसङ्घार्च २ । तथा पुल्तकान्यनेकशः लेखितानि । जीणोद्धाराश्च कारिताः । बहूनि विम्वानि २०
कारितानि । एवं सङ्घगुष्ट्यतामासाद्य वर्ष ८४ प्रान्तेऽनशनमादातुकामः पुत्रपश्चकं स्वजनानप्याहृय प्रोवाच—हे वत्साः! धर्मविहकां वाचयत । वाचितायां 'मीमप्रीद्राम ९८ लक्ष ।' इति अङ्कं श्चत्वा वसाहो विषण्णः । ज्येष्ठसुतेन आसपालेन व्याहृतम्—पूर्वं तात ! मा विपीदत । यदस्माभिः सकलोऽशों व्ययीकृतः । अद्याप्यादिश्यताम् । भव-त्यसादेन सर्वमिति । वसाहः प्राह—रे वत्साः! जनके मिय गर्मिश्वते विपन्ने सर्वसं नृपेणानम् । पुनर्जातेन पुन-राजैतं पुनर्गामितम् । महद्वःत्वमनुभृतम् । पुनर्श्वे जातेऽहं कृपणो जातः । कोष्यपि न पूरिता । पुत्रकक्तम्—तात ! २० प्रक्षास्तत्कालमानीय सप्तक्षेत्र्यां व्ययिताः । अष्टौ पुनर्थमेनव्यये । एवं पुण्यानि कृत्वा सर्गभाग् जातः । पुत्राणां मध्ये द्रौ माहेश्वरिणौ त्रयः श्रावकाः सञ्चाताः । ॥ इति आभडवसाहप्रवन्यः ॥

1.B गूर्जरवामण्डले श्रीपत्तने श्रीमालज्ञातीयो नागराज । 2 B दिवं ययो । 3 B पंचवर्षदेशीयः । 4 B अत्र मातुःशाले र् 5 P नास्ति । 6 B पाणिग्रहणं क्रमेण जातं लाललदेवी नाम कृतम् । 7 B'पूर्वजक्रमागतं च । 8 P नास्त्वेतद्वावयम् ।
† एतद्न्तर्गतः पाठः P नास्ति । ‡ एतद्न्तर्गतपाठस्थाने B आदशें एतादशः पाठः-'एका अजा विकेतुमायाता । तस्याः कण्ठे पापाणोऽस्ति । स इन्द्रनीलमयो वसाहेनोपलक्ष्य मूल्यं पृष्टम् । पंच दीनारा उक्ताः । तेनापिताः । कण्ठाभरणं गृह्णत् वारितः । स अजामादाय
गृहे गतः म पाषाणोऽपि वैकिटकाय दिश्तः । अर्द्धमुक्त्वा विदारितः । लक्ष्यमूल्या मणयः कृताः । अर्द्धमर्द्धं कृत्वा गृहीताः । क्षमेण
धनवास्त्रयेव जहे ।' 9 B भीमपुरी । 10 B नृपेणेत्वरं गृहीतम् । 11 B ०क्रत्वा ८४ वर्षसम्पूर्णेऽनशनं प्राप्य ग्रुभध्यानाः

द्विपेदे । स्वर्गमगात् । पु॰ प्र॰ स॰ 5

Committee Alle

२२. मं० सज्जनकारितरैवततीर्थोद्धारप्रवन्धः (P.)

६६२) अथ सिद्धराजे राज्यं शासित श्रीमालज्ञातीयवान्धवाः ३—सार्जण—आर्म्बा—धवैलाः । इतः श्रीजय-सिंहेन सजनः सुराष्ट्रायां व्यापारे प्रहितः । श्रीरेवते तीर्थं नन्तुं गतः । प्रासादो जाजुङ्यमात्येन शेलमयः प्रारच्धः । अमात्यो मालवावासी दिवं गतः । १३५ वर्षाण्यन्तरे गतानि । ततः सजनेन कर्मस्थायः प्रारेमे । वर्षत्रयोम्वाहितं द्रव्यलक्ष २ व्ययीकृत्य प्रासादः कारितः । कियन्ति वर्षाण्यन्तरे गतानि । तत्रत्यान् इभ्यानाकार्यः प्रोक्तम्—मया प्रासादः कारितः । पुनर्नृपो द्रम्मान् यदि याचते तदा भवद्भिरङ्गीकार्यः । तैरमन्यत । इतथः सिद्धेशः सोमनाथयात्रायामागतः । सर्वे व्यापारिणो मिलनाय आगताः । सजनो नाययो । नृपेण तदनागमने कारणं पृष्टम् । तैरुक्तम्—देव ! तेन द्रव्यं विनाशितमतः स कथमायाति । ततः सजनस्याकारणं गतम् । स आयातः । नृपेणोक्तम्—देव ! तेन द्रव्यं विनाशितमतः स कथमायाति । ततः सजनस्याकारणं गतम् । स आयातः । नृपेणोक्तम्—तत्रागम्यते तदा दर्शयसि । देव ! दर्शयामि । नृपस्तु तत्र गतः । पृष्टः—काले । उपर्यागच्छत । तथा कृतम् । प्रासादे नेमिं नत्वा विहरायातः । पृष्टम्—केनात्र प्रासादः कारितः ? । सजननोक्तम्—श्रीसिद्धेशेन । मम तु शुद्धि[रिप न] कथं जातः ? । देव ! इदमुद्धाहितम् । राज्ञोक्तं न मन्यते । ममादेशं विना कथं कारितः । द्रम्मानानय । आनयामि । कथम् ? । देव ! अत्रत्येनभ्यवर्गणाङ्गीकृतमिता ।द्रम्मान् देवो पृह्वातु, पुण्यं वा । राज्ञा पुण्यमङ्गीकृतम्, परं मन्नाम्ना प्रासादोऽस्तु । देव ! त्वन्नाम्नैव, मम दासस्य किम् । कृत्वेण तुष्टेन पुनर्व्यारोरो दत्तः । अवलोकनासिखरमारुद्ध दिशावलोकनं कृतं सिद्धेशेन । चारणेनोक्तम्—

(१००) मइं नाईउं सिद्धेश तउं चडियओ उज्जिलसिहरि। जीता च्यारइ देस अलीउं जोअइ कर्ण्ये ।।

ततः उत्तरितः।

20

(१०१) जाकु अमात्य-सज्जनदण्डेशाचा व्ययीकरन् यत्र । नेमिभुवनोद्धृतिमसौ गिरनार्गिरीश्वरो जयति ॥

(१०२) नाखानि खानितटतो घटितो न टङ्कैर्नास्त्रि स्त्रकलया प्रमितो न मानैः। नाचार्यमञ्जकलया कलितप्रतिष्ठो यः खेन विश्वकृपया प्रभुराविरासीत्॥

२३. महं आंबाकारितगिरिनारपाजप्रबन्धः (P.)

१६३) अत्र धवलेन प्रपा कारिता। महं आम्बाकस्य श्रीकुमारदेवेन सुराष्ट्राच्यापारो दत्तः। तेन व्रजता महं 25 बाहडदेवो विज्ञप्तः। तत्र गतोऽहं रैवते पद्यां कार्यामि। मित्रणोक्तम्-कार्या। पश्चात्तेन तत्र पद्या कारिता। व्यथे भीमप्री[य]द्रम्मलक्ष ६३। इतः कुमारेशो यात्रायामागतः। साङ्कलीआपद्यायां चितः। वलमानो बाहडदेवेन सुखासने समारोप्याध आनीतः। केनेयं पद्या कारिता १, पृष्टं देवेन। तेनावादि मया। कदा १। ततः स्वरूपं प्रोक्तम्। तुष्टः [सन्] आम्बाकस्य व्यापारो दत्तः।। इति पाजप्रबन्धः।।

(P.) सङ्ग्रहे सोनलवाक्यानि ।

30 १६४) ष(स)ङ्गारे जीर्णदुर्गाधिपतौ उदयनेन हते तिस्रया सोनलदेवी जगाद-(१०३) षडहडीयां षंगार धणीविह्नणां धूलहर । गया करावणहार जाइसिइं.......। (१०४) पइं गरूआ गिरनार काहउं मिन मत्सर धरिउं। मारितां षंगार एकू सिहर न ढालिउं॥

- (१०५) बीनलिआ बीजी वार सोरठ म आवे प्राहुणउ। अम्मीणउ भंडार लाई तई लूसी लीउ॥
- (१०६) मन तंबोल म मागि कंषि म ऊँघाडई मुहिहिं। देउलवाडुइ सागि तउं पंगारिं सउं गयउं॥
 - · (१०७) जेसल मोडि म बाह बलि बलि वरूए भाविअइ। नदी जिम नवा प्रवाह नवघणविणु आवई नहीं॥
- (१०८) का हउं करिसि गमार अणहिलवाडइ रूअडई। सिहरतणां गिरनार सूतांहीं सालई हीअइ॥ 5
- (१०९) बलि गरूआ गिरनार दीहू नीझरणे झरइ। बापुडली ग्जरात पाणीहरू पहुरउ पडइ॥
- (११०) राणा सबे वाणिया जेसल वडुउ सेठि। काहउं वणिजडु मांडीउं अम्मीणा गढहेठि॥
- (१११) गया ति गंगह तीरि हंस जिसी बइसता। अड्डीणइ ढंढारि बगला बइसेवउं करई।।
- (११२) अम्ह एतलइ संतोस जं पहुपाय पेलीआं। इक राणिम अन रोसु बेउ षंगारिइं सउं गयां॥
- (११३) वढी तउं वढवाण वीसारतां न वीसरइं। सोनलकेरा प्राण भोगावहिसिउं भोगव्या॥ 10

(G.) सङ्ग्रहे सिद्धराजसम्बन्धिवृत्तम्।

§६५) श्रीजयसिंहदेवेऽष्टवार्षिके श्रीकणों दिवं गतः । अष्टवार्षिक एव स सांतूमित्रणा गुणश्रेणि नीतः । कटकं कृत्वा धाराभङ्गप्रतिज्ञां चकार । मित्रणा तृतीये दिने प्रतिज्ञापूरणाय मितर्दत्ता । ततः कणिकधारायां भज्यमानायां परमारपंचशती मृता । तदनु विग्रहायालिगेन सह मन्ने विधीयमाने चारणेनैकेनापाठि-

(११४) एहे टीलालेहिं धार न लीजइं करण उत्र । जम जेहे प्रउंचेहिं जोइइ जेसलु आवतउ ॥ 15

इति श्रुत्वा बन्दीकृतस्य तस्य लेखः प्रहितः। तेनोक्तम्-पितुराज्ञया समेष्यामि। ततः पित्रा समागत्योक्तम्-वत्स! याहि। तदनु ख्रं नि.....गां विधाय गतः। सैन्ये राजा भेटितः। अत्रान्तरे जसपडहह्सी मत्तो जातः। राज्ञोक्तम्-जेसल! धाराभङ्गं विधेहि। तेनोक्तम्-देव! प्रसीद[सकल]......द्र्या। स च गजिशक्षावेदी यशःपटहं स्वीचकार। ततः सहस्राश्चतुश्चत्वारिंशन्मिताः तुरङ्गमाः पृष्टे अप्रतो रम्याः। पत्तयश्च-त्वारो लक्षा देहमोश्च.....कुर्वन्ति। प्रतोल्यां गतो हस्ती। प्रहारे दत्ते दन्तभङ्गः समजिन। ततो लत्ताप्रहारेणा- 20 र्गाला भग्ना। यदा जेसलेन लत्त्या हत्वा त्याजितः। स तदा त्रिखंड [डो (१) वभृव] यशःपटहो जेसलश्च ख्यं भ्रवौ जातौ। राजा च बन्दीकृतः। पत्तनप्रवेशे जयसिंहदेवेन राज्ञो क्तम्-निजमोक्षं विना सर्वं याचस्व। करस्थकु-पाणस्य मम भवान् कवचहीन एव गजाधिरूढस्य प्रवेशं देहि। एवसुक्ते [काष्ट १] श्चिरकां समर्प्य प्रवेशो विहितः।

६६) श्रीसिद्धराजः श्रीसोमेश्वरदेवं नमस्कर्तुं चचाल । मन्नी सांतः श्रीपत्तने मुक्तः । पंचगव्यूतप्रयाणके कृते धरापतौ मयणछदेवी अग्रे स्थिता याति । अत्रान्तरे मालवेशयशोवर्म्मणा श्रीपत्तनं वेष्टितम् । तदिप श्रुत्वा 25 श्रीसिद्धराजश्रीलत एव, न विलतः । गाढं गढरोधं भिणत्वा मन्त्रिणा दण्डो मानितः । यशोवर्म्मणा श्रीसिद्धराजयात्रा-श्रुण्यं याचितम् । ततस्तत्करे पुण्यं दत्तम् । गतो मालवेशः । ततो यात्रां कृत्वा समेतः सिद्धेशः । मन्त्री भेटनाय गतः । राजा कृद्धः । मन्त्रिणा मुद्राऽपिता । अपरो व्यापारी जातः । अस्त्रास्थ्यं चौरवाहुल्यम् । ततो लोके राज्ञोऽग्रे पूत्कृतम् । तदवगत्य राजा तत्रागत्य मानितो मन्त्री । गृहाण मन्त्रित्वम् । ततो मन्त्रिणोक्तम्—राजन् ! शृणु । कॅनापि तपस्तिना यृथभ्रष्टः कलभो वर्द्धितः । स च महावस्थाम्रपेतो यावताश्रमोपद्रवं कर्तुं लगः, तावता ३० तपस्त्री नष्टः । तदा—

(११५) नीवारप्रसवाग्रमुष्टिकवर्लयों वर्द्धितः शैशवे पीतं येन सरोजपत्रपुरके स्नानावशिष्टं पयः। तं दानासवर्मत्तपद्पदकुलव्यालीढगण्डस्थलं सानन्दं सभयं च पश्यति गजं दूरे स्थितस्तीपसः॥

एवं जातम् । राज्ञोक्तम्-पुण्यं मम कथं दत्तम्? । तेनोक्तम्-तवैकस्य पुण्यं दत्तम् । त्वं करं धारय यथा तेषां सर्वेषां पुण्यं तव ददामि । राज्ञोक्तम्-मूढ ! तव भणितेन कथं तेषां पुण्यं दत्तं याति । मित्रणोक्तम्-आभीर ! यद्येवं वेत्सि तदा तव पुण्यं मम दत्तं तत्र कथं याति । स तु मया वचनेन छिलतः । हिर्पितेन राज्ञा मित्रत्वं पुनर्दत्तम् ।।

§ ६७) तीर्थयात्रायां पंचगव्यूतमात्रेणैकप्रयाणेनाग्रभागस्थितया श्रीमयणछदेव्या श्रीजयसिंहदेवपार्श्वात् द्वासप्ततिलक्षप्रमाणो बाहुलोडकरो मोचितः । तद्नु श्रीसोमेश्वरलिंगहेतोर्हेमकोटिपूजा विहिता । पूर्णमनोरथा 10 गर्वमावहन्ती । ततो देवेनेति कथितम् —यत्कस्याश्चित्कार्पिटक्याः पिण्याकपुण्यं याचेः । सा तु नार्पयति पुण्यमिति गर्वपरिहारः ॥

- §६८) अथ मयणछदेव्या पापघटे दीयमाने कोऽपि न गृह्णाति । अत्रान्तरे विषण्णां तां कश्चिद्विजनमा जगा-देति—मातर् ! यदि भवत्रयस्य पापघटान् ददासि तदा गृह्णामि । हर्षितया तया तसे भवत्रयपापघटो दत्तः । अन्ये सर्वेऽपि विस्सिताः पप्रच्छः-त्वया किं कृतम् ?; पापघटस्यैकस्य निर्वाहो नास्ति, त्वया कथं त्रयं गृहीतम् । 15 तेनोक्तम्-अस्या जनमत्रयेऽपि पापमेव नास्ति, तत्कथं धनं न गृह्यते । सर्वेरपि मानितम् ॥
- (१६९) अथ कर्णाटदेशे पुलकेशिराजा ग्रीष्मसमये राजपाटिकायां गतः। सच्छायफिलतसहकारतरोरधी विश्वश्राम । अत्रान्तरे वनविह्नरुत्थितः। तेन दह्यमानेन दृक्षेण सह राजापि खक्षात्रधर्मभ्रंशभीत्या ज्वलितवान् । तस्य सुतो जयकेशिनामा नृपोऽभृत् । तस्य महाविद्वान् कीडाशुकोऽस्ति । तं विना राजा न सुद्धे । अन्यदा राज्ञा भोजनावसरे पंजरात्समाकारितः शुकः । तेन मार्जारभयाद्विभेमीत्युक्तम् । राज्ञा सर्वत्र मार्जारां गवेषितः । न 20 दृश्यते । पुनरुक्तम्—समेहीति । तेनोचे-विभेमीति । राज्ञोक्तम्—समेहि यदि त्वां भक्षयित मार्जारः, तदा भवता सह काष्टभक्षणं करोमि । एवसुक्ते समागतः । स्थालाधः स्थितेन मार्जारेण भिक्षतः । राज्ञापि स्वप्रतिज्ञा-भङ्गभयात् सह काष्टभक्षणं कृतम् ॥
- \$ 90) गयणा-मयणाभ्यामिन्द्रजालविद्या साधिता । ततः पत्तने नृतने सहस्रलिङ्गसरिस गयणो निजविद्यां प्रकाशियतुं मकररूपेण प्रविश्योपद्रवति । बहुभिरुपायैरलब्धे तत्र राज्ञा पटहो वादितः । लघुआत्रा मयणेन 25 धीरां याचित्वा निष्कासितः । प्रसादितौ तौ राज्ञा ॥
 - § ७१) श्रीसिद्धि-बुद्धियोगिनीभ्यां कदलीपत्रासनोपिवष्टाभ्यां श्रीसिद्धराजो जयसिंहः सिद्धराजत्वं पृष्टः। एवं विषि(प)ण्णेन राज्ञा रात्रौ वीरचर्यायां सज्जनसाकरीयाकः पुत्रेण समं योगिनीप्रतिमल्लत्वं वदन् श्रुतः। प्रातराकार्य सन्मानितः। तेन सप्तदिनान्ते सितां कावलयित्वा(१) क्षुरिकाद्वयं विधाय परमंडलभेटामिपेण राज्ञेऽपितम्। राज्ञा फलद्वयं भक्षयित्वा लोहमुष्टिद्वयं योगिनीद्वय[ाय भक्षण]हेतोरपितम्। ताभ्यां न भक्षितम्।।
- 80 §७२) श्रीजयसिंहदेवस्यान्यदा महं गांगाकेन आम्राणि प्रहितानि कस्यापि विष्रस्य शये । ततः स श्रीचय-सिंहदेवसदो दृष्ट्वा श्रुभितः । तत आह-राजन् ! महं आंबिल गांगे मोकल्यां छईं । सता उपरी पसावउ । ततो हसितस्सः ॥
 - § ७३) एकदा श्रीसिद्धराजे दिग्विजयं द्वादशवार्षिकं विधाय समागते प्रजा मिलनाय गता । राज्ञां कुशलं पृष्टम् । ताभिरूचे-राजन् ! कुशलमिल । परं चेतिस न निर्वृत्तिः । राज्ञोक्तम्-कथम् १ । तैरुक्तम्-राजन् ! असाकं

Centre for the Artis

रक्षको भवदीयसुतो विलोक्यते। राज्ञा तद्र्थं शाकुनिकः पृष्टः। तेन कुमारपालस्य राज्यं कथितम्। राज्ञा चितितम्-मम राज्यं अकुलीनस्य भविता। तदेनं मारायिष्यामि। इति विचिन्त्य घातकान् सम्प्रेष्य त्रिभ्रवनपालो मारितः॥ (G.) सङ्ग्रहे हेमचन्द्रसूरिसम्बन्धिवृत्तम्।

§ ७४) श्रीहेमसूरयोऽष्टम्यां चतुईश्यां श्रीजयसिंहदेवभवनं प्रयाति । पौपधशालायां सदिस स्थूलभद्रचिरित्रं नित्यं वाचयन्ति । एकवेलमालिगपुरोहितेन राज्ञोऽप्रे कथितम्—यन् महाराज ! कोऽयमसत्प्रलापः, सर्वरसभोजने पूर्वपरिचितवेश्याभवने च कामनिग्रहः । परं किं कियते भवद्रक्षभाः । राज्ञोक्तम्—आचार्या इह समेष्यन्ति तदा वक्तव्यम् । परोक्षे नोच्यते । सरिभिरागतम् । राज्ञोक्तम्—यूयं किं किं वाचयन्तः स्थ । ततः सरिभिः संक्षेपतः साद्यन्तमपि श्रीस्थूलभद्रचरितं कथितम् । आलिगेनोक्तम्—महाराज ! "विश्वामित्रपराशरः ॥" गुरुभिरुक्तम्—पृणु "सिंहो बली० ।" ततः आलिगेनोक्तम्—किं क्रियते असाकीनान्येव शास्ताणि पठित्वा असाकमेव सम्मुखाः संजाताः । गुरुभिरुक्तम्—ऐन्द्रं व्याकरणं किं भवदीयम् ? अथाद्यापि श्रीमातृकावर्जं सर्वं नवं करोमि । गतः श्रीजयसिंहदेवाभ्यर्थनया व्याकरणं कृतम् ॥

§ ७५) श्रीहेमस्रिपार्थे कोऽपि वादी कपटेन पृच्छनाय समागतः । पृष्टम्-उर्वशीयकारः कीदृशो भवति । स्रीणां मनः सन्देहदोलारूढं सम्पन्नम् । परं सचिन्ता अपि पुरतकविलोकनं कुर्वतः [आयातः कार्पटिकः ।] तत उपि भूमिस्थेन लेखकं संपाठयता भाण्डागारिकेन कपर्दिनाम्ना दृष्टाः । तेनेति लिखित्वा पत्रिका तथा सुक्ता यथा पृच्छको न पश्यति । तद्यथा-उरू शेते उर्वशी । तद्विलोक्यैवं स्थिता गुरवः । पुनस्तेन पृष्टम् । गुरुभिः 15 कथितम् । किं पृच्छन्नसि १ । तेनोक्तम्-उर्वशीशकारः । गुरुभिरुक्तम्-तालव्यः । तेनोक्तमहं वादी परं कपटे-

नागतोऽभृत् । नमो विधाय गतः । गुरुभिरुक्तम्-भांडागारिकेन रम्या चाडा विहितास्ति ॥

§ ७६) केनापि मिथ्यादृष्टिना व्याख्यानानन्तरं श्रीसरयः पृष्टाः । यूयं सर्वानिप रसान् वेत्थ । परं मम सन्देहोऽस्ति । विष्ठारसः कीद्यः स्यात् । गुरुभिरुक्तम् सत्यं पृष्टम् । परं वयं सर्वानिप रसान् ब्रूमहे । परं रसवेदकाः पृथगेव हि । वयमेतद्रसाभिप्रायं कथयिष्यामः । परमनास्त्रादितत्वात् भवान्न मानियिष्यति । अतो 20

भवान् पूर्वमास्वादयतु-इति वचनेन पराजितः ॥

§ 99) श्रीहेमस्रिमाता पाहिणिनाम्नी अनशने स्वीकृते भूमौ सुक्ता । श्रीसंघेन कोटित्रयधर्म्मव्ययो दत्तः । ततो व्ययो (हर्षो) न भवति । केवलं रोदिति । रोदनकारणे पृष्टे मात्रोक्तम्—मम सदशा घनतरा अपि विपद्यन्ते । नामाऽपि कोऽपि न वेत्ति । परं मम कोटित्रयं धर्मव्यये जातं । तदयं मम सुतश्रीहेमस्रिः प्रमाणम् । परं यस्य मम लगति स किमपि न विक्त । इत्युक्ते श्रीगुरुभिरुक्षत्रयीशास्त्रपुण्यव्ययो दत्तः । ततो निर्वाणमजनि । 25 ततिस्तिपुरुषद्वारि द्विजैविंमानोपद्रवो विहितः । ततो रुपितैर्गुरुभिरुक्तम्—"आपणपइं प्रसु थाइयइ० ॥" इति विचिन्त्य श्रीकुमारपुरो विच्छाया गताः ॥

§ ৩८) एकदा हेमाचार्याः छत्रशिलायां निविष्टास्तेजो ददशुः । विलोकयतां समीपे समागतं तत् । मध्यग-

तपुरुषभेटः । कृष्णचित्रकार्पणं लोभवृद्धिहेतुरिति निस्पृहैर्निषिद्धः ॥

२४. कुमारपालराज्यप्रातिप्रबन्धः (P.)

(११६) आचार्या बहबोऽपि सन्ति भुवने भिक्षोपभोगक्षमा नित्यं पामरदृष्टिताडनविधावत्युग्रजाग्रत्कराः। चौलुक्यक्षितिपालभालदृषदा स्तुत्यः स एकः पुन-र्नित्योत्तेजितपादपङ्कजनखः श्रीहेमचन्द्रो गुरुः॥



30

United Committee

- १७९) तिहुअणपालपुत्रः कुमारपालः । तस्य द्वे भगिन्यौ-एका प्रेमलदेवी सपादलक्षाधिपतिना आनाकेन नृपेण परिणीताः द्वितीया नामलदेवी राज्ञो महासाधनिकेन प्रतापमहेन परिणीता ।
 - §८०) अथान्यदा सिद्धेशो निरपत्यश्चिन्तयति-
 - (११७) निर्नामताम्बुधौ मज्जत्राज्यभूवलयोद्धृतौ । पुत्राः क्रीडावराहन्तः सम्पद्यन्ते महात्मनाम् ॥
 - (११८) घटिकाऽप्येकया घट्या कुम्भीपयसि मज्जति । गोत्रं पुनरपुत्रस्य क्षणान्निर्नामताम्भसि ॥

इति विचिन्त्य देवपत्तने श्रीसोमेश्वरयात्रायै चचाल । परं विहङ्गिकां स्कन्धे निधाय तत्र गत्वा सोमेश्वर आराधितः । स प्रत्यक्षीभूय आह-कष्टं कथं कृतं यत्स्कन्धे विहङ्गिकां विधायेहागतः ? । तेनोक्तम्-सुतं देहि । 10 किं तेन ? । राज्यार्थम् । राज्यधरस्ते कुमारपाली भविष्यति-इत्युक्तं सोमेश्वरेण । नृपो निष्टत्यायातस्त्वेवमचिन्त-यत-चेदमुं मार्यामि तदा सोमेश्वरः पुत्रं यच्छति । अतस्तं मारयितुमारेभे । सोऽपि विंशतिवर्षदेशीयः पुरा-च्छनो निःससार । सप्तवारं अमन् केदारयात्रामकरोत् । अन्तरान्तरा प्रच्छन्नमभ्येति तपस्वी सन् । राज्ञा मार्थ-माणो नष्टः। सज्जनकुलालेन कोष्टीमध्ये क्षेपितः। तस्य चित्रकूटं दत्तम्। पुनरप्येकदा अनादिराउलमठे प्रविष्टः। कदाचिद्धेमस्रिगुरुपौषधागारे प्रविष्टः । तत्र तैरुक्तम्-संवत् ११९९ मागसिरवदि ४ रवौ तव राज्यम् । परं 15 तव प्रत्यासन् कष्टम् । तदा पौषधागारे आगम्यम् । इतश्चानादिराउछतपस्विसप्तश्चत्या सार्द्धं जेमनाय गतो नुपवे-इमनि । राज्ञा तपखिनां पार्थे खद्गधराः [स्थापिताः] सन्ति । यस्य तपखिनः पादौ प्रक्षालयन् विमुच्य उपरि यामि स मारणीयः । तथा कृते तेषां जनानां तद्भाग्यवशाद्धिस्मृतम् । भोजनावसरे एकं इस्तमुदरे न्यस्थापरं मुखे वान्तिमिषेण नष्टः। श्रीहेमस् ० पौषधागारे गतः। दिन ३ उपवरके तालकं दत्त्वा स्थापितः। ततो भाण्डा-गारिककपर्दिनो दत्तः। तेन खगृहे छन्नं स्थापयित्वा पत्रचोलकमध्ये क्षित्वा २० योजनप्रान्ते मोचितः। कान्त्यां 20 गतः । तत्र सरिस तस्करस्य शिरः केनापि निःकृत्य क्षिप्तम् । तदनु तत्प्रात⊁ प्रातरिदं बूते-एकेन बुडित । नृपे-णामात्याः पृष्टास्तैः पण्डिताः । तैर्मास एको याचितः । मुख्यपण्डितः खगृहसूत्रं कृत्वा निर्ययौ । अटबीं अमन् एकसिन् वृक्षकोटरे रात्रौ स्थितः । तत्र भृताः सन्ति । लघुभिरुक्तम्-तातासाकं क्षुधा । तातेनोक्तम्-दिनत्रयान-न्तरं यास्यामि । कथम् १ । प्रत्यासन्तपुरे नृषेण पण्डिताः शिरसो वाक्यं पृष्टाः । ते न जानन्ति । नरेन्द्रस्तान् सकुटु-म्बान् व्यापाद्यिष्यति । तैः पृष्टम्-तात ! किं कारणम् ? । निर्वन्थे कृते उक्तम्-लोभेन बुडति । तत्पिण्डितेन 25 श्रुतम् । गृहमायातः । मासप्रान्ते नृपेणाहृतः । तेन सरस्तीरे गत्वा उक्तम्-यदि लोभेन बुडित तदा पुनर्न वाच्यम् । शिरस्तथैव स्थितम् । नृपेण प्रासादः कारितः । अतो मध्ये शिरः पूज्यते । ततः कुण्डगेश्वरप्रासादे श्रीसिद्धसेनलिखितां गाथां ददर्श- ॥ "पुण्णे वाससहस्से० ।" एवं तस देशान्तरे ३० वर्षाणि जातानि । कदाचिद्रअयिन्यां चर्मकारहट्टे सिद्धेशो विनष्टः श्रुतः। ततः कृष्णमुखो जातः। तेनोक्तम्-किं कृष्णास्या यूयम् १ भवतो नृपः किं सगीनः ? । उत्तरः कृतः-नृपमृतौ को न द्यते । ततः पत्तनमागतः । तत्र भगिनीपतिः प्रता-30 पमछः । तेन जागरणिरेका गृहमानीबा । तया पणबन्धः कृतः । अन्याः सर्वाः पितृगृहे प्रेषय । तेन तक्षा-कृते, कुमरस्य स्वसा नामलदेवी पितृगृहमदृष्ट्वा समयज्ञा तस्याश्वरणयोः पपात । तयोक्तम्-किमिद्म् ? । देवि ! त्वं [म]म पितृगृहम्, तव दासीसमा स्थास्यामि । तया कथितम्-स्थीयताम् । इतः कुमरिको भगिनीं एत्य प्राह-अहं क्षधा मिये, मम दशां पश्य । खस्रा उक्तम्-मम भ्राता भवान् । तया वेश्योक्ता-मम भ्रातुर्दालिमुप्टेरादेशो दीयताम् । तथाकृते स पाणउठे (?) नित्यं दालिमुप्टिं गृह्णाति । इतो नृपे मृते यो यो राज्ये स्थाप्यते स स

प्रधानैरपाकियते । एवं सिद्धेशस्य पादुके राज्यं कारयतः । एकदा प्रतापमल्लो रात्रौ वैकालिकं कर्तुम्रपविष्टः । सा वेश्या परिवेषयति । नामलदेवी दीपकरा पराखी (?) वर्तते । तां दृष्टा प्रतापमछ उवाच-रे ! तव आता का-प्यास्ति । तया वेश्या दृष्टा । उक्तम्-पाणउठे प्रतिदिनं दालिम्रष्टिं गृह्णाति । तत्र पृष्टसौरुक्तम्-यद्य नायातः । तेन गवेषयितुं नराः प्रहिताः । ते प्रपादि शोधयितुं नराः प्रवृत्ताः । इतः प्रपायां कुमरिको बोसरिकद्विजेन वार्ताः कुर्वन श्रुतः-रे बोसरिक! अद्य द्युताक्षिप्तेन दालिरिप नानीता। ततोऽसिन् सम्मुखे हट्टे गत्वा दीपच्छायायां करं 5 प्रक्षिप्य चणकमुष्टिं समानय । तेनोक्तम्-प्रथिलोऽसि । तव प्रातः पितृराज्यं भविष्यति, मम त्वारक्षकैर्बाहृदिछ-द्यते । इति श्रुत्वा नृपपुरुषैरभाणि स कः ?। कुमरिकेनोक्तम्-को विलोक्यते ?। कुमरिकः । केन हेतुना ?। प्रता-पमछ आकारयति, चलत । इतो बोसरिकेन ज्ञातम्-एष मारणाय नीयते । स जीवग्राहं गतः । कुमारोऽपि खस्-पतिं भणित्वा नमश्रकार । तेनोक्तम्-यदि राज्यं दिश्व तदा मे किम् ? । यद्भणसि तत् । तिर्हे यावजीवं साध-नम् । वर्षं प्रति लक्षत्रयं द्रम्माणाम् । प्रातर्नृपकुले आगम्यम् । क्षुधार्तः स्थितः । वोसरि प्रपायां न पश्यति । 10 अचिन्ति-राज्यं सन्देहे, बोसरिरपि गतः । इतः प्रातर्दन्तधावनं कृत्वा नगरान्तः प्रविश्वति । तावत्खङ्गकरवैज्ञा-निकं ददर्श । तेन खड़ी दत्ती वन्दितः । चिन्तितं मम कार्यं जातमेव । शक्कनं भव्यम् । तेन किमपि न याचि-तम् । अग्रे मोचिकेनोपानहौ दत्ते । दोसिकेन वस्नाणि । मालाकारेण पुष्पाणि । ताम्बुलिकेन पत्राणि । ततो राजकुले गतः । प्रतापमल्लेन प्रधाना उक्ताः-कुमारः किं न स्थाप्यते १, सोऽपि धनिकोऽस्ति । तैरुक्तम्-स्थापयत । असिबलेन तदा राज्यं जातम् । सं० ११९९ । ततोऽप्यनेकानि कष्टानि अनुभूतानि । एवं कद्धिनेन वर्षत्रयं 15 गतम् । पश्चाद्राज्यं सले जातम् ॥ ॥ इति कुमारपालराज्यप्राप्तिप्रबन्धः ॥

२५. राणक अंबडप्रबन्धः (P.)

§८१) अन्यदा कुङ्कणे जालपतनं श्रुत्वा महिरावणाधिपतिं मिल्लिकार्जुनं प्रति द्तं प्राहिणोत्—तथा विधेयं यथा जालं न पतित तव देशे। तेन च वलमानं विज्ञापितम्—यदावयोरेष पणः। कुङ्कणाधिपो गूर्जरेशस्य विगि(?)कायां पत्राणि प्रयित, तत्करोमि अन्यदिषं न जाने। अत्र जना मत्स्यमांसरताः प्रायथान्नदौरूथ्यात्। श्रीकुमार-20 पालेन कथापितम्—यदनं तथा प्रेपयिप्ये यथा पत्त(?)नाथों भवति। तेनोक्तम्—सर्वथा नैतत्। इतः श्रीकुमारपालः कुद्धः सन् प्राह—राजा (ज्ये) कोऽपि वीटकं मिल्लिकार्जनोपिर प्रहीष्यति। इतः श्रीवाहडदेवश्रात्रा अम्बडेन वीटकं गृहीतम्। प्रौदकटकेन चिलतम्। तेन मागें घाटी रुद्धा। तत्र कटकं हतप्रहतं जातम्। अम्बडो निवृत्तः। कुष्ण-शृङ्कारः कुष्णाक्षः कुष्णाक्षादरः पत्तनवाद्धे स्थितः। नृपं नन्तुं न याति। नृपेणोपिरिस्थितेन गुप्तोदरं दृष्टं पृष्टं च—रे किमेतत् १। तैर्निवेदितम्—सामिन्! अम्बडोत्तारकोऽसौ। इतः सर्पास्तेऽम्बडो द्वारिकया प्रवित्य नृपं 25 पाश्चात्येन [न]त्वा पृष्टो स्थितः। अग्रे एहीति नृपोक्ते, देव! मया स्वस्वामिनः कालिमानीता। अतो रात्री समेतः। यद्युक्वलो भवामि, तदा दिने समेष्यामि। इतो नृपो वीटकमादाय उक्तवान्—गृह्वीत। कोऽपि न गृह्वाति तदा भट्टेनोक्तम्—यदा रासभः प्रचण्डस्तदा तुरगेन समं कथमुपमीयेत। तथा वणिक् नृपप्रसादेऽपि क्षत्रि-यपौरुषान्वितः स्थात्। इत्युक्तेऽम्बडेनागत्य वीटकं गृहीतम्। सम्येरुक्तम्—अग्रेऽपि कटकं हतप्रहतं कृतम्। शेप-मिष् तथा करिष्यति। ततोऽम्बडो समीपमेत्य अश्ववारपञ्चत्रतीं याचितवान्। स तां गृहीत्वोपिर पथेन हेरकं 30 कृत्वा मिल्लिकार्जुनं वेडायां स्थितमश्चान् वाहयन्तं प्राह—भो! शक्तं कुरु। अम्बडस्तमङ्गाङ्गेन युष्या शिरः पात-यत्। इत्थारणेनोक्तम्—

(११९) अंब[ड] हुंतु वाणीउ मिल्लिकार्जुन हूंत राउ । पाडी माथउं वाढीउं उअडिहिं देविणु पाउ ॥



शिरिक्छत्वा वाहीआलीकिसोरसप्तशती, शेषतुरगाश्वभाण्डागारम्, कोष्ठागारम्, सेइयकं दन्तिनम्, नव धडी हिरण्यस, चतुरसं कलशम्, मृटक ९ मौक्तिकानाम्, माणिकउ पछैडउ, शृङ्गारकोडि साडी, सहस्रकिरणता-डङ्क २, पापक्षयो हारः, संयोगसिद्धिः शिप्रा-एवंविधं सर्वमादाय अस्वडः पत्तनं गतः । नृपः सम्मुखमाययौ । मिछकार्जुनिशिरसा नृपपादावपूजयत् । नृपस्तुष्टः, अम्बडस लाडदेशमुद्रां ददौ । हस्ती दत्तः, फैलशस(अ) 5 मिल्लकार्जनजयस्चकः । खगुप्तोदरादयः । इतो हिस्तिनमादायाम्बडः खगृहं गतः । वाग्भटदेवो नमस्कृतः । वत्स ! देवं नमस्कुरु । तथा कृते सति पुनरप्युक्तं बाहडदेवेन मन्त्रिणा-इयन्ति दिनानि राजपुत्रस्त्वमभूः । अधुना ब्यापारी जातः। अतः श्रीहेमसरीन् कुलगुरूनमस्कुरु। पौषधागारे गतः। तैस्तु धर्मलाभो न दत्तः। आङ्गीर्वादो-उस्तु । गृहे गत्वा प्रोक्तम्-अहं पौषधागारे गतः । तत्र गुरूणां धर्म्मलाभस्यापि सन्देहः । मत्रिणा वाग्भटदेवेन गुरव उक्ताः-यद्भवद्भिर्धर्मलाभो न दत्तः । गुरुभिरुक्तम्-यदि असाभिनोंक्तिस्तर्हि किं भृगुकच्छेन गतः । प्रासादं 10 कथं श्रीम्रुनिसुत्रतस्वामिन उद्धरिष्यति । अनेकानन्यायान् करिष्यति । मन्त्रिणा वाग्भटदेवेनाम्बङस्याग्रे उक्तम् । तेनोक्तम्-मम गुरव उद्धृतेः । प्रासादे हृष्टाः । द्विवेलमुद्धृते भोक्ष्ये, परं भृजं (१) विना युष्माभिः किमपि न वक्त-व्यम् । ततश्रिल्वा भृगुपुरे गतः । प्रवेशे जाते मञ्जमुपविष्टः । इतो देवीपूजिका योगिनीभिरन्विता समेत्यानभ्यु-त्थिता समीपे समीपे समेत्य विवेश । अम्बडेन कूर्पराहता मञ्जकाद्वहिः पपात । मृता । कर्म्मस्थायः प्रारब्धः । वर्षेण सम्पूर्णः। शिलाकोटिघटितः प्रासादो जातः, राणकोद्यनस्य मनोरथश्च। अम्बडेन श्रीपत्तने एका विज्ञप्तिः 15 श्रीकुमारपालदेवस्य १, एका गुरूणां २, एका वाग्भटदेवस्य, ३ एका श्रीसङ्घस्य; एवं ४ प्रहिताः । वाग्भटेन श्रीगुरूणां पुरो विज्ञप्तिर्मुक्ता। इदं किम्?। एपा अम्बडस्य विज्ञप्तिः। वर्षमेकं गतस्यासीत्। अद्य का विज्ञप्तिः ? । विलोकयत । प्रतिष्ठोपर्याकारणमागतम् । मन्त्रिन् ! एतत् सत्यम् ? । अहं किं जाने, विज्ञप्तिः कथयति । तर्हि चल्यताम् । नृपो गुरुभिः सह प्राचालीत् । इतोऽर्द्धमार्गे जनः सम्मुखमाययौ । यदम्बडो न शक्रोति । गुरवः सङ्घं विम्रुच्य भृगुपुरे गताः । इतः प्रक्षीणधातुरम्बडो दृष्टः । देवीप्रासादं गत्वा ध्यानेन निविष्टाः । 20 इतो मुख्यपूजिकोदरे उदरवादिर्जाता। सा कोक्यते। परिचारिका एत्य प्रभुमुचुः। असाकं खामिनी मुच्यताम्। तर्हि अम्बडोऽपि मुच्यताम् । स सकलो जग्धः पीतश्च । तर्ह्येषाऽपि म्रियताम् । जीवन्ती किं करोति । एक एव सार्थोऽस्तु । सा अत्यर्थं पीडिता प्रभृनेत्यावदत्-प्रसादं कृत्वा मां मुश्रत । अम्बडमपि मुश्र । तरु(?)वेष्टितं कृत्वा घृतकुम्भ्यां प्रक्षिप्ते यदिति वक्ति, म मारिति मां कर्षति । ततः कृष्ट्वा स्नानं कार्यः । यदि जल्पिष्यते स तदा त्वमपि सञा भविष्यसि । दिनत्रयान्ते अम्बद्धः सञ्जो जातः । साऽपि च । इतः श्रीसङ्घान्वितो नृपः प्राप्तः । 25 गुरुभिः साकमम्बडः सम्मुखो ययौ । अम्बडेन दत्तकरा गुरवः प्रदक्षिणां यच्छन्ति । प्रासादं तुङ्गमालोक्य गुरुभिरुक्तम्-मया देवं गुरुं विना कोऽपि न स्तुतः। तव कीर्त्तनेन किश्चिद्रक्ष्यामः। आदिशत।

(१२०) किं कृतेन न यत्र त्वं यत्र त्वं किमसौ किलः। कलौ चेद्भवतो जन्म किलरस्तु कृतेन किम्॥

प्रतिष्ठा जाता । आरात्रिकोत्तारणाय नृपो विज्ञप्तः । नृपेणोक्तम्—त्वमेवोत्तारय । वाग्भटेनाप्यनुमतः । 30 कर्त्तमुद्यतः । नृपेण शृङ्खलं कनकमयं स्वकण्ठादुत्तार्याम्बडगले क्षिप्तम् । तेन च याचकानां पठतां गृहसारं दृत्तम् । द्वारभट्टस्य तिसन् शृङ्खले दत्ते नृपेणोक्तमवतारय । तथा कृतेऽम्बडेन पृष्टम्—देव! किम्रत्सुका जाताः । मयां ज्ञातं जीवमपि दास्यसि । मम त्वया बहुकार्यमस्ति । सङ्घार्चादिषु जातेषु पुनः सङ्घः पत्तनं प्राप्तः । तत्र चैत्यबलानके ९ धडी मुवर्णस्य चतुरस्रं कलशं ददौ ।

६८२) अथैकदा नृपः सेवायातं मिहकार्जुनसुतं प्राह-पापक्षयादिरत्नपश्चकस्यौत्पत्यं वद । देव ! मिहिकार्जु-उठ नादेकविंगः पूर्वजो धवलार्जुनस्तस्य पश्चदश प्रिया आसन् । एका नरेन्द्रसुता खड्गेन परिणीता । आनीय

Omitte the life Art

बन्दीवास्थापि । नृपत्तां वेत्तीव न । शेषा मान्यतमाः । सा तु दैवमेवोपालभते स । अन्यदा पुरे काचित् परित्राजिका आगता । सा. चेटीभिः राज्ञीसकाशमानीता । तयोक्तम्-किं वेत्सि ? । साऽऽह-

(१२१) दंसेमि तं पि ससिणं वसुहावइन्नं थंभे वि तस्स वि रविस्स रहं नहद्धे। आणेमि सबसुरसिद्धगणं गणाओं तं नित्थ भूमिवलये महू जं न सिद्धं॥

प्रसीद, मम पति वशीकुरु । तया करे सर्षपा जिपत्वा ऽर्पिताः । यथा तथा नृपस्य [भोजन]मध्ये देयाः ।5 तया शाकं कृत्वा शिप्रां भृत्वा चेट्युक्ता-भोजनावसरोऽस्ति देवस्य परिवेषय । सा शृङ्गारं कर्त्तुं गता । देव्या चिन्तितस्-न ज्ञायते कदाचिदेषा वैरिणा प्रहिता स्याचदा मे पतिमारिकायाः का गतिः स्यादिति मत्वा गवाक्षस्याधः समुद्रस्तत्र शित्रां ढालयामास । चेटी उक्ता-शाकं सम्प्रति तिष्ठतु । कथम् ? । तत् करात्पपात । इतस्तेन वशीकृतः समुद्रो नृपरूपं कृत्वा रात्रावायातः । स तु देव्या नृपवदुपचरितो नित्यमेति । इतो देवी सगर्भाऽभृत् । चेटीं प्राहिणोत्-देव ! सीमन्तोन्नयनाय मुहूर्त्तमस्रत्स्वामिन्या गणापयत । नृप आह्-का त्वम् ?, 10 का तव खामिनी ? । अहं तस्या नामापि न जाने । कस्य सुता.....णीता । तया यदकृत्यं कृतं तन्मम किमुच्यते । साऽऽगत्य देवीं प्राह-इत्थं निवेदयति । तयोक्तं समये ज्ञास्यते । इतः पुत्रो जातः । स्रतकशुद्धेरनन्तरं बा.....य प्रतोलीमेत्य उपविष्टा । मम शुद्धिं यच्छत । जातायां बालः स्तनं गृहीष्यति । नृपेणोक्तम्-मम साराजपि न। अधुना खड्नेन परिणीता श्रुता, परं दृष्ट्वापि न। पुत्रस्य का प्रधानान् प्रैपीत् । एन्सम दृषणं तत्र न मया सोढव्यम् । सा न मन्यते । पट्टराज्ञी प्रहिता । स्त्री स्त्रीभणितेन मन्यते । सा एत्यावादीत्-किमिदमार-15 ब्धम् ?। तयोक्तम्-तव कुले इदं......मम तु न। नृपः खयमेत्य तां प्राह-तव ममाधुना दर्शनम् , पुत्रस्य तु का कथा ? । उत्थीयताम् । देव ! सर्वथापि वार्त्ता दिव्यं विना न वाच्या । प्रधानैर्दिव्यं दत्तम् । राज्ञी सुतबहिर्ययौ । पौरसहितो नृपश्च । तत्र लोहमयी नौस्तस्यां समिधरोप्य, दिन्यकर्त्ता क्षिप्यते । शुद्धे तरत्यशुद्धे बुडिति । सा राज्ञीति कामा श्रावणामकरि......त्यवद्राव इत्युक्तवा नावमधिरुरोह । सपुत्रापि बुडिता । लोकः कोलाहलं यावत्करोति -तावन्नावमधिरूढा देवी सशृङ्गारा शृङ्गारकोटिशाटीपरिधाना, सहस्रकिरणताड-20 ङ्काभ्यामलङ्कृतकपोला, प्रापक्षयेण हारेण विराजितवक्षःस्थला, माणिक्यपटेनाच्छादितवाला, संयोगसिद्धिशिषा-करा सर्वेरिप दृष्टा ग्रुद्धताला पपात । नृपेण नगरमध्ये प्रवेशिता । नृपो निशि तद्वेश्मनि इयाय । तयोपचरितः पृष्टवान्-अहं सर्वथा न जाने त्वं तु सत्येव या सम्रद्रेण शोधिता । इतः समुद्रदेवेन, प्रत्यक्षीभृयादितोऽपि स्वरूपमुक्तम्-नास्यापराधः । नृपेण सुतस्य बालधवल इति अभिधा चक्रे । सा राज्ञी पट्टराज्ञी कृता । एतानि तानि रत्नानि तस्यैव समर्पितानि ॥ इति राणकाम्बडप्रवन्धः ॥

२६. कुमारपालकारितामारिप्रवन्धः (B.P.)

§८३) अथैकदा श्रीकुमारपालदेवेन अमारी प्रारच्धायामाश्विनशुदिपक्ष आयातः । कण्टेश्वरीप्रभृतीनामबोटिकैर्नृपो विज्ञप्तः—देव! सप्तम्यां पश्चनां सप्त शतानि सप्त महिषाः, अष्टम्यामष्टौ शतानि अष्टौ महिषाः, नवम्यां नव
श्वतानि छागानां नव महिषाश्च देव्यै नृपेण देयाः । पूर्वराज्ञामयं क्रमः । नृषः प्रभूणां पार्श्वे गतः । कथिता
वार्त्ता । कणें उक्तं नृषः श्वत्वोत्थितः । माषितास्ते देयं दास्यामः । विहकाश्रमाणेन पश्चवो देवीसदने निश्चिप्ताः । ३०
तद्वारे तालकं दन्त्वा नृषः स्वसौधं गतः । प्रातरायातो नृषः । उद्घाटितानि द्वाराणि । मध्ये दृष्टाः पश्चवः रोमन्थायमानाः । राज्ञा अवोटिकां अभिहिताः—यद्यमुभ्यो देवीभ्योऽरोचिष्यन्त तदा ग्रसिष्यन्त । परं न ग्रस्ताः ।

Control of the First

¹ B प्रश्वतिपूजकै: । 2 B पूजका: । 3 B नास्ति । † एतद्नतर्गता पंक्तिः पतिता P आदर्शे । पु॰ प्र॰ स॰ 6

25

तसादम्भ्यो मांसं नेष्टं किन्तु भवतामेवेष्टम् । तसादहं जीववधं न करिष्ये । ते विलक्षाः स्थिताः । छागम्ल्य-समेन धनेन नैवेद्यानि कारितानि । अथाश्विनशुक्कदशम्यां कृतोपदासः हमापो निश्चि चन्द्रशालायां स्थितः । ध्यानेन पश्चपरमेष्ठिपदं जपन्नस्ति । बिहिर्द्वाःस्थाः सन्ति । गता बह्वी निशा । एका दिव्या स्त्री प्रत्यक्षीभ्य जगाद – राजन्नहं तव कुलदेवी कण्टेश्वरी । त्वयाऽसाकं देयं च न दत्तम् । नृपेणोक्तम् –दयाछरहम् , अतःपरं पिपीलिका- मिप न हन्मि, का कथा पश्चनम् । कण्टेश्वरी इति श्वत्वा कुद्धा नृपं शिरसि त्रिश्चलेन हत्वा गता । नृपसत्क्षणा- त्रकृष्ठी जातः । विखिना भृत्येन उदयनतनृजं वाग्भटमाकार्य पत्रच्छ – मित्रन् ! देवी पश्चन् याचते, दीयन्ते न वा । मित्रणा दाश्वण्यादुक्तम् –देव ! दीयते । मित्रन् ! विणगिसि, यदेवं त्रृषे तर्हि ममातः परं जीवितच्येनालम् । राज्यं प्राप्तम्, धम्मों लब्धः संसारतारकः, शत्रवो हताः । त्वरितं काष्टसञ्जतां कुरु । येनेदशं मां दृष्टा जनो धर्मस्योडाहं विधास्यति । गुरून् गत्वा मुत्कलापय । राज्ञा विस्पृष्टो गतो गुरूणां पार्श्वे । स्वरूपं निवेदितम् । गिगुरुमिर्नीरमानाय्य कलापनीय (क्ष कालापानीय)मिपतम् । तेन पूर्वं देहाभ्यङ्गः कृतः पश्चात्पीतं च । नृपस्त-रक्षणं सुवर्णवर्णो जातो वपुषि । प्रातर्गुरूणां नन्तुं गतः । ततो गुरुमिर्देशना चक्रे । पश्चादमारिविषये विशेषो- द्यमः कृतः ॥ एवममारिविषये कुमारपालप्रवन्धः ॥

२७. कुमारपालदेवतीर्थयात्राप्रबन्धः (B.)

§८४) एकदा गुरुभिरुपदेशो दत्तः-

(१२२) शूराः सन्ति सहस्रशः प्रतिपदं विद्याविदोऽनेकशः सन्ति श्रीपतयो निरस्तधनदास्तेऽपि क्षितौ भूरिशः। [ज्ञात्वा-]कर्ण्य निरीक्ष्य चान्यमनुजं दुःखार्दितं यन्मन-स्ताद्रुप्यं प्रतिपद्यते सपदि ते सत्पूरुषाः पञ्चषाः॥

एकदा प्रश्वभिर्भरतस्य चिक्रणः साधर्मिकवात्सल्यकथा कथिता । नृपस्तां श्रुत्वा प्रतिग्रामं प्रतिपुरं साध-20 मिंकवात्सल्यमारेमे । तहृष्टा कविः श्रीपालपुत्रः सिद्धपालोऽपाठीत्—

> (१२३) क्षिस्वा वारिनिधिस्तले मणिगणं रत्नोत्करं रोहणो रेण्वावृत्त्यसुवर्ण्णमात्मनि दृढं बद्धा सुवर्ण्णाचलः । क्ष्मामध्ये च धनं निधाय धनदो विभयन् परेभ्यः स्थितः किं स्थात्तैः कृपणैः समोऽयमखिलाऽर्थिभ्यः स्वमर्थं ददन् ॥

द्रम्मलक्ष १ दानम् । पं० श्रीधरेणोक्तम्-

(१२४) पूर्वं वीरजिनेश्वरे भगवति प्रख्याति धर्मं खयं
प्रज्ञावत्यभयेऽपि मिन्निणि न यां कर्तुं क्षमः श्रेणिकः ।
अक्केरोन कुमारपालंचपतिस्तां जीवरक्षां व्यधात्
यस्यासाच वचस्सुधांशुपरमः श्रीहेमचन्द्रो गुरुः ॥

अत्रापि लक्षदानम् । अन्येद्युः कथाप्रसङ्गे प्रभवः प्राहुः-पूर्वं भरतो राजा श्रीमालपुरे श्रीशत्रुञ्जये सोपारकेऽष्टापदे च जीवित-स्वामिप्रतिमाश्वकार । श्रीसङ्घस्वचकोच्छलितरजः पुञ्जध्यामलितदिक् चक्रवालः सङ्घपतिर्भृत्वा ववन्दे । तदाकर्ण्य श्रीकुमारपालनृपतिः स्वयं कारिते देवालयेऽर्हद्विम्बमारोप्य ससैन्यः शत्रुञ्जयोज्जयन्तादियात्राये चचाल । सङ्घेन

Deliber For the Arts

सह—उदयबसुतो वाग्भटश्रतुर्विशतिमहाप्रासादकारापकः, नागराजश्रेष्ठिभूः श्रीमानाभडः, पद्दभाषाचक्रवर्त्ती प्राग्वाटश्रीपालः, तत्तनयः सिद्धपालः कवीनां दावणां धुर्यः, भाण्डागारिकः कपर्दी, परमारवंश्यः प्रह्लादनपुर-निवेशकारकः प्रह्लादनः, राजेन्द्रदौहित्रः प्रतापमल्लः, नवनवतिलक्षस्यणौस्वामी ठकरछाडाकः; तथा श्राद्रिका देवी श्रीभोपलदे, नृपपुत्री लीख, राणाअंबडमाता, वसाह आभडपुत्री बाई चांपलदे-इत्यादिकोटीश्वरो लोकः । सरयः - श्रीदेवाचार्याः, श्रीअभयदेवस्रिरिशिष्याः श्रीजिनचन्द्रस्रयस्तेषां गुरुवान्धवाः श्रीजिनवछभ- 5 स्रयः, श्रीचैत्रगच्छीयाः श्रीधर्मस्रयः, श्रीवीराचार्याः-इत्यादिस्ररिवर्गः । श्रीदेवस्ररीणां भगिनी प्रवर्त्तिनी सर-खती, श्रीहेमचन्द्रस्ररीणां महत्तरापुष्पचूलाद्याः साध्व्यः । लक्षसंख्या मानवाः । एवंविधेन सङ्घेन सह स्थाने स्थाने प्रभावनां कुर्वन् चैत्यपरिपाटीं च कुर्वन् याचकेम्य इच्छानुरूपं भोजनं यच्छन् श्रीवर्द्धमानमार्गेण रैवतकाद्रौ गतः । सांकलिआलीपद्यातले श्रीसङ्घः स्थितः । राज्ञोक्तम्-प्रभो ! पादमवधारयत, यथोपरि गम्यते । गुरुमिरु-क्तम्-हे कुमारपालराजन् ! यूर्यं गच्छत, वयं पश्चादेष्यामः । नृपेणोक्तम्-गुरून्विनोपरि कथं यामि ? । गुरु-10 भिरुक्तम्-अत्रेद्दशो जनप्रवादः, यत् यदोत्तमनरद्विकं छत्रशिलाऽधो यास्यति तदाऽनर्थः । अतो यूयं पूर्वे व्रजत । नृपस्तु धौतवासांसि परिधायोपरि गतस्तद्तु गुरवः। सर्वं तीर्थकार्यं कृत्वा नृपो वाग्भटदेवेन नृतनपद्यया मित्र-णाऽऽब्रेण कारितयोत्तारितः। तदनु तलहद्दिकायां जीर्णादुर्गे सङ्घवात्सल्यं सङ्घपूजां च कृत्वा देवपत्तने ससङ्घो नृपो गतः । तत्र श्रीचन्द्रप्रभादितीर्थात्रमस्कृत्य वलमानः श्रीशत्रुञ्जयमधिरूढवान् । चैत्यपरिपाट्यां जायमानायां 15 भाण्डारिकः कपदी प्राह-

> (१२५) श्रीचौलुक्य! स दक्षिणस्तव करः पूर्व समासूत्रित-प्राणिप्राणविघातपातकसम्बः शुद्धो जिनेन्द्रार्चनात्। वामोऽप्येष तथैव पातकसम्बः शुद्धिं कथं प्राप्तुया-न्न स्पृत्येत करेण चेद्यतिपतेः श्रीहेमचन्द्रप्रभोः॥

\$८५) मेरुमहाध्वजा-महापूजा-अमारिकादिसर्व प्रवर्तितम् । मालोद्घट्टनसमये राज्ञि सङ्घे चोपविष्टे मन्नी 20 वाग्मटदेवो द्रम्मलक्ष्वतुष्कमवदत् । केनापि च्छन्नेनाष्टौ लक्षाः कृताः । एवं क्रमेण वर्द्वमानेषु कश्चित्सपादकोटी-श्वकार । नरेन्द्रश्रमत्कृतोऽवादीदुत्थाप्यताम् । स उत्थितः । याबहुत्थते मिलनवसनो विणक् । राज्ञा मन्नी उक्तः—द्रम्मसौस्थ्यं कृत्वा मालां प्रयच्छ । मन्नी तेन सह पादुकान्तिके गत्वा द्रम्मसौस्थ्यं पप्रच्छ । तेन सपादकोटि-मूल्यं माणिक्यं दिशितम् । मन्निणा पृष्टम्-इदं ते कृतः ? । तेनोक्तम्-महुआवास्तव्यो मम पिता हंसो नाम सौरा-ष्ट्रिकः प्राग्वाटः । तत्पुत्रोऽहं जगडः । माता मे धारु । मम पित्रा मरणसमयेऽहं भाषितः-वत्स ! मया प्रवहण-25 यात्राश्चिरं कृताः, फलिताश्च । मेलितं धनम् । तेन क्रीतं सपादकोटिमूल्यं रत्नमेकेकम् । एवमधुना मम श्रीयुगादि-चरणः शरणम् । अन्यनं प्रतिपन्नम् । उक्तं च-एकं श्रीनेमिने, एकं श्रीचन्द्रप्रभाय, द्वयमात्मनोऽन्तर्धनं द्घ्याः । बाह्यधनमपि तव प्रचुरमितः । इदानीं यात्राये मया माता सहानीताऽस्ति । कपिद्दंभवने मुक्ताऽस्ति । तां जरन्तीं मातरं सर्वतीर्थाधिकतया पुराणपुरुपैनिवेदितां मालां परिधापियष्यामि । श्रुत्वा मन्नी हृष्टः सङ्घं च सम्मुतं नीत्वा महोत्सवेनानीयं सङ्घसमक्षं मालापरिधानं कारितम् । तन्माणिक्यं खर्ण्याटितं कृत्वा कण्ठाभरणे ३० मध्यमणिस्थाने निवेश्य श्रीयुगादिदेवाय दत्तम् । देवं मुत्कलाप्य खयमारात्रिकमाधाय सङ्घः समुत्रीर्य क्रमण चिलतः । प्राप्तः श्रीपत्तने । प्रवर्तितं सङ्घवात्सल्यम् । प्रतिलाभिताश्च [साधवः]। अमारिस्तु शाश्वतेव ॥

।। इति श्रीकुमारपालदेवतीर्थयात्राप्रवन्धः ॥

Indire administration

२८. कुमारपालपूर्वभवप्रबन्धः (B.)

§८६) एकदा श्रीकुमारपालेन श्रीहेम्रसूरयः पूर्वभवस्त्ररूपं पृष्टाः । ततः सूरयः सिर्द्धपुरे गताः । प्राचीमाधवाग्रे क्मशानभूमौ चतुरः श्रावकान् कृतोपवासान् चतुर्दिश्च तपोधनांश्रत्वारो विदिश्च स्थाप्य खयं त्रिभ्रवनस्वामिनीं विद्यां स्मृतवन्तः । देव्याह-सरणकारणं वदत । तैस्तु नृपभवः पृष्टः । देव्याह-मेदपाटदेशे चित्रक्टप्रत्यासने 5 ऊपरमालपर्वते परमारवंशीयो जैत्रः पछीपतिरासीत् । सोऽन्यदा धाराया गगनधृलेर्नायकस्य दशसहस्रवलीवर्दमितं सार्थं जगृहे । नायको नंष्ट्रा मालवेशमाह । राज्ञोक्तम्-मया तस्य किमपि कर्तुं न शक्यते । तेनोक्तम्-मया शक्यते । कटकमादायाज्ञातवृत्त्या पह्न्यां गतः । जैत्रो नष्टः । तेन कीटमारिं कृत्वा ज्यतापत्याः सगर्भाया उदरं विदार्थ बालं भूमावास्फोट्य वलित्वा च तं नृपं प्रति खवृत्तमुक्तम् । नृपेणादृष्टच्योऽयमिति तिरस्कृतो जनैर्निन्द्यमानस्ताप-साथमे गत्वा ग्राद्धिकृते तपस्वी जातः । अथ जैत्रः स्थानभ्रंशाचौरवृत्त्या जीवनेकसिन सार्थे मिलितः । सार्थे 10 स्थिते श्राद्धा देवपूजां विधाय सरसः पाली व्रजन्तो वीक्ष्य तैः सार्द्धं गतः। ते तपोधनान् नमस्कृत्य धर्मोपदेशं श्रत्वा क्षमाश्रमणपूर्वं तपोधनानादाय गताः । स तथैव स्थितस्तपोधनाः समायाताः । स न उत्तिष्ठति । मयि ब्रश्वक्षिते कथं भोक्ष्यन्ति मुनयः। श्राद्धानाहृय भोजितः। तदनु गुरुभिरुक्तम् -त्वं चौर्यस्यादत्तस्य नियमं गृहाण। तेनोक्तम्-यद्यदरपूरणं भवति तदा नाहं करोमि । तैः श्राद्धपार्श्वीच्छम्वलं दापितम् । स क्रमेण सार्थाचलितो गुरुभिर्नियमं सारितः । उरंगलपत्तने गतः । तत्र ऑहरनायकाट्टे उपविष्टः । तेनागतेन पृष्टम्-क यास्यसि ? । 25 तेनोक्तम्-यत्रोदरपूर्त्तिर्भविष्यति । नायकेन स्थापितः । शुद्धवृत्त्या सश्चरन् विश्वासपात्रं जातः । एकदा चतुष्पदे विसाधनहेतौ प्रहितः । इतो हट्टान् दीयमानान् दृष्टा पृष्टम् । तैरुक्तम्-स्रयः समायाताः । सम्मुखैर्गम्यते । तेन चिन्तितम्-अहमपि यामि । यदि ते मे गुरवो भवन्ति । इति मत्वा स्रीनुपलक्ष्य नमस्कृतवान् । गुरुभिः कुशलं पृष्टम् । स क्रमेण विसाधनमादाय गतः । नायकेन पृष्टम् । तेन इत्तमुक्तम् । नायकः सुभद्रकत्वात्तत्र तेन सह गतः। "न कयं दीणुद्धरणं" इत्यादिच्याख्यानान्ते सुबुद्धो धर्ममङ्गीकृतवान्। गुरूनाह-दक्षिणां याचत । 20 तैरुक्तम्-अत्र जिनालयो नास्ति तं कारय । तथाकृते प्रासादप्रतिष्ठा जाता । एकदा पर्वदिने नायको वस्त्राणि निर्मलानि परिधाय जैत्रेण सह प्रासादं गतः । तेन पूजा कृता । जैत्रायोक्तम्-त्वमपि पूजां कुरु । तेन किमपि द्रव्यमासीत्तेन पुष्पाण्यादाय पूजा कृता । पौषधागारे नायकेनोपवासः कृतो जैत्रेणापि । पश्चाद् गृहे गतो भौतवस्त्राणि मुक्तानि । जैत्रो भोजनायोपविष्टः । परिवेष्य यावत् स्थितस्तावत्पारणार्थी मुनिराययौ । कालेनान-श्चनमादाय खर्ग्यभृत् । जैत्रोऽप्यनशनमादाय त्रिभ्रवनपालदेवसुतो जज्ञे । नायकजीवस्तु जयसिंघदेवो जातः । 25 पूर्वभवपातकादनपत्यो जातः । ततो गुरुभिर्नृपाय निवेदितम् । नृपो हृष्टः ।। इति कुमारपालदेवपूर्वभवप्रबन्धः ।।

२९. द्वात्रिंशद्विहारप्रतिष्ठाप्रवन्धः (Br.)

§ ८७) एकदा श्रीपत्तने द्वात्रिंशदिहाराणां प्रतिष्ठां महदुत्सवेन प्रारन्थां श्रुत्वा वटपद्रपुरनिवासी वसाह कान्हाकः स्वयं कारितप्रासादिवन्वमादाय श्रीपत्तने प्रतिष्ठार्थमाययौ । हेमाचार्याः प्रतिष्ठार्थेऽभ्यर्थिताः । तैर्मानितम् । इत- स्तस्मिन् दिने जनसम्मदीं जातः । रात्रौ घटी मण्डिता । इतो वसाहस्य भोगाद्यपस्कारो विस्मृतः । तेन तमानीतुं अगते लग्नघटी असमये वादिता । स आगतः । मध्ये प्रवेशं अलब्ध्वा लग्नघटीं श्रुत्वा विपण्णः । प्रतिष्ठापश्चाज्ञनो विरलो जातः । कान्हाकोऽप्यन्तः प्रविश्य गुरूणां चरणयोर्लगित्वा बाढं रुरोद् । मदीयं विम्बं प्रभो ! स्थितम् । गुरुभिरूर्ञ्चमवलोकितम् । लग्नं तदा वहमानं विलोक्योक्तम्—भो ! त्वं पुण्यवान् , लग्नमधुनास्ति, परिच्छेदं क्रुरु विम्बप्रतिष्ठायाम् । स न मन्यते । गुरुभिः प्रतिष्ठां विधायोक्तम्—यदि न मन्यसे तथा देवं पृच्छ-एतत्तंथ्यं न

वा । विम्बेनोक्तम्—तथ्यं भो ! तव विम्बं वर्षशतत्रयायुः । एतानि वर्षत्रयायूंषि भविष्यन्ति । इतः कश्चित् व्यवहारी स्तम्भतीर्थं वाणिज्यस्य गतः । तत्र तेन श्रीदेवाचार्या नमस्कृताः । पृष्टम्—िकमद्य कल्ये नृपः पुण्यकम्मं
तनोति ? । तेनोक्तम्—द्वात्रिंशदिहाराणां प्रतिष्ठा जाता । तस्य उत्सवस्य किं वण्यते । लग्नं वेत्सि ? । अमुक्तम्युमानम् । इदं लग्नं हेमाचार्यैर्निरूपितं न वा ? । यदि निरूपितं तदा महत् श्रुण्णं जातम् । स पुनः पत्तनमाययो ।
हेमाचार्यैः पृष्टम्—श्रीदेवस्ययो नमस्कृताः ? । स्वरूपमुक्तम् । त्वया कारणं किमपि न पृष्टम् ? । मया ज्ञातं यदुक्तिमसहमानाः कथयन्ति । इतः श्रीदेवाचार्याः पत्तनमागताः । श्रीहेमाचार्यात्रमस्करणायाऽऽगच्छतो विलोक्योकृम्—त्योधनाः ! नृपगुरूणामर्थे उपवेशनमानयत । श्रीहेमाचार्या विस्तिताः । यावद्वन्दन्ते तावदुक्तम्—हे
नृपगुरवः ! इहास्यताम् । हेमाचार्यैरुक्तम्—प्रभो ! ममोपिर कथमप्रसादः ? । प्रश्वभिरहं दर्शनविरुद्धे पथि सञ्चरन्
हृष्टः श्रुतो वा ? । कथयत—प्रतिष्ठालग्नं भवद्भित्रकृतिन न वा ? । निरूपितम् । तत्र कृरकर्त्तरीयोगोऽस्ति । एतस्त्रमं
पूर्वकृतानामपि प्रासादानामनर्थहेतुः । भगवन् ! किं क्रियते ? । गुरुमिरुक्तम्—स्तोकदोपं वहुगुणं कार्यं कार्यं 10
विचश्वणौरिति विचिन्त्य यदमी प्रासादा मूलतोऽप्यपाकृत्य नृतनास्तदा सर्वेऽपि प्रासादाः स्थिराः स्युः । प्रभो !
एतन्न युज्यते । तर्हि भवितव्यत्त्व बलवती भवतां कोऽपराधः ॥ इति द्वात्रिंशदिहारप्रतिष्ठाप्रवन्धः ॥

(G.) सङ्ग्रहे कुमारपालसम्बन्धिवृत्तम्।

§८८) श्रीकुमारपालः भावस्थितौ अमन् श्रीसिद्धपुरे गतः। तत्र शकुनान्वेषणे तेन कोऽपि मारवोऽभ्यर्थितः . किं मे भविता १। अत्रार्थे गतौ विहः। ततो देव्याह्वाने कृते देवी श्रीम्रुनिसुव्रतचैत्ये आमलसारके खरद्वयं कृत्वा, 15 ततः कलशे त्रयं, ततोऽपि दण्डे खरचतुष्टयं च विधाय स्थिता। ततः स शाकुनिकः प्राह—तव जिनमक्तस्य सतो राज्यप्राह्यादि अधिकाधिकं पदं भवितेति।।

§८९) अन्यदा श्रीकुमारपालस्य कस्यापि कौटुम्बिकस्य गृहे हालिकत्वेन वर्त्तमानस्य सकणशकणांवाभारमुद्ध-हतः शिरस उपरि दुर्गयोपविद्वय खरोऽकारि । ततः शाकुनिकः पृष्टः । तेनोक्तम्-तव राज्यं भविष्यति । परं तव सन्ततिर्न भविता । यतो युगन्धरीधान्यं सर्वधान्योत्कृष्टम्, तेन राज्यम् । यतः प्रभोहेंतोर्भारकः, तेन न 20 सन्ततिस्तव ॥

§ ९०) तपोधनवृत्त्या वर्तमानस्य श्रीकुमारपालस्य राज्यावसरे श्रीप[त्तनो]परि गच्छतः पथि [दुर्गा] पूर्वं वब्बूल-वृक्षे निविश्य स्वरश्रके तदनु राफमध्याकिःसृतफणिः फणोपरि.....सार्थे वहमानः मारुयकः पृष्टः । तेनोक्तम्-दिनत्रयेण तव राज्यं भविष्यति । परं प्रहरत्रयेण विघ्नं विद्यते । तदनु सार्थे तृतीये यामे मेघवृष्टौ... ...मध्याकिःसृते कुमारपाले द्वादश्चनोपरि विद्युत्पातः समजनि । ततस्तृतीये दिने राज्यं जातम् ॥

१९१) अन्यदा श्रीजयसिंहदेवो दिवं गतः । तदनु अष्टादश्चिद्गानि यावत्पादुकया राज्यं कृतम् । ततः श्रीहेमस्विरिकथितिदेनोपिर कुमारपालः समागच्छन् निश्चि कडीग्रामपाद्रशासादे स्वप्तः । तत्रारक्षकः परिश्रमन् आगतः ।
चौरच्छलेन कुद्वयित्वा प्रावरणकम्बलादि गृहीत्वा स सक्तः । प्रातः सम्रत्थाय पत्तने नङ्कलाकान्हडदेवस्य निजभावुकस्य गृहं गतः । ततो भिगन्या दुक्लानि दत्त्वा राजभवनं प्रेपितः । तत्राग्रे त्रयो राजप्रतिपन्नपुत्रा राज्यं
दत्त्वोत्यापिताः । कुलक्षणैरेभिः । तत एकेनोक्तम्—अहं सर्वं मारियिष्याम् । द्वितीयेनोक्तम्—यत् यृयं भणिष्यथ ३०
तदहं करिष्यामि । तृतीयो दुक्लाञ्चलै रुलमानैरुपविष्टः । अत्रान्तरे कुमारपालः समागतः । कान्हडेनोक्तम्—भव्यं
कृतं यद्युना समागतः । राज्ये भवानेव । इत्यं वारितेनापि कृष्णदेवेन राज्यं दत्तम् । तत्रश्चत्रदेशराज्यस्थानमहाधर, ४ राउल, ७२ मंडलीक, ८४ राणा, ३६० सामन्तपरिवारः प्राकारबिहिर्निर्गत्य स्थितः । ततो नित्यं
कथापयन्ति कृष्णदेवस्य ते प्रधानाः—त्वया किं कृतं यदस्य राज्यं दत्तम् १ । तेन कथितमहं न मारियिष्यामि,

यूयं मारयथ । मया राजा समग्रपरिवारो राजपाटिकोपायेन बाह्ये निःकासितोऽस्ति । ततो राजा दृष्टिकलया विनष्टं वीक्ष्य पश्चाद्रलितः । प्राकारासन् कान्हडदेवं विस्त्रयित्वा ततो निश्चि सप्तश्चतमितगढसंखराजपुत्रहस्ते दीपिका अपीयत्वा राजगोश्चईयाकं सुप्तं विश्वत्य एकरात्रिमध्ये समग्रमपि राजचकं वशीकृत्य राज्ये निविष्टः ॥

§ १२) श्रीक्रुमारपालेन राज्ये प्राप्ते तत्क्षणं कडीतलारक्षस्याकारणे सुखासनेन समं लेखः प्रहितः। स च विस
ग्रियापन्नमनाः समागतो राज्ञा सन्मानितः। ततो विशेषविस्योऽज्ञिन। अत्रान्तरे युगपत् स्नानद्रोणी.....तेन

पृष्टिर्द्शिता......सकशाप्रहारां वीक्ष्य विषण्णेन चिन्तितं यदसौ मां मारियण्यिति विषं दत्त्वा। ततो

भोजनावसरे राज्ञा बहुमानेन निजरसवतीं भोजियत्वा राणकपदं दत्तम्। इत्थं विषि(ष)ण्णः क्षीणतेजा ज्ञातः ।

राजा तु पुनः पुनः चरान् परिष्टच्छिति। स चाद्यापि जीविति। स इत्थं चतुःपथानितक्रम्य प्रतोलीद्वारे गतो

मृतः। राज्ञोक्तम्-[आ! बाढं] ढाढिसिकः। सर्वैः पृष्टं-राजन्! किमेतद्वयं न विद्यः। अतो राज्ञापि सर्वो वृत्तान्तो

गिनिगदितः। अतो मया मारणार्थमस्य प्रौढिर्दत्ता। यथा मम महत्त्वं स्थात्॥

१२३) एकदा कुमारपालदेवः सप्तदिनानि यावत् बुस्रक्षितः कस्यापि गोधूमक्षेत्रे कलिङ्गानि गृहीत्वा अरघट्ट-घटिकया वाफयित्वा रात्रौ यावद्भक्षितुं लग्नः, तावद् हालिको दण्डस्रद्यम्य धावितः। परं क्षेत्रपतिना रक्षितः।

राज्ये प्राप्ते कालिङ्गीयको नाम्ना ग्रामो दत्त आघाटे तसे ॥

१९४) अन्यदा श्रीकुमारपालो दिनत्रयं क्षुधितः परिश्रमन् कस्यापि व्यवहारिणो गृहे प्रविश्य निविष्टः।

15 गृहाधिपतेर्लेखकं विद्धतो मध्यरात्रिरजनि । ततस्तेन चिन्तितं—यद्यसौ न भ्रुक्तोऽस्ति, तदा भोजियध्यामि । ततः

पृष्टे स व्रह्मभकलत्रगृहे प्रेपितः। तया तस्ते भोजनं न दत्तम् । द्वितीयया हिष्तिया दत्तम् । प्राप्ते राज्ये राज्ञः स्थालं

गृहीत्वा चौरैस्तस्य श्रेष्ठिनो हट्टे व्ययितम् । ततो राज्ञा आकारितो व्यवहारी । उपलक्षितः । राज्ञोक्तम्—तव

कलत्रद्वयमास्ते । तेनोक्तम्—एवमेव । राज्ञोक्तम्—आकारय तत् द्वितयम् । यथा तव सक्रुद्धम्बस्य निग्रहं करोमि ।

कुटुम्बे समेते पूर्वोपकारीति भिणित्वा राज्ञा तस्य प्रसादो दत्तः ॥

20 ६९५) पुरा श्रीकुमारपालेन क्षयाहे पिण्डदानसमये उधियमाणे द्वारमट्टेन मयणसाहारेण पितामहपिण्डे श्रोक्तमिति—राजन्! राजपितामहं मिल्लिकार्जुनं पिदणां मेलय तदनु पिण्डं उद्धर। इति श्रुत्वा राज्ञा पिण्डः पथानमुक्तः।
राज्ञा बीटके दीयमाने सकलेऽपि राजमण्डलेऽधो विलोकयित बाहडवारितेनापि आम्बडेन बीटकं जगृहे। राज्ञा
कटकं राजिगिरं च समर्प्य प्रेपितः। संग्रहारे सकलमपि बलं भग्रम्। तत आम्बडः कृष्णगुरूदरोदरान्तः कृष्णवासाः कस्तूरिकानुलेपनः पत्रपुटमोजी कस्थापि निश्चि दिने निजवदनं न दर्शयित। राज्ञा तिद्वज्ञाय स्वयमागत्य
25 सन्मानं दन्वेति प्रोक्तम्—मम मिल्लिकार्जुनविग्रहे त्वमेव सेनापितः। पुनिद्वेतीये वर्षेऽश्वसहस्र ४४, पित्तलश्च ३
मितं कटकं दत्तम्। तेन मिल्लिकार्जुनं विग्रच्य नान्यस्य मे प्रहार इति प्रतिज्ञातम्। सत्वरं गत्वावेष्टितः। युद्धे
जायमाने निजी चरणी परदन्तिदन्ते दन्ता तत्राधिरुद्ध कोङ्कणस्थामी व्यापादितः। कोङ्कणं गृहीतम्। मृटक १८
मौक्तिक। संयोगसिद्धि सिग्रा। सहस्रकिरण ताडंक २। अग्निपखालु पछेवडउ। ग्रङ्कारकोडी साडी। सेडउ पट्टहस्ती। अष्टोत्तरसहस्रमौक्तिकहारः त्रिसरकः। चतुश्चत्वारिग्रदङ्कलप्रमाणं मरकतिलङ्कं नीलकण्ठस्य। एतदानीय
30 राज्ञः पादौ शिरसा सह पुजितौ। अत्रान्तरे द्वारमट्टेनोक्तम्—

"कीडी रक्ख करंतु चडिउ रणि मइगल मारइ०॥"

१९६) श्रीआम्बडोपि रणांगणपतितो जगादिति-देवबुद्ध्या जिनेन्द्र एवास्ति । गुरुः श्रीहेमसूरिरेव । स्तामी श्रीकुमारपाल एव । ततः केनापि कविना इति जगाद-"वरं भट्टैभीव्यं० ॥"

§९७) अन्यदा श्रीकुमारपालेन पृथिवीमनृणां कर्त्तुं गुरवः सुवर्णसिद्धिं पृष्टाः । गुरुभिरुक्तम्-मम.गुरवो 35 जानते, नाहमिति प्रबन्धो ब्रेयः ॥

- §९८) एकदा श्रीकुमारपालेनात्मनः श्रीजयसिंहस्यान्तरं पृष्टम् । सभ्येरुक्तम्-श्रीसिद्धराजस्याष्टौनवति गुणाः, दोषद्वयं देहे । भवति अष्टनवति दोषाः, गुणद्वयम् । भवान् विक्रमी, कृतज्ञश्च । श्रीसिद्धराजस्तु मत्सरी, दीर्घरोषी च ॥
- १९०) श्रीसङ्घयात्रायां जायमानायां रैवतिगरी छत्रशिलाकम्पे जायमाने राज्ञा पृष्टेर्गुरुभिरूचे-द्वात्रिंश-स्वक्षणोपेतं पुरुषद्वयं यदि शिलाधो यास्यति तदा शिला पतिष्यति । अतो नव्यपद्यया देवनमस्करणं विधास्यामः । इत्युक्ते आम्बाकेन नव्या पद्या कारिता ॥
- § १००) अथ महापूजायां महाभोगे विधीयमाने धृपधृमान्तरिते गर्भगृहान्तरे प्रश्वभिः श्रीसोमेश्वरः प्रत्यक्षी-कृतः । देवादेशेन ततः प्रभृति मजाजैनः कुमारपालोऽभृत् ॥
- § १०१) अथ श्रीदेवेन्द्रसूरिभिः श्रीसेरीसके तीर्थे निर्मिते कान्तीत आकृष्टिविद्यया महाविम्बानि समानीतानि । मनसीति चिन्ता जाता-श्रीपत्तनं सेरीसकं च एकमेव विधास्मामि । अत्रान्तरे गाजणपतिनृपतेरुपरि 10
 कटकं विधाय श्रीकुमारपालदेवः श्रीप्रसुभिः सह तत्रागतः । श्रीदेवपादान्त्रमस्कृत्य श्रीदेवचन्द्रसूरयो नमस्कृताः ।
 श्रीसूरयः कथितवन्तः—राजन्! वर्षासु कथं कटकबन्धः । राज्ञोक्तम्—साम्प्रतं छलं विना गाजणपतिने विनश्यति ।
 स्रिभिरुक्तम्—कथं भवद्वरूणां एतावत्यि शक्तिनीस्ति । राजा मौनेन स्थितः । ततस्तैरुक्तम्—अत्राद्य कटकं
 स्थापय । अहं गाजणपतिमानेष्यामि । निश्च स्रिभिराकृष्टिविद्यया देवतावसरं कुर्वद्विर्गाजणपतिरानीतः । परस्परं
 मैत्री जाता । अक्षरैः पाङ्कलां (१) पत्राणि जातानि ॥
- § १०२) श्रीहेमाचार्यैरवसानसमये सगद्भदं राजानं समीक्ष्योक्तम्-मम तव च पण्मासान्तरमेवास्ति । ततः प्रभोरवसानानन्तरं रामचन्द्रेण श्रीसङ्घस्य पुरः पठितमिति-"महि बीढह सचराचरह०॥"
- §१०३) अथ पण्मासान्तरे श्रीकुमारपालेन भूमौ मुक्तेन श्रीवीतरागबिम्बदर्शने उक्तमिति—"सावय-घरंमि०॥" अत्रान्तरे मिल्लकार्जुनभांडागारनीतसंयोगसिद्धिसिप्रा जलपानार्थं याचिता। अजयपालदेवोक्तैश्रार-क्षकैर्नापिता। तदा चारणेनोक्तम्—"कुयरङ कुमरिबहार०॥"

३०. अजयपालप्रबन्धः (P.)

§ १०४) अथाजयपालेन प्रासादेषु पात्यमानेषु, यमकरणं तारणदुर्गोपरि सन्नद्धं प्रातः प्रयास्यतीति श्रुत्वा वसाह-आभडमुख्यः समग्रोऽपि सङ्घः पर्यालोचितवान् निलोकयत श्रीकुमारपालदेवेन प्रासादाः कारिताः, अनेन दुरात्मना पातिताः । कोऽपि इदं न वेत्स्यति यद्युपः श्रावकोऽभूत्र वा । तारणदुर्गप्रासादो रिक्षतुं शक्यते तदा भन्यम् । सीलणाग कुतिगिया विनाऽन्योपायो नास्ति । तस्य गृहे चलत । ते तत्र गताः । सङ्घल्तेनाभ्युत्थितः । 25 करौ संयोज्य उक्तम् नमिय विषये महान् प्रसादः । किं कार्यम् १ । मोस्त्वं वेत्सि पूर्वनृपेण प्रासादाः कारिता अनेन पातिताः । एकस्तारणदुर्गस्यावशेषोऽस्ति, सोऽपि प्रातः पतिष्यति । यदि त्वया रक्ष्यते । अन्यः कोऽप्युपायो नास्ति । तेनोक्तम् एष भवतां प्रमादः । पूर्वं ज्ञापितोऽभूवं तदैकोऽपि नापतिष्यत् । यञ्जातं तञ्जातम् । त्वयाऽमुं रक्षता सर्वेऽपि रिक्षताः । सङ्घः सत्कृत्य विसृष्टः । स नृपसमीपं गतः । देव ! म्रुत्कलाप्य यामि । भोः क यासि १ । देव वयमुत्पन्नभक्षकाः । सर्वं भक्षितम् । कापि रायने गत्वा त्वनाम्ना द्रविणमादाय पुनरेष्यामः । नृपेणोक्तम् नयदि ३० पत्तनं विहाय यूयमन्यत्र यात तदाऽहं लजे । अवसरं दास्यामि । देव ! अवसरो भवति वा यामि १ तिर्हे सज्जतां कृत्वा सन्ध्योपर्येहि । नृपेण सर्वः कोऽप्याहृतः । प्रारब्धं प्रेक्षणम् । इतः सीलणेन इष्टिकाः समानीय पातिताः मृत्तिकारासभानि रङ्गान्तः समाजग्रुः । पानीयं च । किटिकस्त्वाकारितः । प्रासादं कुरु । तेन कृतः । मध्ये

एकस्य देवस्य स्थानं कुरु । तेन कृतम् । ध्वजाऽऽरोपं कृत्वोक्तम्—देव ! गजान्ता लक्ष्मीः, ध्वजान्तो धर्मः । अथाहमम्रं निर्माय कृतकृत्यो जातः । शयनं विधास्ये इति शुकटीं (मुखे पटीं ?) कृत्वा सुप्तः । इतः पुत्रेणागत्य देवकुलिका
पातिता । सीलणः पटीं त्यक्त्वोत्थितः सन् प्राह—रे ! केनेदं पातितम्,। भवतो ज्येष्ठपुत्रेण । सीलणेन स चपेटया
हतः । रे ! त्वमस्यापि सद्दशो नः एतस्यापि नृपतेहींनः । अनेन नृपति[ना पित]रि शृते तस्य कीर्चनानि पातितानि,
त्वया तु मम जीवतोऽपि पातितम् । मम मृत्युरपि न प्रेक्षितः । इति श्रुत्वा नृपस्य नेत्रयोनींरं पपात । सीलण !
किं कथयसि ! । देव ! विमृश तथ्यमिद्मतथ्यं वा । गृहस्थः कीर्चनं कारयति यावन्मम कोऽपि भविष्यति तावदस्य सारा भविष्यति । ये पतितास्ते पतिताः, श्रेषाः सन्तु । एक एवावशेषोऽस्ति यः स तव नाम्ना । युमकर्णुं
व्यावर्त्यताम् । इत्थं कृते प्रासादाश्रत्वार उद्गरिताः ।। इति तारणगढप्रासादरक्षणप्रवन्धः ।।

§ १०५) अथ राज्यात्तृतीये वर्षे पर्युषणापर्वणि थारापद्रीये प्रासादे श्रावका मिलिताः । आभडवसाहेनोक्तम्-10 समयं विलोकयत ! । यत्र तपोधनानां सहस्रा आसन् तत्राद्य स कोऽपि न दृश्यते यस्य मुखात्प्रत्याख्यानमपि क्रियते । कापि केन [पत्त]नमध्ये श्रुतो वा दृष्टो वा । एकेन कर्णे प्रविश्योक्तम्-यद्राजपुत्रवाटके धरणिगः श्रेष्ट्यस्ति । तेन जङ्घावलपरिक्षीणाः खगुरवः स्थापिताः सन्ति च्छन्नम् । तद्नु वसाहस्तस्य गृहे गतः । तेनाभ्यत्थितः, पादमवधार्यताम् । अद्य सांवत्सरिकपर्वणि तपोधन क तपोधनाः सन्ति ? । तेन भूमिगृहे नीत्वा गुरवो दर्शिताः । वसाहस्तु चरणयोर्निपत्य रोदितं प्रवृत्तः-भगवन् ! स कोऽपि नास्ति यो.....दुरात्मानं 15 नृपं शिक्षयति । गुरुभिरुक्तम्-शक्तिरस्ति परं सान्निध्यकर्त्ता कोऽपि विलोक्यते । वसाहस्तु तस्यैव श्रेष्टिनः शिक्षां दुन्ता ययो । गुरवो जप्तुं प्रवृत्ताः । इतस्तृतीयदिने.....र्जाता । यतो मदीयौ धांगा-वइजलियाख्यौ पदाती स्तः । तयोर्माता सहागदेवी । सा स्वैरिण्यस्ति । सा नृपेणानीयान्धकारे स्थापिताऽस्ति ।..... वइजलिकः पीत्वा समायातः । नृपेण हास्ये प्रारब्धे उक्तम्-रे ! याचस्व स्वैरम् । तेनोक्तम्-देव ! अधुनाऽवसर-योग्यं दीयताम् । नृपेणोक्तम्-उपविकायां वज । परं वदनं नावलोकनीयम् । स तत्र गतः । इतः पृष्ठे दीपकरः 20 समाययौ । तेनाम्बा दृष्टा, सवित्र्या पुत्रो दृष्टः । परस्परं लिखतौ । वइजलेन धांगाऽग्रे उक्तम्-नृपेणैवंविधं हास्प्रमकारि । तदहं मरिष्ये । तेन साक्षेपमुक्तम्-मारयिष्ये न वदसि, मरिष्ये वदसि । अमुं मारयिष्यावः । इति निश्चित्य स्थितौ । नृपस्तु राजपाट्यां निर्ययौ । वलमानः सन्ध्यायां सुखासनासीनोऽन्धंकारे प्रतोल्यां प्रविश्चन् , बइजलेन कपाटपार्श्वानिर्गत्य धांगाकेन सह स्थितेनोभाभ्यां नृपो हतः। कलकले जाते बइजलो नष्टः, धांगाको हतः । राजा तु तत्रैव पपात । जनो दिशो दिशं गतः । इतो लब्धसंज्ञस्तृपितो राजा रिंखन् प्रतोलीप्रत्यासन्ने 25 तन्तुवायगृहे प्रविष्टः । गत्तीयां मुखे वाहिते, तन्तुवायेन लक्कटः क्षिप्तः, खानं मत्वा । तेन दीर्णशिरा पपाठ-

> (१२६) धांगा दोसु न वइजला न वि सामंतह भेउ। जं मुणिवर संताविया तह कम्मह फलु एहु॥

इति वदन् पीडया मृत्वा श्वश्रं ययौ ॥ इत्यजयपालप्रबन्धः ॥

(G.) सङ्ग्रहगतं अजयपालवृत्तम्।

^{30 §}१०६) श्रीअजयपालेन श्रीकपर्दिमन्नी अमात्यताहेतोरुपरुद्धः । मन्त्रिणोक्तम्-मनसा समालोच्य देवादेशं विधास्मामि । इति भणित्वा गृहं प्रति गच्छत ईशानदिशि वृषभखरपश्चकं वामभागेऽजनि । तन्मारुयकस्य मन्त्रिणा कथितम् । तेनोक्तम्-न भव्यम् । यदयं वृषः शिववाहनम् । अतः परं शिवशासनं विजयि भविता । ततश्च न गृहीतं अमात्यत्वम् । राज्ञा धृतः । तत्रस्थरामचन्द्रेणोक्तम्-"जो करिवराण कुम्भे०॥"

§१०७) श्रीहेमस्रिरिश्च्यौ रामचन्द्र-बाल्चन्द्रौ । गुरुभिः सुशिष्यं भणित्वा रामचन्द्रस्य विशेषविद्याः दत्ताः । मानं च दत्तम् । तत्कोपेन बालचन्द्रो निःसृतः । तस्याजयपालेन सह मित्रत्वं जातम् । राज्ये प्राप्तेऽजयपालेन रामचन्द्रस्थोक्तम् –श्रीहेमचन्द्रस्रीणां सकला विद्या मम मित्राय बालचन्द्राय देहि । तेनोक्तम् –गुरूणां विद्याः कुपात्राय न दीयन्ते । राज्ञोक्तम् –तिर्हं अग्नितत्र जिह्वां खण्डियत्वा उपविश्वता तेन दोधकपश्चश्चती कृता ॥

३१. धर्मस्थैयें सज्जनद्ण्डपतिप्रबन्धः (B.)

§ १०८) अथ दण्डपितसज्जनप्रवन्धः—श्रीपत्तने प्रथिलमीमदेवो राज्यं करोति स । तेन सहस्रकला वेश्याऽन्तःपुरे क्षिप्ता । सा राज्यिचन्तां सकलां करोति । दण्डपितः सज्जनः श्रीमालज्ञातीयो मजाजैनो राज्याधिकारं करोति
स । स देवपूजां विना न भुक्ते, प्रतिक्रमणं विना न शेते । अथैकदा पत्तनोपिर तुरुष्काणां सैन्यमाययो ।
दण्डनायकसज्जनेन बनासनदीतीरे गाडरो नामाऽरघट्टस्तत्र रणक्षेत्रं सजीकृतम् । देवी सहस्रकला स्वयं सज्जनदण्ड-10
[नाय-]केन सह सैन्यमादाय सम्मुखमागता । अथसहस्र २८ मनुष्यसहस्र ३२ सार्धम् । तत्र प्रात्युद्धमिति निश्चिकाय । रात्रौ शक्कजागरणं कृतम् । वीराणां सन्नाहाः समित्यतः । गजा १८ गुडिताः । अश्वाः सर्वेऽपि सिजताः ।
प्रक्षरां ग्राहिताः । इतो देव्या सज्जनो दण्डपितः सैनान्येऽभिषिक्तः । स सन्नाहमादाय यामिन्याः पाथात्यप्रहरे
गजमधिरुदः । चतुर्दिश्च सन्नद्धेवीरैर्वृतः । इतो मित्रणा गजस्कन्त्रे स्थापनाचार्यं निवेश्य प्रतिक्रमणं कृतम् । पार्थस्थिश्चिन्तितम्—असार्तिक युद्धं भविष्यति । तेन सामायिकं पारितम् । रणरसोत्सका वीरा उभयोः पश्चयोमिलिताः । ।
महान् रणः समजिन । सज्जनदण्डेशेन स्वयमुत्थापनिका कृता । शरीरे घातदशकं लग्नम् । परं म्लेच्छितः । विद्विः
रक्तम्—देवि । रणः शोधितः । इतो देवी स्वयमेत्य दुक्तुलाञ्चलेन सज्जनगात्रं प्रमार्ज्य गुप्तोदरे निनाय । इतः पार्श्वस्थैरक्तम्—देवि । रणः शोधितः । हतो देवी स्वयमेत्य दुक्तुलाञ्चलेन सज्जनगात्रं प्रमार्ज्य गुप्तोदरे निनाय । इतः पार्श्वस्थैरक्तम्—देवि । रणः शोधितः । देवी स्वयमेत्य प्रमुन्दण्डेश ! किमेतत् १ । देवि ! रात्रौ स्वकार्यं कृतम् , प्रातस्तव ।
यत् पिण्डस्त्वदीयस्तेन यत्कृतं तत्तवः कार्यम् । मम साय चन्नम । एवं च तुरुष्कान्विलत्य देवी पत्तनं थ
प्राप्ता । मन्नी सजाङ्गो जातः ॥ इति धर्मस्थैरं सज्जनदण्डपितप्रवन्धः ॥

३२. मन्त्रियशोवीरप्रवन्धः (P.)

§१०९) श्रीजावालिपुरे श्रीसमरसिंहन्पाङ्गजः श्रीउदयसिंहस्तस मन्नी दुसाजस्तत्पुत्रो यशोवीरस्तस भार्या सहागदेवी, सुतः कर्म्मसिंहः। एकदा सण्डेरगच्छोद्भवैः श्रीईश्वरस्वरिभिरुक्तम्—हे मन्निन्! तव पुरे धारागिरिवा-टिकाऽस्ति। तत्र अद्यदिनात् षोडशमे दिने तव वाटिकामध्ये स्थितस्य द्विप्रहरवेलायां यो द्विजः समभ्येति, व्या तस्मिन् दृष्टमात्रे 'पादमवधार्यताम्, अधुना प्राप्तकालं शीतोदनं कियताम्'। तत्र क्र्रकरम्बो द्वा कृतः, शाके लिम्बुकं च भोजनीयम्। तदनु द्रम्मसहस्र (३०००) वासणे प्रक्षिप्य एका त्रिपट्टदुक्ला मिंहदेया। भव्यरीत्या चिन्तनीयम्। मन्त्री तां सामग्रीं कृत्वा वाटिकायां गतस्तत्र कीडितुं प्रवृत्तः। इतो नागडनामा भट्टपुत्रस्तिदिन-लङ्घनावसाने—अद्य यशोवीरं वन्दी करिष्ये वा मे चिन्तितं भोजनं प्रयच्छाति—इति विचिन्त्य मित्रणं वाटिकायां मत्वा विवेश। मित्रणा दृष्टमात्र एव उक्तः—सत्वरमेत्य शुज्यताम्। भोजने दिशिते सुस्थीभूतः। सुलं प्रक्षाल्य अभोक्तसुपविष्टः।अनन्तरं मित्रणा वस्नाणि द्रम्माश्च दिशिताः।तेनोक्तम्—मित्रन्! ममाभिप्रायः त्वया कथं ज्ञातः!। अद्य मे मनसि इत्यासीत्—यदेवं ददाति वा मारयामि। मित्रणोक्तम्—किमत्र ज्ञानम् । नागडेनोक्तम्—मित्रन्! मया तवोपकारः कथं कर्तु शक्यः। परं तथापि मे दैवः किमपि ददाति, त्वयाऽऽत्मानं ज्ञाप्यम्। एवमाख्याय प्रस्तिकारम् वर्षाकर्तः। स्राप्तिकारः। किमपि ददाति, त्वयाऽऽत्मानं ज्ञाप्यम्। एवमाख्याय प्रस्तान्यतः।

गतः। क्रमेण नागडस्य श्रीपत्तने श्रीकरणं जातं राज्ञः श्रीवीसलदेवस्य। पश्चात् राउल-उदयसिंहराजादेशे समायाते मूं(वी?) सलदेवस्य किकिंडिकमर्ण्य। नागुडाग्रे त्रा(झ?) गर्डं च कथयति। राज्ञा रुप्टेन ससैन्यो मन्त्री नागडः प्रहितः। सुन्दरसरोपकण्ठे कटकं स्थितम्। विग्रहः प्रारव्धः। टङ्कशाला पतितुमारव्धा। पण्मासान्ते दण्डेन भव्यं विधाय म.....स्थाने गतः। उदयसिंहस्तु तथैव जल्पति। नागडो नृपाग्रे प्रतिज्ञामाधाय जावालिपुरग्रहणे प्रौढकटकेन निःसृतः। क्रमेण स्वर्णगिरि[दुर्ग] पृष्टौ वाघरा.....कटकमावासितम्। राउलेनोपरि स्थितेन सर्वं दृष्ट्याऽवलोक्य, यशोवीरं प्रत्युक्तम्—मन्त्रिन्! सर्वस्वमपि दन्त्वा नागडं पश्चा.....वर्त्तय। जीवतां सर्वं भविष्यति। मन्त्री मध्या- ह्ववेलायां भव्यार्थे चिलतः। इतः प्रतोल्यग्रे खेजडीतरोस्तले गोगामठे एकश्चारणश्चिटतोऽस्ति तेन........मञ्चणं प्रति.....

(१२७) [दूसा]...जग्र (?) वीर जड आव्यां दल वाघराई। मोटी हूंती हीर देसह वासेवा तणी॥

गिष्ठा चिन्तितम् निरुप्त कर्णावपाकिरिष्ये.....गतः। राणकः प्रतीहारेण विज्ञप्तः नेव ! मारुकस्य प्रधानः समागतोऽस्ति। मध्ये निवेशयत। ततः प्रणम्य मन्नी आसीनः। राणकेनोक्तम् – भो मन्निन् ! तव ठकुरः एतावन्ति दिनानि विरूपवक्ता आसीत्। अधुना मय्यागते किं करोति ?। देव ! प्राधूर्णकार्थे सजीभ्य स्थितोऽस्ति। सत्वरमागच्छत। मन्निन् ! अहं नागडः। यदि दुर्गं पृथग् पृथग् भङ्क्त्वा न क्षमामि। मन्निणोक्तम् – सत्वरमागन्तव्यम्। इत्युक्त्वा मन्नी निःसृत्य गतः। राणकेनोक्तम् – रे ! क एप मन्नी ?। देव ! यशोवीरः। तिर्हे सत्वरगित्रमाकारयत। मन्नी आकारितः। राणकेनोक्तम् – मन्निन् ! माम्रपलक्षयसि ?। देव ! त्वां को न वेत्ति ?। राणक-स्त्वाह – यस्त्वया अमुकवर्षे वाटिकान्तः क्रक्तरम्वं मोजितस्तम् पुलक्षयसि ?। देव ! क्थं] नोपलक्षे। मन्निन् ! स अहम्। तस्योपगा(का)रस्थैकवेलं भव्यं त्वया लभ्यम्। लोहिटकं विना यामि। इदं तव मानम्, परं स्वसामी विरूपाणि वदिश्वार्यः। मन्नी परिधापितः। मन्निणोक्तम् – यद्येवं तिर्हे अधुनैव प्रयाणं कुरु। यथा मे स्वामी प्रत्येति। तदैव प्रयाणं कृत्वा कटकं पथाद्रतम्। मन्नी ईर्ष्यां विहरन् चारणे, यावक्तत्रवायातः, तावक्तेनेक तत्रस्थेनोक्तम् –

(१२८) जिम केतृ हरि आज तिम जइ लंकां हुत दुसाजुत्र। नांऊं बूडत राज राणाही[व] रावण तणउं॥

मन्त्री परिधापनिकां तसी दत्त्वा पुरे प्रविष्टः। राउलेन सम्भूषितः।

(१२९) ओं आगिलउ जु होइ सो जसवीर न जाणीउ। ए बूझइ सहु कोइ एकावन बूझही नहीं।। §११०) मित्रणा यशोवीरेण तलहिकायां खर्णगिरेश्वन्दनवसद्यां श्रीवीरिवम्बं कारितं प्रतिष्ठापितं च। तदनु 25 श्रीजयमङ्गलस्रिरिमरुक्तम्-

(१३०) यत्त्वयोपार्जितं वित्तं यशोवीर! प्रतिष्ठया । तल्लक्षगुणितां नीतं यशो वीरप्रतिष्ठया ॥
तदनु आलङ्कारिकैः श्रीमाणिक्यस्रिरिभः-

(१३१) यशोवीर! लिखत्याख्यां यावचन्द्रे विधिस्तव। न माति भुवने तावदाद्यमप्यक्षरद्वयम्।।

§१११) अथ एकदा गूर्जरत्रां भङ्क्त्वा तुरुष्का व्याष्ट्रकाः सुन्दरिसरिजलं पीत्वा सिराणाग्रामे आवासिताः। 30 तत्र राउलेन तैः सह सङ्घामं विधाय भगाः। अइवको नाम स्रुख्यो मिक्कि मारितः। तद्नु चारणेनौकम्-

(१३२) सुन्दरसिर असुरांह [दलि] जलु पीधउं वयणेहिं। उदयनिरंदिहिं कहिउं तह नारीनयणेहिं॥

तदतु परिभवमसहमानः श्रीजलालदीनसुरत्राणः सं० १३१० वर्षे माघमासस्य पश्चम्यां स्वयमागत्व पर्वतस्य स्वर्णगिरेः शृङ्के आवासान् दत्त्वा स्थितः । प्रत्यहं ढोये (१) जायमाने सुरङ्गाखानकैः खण्डिः पातयितुमारब्धा ।

mote All the Alle

पतिता कर्कफोष्ठके । स्थानान्तरस्थैः पत्तिभिर्धान्यं रन्धमानैः स्थाल्युच्छलात् परिज्ञाता । प्रभोरग्रे निवेदितम् । राउलेन बापडो राजपुत्रो भन्यं कर्त्तुं नियुक्तः । तेन सुरत्राणं नत्वा उक्तम्—देव ! दण्डं कुरु । सुरत्राणेन लक्ष ३६ द्रम्माणां याचिता । बापडेनोक्तम्—वयं द्रम्मान् न जानीमः । पाइ(रू)थैकान् दास्यामः । पार्धस्थैरुक्तम्—देव ! मान्यताम् । एकस्मिन् पारूथके ज्यौ द्रम्मा भवन्ति । सुरत्राणेन मानितम् । तेनोक्तम्—देव ! प्रसीदस्त, करं देहि । करो दत्तः । इतश्च वर्द्धापनिकेनोक्तम्—देव ! सुरङ्गा पातिता । बापडेनोक्तम्—देव ! त्वं महाराजस्तव जिह्वा 5 अन्यथा न स्थात् करश्च [दत्तः] । सुरत्राणेनोक्तम्—तव बुद्धिश्रेष्टाय मास्ये (१) भैपीत् । दण्डमानय । तदनु राउलेनोक्तम्—सुताः पश्च मे । कं गृहाण १ । सुरत्राणेनोक्तम्—यशोवीरसुतमर्पय । राउलेन मन्त्रिपती अम्यर्थिता । तया स्वसुतस्त्वेकोऽपि समर्पितः । कर्टकमुत्थितम् । तदनु देवदिजादीनां सर्वस्वमात्तम् । दण्डादुद्धरितवित्तेन तेन श्रीस्वर्णिगरौ दुर्गः कारितः । राउलेन यशोवीरपुत्रस्य कर्मसिंहस्य गृहागतस्य रामश्चनं प्रसादे दत्तम् ॥ इति राउलउदयसीह-मन्नियशोवीरप्रवन्धः ॥

(G.) सङ्ग्रहे यशोवीरस्योह्नेखो यथा-

(१३३) ओ आगिलड जु होइ पइं जसवीर न सिक्खियड। महि मंडलि सहु कोइ बावन्नइ बूझइ बहू॥

चारणदानमदातुर्मित्रणः पुरश्चारणेन पठितम् । तसौ घोटको दत्तः ।

(१३४) संतः समंतादिष तावकीनं यशो यशोवीर! तव स्तुवंति । जाने जगत्सज्जनलज्जमानः प्रविदय कोणे त्वमतः स्थितोऽसि ॥ इति पठिताय भट्टाय मन्त्रियशोवीरेण कोणाग्रामसोद्घाहितं दत्तम् ॥

३३. विमलवसतिकाप्रबन्धः (B.)

§ ११२) अथ विमलवसतिकाप्रक्नधः—

- (१३५) श्रीविक्रमादिखन्दपाद्व्यतीतेऽष्टाशीतियाते शरदां सहस्रे। श्रीआदिदेवं शिखरेऽर्बुदस्य निवेशितं श्रीविमस्नेन वन्दे॥
- (१३६) भीमदेवस्य नृपस्य सेवाममन्यमानः स तु व(ध)न्धुराजः। धाराधिपं भोजनृपं प्रपेदे स्ववंद्यसेवा हि नृणां विपत्सु॥
- (१३७) विद्याधिक्याधिसंहर्जी मातेव प्रणताङ्गिषु। श्रीपुञ्जराजननया श्रीमाता साऽस्तु वः श्रिये॥
- (१३८) मेरुणा मनुजदुर्लभेन किं किं हिमैकनिधिना हिमाद्रिणा। साहिना मलयपर्वतेन किं नन्दिवर्द्धनसमो न भूधरः॥
- (१३९) भूभृतां निजगृहेषु तिष्ठतां वाञ्छितं यदचिरान्न सिद्धाति । नन्दिवर्द्धनविरङ्कवासिनो हेलयैव शबरीजनस्य तत्॥

§११३) अथ श्रीमातादेच्या अम्बाया दैवयोगान्मेत्री जाता । अम्बा गिरनाराधिष्ठात्री । अन्तरान्तरा प्रीत्या-३० ऽर्बुदे समभ्येति । श्रीमाता तु तत्र न याति जैनच्यन्तरभयेन । एकदा श्रीमातयोक्तम्-भगिनि ! अत्रैव यदि स्थासि तदावयोः प्रीतिनिरन्तरा स्थात् । अम्बयोक्तम्-जिनभ्रवनं विना स्थानं न । तदत्र नास्ति । श्रीमातयो-

15

20

=1

25

क्तम्-द्रव्ययुतां भूमिमर्पियिष्यामि । तत्र जिनायतनं कार्यम् । इह वक्कलचम्पकौ स्तः । तयोस्तले द्रम्मलक्ष २७ सहितं निधानमस्ति । अम्बयाऽचिन्ति—कः प्रासादं कारियण्यति । इतश्चन्द्रावतीं परित्यज्य धंपृपरमारः श्रीमीम-देवेन समं विरोधात् धारापुरीं गतः । पश्चान्नृपेणाश्वसहस्त्रेद्वीदशिभ्युतो विमलदण्डनायकश्कतं दत्त्वा प्रहित-श्चन्द्रावत्याम् ।

(१४०) प्राग्वादवंशाभरणं बभूव रत्नं प्रधानं विमलाभिधानम् । यत्तेजसा दुस्समयान्धकारमग्रोऽपि धर्मः सहसाऽऽविरासीत्॥

अथ देच्यम्बा प्रासादार्थे प्रत्यक्षीभूय विमलदण्डपतिं जगाद-

(१४१) अथैकदा तं निशि दण्डनायकं समादिदेश प्रयता किलाम्बिका। इहाचले त्वं कुरु सद्म सुन्दरं युगादि भर्त्तुर्निरुपाधिसंश्रय।॥

10 दण्डपितना उक्तम्-भूमिः क ?। देन्याह्-श्रीमातयाऽपिंतमितः । दण्डपेनोपिर गत्वा स्थानं निरूपितम् । कुक्कमन्गोमय...........दिन्यपुष्पदर्शनेन च । पूर्वं धारायां धंपूपरमारपार्श्वे मनुजमप्रेपीत् । भवतामनुमितभवित तदा जैनं प्रासादं कारयामि । भवतां भन्यं करिष्यामि । पुनरत्रानयिष्यामि । तेन कथापितम्-वयमत्र गोष्ठिकाः । इतो देवी स्थानं दर्शयित्वा रैवतं गता । कर्मस्थायो यावान् दिने भवति तावान् रात्रो पतित । कर्मस्थायः स्थितः। तत्र प्रासादः शुभमुहूर्ते प्रारच्धः। पण्मासान्ते देवी समाययो । प्रासादं स्थितं दृष्टा देवी जगौ-किमिदम् ?। 15 तेनोक्तम्-देवी पादमन्यत्रावधारिता । कथं निष्पद्यते ? । देव्या उक्तम्-इह देवकुल्यां वालीनाहोऽस्ति । तस्य भूरियम् । अतः स पातयित । प्रातरुपवासं कृत्वा पूजोपचारमादाय तं ध्यायन्, वालीनाहाग्रे उपविश्व । स प्रकटीभविष्यति । मद्यं मांसं याचिष्यति । भवता नैवेद्यं माननीयम् । यदि न मन्यते तदा खङ्गं कर्षयित्वा वाच्यम्—याहि नो वा मारियष्यामि । अहं खङ्गेऽवतरिष्यामि । तथाकृते स आराटिं कृत्वा प्रणष्टः। तत्र देवकुल्यां क्षेत्रपालः स्थापितः । तत्पार्थेऽम्वाया देवकुलिका कारिता । दण्डपतिदेवतावसरे श्रीआदिनाथविम्वमितः । अतो 20 युगादिदेवप्रासादः कारितः । चतुर्गच्छोद्भवैश्वतिभिराचार्थः प्रतिष्ठा कृता । आदौ श्रेलमयं विम्वम् । तद्तु पिनलमयं भारा १३ तुलामाश्रित्य । पूर्वं ठकुरनीतस्तत्सतो लहरस्तत्सतो मचीनेह(ह)स्तेन दीक्षा गृहीता । विमलः श्रीभीमेन गजं छत्रं च दत्ता नृपतिः कृतः । तत्सुतेन चाहिलेन रङ्गमण्डपः कारितः । एवं प्रासादे निष्पन्ने कनापि चारणेनोक्तम्—

(१४२) मंडी मुरकी रइ करउ छंडउ मंसह ग्गाह। विमलडि खंडुं कहिअउं नट्टउ वालीनाहु॥

॥ इति विमलवसहीप्रबन्धः॥

३४. अथ छुणिगवसही-प्रबन्धः (P. Br.)

§ ११४) धवलकपुरे मन्नी आसराजः। सहचरी कुमारदेवी। पुत्र ४-मन्त्रि छाणिग १, मालदे २, वस्तुपाल ३, तेजपालाख्याः ४। परं निर्द्रव्याः। एकदा छाणिगो मन्दो जातः। अन्त्यावस्थायां वस्तुपालेनोक्तम्-बन्धो! किमपि द्रव्यव्ययं याचस्व। तेनोक्तम्-नवकारलक्षाः ३ गुणनीयाः। अपरं किमपि दृश्यते तर्हि याच्यते। तथापि ३० किश्चिद्याचस्व। छाणिगेनोक्तम्-अत्र काचिदावाधा न। परमहमर्बुदाद्रौ देवान्नन्तुं गतः। ममेति मनोरथ आसीत्। यद्यत्र विमलवसद्यां आलकेऽपि विम्बं लघ्वपि करिष्यामि। यदि काऽपि शक्तिर्भवति तदा कार्यम्। अत्र न काऽप्य-वृष्टिश्वनी। इति वदन्ननशनाद्दिवं ययौ। पश्चाद् व्यापारे जातेऽर्बुदे श्रीमाताऽबोटीपार्श्वाद्विमलवसहिकोपरि-मूल्येन भृगृहीता द्रम्मराच्छाद्य। एवं द्रम्ममृदा ३६ तीरिताः। तैरुक्तम्-अतः परं पूर्णम्। तव द्रव्यसामग्री बह्वी।

त्वं पर्वतमपि गृह्णासि । १२८६ वर्षे शोभनदेवस्त्रधारमाहूंय प्रासादं प्रारेभे । १२९२ ध्वजारोपो जातः । तत्र द्रव्यकोटीद्वाद्य, लक्ष ५३ एवं द्रव्यसंख्या । लुणिगवसहीति नाम कृतम् । श्रीनेमिनाथप्रतिमा स्थापिता ।

(१४३) विमलदण्डपतिर्विमलाचलाधिपजिनालयमाँरचयतपुरा । इह गिरावसकौ तु स कौतुकी व्यधत्त रैवतदेवतमन्दिरम् ॥

तत्र प्रासादे मित्रणा यशोवीरेण त्रयोदश दोषा उक्ताः। आदौ विलासमण्डपो न युक्तः १, परं स्तम्भेषु 5 विम्वानि २, सिंहमध्ये ३, हरिणगवेक्षण ४, द्वारे गजशालापरं पाश्चात्ये ५, तपोधना आकाशे ६, सोपानानि हत्त्रान्नि ७, सूत्रधारमातुक्छत्रं ८, ग्रुख्यद्वारं पुरवाह्ये ९, तथा घण्टा महत्तरा १०; त्रयं तज्ज्ञलोकाज्ज्ञातव्यम् ॥ ॥ इति लूणिगवसद्दीप्रवन्धः ॥

३५. अथ वस्तुपाल-तेजःपालप्रवन्धः (B. Br. P. Ps.)

(१४४) म्श्रीमत्प्राग्वादवंदोऽणहिलपुरभुवश्चण्डपस्याङ्गजन्मा जज्ञे चण्डप्रसादः सदनमुरुधियामङ्गभूस्तस्य सोमः। आद्याराजोऽस्य सूनुः किल नवममृतं कालकूटोपभुक्ति-च्छेकश्रीकण्ठकण्ठस्थलविषजमलच्छेदकं यद्यद्योऽभूत्॥

§११५) आसराजप्रवन्धाद् वस्तुपाल-तेजःपालोत्पत्तिर्ज्ञेया ।..... अत्र सूचित आसराजप्रवन्धः B सञ्ज्ञ-कसङ्ग्रहस्य खण्डितत्वात् तत्र न छन्धः परं BB सञ्ज्ञके सङ्ग्रहे स उपलभ्यते । तत एवात्र समवतार्यते । यथा-]15

§ ११६) अथ आसराजप्रवन्धो यथा—ःअणिहस्रपत्तने मलधारिश्रीदेवप्रम (Ps. हेमप्रम) स्रित्व्याख्याने गादीयां १४ शत उपविष्टेषु, तसिन् व्याख्याने साधुमदनपालपुत्री (Ps. 'आभूनन्दिनी'; तथा अत्रैवादर्शेऽन्यत्र 'तिहुअणपालपुत्री' इति लिखिबम् ।) कुमारदेवी वालविधवा व्याख्याने उपविष्टासीत्। नियोगी अश्वराजस्तत्रोप-विष्टोऽभृत् । यावद्वाचको वाचयति •तावदाचार्यदृष्टिस्तत्र कुमारदेव्यां विश्राम्यति । विदग्धेनाश्वराजेन कोरणं

सङ्कीर्णसोपानमपाच्यगाध्वपृष्ठेऽत्रशाला मुनयश्च घर्मे । स्तम्भेषु विम्बानि च दीर्घपट्टाः सिंहाग्रगैणा रतिमण्डपाश्च ॥ छत्रं च शीर्षे स्थपतेर्जनन्या गजाधिरूढा निजपूर्वजाश्च । स्तम्भा अतुल्या तनुरक्षरश्च ते द्वादशामी कथिताः कलङ्काः ॥ —मन्नियशोवीरेणैतानि दृषणानि श्रीअर्धुद्यासादे कथितानि ।

† एतत्पद्यं P सङ्घहे नोपलभ्यते।

‡ एतत्प्रवन्धगतवर्णनं P सञ्ज्ञके सङ्ग्रहे निम्नगतेन प्रकारेण लिखितं लभ्यते-

'एकदा मलधारिगणाधीशाः श्रीहेमप्रमसूरयो धवलकापुरे चतुर्मासकं स्थिताः। तत्र व्याख्याने सर्वः कोऽप्येति। तत्र ठक्करतिहुण-पालपुत्री कुमारादेवी मात्रा सह व्याख्याने आगता। परं विधवा। अथ गुरूणां व्याख्यानान्तरे तरुण्यां विश्रामो दृष्टेः स्थितः। मन्नी आश-राजो देशनान्ते गुरूनाह-भगवन्! चन्द्रमसोऽङ्गारवृष्टिनं स्थात्, परं पूज्यानां दृष्टिः कुमारादेव्यां किमासीत्?। निर्वन्धेन पृष्टा अवदन्-[Ps. यदेषा विधवा] अस्याः कुक्षावेकादशरस्ताने सन्ति। पुत्र ४, पुत्री ७; पुत्रद्वयं लोकोत्तरम्-इति श्रुत्वा तिहुणपालस्योलगा प्रारव्धा। तेन आवासलेखकवही दत्ता। प्रासः कृतः। आसंघे जाते तथा पुत्र्या सह प्रीतिरभूत्। मात्रा ज्ञाववृत्त्त्या वाहिनीमपंथित्वा सपुत्रीकः प्रहितः। स्तम्भतटे गतः। तत्र पुत्रा जाताः। तृश्णग-मल्लदेव-वस्तुपाल-तेजपालाः। पुत्र्यः सप्त। धर्मविधाने अवनच्छिद्वपिधाने विभिन्नसन्धाने। सृष्टिकृता नहि सृष्टः प्रतिमल्लो मल्लदेवस्य॥'

Contre for the Arts

पृष्टम् । पूज्यैरिति मणितम्-अस्याः कुक्षौ पुत्ररत्नद्वयमितशायि विद्यते, यिजनशासनप्रभावकं [स्यात्]। अन्यदाश्व-राजे साधुमदनपालसमीपे उपविष्टे सित तस्य लेखकं न मिलिति । व्यवहारिणो लेखकं मेलियत्वा समर्पितमश्व-राजेकः । ततस्तस्य द्रम्मौ द्वौ दिनं प्रति ग्रीसे कृत्वाऽऽत्मपार्श्वे स्थापितः । पुत्री गृहव्यापारे मुख्या । कदाचिदु-भयोः स्नेहो जातः । मात्रा वृत्तान्तं ज्ञात्वा द्रव्यदशसहस्नाणि समर्प्य प्रेपितौ सोझलकनाम नगरम् (Ps. 'मंड-ठिलीनगर्या गतः ।' पुनरस्मिन्नेव सङ्गहेऽन्यत्र 'स्तम्भतीर्थे गतः' एतिङ्गिवितं लभ्यते)।

आसराजस्य चत्वारः पुत्राः-मन्त्री छ्णिगो १, मछदेवोऽपरः २, वस्तुपालस्तृतीयः ३, चतुर्थस्तेजपालः ४ । पुत्र्यः सप्त-साऊ १, भाऊ २, माऊ ३, धनदेवी ४, सोहगा ५, वयज्ञका (तेज्ञका Ps.) ६, पबलदेवी ७ 🖵

(१४५) श्रीवस्तुलस्य पत्नी लिलतादेवीति विश्वता जगति । तेजःपालस्य तथाऽनुपमदेवीति सत्कान्ता ॥

10 छूणिग-मछदेवौ अल्पायुषौ जातौ । ऋमेण आसराजः पुत्राभ्यां सह धवलकमागतः । तत्रावासः कृतः । सुताबुभाविप व्यवसायं कुरुतः । इति आसराजप्रबन्धः ॥

§ ११७) इतो व्याघपछीयो राणक आनाको भीमेनापमानितो देशसीमनि गतः । परिग्रहेणाकारितो नायाति । राज्यं विनष्टम्, आगत्य किं करोमि । परं पदातिमात्रः सन् ऑलगां करिष्यामि-इति पत्तने समायातः । तत्युतो लूणपसानामा भस्नकथरोऽस्ति । *तस्य द्वे कान्ते । वीरम-वीरथवली सुतौ । इतो लवणप्रसादेन विवासमाता सपुत्रापि त्यक्ता । सा मेहतावास्तव्येन त्रिश्चवनसिंहकौडुम्बिकेन धृता । लवणप्रसादस्तन्मारणाय तस्य गृहे सन्ध्यायां प्रविष्टः । इतः कौडुम्बिकः कान्तया वैकालिकायोपविशितः । तेनोक्तम्-वीरमः कः ! । तया प्रोक्तम्-कापि रन्तुं गतः । तेनोक्तम्-आकारयत, तं विना नाहं भोक्ष्ये । तया निर्वन्धादुक्तोऽपि न विशिति । इतो लवणप्रसादेन चिन्तितम्-अनेन मम कान्ता धृता, परं मे पुत्रेण सह वाढं स्नेहवानसौ । अतः कथं हन्यते । इति विचिन्त्य प्रकटो जातः । तेनाभ्यर्थितः कस्त्वम् । स्वभावे उक्ते तयोर्मिथः प्रीतिर्जाता । स लचणप्रसादस्तेन विनित्तः । वस्नादि दन्ता प्रहितः । इतः स क्रमेण भीमदेवेन राणकः कृतः (B. Ps. प्रधानः कृतः राणिमा दत्ता) स राज्यचिन्तां कर्तुं प्रवृत्तः । [B. Ps. नृपस्तु ख्वं विकलः । अथ-लवणप्रसादेन] राज्य-मात्मायत्तं कृतम् । इतो राज्ञि दिवं गते स एवाधिपो जातः । वीरमः स्नसमीपमानीतः । वीरधवलस्य कृमारश्चतौ धवलकं दत्तम् । तस्य प्रिया जइतलदेवी । [Ps. पुत्रस्नोहेन लवणप्रसादो धवलकपुरे चनं तिष्ठति । पत्तने अमात्याः कर्णवारां कुर्वन्ति ।]

5 ६११८) इतो वस्तुपाल-तेजःपाली हट्टं मण्डयतः। तेजःपालस्य राणकेन सह प्रीतिर्जाता। राजकुले वस्ताणि प्रयति । अथ एकदा देवपत्तने ८० धरणिगस्तेजःपालस्य श्रश्चरोऽनुपमदेवीजनकः। तेन स्वपुत्री अनुपमदेवी श्रश्चरकुले प्रहिता। तथा गृहमागतया सर्वं वस्तु ज्येष्टप्रभृतिकुदुम्बस्य दर्शितम्। तत्र कप्रस्य सर्वोऽपि शृङ्गारः। वस्तुपालस्तेजःपालमाह-आवां वणिद्यात्रौ। एष ईश्वराणां स्वामिनां वा योग्यः शृङ्गारः। यदि वध्विचारे आयाति वेतदा राणकपहये दीयते । अअनुपमयोक्तम्-स्वीतनुर्भर्तायत्ता, आभरणानां त का कथा। ततो राणकं निमन्त्रय

^{*} एतदन्तर्गतं वर्णनं Ps. आदर्शे नास्ति । ‡ एतदन्तर्गतं वर्णनं Ps. आदर्शे परित्यक्तम् । 1 B तदा देन्ये जयतलदेन्ये उपायनीकियते । अ एतदन्तर्गतपाठस्थाने B आदर्शे एतादशः पाठः प्राप्यते-"अनुपमदेन्योक्तम्-स्त्रीणां शरीरं भर्तुरायक्तमाभरणानां तु का कथा ।
विशेषतो यच्छध्वम् । वस्तुपालः प्राह्य-यद्गाणकं भोजनाय सपत्नीकं निमंग्य भोजय । तथा कर्तुं गते वस्तुपालो हृद्दे गतः । राणकः प्राप्तः ।
भोजितस्र । आभरणे द्शिते देवी प्राह्य-स्वामिन् ! इदमाभरणं अद्ययावत् न दृष्टं न श्रुतम् । तदा गृह्णामि यदि मुद्रां तेजःपालो गृह्णाति । भवत्वेवं ममापीष्टमिदम् । तेजःपालेनोक्तम् वृद्धभातरं पृच्छामि । प्रष्टुं गतोऽद्दे । भात्रोक्तम् कि मुद्रया । यदि द्दात्येव तदेति वक्तव्यम्
यदिष्पां कारयत । यत्तत्र भवित तद्पीयत्वा शेषमादाय वयं मोच्याः । एवमस्तु । इत्युक्तवा मुद्रा समर्पिता । क्यापारो जातः । तद्नु कूर्वालक्तसरस्वतीत्येवविधानि विरुद्दानि पञ्चमानैकाँद्वर्णमंश्विकाजालमिव विष्टतः । अनन्तवन्धनं कृतम् । एकदा कुलगुरवः श्रीविजयसेनस्रयो वन्दा-

भोजयित्वा नत्त्तम् । देव्यै दातुं राणो लग्नः । तयोक्तम्-एतयोः खमुद्रा देया । ततो वृद्धश्रातरं पृष्टा गृहटीपां द्शीयत्वा मुद्रा गृहीता ।

§११९) तदनु वस्तुपालो [Ps. कूर्चालसरखती—इत्येवंविधानि विरुदानि पठमानैः] ब्राह्मणैर्व्यासाः [Ps. अनन्तवन्धनं कृतम् ।] एकदा कुलगुरुश्रीविजयसेनस्रयो वन्दापितृमागताः । कुमारदेव्या नमस्कृताः । मन्त्री नागतः । मन्त्रिणं वन्दापितृ गृहे गताः । मन्त्री द्विजादृतो गवाक्षस्थो दृष्टः । तेन नाभ्युत्थिताः, ते 5 व्याघुटिताः । मात्रा प्रोक्तम्—मन्त्रिन् । ते अतीव ईदृशी विष्रता यत्कुलगुरवोऽपि आगता न ज्ञाताः । ततो कृत्री धावितः । अभ्यर्थ्य नीताः । तत्र तैरुक्तम्—आशराजतन् ज्ञस्य गृहं न किन्तु मद्यपगृहम् । किमिति [Ps. B. गुरुभिरुक्तम्—वयं ठक्करचण्डप्रसाद-सोम-आसराज-तन्द्भवस्य कुमारदेवीक्कश्रीसरोजराजहंसस्य श्रीवस्तु-पालस्य गृहं मत्वा समायाताः । परमग्रे मद्यपगृहं दृष्टम् । मन्त्रिणोक्तम्—एकवेलं मध्ये पादाववधारयत । स्वकरे-णासने दत्ते उपवेशिताः । सप्रश्रयमुक्तम्—प्रभो ! मे गृहे श्रीमद्गुरुभिः किमयुक्तं दृष्टम् । एतच्छृणुत—] 10

(१४६) जीवादिशेति पुनरुक्तमुदीरयन्तः कुर्वन्ति दास्यमपि वण्ठजनोचितं ये। तेष्वेव यद्गुरुधियं गुरवोः विदध्युः सोऽयं विभूतिमदपानभवो विकारः ॥

भगवन्! एवं भवति यदि सारा न कियते । शिक्षां यच्छत । [Ps. आदावनन्तमपाक्करः । तसिन् दूरीकृते, तव कुले कोऽपि माहेश्वरो न जातः । अतः श्रावकत्वमङ्गीकुरु] आदावनन्तोऽपाकृतः । ततः श्रावकत्वं जातम् । पूजानिश्चयमकार्षात् ।

(१४७) *सोऽयं कुमारदेवीकुक्षिसरःसरसिजं श्रियः सदनम्। श्रीवस्तुपसचिवोऽजनि तनयस्तस्य जनितनयः॥

(१४८) विभ्रुता-विक्रम-विद्या-विद्र्यता-वित्त-वितर्रण-विवेकैः । यः सप्तभिविकारैः कलितोऽपि बभार न विकारम् ॥

§ १२०) अथ देशस्तोको वीर्धवलस व्ययो बहुः । इति मत्वा तेजःपालः पत्तनोपरि गन्तुकामं राणकं 20 निषिध्य स्वयं गतः । तत्र सभायां श्रीत्रणप्रसादेन कुशलं पृष्टम्—कुमारः किमिति नागतः ? । देव ! श्रीवीरध-वलेन देविगरेरुपरि बीटकं याचितमस्ति । कथम् ?—व्ययो बहुः । अतो देविगरेरुपरि कटकार्थी । तं विना व्ययो न सम्पद्यते । राणकेनोक्तम्—यदि तत्र गतः [हतः] स, तिहं व्ययं कः कर्ता ? । केन दत्तेन तिष्ठति ?—देव ! स्तम्भतीर्थेन । व्यापारिणः पृष्टाः—तस्य किमायपदम् ? । तैरुक्तम्—द्रम्माणां सहस्र ३०, वाहण (В शत ?) ३२ । राणकेनोक्तम्—यदि तेन पुरेण दत्तेन धनी भवति तिहं दत्तम् + । महाप्रसादग्रुक्वा तेजःपालो धवलकमागतः । 25 राज्ञा पृष्टम्—किश्चिल्लब्धम् ? । साम्भतीर्थम् । किं तेन ?—मया तव लङ्का दत्ता, परं न खाद्यते न पीयते । सर्व भवष्यति—इत्युक्त्वा मित्रणं वस्तुपालमश्चवारैः पञ्चाशक्किः (५०), पत्तिभिः शतद्वयेन (२००) स्तम्भ-

पियतुमायाताः । मं॰ कुमारदेव्या नमस्कृताः । उक्तम्-मन्नी नाययौ ? । मन्निणं वन्दापियतुं गृहे पादमवधारयत । गुरवस्त्वावासं प्राप्ताः । उपिरतनभूमौ गताः । तत्र गवाक्षस्थो मन्नी द्विजैवेष्टितो दृष्टः । तेनाप्यनभ्युत्थिताः । पश्चाद्विताः । अथ मात्रोपर्यगयः प्राह्—मन्निन् ! भन्यमिद्म् । एवं तेऽञ्जनं यद् गुरूनप्यागतान्नोपलक्षयसि । मन्निणा जनं प्रहित्य स्थापिताः । गवाक्षादुत्तीर्यं गतो नत्वावादीत्—प्रभो ! कथं पदमवधारिताः, व्यावृत्ताश्च । गुरुमिरुक्तम्—वयं ठक्कुर चंडप-चंडप्रसाद-सोम-आशराजतन्द्वयः कुमारदेवीकुक्षिसरौराजहंसस्य श्रीवस्तुपाल-स्थावासं मत्वा समायाताः । परमग्ने मद्यपगृहं दृष्टम् । मन्निणोक्तम्—एकवेलं मध्ये पादमवधारयत । स्वकरेणासने दृत्ते उपवेशिताः । सप्रश्न-यमुक्तम्—मद्गहे श्रीमद्भुर्शनः किमयुक्तं दृष्टम् । एतच्लुणुत—"जीवादिशेतिः ।"

 $1\ B$ धनिनो । $2\ B$ उपराधः । $3\ B$ आदौ देवपूजानिश्चयमकार्थीत् । $4\ B$ तदनु क्रमेण वतमूलो धर्मश्च । B *आदर्शे एव श्लोको नास्ति । \P एतत्समग्रं \S १२०) प्रकरणं $P_{\rm S}$. आदर्शे परित्यक्तमस्ति । $\|B$ राजसभायां गतेन राणको नमस्कृतः । राणकेन क्रशलप्रभूपूर्वकमुन्वीरधवलः क्रिमिति नाययौ $P_{\rm S}$ । $P_{\rm S}$ यदि सम्भतीर्थेन ऋदिमान् भवति तदा तदस्तु ।

तीर्थं [प्रति] प्राहिणोत् । मन्नी तत्र गतः । नियोगिभिरुक्तम्-आदौ सईदगृहे गम्यते, तदनु उत्तरके । मन्नी अनाकर्ण्य स्वोत्तारके गतः । तदनु सईदोऽपि मिलितुमागतः । मन्त्रिणं न[त्वो]पविष्टः । मन्त्रिणा ताहक् सम्मम्पणं न कृतं [परं] स्तोकं गौरवं कृतम् । यतः-

(१४९) *नयणिहिं रोसु निवारि वयणिहिं वरिसइ अमिंअ रसु। तिल दोरड संचारि करि कांई जन वीसरइ॥

इतो द्वितीयदिने मित्रणा सईदो व्याहृतः । जलमण्डिपका द्रम्माणां लक्षेत्विभिर्याच्यते । सईदेनोक्तम्-अर्पय-तान्यस मया त्यक्ता । द्वितीयदिने उक्तम्-स्थलमण्डपिका द्रम्माणां लक्षपश्चकेन याच्यते । तेनोक्तम्-दद्ता साऽपि त्यक्ता । अपरेष्वपि व्यापारेषु स्वमनुष्यान् मुमोच । इतः सईदेन स्वमित्रं भृगुपुराधिपतिः सण्डेराजः शङ्खलु (B खंडेराजः सांखलज) आकारितः। स जलमार्गेणाश्वसहस्र २, मनुष्यसहस्र ५ समानीय समुद्रतटे 10 समुत्तीर्णः । इतः सईदेन मन्त्री व्याहृतः । शृङ्खः समायातोऽस्ति, किञ्चिद्त्ता प्रेष्यते । मन्त्रिणोक्तम्-असाकं द्रव्यं न हि। त्वद्वहेऽस्तिः त्वं देहि। मदीये युद्धमेव। तर्हि चलत, यथा युध्यते। मन्त्रिणोक्तम्-त्वं स्वपरिकरेण वज, वयं तु स्वपरिकरेण यास्यामः । मन्त्री अश्ववार ५० मनुष्यञ्चतद्वयेन बहिर्निर्गतः । बलद्वयं बहिर्निर्गतम् । इतो मित्रणा राजपुत्रा व्याहृताः । कः पूर्वमुत्थापनिकां विधास्यति ?। तद्नु चालुक्येन (В चौलुक्यवंशजेन) भ्रवन-पालेन बीटकं याचितम्। मया शङ्को वृतः। केनाप्युक्तम्-मृतस्य किं प्रासादं करिष्यति मन्त्री ?। स किञ्चि-15 त्सुब्धः । मन्त्रिणोक्तम्-यदि ते विरूपं भवति, तदा तव मानुपाणि निर्वाहयिष्ये प्रासादं च कारयिष्ये । ततस्ते-नाश्चीत्थापितः-रे! यः शङ्कः स मे पुरो भवतु । तद्नु एकेनाश्ववारेणोक्तम्-अहं शङ्कः । स भक्षेन हत्वा पातितः । अपरेणोक्तम्-सोऽपि पातितः । एवं पण्मारिताः । इतः शङ्खशरीरे गत्वोक्तम्-अहो मया ज्ञातम् । भृगुपुराधिपः शङ्ख एक एव । परं समुद्रस्य तीरभावाद्धहवः । अहं हत्वा हत्वा श्रान्तोऽसि । ततः पत्तिभिस्तुरङ्गं हत्वा पातितः । शङ्केन चिन्तितम्-मम पण्मारिताः, अस्य त्वेकः। फलं न किमपि विसृध्य निवृत्तः। सईदेनोक्तम्∸यदपि तदपि 20 दत्त्वा प्रहीयते । मित्रणोक्तम् -त्वयाऽऽनीतस्त्वमेव देहि । इत्युक्ते स प्रहितः खस्थानम् । मित्रणा भ्रवनपालस्य ऊर्बूदेहिकं कृत्वा, भ्रवनपालेश्वरप्रासादस्तन्निमित्तं कारितः। इतो मन्त्रिणा तेजःपालपार्श्वात् अश्वशतद्वयम्, पदातिश्वतपश्चकम्, सौख्यासनमेकं चानायितम्। मन्त्रिणा पुरान्तर्वार्चा कृता-यद्राणकः श्रीवीरधवल एति। इति सम्मुखो निःसृतः । सईदोऽपि बहुना परिवारेण निःसृतः । आच्छादितं सुखासनम् , परं राणको न दृष्टः । उत्तारके गतो दर्शनं दास्ति । तत्रापि दर्शनं न लब्धम् । ततः सईदेन भीतेन पुनः शङ्कः समाहृतः । यद् युद्ध-25 सजौर्भृत्वा समागम्यम् । अश्व सहस्र २, मजुष्यसहस्र १० दशकेन समाययौ । समुद्रादुत्तीर्थ तटे स्थितः । मन्त्री खपरिकरेण बहिनिःसुतः । मित्रणा शङ्खस्य कथापितम्-यत्त्वं बलवानसि, क्षत्रियोऽसि, अहं वणिग्मात्रम् । तत आवयोर्द्धन्द्रयुद्धमस्तु । सोऽत्यर्थं बलवान् [†]हृष्टः सन् काहले मत्रिणा सह प्रहर २ अयाचत् । सैन्ययोस्तटस्ययोर्युद्धं भवति । एवं दिन ३, चतुर्थदिने प्रहरैकसमये मित्रणा पाश्चात्यस्थेन जानुना लत्तादानात् शङ्कः पातितः । तत्कालं शिरक्छेदमकरोत् । ततः शङ्क्षसैन्यं हतप्रहतं नष्टुं लग्नम् । अश्वाद्यादाय मित्रणा मुक्तम् । तसिन् हते सईदो नेष्ट्वा 30 समुद्रमध्ये गतः। मित्रणोक्तम्-त्वां कोऽपि न मारयति। मया शङ्को हतः, त्वं व्यवहारी कथं नष्टः ? तेनोक्तम्-यदि मे जीवेऽभयं ददासि तदाऽऽगच्छामि । मन्त्रिणा तथेति आहूतः। भोजनार्थं गृहे आकारितः। अङ्गमईकैरङ्गानि टालितानि । [देतेनोक्तम्-मश्चिन् ! किमिद्म् ? । मयोक्तम्-न मारयिष्यामि जीवन्तं मोक्ष्यामि । ततस्त्वं जीव-न्निस] जीवन्युक्तः स्वयमेव व्यथया मृतः । इतस्तस्य गृहे मनुष्याणि मुक्तानि । धवलके कथापितम्-यत्सईदो हतस्तस्य सर्वसं राजकुले [नीतम्]। परं महान् व्यवहारी तस्य गृहधूलिर्ममास्तु । मन्त्रिणोऽग्रे केनाप्युक्तम्-

^{*} P आद्शें एतत्पद्यं नास्ति । † एतद्न्तर्गता पंक्तिः P आद्शें पतिता । ‡ एतद्न्तर्गतः पाठः परित्यक्तः P आद्शें ।

20

25

30

यत्सईदस्य बाहनानि एकदा दोलायितुं प्रवृत्तानि । वस्तुवापनि (१) कृता अग्रे घू(घू १)नि भणित्वा रेणुः क्षिप्ता । गृहगतेषु पृष्टम् –िकमायातम् १ । बह्वी लक्ष्मीः । तेनोक्तम् –समुद्रस्य रेणुरपि श्रेष्ठा । वस्तारिर्भृता । एकदा दीपो रूमझर्यां लग्नस्तस्य तापेन रेणुः स्वर्णीभूता । स वृत्तान्तो मित्रणा श्रुतः । अतो याचिता । राणकेन दत्ता । गृहे टीपिः कृता । द्रव्यं स्वर्णं च दुक्लमौक्तिकादि प्रहितं राणकपार्श्वे । मन्त्री गतः । तत्र कविभिरुक्तम् –

(१५०) मिलिते तद्दलयुगे तस्मिन् राङ्के च चूर्णतां याते । श्रीवस्तुपालमन्त्रिन् ! महीमुखे कोऽपि नवरङ्गः ॥

जुरून् एकदा आतरी आलोचे उपविष्टी । द्रव्यं क सात्यते ?-एवं विमृत्यतोः मध्यं दिनं जातम् । इतोऽनुपमदेव्या चेटी प्रहिता-उत्सरं जातं देवताऽवसरस्य । तया अलब्धप्रत्युत्तरया स्वयमेत्य जगाद-अद्य कोऽयमालोचः ? । यदि कथनयोग्यो भवति तदा कथयत । इतस्तेजःपाले ईर्ष्यापरे मित्रणोक्तम्-वत्स ! मा कुप ! इयमति दक्षाऽस्ति, बुद्धिः पृच्छयते ।

(१५१) असकुन्मूर्खमप्यन्यं पृच्छेत् कार्ये समु[द्ग]ते । चपला मनसो वृत्तिवृद्धानपि हि मुह्मति ॥

पृष्टम्-असाकं श्रीन्यीयेनान्यायेन वा जाता । अस्याः स्थानमवलोकयावः । भूगता कियते जनवेदमसु वा मुच्यते । किमिप गृहे नायाति । तया व्याहृतम्-यदि मे बुद्धिः कियते तदाऽक्षया स्थात् । सर्वः कोऽपि प्रकटां च पर्यित कोऽप्यातुं न पार्यित । कथम् १ । प्रासादाः कार्यन्ते । उपि स्वर्णकलशान् दत्त्वा, प्रशस्तौ द्रव्यं १५ सङ्घते । सर्वः कोऽपि वाचयति, अत्र इयद् द्रव्यं लग्गम्, परं काणवराटकमिप गृहीतुं न पार्यित । ज्येष्ठेनोक्तम् इदं वध्वाक्यमेवास्तु । भाग्यक्षये आत्मीयाप्यन्या भवति । तदनु स्नात्वा देवताऽवसरमाधाय, भ्रकोत्तरं पौष-धागारे गतौ । यहुरवो वक्ष्यन्ति सैवोपश्चितिनः प्रमाणम् । गुरवो नमस्कृताः । तैर्भणितम् ।

(१५२) कोशं विकाशय कुशेशयसंस्तालिं प्रीतिं कुरुष्व यदयं दिवसस्तवास्ते । दोषोदये निविडराजकरप्रपातध्वान्ते समेष्यति पुनस्तव कः समीपम् ॥

नमस्कृत्योत्थितौ बहिर्निर्गतौ । विमृष्टम्-आवयोरुत्तरकालो न भव्यः । अतो द्रव्यं व्ययितुं लग्नौ । [Ps. स्थाने स्थाने सत्रागार-प्रासाद-पौषधशालां प्रारेभाते । वर्षमध्ये वार ३ संघार्चा । यति १५०० विहरणम् ।

§ १२२) एकदा मन्त्री सुप्तोत्थितः पाश्चात्ययामिन्यां चिन्तयति-

(१५३) आशाराज इहाजनिष्ट जनको यस्य प्रशस्यावधि-र्य.....जुमारदेव्यथ कृती श्रीम.....जः। तेजःपाल इति प्रधाननिवहेष्वेकश्च मन्त्रीश्वर-स्तजायानुपमा गुणैरनुपमा प्रत्यक्षलक्ष्मीरभूत्॥

(१५४) तेजःपालोऽनुशास्ति प्रवरतरमितर्वीरराजस्य राज्यं सामग्रीयं समग्रा खजनपरिजनोत्साहस्म्पत्तिभिश्च। एवं पुण्यैर्दिनं मे पुनरसमयतः खेदमग्रो जनोऽयं तद्भुवीदेशमाप्य स्फुरितमितरसावद्धतं कम्म कर्त्तुम्॥

इति विचिन्त्य याबद्वारशालायामागत्योपविष्टः, ताबद्वारपालेनोक्तम्-मन्त्रिन् ! श्रीपत्तनाद्वुर्वाशीर्वादकरो नरो दर्शनम[भिलपति] । प्रवेशय । स नरः समेत्य प्रणामपूर्वमाशीर्वादं करेणोइभ्रे ।

Copies for the 2.54

(१५५) मन्त्रीश! गुरवस्तुभ्यं खस्ति विस्तारयन्तु ते। योग्यं त्वामेव विज्ञाय यैरिह प्रेषितोऽस्म्यहम्॥

मित्रिणा ससम्भ्रमग्रुत्थानपूर्वकं करावायोज्य पत्रकं जगृहे । शिरिस निवेश्यावाचयत् । तत्र कुशलप्रश्नपूर्वमिद-

माशीर्वाद्मवाचयत्— अमुिष्मन् यः काले किशलयति कम्माद्धततरं०॥ तथा- (१५६) मुनीनां को हेतुर्जरठकठिनत्वव्यपगमे

भवेद्भूषा येषां स्वजनपरिहारव्यतिकरः। परं धन्यास्तेषामपि वितनुते केऽपि मृदुतां शितां शीतांशुर्यो जनयति यतंश्चन्द्रदृषद्।म् ॥

10 महामात्य! १२७६ एष संवत्सरोऽतिनीतः (Ps. तीत्रः)। समयवशेन वर्ष २८ श्रीशतुज्जय-गिरनारयोर्वर्तमं केनापि न वाहितम्। [Ps. मित्रपदं विना मण्डलीं वारमेकं गतः नापरः।] तत्र यात्रार्थे यतनीयमिति। श्रीशतुज्जयमाहात्म्यं चैवम्*-

(१५७) अत्रास्ति स्वस्ति शस्तः क्षितितलतिलको रम्यताजनमभूमि-देशः सम्पन्निवेशस्त्रिभुवनमहितः श्रीसुराष्ट्राभिधानः। यस्योचैः पश्चिमाम्भोनिधिरपहरते लोलकल्लोलपाणिः प्रस्कृर्जत्कालकेनोल्बणलवणसमुत्तारणैर्दष्टिदोषान्॥

तत्र तीर्थानि-

15

20

25

(१५८) श्रीशाञ्जलय-रैवताभिधगिरिद्धन्द्वेऽत्र यात्रोत्सवं दानब्रह्मतपःकृपाकृतरतिर्यः सन्मतिः सेवते । तीर्थत्वातिशयेन नारकगतिं तिर्यग्गतिं च ध्रवं-

नो किसन्निप जन्मिन स्पृश्वति स प्रध्वस्तदुष्कम्र्यतः ॥ (१५९) फणिपति-मघवाद्या यत्र देवाः समेयुर्भरत-सगरमुख्याश्चित्रणः क्षोणिशक्ताः । निम-विनमिमुखास्ते सर्वविद्याधरेशा दशरथस्तत-क्रन्तीनन्दनाद्याश्च भूपाः॥

(१६०) एषु श्रीजयसिंहदेवन्यतिस्तीर्थेषु यात्रां व्यधात् सिद्धः प्रोद्धरधम्मभूधरिशरःकोटीररत्नांकुरः। राजर्षिस्तु कुमारपालविषुलापालः कृपालुः कलौ कृत्वा सङ्घमिहोपदेशवचसा श्रीहेमसुरिप्रभोः॥

(१६१) सङ्घो वारभटदेवेन तथा चकेऽत्र मन्त्रिणा । भविष्यतामतीतानामुपमानं यथाऽभवत् ॥

30 तेषु तीर्थेषु दुष्कालवशात्-

(१६२) स्नायूद्धद्वकरङ्गकुद्दनरता मार्द्धिकाः स्युर्वृका घूका घर्घरघोरघोषविषमं गायन्ति नीडस्थिताः । सभ्य(द्यः १)व्याघवितीर्णमांसविघसा तृत्यन्ति नित्यं शिवाः फेरूणामिह बन्दिनां कलकलः प्रेक्ष्योत्सवः स्यादिति ॥

15

20

· (१६३) वियउयरपूरणासा जणणी पुत्तं चएइ विलवंतं। मणुयाणि माणुंसेहिं निसायरेहिं व खज्रंति॥

(१६४) । पल्योपमसहस्रेकं ध्यानाह्यक्षमित्रहात्। दुष्कम्मे क्षीयते मार्गे सागरोपमसंज्ञके ॥ (१६५) । वात्रक्षये जिने देष्टे दुर्गतिद्वितयं क्षिपेत्। पल्योपमसहस्रं तु पूजा स्वात्रविधानतः ॥ अत एवंविधानि तीर्थान्यपूजानि यात्राये यतनीयम्।

§१२३) तदनु मित्रणाऽभाणि-गुरूणामाकारणं प्रेष्यते । आनायिताः । शुभे मुहूर्ने देवालयः प्रारब्धः ।

सर्वेदेशेषु कुङ्कमपन्यः प्रहिताः ।

(१६६) वाहनौषंधिपाथेयसहायवृषभादिकम् । यद्यस्य नास्ति तत्तस्मै सर्वं देयं मया मुदा ॥

[Ps. इति श्रुत्वा महर्द्धयो] लोका यात्रायै मिलिताः । इतः कलिर्गलगर्जितमकरोत्-

(१६७) 'रे रे वातूललोकास्त्यजत निजनिजं सर्वथा धर्मकृत्यं कार्य चेजीवितव्येरिह कलिसुभटः कुद्ध एवासि यसात्।'

-'नित्यं श्रीसङ्घलोकाः करत नवनवं निर्भया धर्ममेष

प्राप्तोऽहं वस्तुपालः कलिन्छ्यहृदये निर्दयं न्यस्य पादम् ॥'
(१६८) 'किमिह कलिनरेन्द्रं नैव जानाति सोऽयं यदनुचितमिवोचैर्धर्मकृत्यं तनोति ।'
'अमुमनुपमसत्यं धम्मकम्मैंककृत्यं कलिकवलनकालं वेत्ति नो वस्तुपालम् ॥'

(१६९) गुरवः परःशतास्ते परःसहस्रश्च साधवः सुधियः। गृहिणस्तु परोलक्षाः सङ्घे श्रीवस्तुपालस्य ॥

जने मिलिते ग्रुमे लग्ने प्रस्थाने जायमाने......कश्चिदाह-

(१७०) कान्ते कान्ते शीघमागच्छ शीघम्. आएसं मे देहि इत्थिम्ह णाह । कीटग् रम्यं पश्य देवालयं त्वम् ?. घन्नो मंती कारियं जेण एयं॥

[Ps. इतः सङ्घप्जार्थं पूर्वं देवालयो रथे स्थापितः । उपिर च छत्रत्रयं धृतम् । चामराणां व्यजनमिवधिनामिः कृतमृङ्गाराभिः प्रारव्धम् । कृतमृङ्गारो धृर्धरमालादिना कौसुम्भवस्थ्रेथ धृतौ वृषमौ । मार्गणजनैः प्रारव्धः कीर्तिकोलाहलः । मिलिता मित्रणामनु अश्ववाराणां सहस्राः । प्रारव्धं स्त्रीजनेन गीतम् । वादितानि मेर्यादीनि मङ्गलत्याणि ।] एवं चलति देवालये दक्षिणदिग्मागे दुर्गा जाता । मित्रणोक्तम्-स्थिरीभवत । 25 तत्रैको मारवः क्षत्रियो मित्रणा पृष्टः—भो एषा किं वक्ति? । देव ! इयं नृतनगृहे निष्पद्यमाने द्वारशास्त्रोपि स्थिता मुदिता खरं विधत्ते । तत्र सार्द्ध वार घर (Ps. द्वादश घरेण) उपविधास्ति । भवतामित्यं १२ ॥. यात्रा भविष्यन्ति [Ps. एषा प्रथमा तासां मध्ये ।] तदनु वहुस्ररीणामनुमतं सप्तश्वतानि देवालयानामग्रे चलन्ति । [Ps. कुहाडीया ५००, कुंदालीया ५०० मार्गसारणाय । शकट ४०००, सुखासन ७००, श्रीकरी १९००, स्ररीणां ३३३, व्रतिनां २२००, श्वपणक ११००, भट्ट ३३००, देवालां ६४, वाहिनी १८०, जैनयाचक ३० ४५०, तुरंगम ४०००, मनुष्य एवं कारइ ७०००० एवं सामग्या चचाल ।] परतीर्थिकान् कन्दलं कुर्वाणान् वारयन्ति । एवं श्रीसङ्घः शत्रुखयायो वर्द्यापनिकानि कृत्वोपर्यारूढः । तत्र—

(१७१) ण्हाणं कुंकुमकदमेहि विहियं कत्थ्रिआहिं कयं चंगं अंगविस्टेवणं विरङ्आ पुष्केहिं पूआ वरा।

[🚶] पुषा गाथा Ps. आदरों एव उपलभ्यते । † इदं पद्यह्यं Ps. आदर्शे नास्ति । 1 Ps. ईदरो दुःकाले तीर्था० ।

10

रंभाविक्ममलालसेहिं ललनालोएहिं नदं कयं देवेसस्स महाधया सहमया पदंसुएहिं कया॥

उतत्र देवविज्ञाप्तः-

(१७२) आस्यं कस्य न वीक्षितं क न कृता सेवा न के वा [स्तु]तास्तृष्णापूरपराहतेन विहिता केषां च नाभ्यर्थना।
तत् त्रातर्विमलाद्रिनन्दनवनीकल्पैककल्पद्रम!
स्वामासाद्य कदा कदर्थनमिदं भ्रयोऽपि टाहं सहे॥

मुत्कलापनकाव्यम्-

(१७३) श्रीगर्वोष्मभिरुष्मछेषु धनिनामीष्यानलज्वालया जिह्वालेषु मृगीदशामनुशयाद्धमायितेषु द्विषाम् । वक्रेषु ग्लपितामिमां त्रिजगतीं निस्तन्द्रचन्द्रोदये देव! श्रीविमलाद्विकेतन! कदा दास्ये त्वदास्ये दशम् ॥

[Ps. एवमारात्रिकं कृत्वा श्रीजिनं मुत्कलाप्य] तले साधर्मिकवात्सल्यं सङ्घपूजादिकं च विधाय रैवतो-परि ततश्रचाल ।

15 § १२४) [Ps. इतः केनापि चरटकेन दुर्गवलात् सङ्घमध्ये चौरिकी कृता । मित्रणा स प्राकारो रुद्धः । उक्तं च-

(१७४) मह वयरियस्स ठाणं विश्राँ त्ति अवराहकारणं एयं । पायारं परिचुन्निय संघं संचारइस्सामि ॥

इत्यभिधाय दुर्गं चूर्णयित्वाग्रे प्रस्थितः ।] कियद्भिः प्रयाणकैर्जीर्णदुर्गं प्राप । जीर्णदुर्गेऽष्टादश्रप्रासादेषु चैत्य-परिपार्टी कृत्वा (Ps. जीर्णदुर्गोपकण्ठे खर्य वासिते तेजलपुरे आवासान् दत्त्वा कुमारदेवीसरिस स्नात्वा खर्य 20 कारितश्रीपार्श्वनाथचैत्ये महिमां विधाय) यावत्पर्वतोपरि चलितुं सन्नद्रस्तावदेकाकिनो व्रतिनः प्रोक्ताः-अत्र वस्त्रपथतीर्थे पद्याप्रत्यासन्ने मुण्डिके जनं २ प्रति द्रम्माः पश्च २ याचन्ते । तान् भवतां कः प्रदास्यति ? । यथा जानीथ तथा कुरुध्वम् । तैरुक्तम्-मित्रन् ! तवाज्ञा भवति तदा वयं वारयामः । मित्रणा प्रोक्तम्-कुरुत यद्रो-चते । पृष्टिरक्षकोऽहम् । ते सर्जीभृय पूर्वं चिलताः । भरटकैरुक्तम्-मुण्डकं दत्त्वा वजत । तेरुक्तम्-मुण्डे केशाः सन्ति । तेऽग्रेऽपि दत्ताः । भवतां किं दबः ? । तैः सह कलहो जातः । कुट्टियत्वा त्रतिभिः पातिताः । मित्र-25 णोऽग्रे रावां कर्तुमागताः । मित्रणा त्रतिनो हिकताः-कथमेवं कृतम्? । मित्रन्! इयतीं भूमिं यावदितिकम्या-गताः। देवनमस्कृतिं विना कथं भुज्यते-इति सश्चिन्त्य चलिताः। एभिर्निषिद्धाः। देवदर्शनोत्कण्ठया कल्येऽपि न भुक्ताः । अत उत्किण्ठिताः । परं बुभुक्षिताः । एतेषां किं दबः । सुन्दरं न कृतम् – यत्प्रथमतोऽप्यमी रुद्धाः । ममाग्रेऽपि वार्ता न कृता। तैरुक्तम्-मित्रन्! देवस्य एष लागः केनाप्यपाकर्तुं न शक्यते । मित्रणा प्रोक्तम्-मम भोजनदानावसरो न पुनर्द्रव्यस्य । भट्टान् द्विजान् सर्वानिष पृथक् पृथक् याचध्वम् । तैरुक्तम्-असाभिः 30 कथं गृह्यते । त्वयैवानुमता यच्छन्ति । मित्रणा व्याहृतम्-सर्वः कोऽपि यच्छतु, नाहं वेदि । भट्टाद्या ऊचुः-कोऽसान् ग्रहीष्यति स ऊर्द्धीभवतु । मित्रणा ततो व्याहृतम्-यदि मम भणितं कुरुत, तदा वः कंदलं निर्वाह-यामि । [Ps. एकेन ग्रामेण यदि रतिं कुरुत ।] ततस्तेभ्यो जीर्णदुर्गप्रत्यासन्नं ग्रामं वितीर्थ पट्टको विदारितः । सर्वः कोऽप्युपरि गत्वा समाधिना देवं वन्दितुं लग्नः । तत्र-

- (१७६) गम्भीरगेयभरगज्जिरवो सुवन्नालंकारताररुइविज्जलयावयासो।
 दूराउ उन्नययरो सुवि तावहारी संघो घणु व घणदाणमिसेण बुट्टो॥
- मुत्कलापनं काव्यम्-
 - (१७६) स्वामिन्! समुद्रविजयात्मज! विश्वनाथ! न प्रार्थयेऽन्यदिह किन्तु तव प्रसादात्। एते मनोरथमयास्तरवो मदीयास्त्वदर्शनामृतरसैः सफलीभवन्तु॥

तत्र पूजारात्रिकादि कृत्वा मन्त्री सङ्घेन सह देवपत्तनं गतः । तत्र चन्द्रप्रभ-प्रभासादिषु तीर्थेषु महिमां कृत्वा सोमेश्वराभोगं विधाय धवरुकं प्राप्तो मन्त्री ।

- (१७७) [†]लिखतु लिखतु धाता दुर्लिपिं भालभित्तौ भजतु भजतु सर्वोऽप्युग्रभावं ग्रहो वा। परमयमिह यावद्वस्तुपालः कृपालुर्न भवति खलु कष्टं विष्टपस्यास्य तावत्॥
- (१७८) [†]या श्रीः खयं जिनपतेः पदपद्मसद्मा भालस्थले सपिद सङ्गमिते समेता। श्रीवस्तुपाल! तव भालनिभालनेन सा सेवकेषु सुखमुन्मुखतामुपैति॥
- (१७९) [†]पाणिप्रभापिहितकल्पतस्प्रवालश्चौलुक्यभूपतिसभानलिनीमरालः। दिक्चक्रवालविनिवेशितकीर्त्तिमालः श्रीमानयं विजयतां सुवि वस्तुपालः॥
- (१८०) ंसौरभ्यमालगुणमालतमालका...च्योमान्तरालकृतफालयशोमरालः। जीमूतकालरिपुकीर्त्तिमृणालिनीनां श्रीवस्तुपाल विजयी चिरकालमेधि॥

-एवं कवीनां तत्र वाक्यानि ।

§ १२५) इतो [Ps. सङ्घं सम्भोज्य, वस्नादिना सत्कृत्य च] वसाह आभडतन् सं सा० आसपालं आहूयो-वाच-भोः! त्वं वसाहपुत्रः (P वसाहमुख्यः) सङ्घमुख्यस्तव शत्रुञ्जये किं लग्नम्?। द्रम्म चत्वारिंशत्सहस्नाणि (४००००), रैवतके त्रिंशत्सहस्नाणि (३००००)। देवपत्तने किं १। तेनोक्तम्-तत्रासाकं तीर्थेऽधिकतर्म् १। मित्रणा व्यतिकरः श्रुतः। यद्गुरुणा ब्राह्मणेनोक्तम्-प्रियमेलके स्नानं तदा स्नात्, यदा पूर्वतीर्थव्ययप्रायित्रते 20 लक्षं द्विजेभ्यो दुग्धेन प्रक्षाल्य ददासि। तेन स्वीकृतम्। मित्रणा प्रोक्तम्-शत्रुञ्जय-रैवतकस्य प्रायित्रत्तग्राहके मित्र सित द्विजानां कथं वितीर्णम् १। यदि दण्डियप्यामि तदा जनापवादः। परं त्वमदृष्टव्यमुखः। तव पित्रा एका कोटीः, ८ लक्षाः (Ps. षोडश लक्षाः) धर्माव्यये कृताः। त्वमेवं कुरुषे। त्वमपाङ्केयोऽतःपरं सङ्घवाद्यश्च। इत्यभिधाय विसृष्टो जनः। [Ps. स मित्रचरणयोः पतित्वा लक्षद्वयं तीर्थेषु वितीर्थ सङ्घमध्येऽभृत्। विप्राणां नामानि न गृह्णाति। मित्रिणा अन्येऽपि सङ्घलोकाः सम्भृष्य सम्भृष्य प्रहिताः।]

§ १२६) [§एकदा देवपत्तनात्पतितान्वया ईयुः । मित्रणोक्तम्—देवो भव्यरीत्या पूज्यमानोऽस्ति ? । तैरु-क्तम्—न । कथम् १—

(१८१) नादत्ते भितं सितं सचिव! ते कर्पूरपूरं सारन् कौपीनेऽपि च कुप्यति प्रभुरसौ शंसन् दुक्कलादिके। दिग्धो दुग्धरसैर्जलेषु विमुखः श्रीवस्तुपाल! त्वया कर्पूरागरुमोदितः पशुपतिनों गुग्गुलं जिघति॥

तेषां सहस्रा दश दत्ताः।



30

[†] एतानि पद्यानि Ps. आदुर्शे त्यक्तानि । 🖇 एतदुन्तर्गतं वर्णनं Ps. आदुर्शे एवोपछभ्यम् ।

15

20

25

30

§ १२७) एकदा मत्री तेजःपालो भृगुपुरमायातः । तत्र श्रीम्रनिसुत्रतचैत्याचार्यः श्रीरासिल्लस्रिमिरुक्तम्मित्रन्! सन्देशकमेकं शृणुत । आदिश्यताम् । अद्य पाश्चात्ययामिन्यां वृद्धा युवत्येका समेत्य प्राह-

(१८२) तेजःपाल! कृपालुधुर्य! विमलप्राग्वादवंदाध्वज! श्रीमन्नम्बडकीर्तिरच वद्ति त्वत्सम्मुखं मन्मुखात्। आजन्माविध वंदायष्टिकलिता भ्रान्ताऽहमेकाकिनी वृद्धा सम्प्रति पुण्यपुञ्ज! भवते सौवर्णदण्डस्पृहा॥

इत्युक्ते मन्त्रिणा देवकुले देवकुलिका ७२ सहिते दण्ड-कलशाः सुवर्णमयाश्रकार । तसिन्कारिते तैरेव उक्तय्-

(१८३) कं कं देशमहं न गतः कौतुकलोभाविष्टः। त्यागी तेजः पालादपरः कोऽपि न दृष्टः॥

10 §१२८) अथैकदा एकोदिनियोगी गले सरावं बद्धा मित्रणमायातः। पृष्टम् । देव! द्वात्रिंशत्सहस्नाः श्रीपत्तने नृपवेश्मिन देयाः । त्वां संस्मृत्यायातः । मित्रणा सहस्र १० दापिताः। श्रीस्तम्भे भृगौ गत्वा अन्यान् द्वादशसहस्नानानीय चिन्तितम्-याञ्चयान्ये न भविष्यन्ति ।......अप्रेऽपि गृहीत्वा पुनरिप याचन् न लजसे । तेनोक्तम्-देव!

(१८४) हृदि ब्रीडोदरे वहिः खाभावादुत्थितः शिखी। इति मे दग्धलजस्य देही देहीति का त्रपा॥

मित्रणा श्रुत्वोक्तम्-कियन्तोऽविशिष्यते?। देव! दश सहस्राः; द्वादश मिलिताः। त्वां विना शेषेभ्यः को विमोचयित । मित्रिणा दश दापिताः। पुनरुक्तम्-निर्वाहं कथं करिष्यसि?। देव! काष्ट्रतणान्यादाय वर्तिष्ये। मित्रिणा सहस्राष्टकं निर्वाहाय वितीर्थ प्रहितः।

§१२९) कोऽपि विप्रो मित्रसभायामागतः । मित्रणा उपवेशित इतस्ततो विलोक्य ऊचे-(१८५) अन्नदानैः पयः पानैर्द्धर्मस्थानैश्च भूतलम् । यदांसा वस्तुपालेन रुद्धमाकादामण्डलम् ॥

कुत्रोपविश्यते ? । पुनर्वदेति सभ्यैरुक्तं नववारम्रुक्तं खिन्नः । नव सहस्रा दत्ताः § ।]

§१३०) अथैकदा वामनस्थलीवास्तव्येन यशोधरेणोक्तम्-

(१८६) श्रीवस्तुपाल तव भालतले जिनाज्ञा वाणी मुखे हृदि कृपा करपङ्कजे श्रीः। देहे द्युतिर्विलसतीति रुषेव कीर्तिः पैतामहं सपिद धाम जगाम नाम॥
सहस्र १० दत्तिः। पं० माधवोक्तिः—
सरस्वतीसङ्गतकान्तमूर्ति.....॥

द्रम्मसहस्र ४० दत्तिः।

§ १३१) द्वितीययात्रारम्मे श्रीनरचन्द्राचार्येरुक्तम्-

(१८७) लिहम! प्रेयसि! केयमास्यशितिता वैकुण्ठ कुण्ठोऽसि किं? नो जानासि पितुर्विनाशमसमं सङ्घोत्थितैः पांशुभिः। मा भीर्भीरु! गभीर एव भविताऽम्भोधिश्चिरं नन्दतात् सङ्घेशो लिखतापतिर्जिनपतेः स्नात्राम्बुकुल्यां सजन्॥

婚

Contro For the Ada-

गौरी रागवती त्वयि त्वयि वृषो बद्धादरस्त्वं पुन-.भूत्या त्वं च संमुह्लसद्गुणगणः किंवा बहु ब्रुमहे। श्रीमन्त्रीश्वर! नूनमीश्वरकलायुक्तं च ते युँज्यते बाछेन्द्रं चिरमुचकै रचयितुं त्वत्तोऽपरः कः क्षमः॥

तद्तु मन्त्रिणा पदोपवेशनं कारितम्।

पातालान्न समुद्धृतो बत बलि०। इदं कङ्कणकाव्यम्।

रू ३२) अथ पाद्लिप्तपुरे त्यलितादेवीश्रेयसे सरोऽकारयत्।

*पुण्डरीकनिवहैर्विराजितं पुण्डरीकगिरिराजसिवधौ। वस्तुपालसचिवेन कारितं भाति यत्र लिलताभिधं सरः॥

विनाशितं पुरा सचिवौ सचरितवताविमौ। अचलेश्वरनालिमण्डपं रचयामासतुरेनमर्बुदे ॥

वस्तुपालसचिवेन कारितं हैमद्ण्डकलशैः [सुशोभितम्]। [अर्बुदाद्रि]शिखरे मनोरमं नेमिमन्दिरमिदं विराजते ॥

§ १३३) एकसिन्नवसरे सुराष्ट्रायां सङ्घे व्रजति सति अग्रेसरैरेकािकभिवितिभिविटिकासु मार्गसोपद्रवे कृतें 15 तपोधनिकरेत्य मित्रणोऽग्रे रावा कृता । मित्रणोत्तारके कृते अनुपमदेव्यग्रे कथापितम्-यद् एकाकिनां विहरणं न विधेयम् । अपरे सर्वेऽपि विहृत्य गताः ।अनायाते अनुपमदेव्या नगोदरं बन्धोः समर्धविच(हृः)रणं तेषां कारितम् । खयमवेलं मोजनार्थम्रपविष्टा । मित्रणोक्तम्-यो गृहे लघुः स बहिर्वातेन नीयते । असाभिः कैनापि हेतुनां वारितम् । इत्थं कियन्ति दिनानि निर्वाहं यासित । तया तत्कालं स्थालं त्यक्त्वोक्तम्-यद्भवतां बालत्वे जातं तर्तिक विस्मृतम् ?। किं तत् ?। धवलकके वसतामेकदा अवेलं तपोधनौ मार्गश्रान्तौ भवतां गृहे 20 समेत्य धर्म्मलाभोक्तिपूर्वं स्थितौ । तदा करुणभक्तानि समायान्ति । नापरं किमपि गृहे । सर्वः कीजपि भुक्त्वोत्थितः । अतः श्रश्चरेण नेत्रमीलनं कृतम् । श्रश्रृनीचैरवलोक्य स्थिता । युवामघोऽवनौ जातौ । ज्येष्टपत्ती-सहिता अहं कटिकापाश्चात्ये उपविष्टा । तपोधनौ अलब्धोत्तरौ गतौ । तदा युवाम्यां यदुक्तं तिकं न सरतः ?-धिगसाकं जीवितम् । भृदङ्ग (Ps. मातङ्ग) स्थापि गृहे भुक्तोत्तरं प्राप्यते । वयं तेषामपि निकृष्टाः सः। यद्यवनिर्विवरं दत्ते तदा पाताले विश्वामः । अवेलमायातौ यती इत्थं व्यावृत्य गतौ । स कोऽपि क्षणो भविता 25 यत्र वयमपि किमपि कर्तुं क्षमा भविष्यामः। नृनं तद्भवतां विस्मृतम्। यदद्य ऋद्धिं प्राप्य ईद्यां विमृशत। भवतां ददतामेव श्रेयः। इति श्रुत्वा मन्त्री हृष्टः । इत्युक्तम्-ममाग्रे तपोधनरावा केनापि न कार्या। ततो दर्शनिभिः सर्वैः 'षइ दर्शनमाता' इति उक्तम् । तस्याः कङ्कणकाव्यमिदम्-

(१९२) पश्चाइत्तं परैर्दत्तं लभ्यते वा नवा खलु । खहस्तेनैव यदत्तं तदत्तमुपलभ्यते ॥

§ १३४) तया विमलाद्रौ नन्दीश्वरोद्यापने नन्दीश्वरप्रासादः कारितः । तत्रोद्यापनं कृतम् । अत्रैव विमला-30 चलेऽनुपमसरः कारितम् । तस्मिन् भरिते केनापि चारणेनोक्तम्-

(१९३) भाऊ भरहिं काइं सेत्तुंजि सर न काराविडं। जाणिउं ईणइं ठाइ अमाइ अणुपमडी किउं॥

^{*} Ps. आदृशें एवेदं पद्यं प्राप्यते । † एतत्पद्यद्वयं Ps. आदृशें परित्यक्तम् ।

15

एकवीसवारभणनेनैकविंशतिसहस्रा दापिता मन्त्रिणा ।

§ १३५) एकदा वटक्र्पपुरेऽलङ्कारिणः श्रीमाणिक्यसूरयः सन्ति । ते मन्त्रिणा आकारिता अपि नागताः । मञ्जिपा खरूपेण कथापितम्-

उत्सुत्योत्सुत्य गतिं कुर्वन् गर्वाद् खर्वजडवुद्धिः। (868) वटकूपकूपमध्ये निवसति माणिक्यमण्डूकः ॥

पुनराचार्यैः प्रतिखरूपं प्रहितम्-

गुणालीजन्महेतूनां तन्तूनां हृद्विपाटयन्। वंशार्द्धार्द्धपरिस्फूर्ला रे पिञ्जन! विज्ञानसे॥

मन्त्री किञ्चिद्वपितः स्तम्भतीर्थपौषधागारं लुण्टाप्यैकत्र वस्तु द्ध्रे । आचार्यास्तद्तु समायाता मिलिताः 10 मित्रणः । उक्तं च-मित्रन् ! सङ्घभारोद्धारधुरीणे त्विय कथमसाकं पौषधागारे उपद्रवः । मित्रणोक्तम्-पूज्या-नामनागमनमेव हेतुर्नान्यत् । पुनः सर्वमर्ण्यितम् । संघार्चासमये तैर्व्याहृतम्-

(१९६) एकं वासः सुरेदीः कृतसुकृतदातैर्जन्मकाले जिनानां दत्तं दीक्षाक्षणे वा ध्वजवसनमधो एकमेवाम्बरं च। सूर्यादीनां ग्रहाणां पुनरपि विधिना दत्तमस्मिन् क्षणेऽसौ सत्पात्रभूरि यच्छन्नधरितसुरपो नन्दताद् वस्तुपालः॥

तद्नु ते पुस्तकादि दत्त्वा क्षमित्वा च प्रहिताः।

§ १३६) तथा यत्र यत्र प्रासादं कारयति तत्र तत्र निधिः प्रकटीभवति । एकदा श्रीशतु अये शृङ्गोपरि कपर्हि-यक्षप्रासादः प्रारब्धः । पाषाणान् विदार्थ मण्डयध्वम् । चिन्तितम्-कथमत्र निधिः प्रकटीभविष्यति । मूलादपि टङ्किकाभिर्विदार्थ पापाणे द्विधाकृते सर्वेरप्यन्तः सर्प्यो दृष्टः । तदा मन्त्री तत्रासीत् । स्वयमायातस्तदाश्चर्यविलोक-20 नाय । यावत्पञ्यति तावदेकावली हारः । करेण गृहीतः । सर्वैरपि दृष्टः । तत्र पपाठ कपिईस्तुतिम्-

(१९७) चिन्तामणिं न गणयामि न कल्पयामि कल्पद्धमं मनसि कामगवीं न वीक्ष्ये। ध्यायामि नो निधिमधीनगुणातिरेकमेकं कपर्दिनमहर्निशमेव सेवे॥

तद् प्रासादः कारितः।

§ १३७) एकदा मित्रणा चिन्तितम्-यं श्रीशत्रञ्जये कर्म्मस्थाये ग्रुच्यते स देवद्रव्यं विनाशयति । एवं 25 विचिन्त्य पौषधागारे श्रीविजयसेनस्ररिपार्श्वे समेतः । गुरवो वन्दिताः । लघ्वाचार्याः श्रीउदयप्रमस्रर-योऽपि । ते तु मित्रणा सप्तश्वतयोजनानामन्तर्यः कोऽपि विद्वान् तमानीय पाठिताः सन्ति । तपोधनानामपि पञ्जविंशतिर्नमञ्जकार । तपोधनमेकं वृद्धं शान्तं नमस्कारपरावर्त्तनपरं दृष्ट्वाऽऽह-भगवन्! देवद्रव्येण रिक्षितेनोपेक्षितेन वा श्रेयः ? । यदि रिक्षितेन तर्ह्यमुं बृद्धं यति प्रसादीकुरुत । यं शत्रु अये नयामि । अपरे तत्र भक्षकाः । गुरुभिरुक्तम्-न युक्तमेतत् । बलादपि मानिता गुरुवः । तैस्तपोधनाग्रे प्रोक्तम्-यन्मत्री विक तत्का-30 र्यम् । तेनोक्तम्-भगवन् ! दीक्षा मया निस्तारार्थं जगृहे । तत्र द्रव्याशनेन कथं मलिनयामि ! मत्रिणा प्रोक्तम्-एतन्मालिन्यं न किन्तु भूषणम्, चैत्यद्रव्यरक्षणेन । आग्रहं कृत्वा प्रहितः । स खद्र्शनमार्गस्थो देवलेखकं विलो-कयति । एकदा आदेशवर्तिभिः खादकैरुक्तम्-भगवन् ! यूयं तीर्थमठपाः । भवतां पार्श्वे देवनमस्यागताष्टकुरा व्यवहारिणश्चोपविश्वन्ति । एभिर्मिलिनैर्जीणैश्चीवरैर्भव्यं न । वस्त्रमध्ये किं दूषणम्? । मनोहराणि वस[ना]नि पंरि-

¹ B दीक्षा नमस्कारपरावर्तनार्थे गृहीता । 2 B दर्शनाचारस्तः।

द्धत । तानि ग्राहितः । तथाकृते पुनरुक्तम्-अनेके जना भवतां सह पर्यालोचं कुर्वन्ति, तत्कथमुद्गीते वदने भव्यम् । पश्चात्ताम्बूलं ग्राहितः । उक्तम्-अत्र भवतां भिक्षावेला तथा कर्मस्थायान्तरायं स्यात्, रसवतीमा-स्वाद्यतां किं दूषणम् । तल्लोलुपः कृतः । भगवन् । विलोकयत—पादेन चङ्कमणं भव्यं वा सुखासनेन । तमपि कारितः । एकदा सुखासनस्थः पालीताणके जनैः पश्चद्यभिः सह गन्तुं प्रवृत्तः । मत्री कृतधौतवसनः कृतमुक्षायः पादचारेण सम्मुखो जातः । मत्रिणा पृष्टम्-केऽमी । अग्रेसरेरुक्तम्-असौ भवत्प्रहितो मठपः । किं मित्रणा सुखासनं स्थापयित्वा वन्दितः । उक्तम्-तले कार्यं कृत्वा वेगेन पादमवधारणीयम् । स लिखतः । तत्प्रमुखानमादाय स्थितः । उपर्याकारितोऽपि नायाति । उक्तश्च-मयाऽनद्यनं जगृहे । इयतां यतीनां मध्यादहं मित्रणा प्रेषितः । ममाप्ययमाचारः । गुरूणां भवतां चाऽऽस्यं कथं दर्शयामि । अन्योऽत्र कार्यकर्ता वीक्ष्यः । उपरि गत्वाऽनद्यनं परिपाल्य दिवंगतः। मत्री तुं यात्रां कृत्वा पुरमेत्य गुरूणां सकलं तद्वुत्तमाच्य्यौ। [Ps. गुरुभिः प्रोक्तम्—माऽतः परं कोऽपि साधुश्चैत्यद्रव्यिनतां करोत् । एषोऽपि ईदृशो जातः ।]

§ १३८) अथ महं० अनुपमदेच्या १२९२ वर्षे पश्चमी-उद्यापनं कृतम् । तत्र समवसरणानि २५, श्रीशत्रु अय-तले वाटिका ३२, रैवते १६, तेजलपुरे पौपधागार-कुमरसरः सहितं देवकुलम् । ज्ञीझरीआग्रामे प्रासादः, सरोवरम्, वापी च । ल्युणिगवसहीग्रासकृते डाक-डमाणीग्रामद्वयं दत्तम् । तपोधनोपकरणानि नाम्ना पात्राणि दोरु-झोली-

डांडाप्र॰ ग्रामाणि । कोऽपि यात्राः १३ वक्ति ।

(अत्र B आदर्शे एतद्वर्णनं विशेषविस्तरेण लिखितं लभ्यते; यथा-)

११३९) {तथा महं० अनुपमदेच्या १२९२ पंचमी-उद्यापनं कृतम्। तत्र २५ समवसरणानि पञ्चवर्णानि कारयित्वा श्रीस्रिस्यः प्रदत्तानि। एवं २५ महं० कुमारदेच्याः पञ्चिव्याति महं० ललतादेच्या। तथा महं० आसराजवसही कारिता मा(पि?)तः श्रेयसे च। महं० मछदेवश्रेयसे मं० ल्लिगश्रेयसेऽवृदे। तथा सप्तभगिन्यस्तासां श्रेयसे
सप्त प्रासादाः । तासां सखीनां श्रेयसे सप्त देवकुलिकाः कारिताः। श्रीशत्रुज्जयतले वाटिका ३२ जगन्नाथपुजाये
कारिताः। रैवते पोड्य । तथा श्रीतेजलपुरं प्रासाद-पोपधागार-कुमरसरःसहितम्। तथा झींझरिआग्रामे प्रासादो २०
वापी सरश्च। अर्वुदे ल्लिगवसद्धां श्रीनेमिपूजाये डाक-डमाणी इति ग्रामद्वयं ददो। तथा तपोधनोपकरण १४ तेपां
वापी सरश्च। अर्वुदे ल्लिगवसद्धां श्रीनेमिपूजाये डाक-डमाणी इति ग्रामद्वयं ददो। तथा तपोधनोपकरण १४ तेपां
वापी सरश्च। अर्वुदे ल्लिगवसद्धां श्रीनेमिपूजाये डाक-डमाणी इति ग्रामद्वयं ददो। तथा तपोधनोपकरण १४ तेपां
वापी सरश्च। अर्वुदे ल्लिगवसद्धां श्रीति पर्व कोटि, ८० लक्ष गिरिनारपदे। १२ कोटि, ५३ लक्ष अर्वुदपदे।
यानि। १८ कोटि, ९६ लक्ष शत्रुज्जयपदे। १२ कोटि, ८० लक्ष गिरिनारपदे। १२ कोटि, ५३ लक्ष अर्वुदपदे।
९८४ पोसाल, ५०० सिहासन दान्त-काष्ठमय, ५०५ समवसरणानि पट्टस्त्रमयानि। तीर्थयात्रा १२; कोऽपि
१३॥: वक्ति। ७००। माहेश्वरेषु प्रासादेषु, ३ सहस्र विडोत्तर नृतन जीर्णोद्धार, १३०४ जैन प्रासाद शिखरवद्ध,
२३०० जीर्णोद्धार, २१ आचार्यपद्। सरस्वतीमांडागार ३-भृगुपुरे स्तंभतीर्थं पत्तने च। १८ कोडि द्राम दण्डकलश्च-पुस्तकपदे। १५०० तपोधन दिनं प्रति विहरणाउं। ५०० त्राह्मणभोजनम्। १०० कार्पटिकमोजनम्।
दक्षिणसां श्रीपर्वत, पश्चिमायां प्रभास, उत्तरसां केदारु, प्रदेसां वाणारसी इति भृमिमध्ये। एवं सर्वाङ्क ३
कोटिशत, ३२ कोडि, ८४ लक्ष, ७ सहस्र, ४ सत्त, १४ लोहिडिआ अथवा इका आगला द्राम मीमप्री०।)।। ३०

§१४०) अथ भीमे [राज्ञि] दिवंगते राणकलवणप्रसादः पुत्रयोर्जीरम-वीरधवलयोर्मध्यादेकमपि राज्ये उपवेशियतुं न शशाक । आद्यः पत्तनपरिग्रहस्य प्रियः, द्वितीयस्तु दानी योद्धा । अथैकदा राणकवीरधवलेन ताम्बूलो [वं]ठायापितः । तेन विलोक्य तटे [क्षिप्तः] एवं द्वित्रिवेलम् । राज्ञा पृष्टम् –िकमरे! त्यजिसि । स्वामिन्! मध्ये कृमयः कृष्णवर्णाः । राणकेन मित्रणोऽग्रे उक्तम् –यदहमराजापि छ्त्या नृपः कृतः ।

¹ B कथसुद्रानसत्यं (?) वदने भव्यस् । पु॰ प्र॰ स॰ 9

§१४१) तदनु विश्वमल्ले किश्चिद् यौवनाभिमुखे सित धवलककातू सर्वमाएच्छचे, मित्रणं पाश्चारे विमुच्य, तेजःपालं सहादाय पत्तने गत्वा राणकं वीरमं च मुत्कलाप्य महता परिकरेण गङ्गां प्रति चचाल । ततो मतोडा- तीथे दानादि दत्त्वा कुण्ड्यन्तिविवेश । सा द्विजैबील्यमानापि न बुडित । तेजःपालेनोक्तम्—कापि हृदि आर्तिः ? । राणकेनोक्तम्—राज्यं वीरमस्य भविष्यति वीसिलको रुलिष्यति । मम करे जलं क्षिप—वीसलस्य राज्यं मया उद्यम् । मित्रणा तथा हस्ते जलं क्षिप्तम् —एपा चिन्ता न विधेया । तदनु कुण्डी मग्ना । तेजःपालः सुकृत्यं विधाय क्रमेण पत्तनमायातः । इतो राणकस्तेजःपालमागतं श्रुत्वा सशोकः सभायामुपविष्टः । तावता तेजःपालेन विश्वमल्लस्योत्तारके राणकपद्व्यास्तिलकं कृतम् । वादित्रवादनं श्रुत्वा राणकेन पृष्टम्—किमिदं विश्वमल्लस्योत्तारके ? । इतसेजःपालो नृपगृहे प्राप्तः । राणकेनोक्तम् —तेजलः ! वादित्रवादने को हेतुः ? । देव ! विश्वमल्लः स्योत्तारके ? । इतसेजःपालो नृपगृहे प्राप्तः । राणकेनोक्तम् —तेजलः ! वादित्रवादने को हेतुः ? । देव ! विश्वमल्लः स्यामिनः पट्टे अभिषिक्तः । इतो गोधियकेनोक्तम्—राज्ञाऽभिषिक्तो भवति त्वया वा ?, मया न कथं । त्वं तु 10 पट्टस्य पदातिरसि । अद्य स्यस्यामिसुतो राणकः कृतोऽस्ति । कल्ये राजानं करिष्यामि । एवं गोधिय-तेजपाली विवदानौ राणकेन निषद्धो । वार्वां पृष्टा सुतस्यौद्धिदेहिकं कृतम् ।

श्रीवीरधवले दिवंगते मित्रणा वस्तुपालेनोक्तम्-

(१९८) आयान्ति यान्ति च परे ऋतवः क्रमेण जातं तदेतदतुयुग्ममगत्वरं तु । वीरेण वीरधवलेन विना जनानां वर्षा विलोचनयुगे हृदये निदाघः ॥

अत्र मोजदीनमातुः सम्बन्धः।

[एप सम्बन्धः ${f P}$ सञ्ज्ञके आद्शें लिखितो नास्तिः परं ${f B}$ सञ्ज्ञके आद्शें उपलभ्यते । तत एवात्रावतार्यते । यथा-]

§१४२) {इतश्र सुरत्राणमाजेदीनमाता कादिकश्च हजयात्रां कर्तुं पत्तनमायातो । मित्रणा प्रवेशोत्सवपूर्वकं प्राघुणकं विधाय सम्प्रेषणपूर्वकं स्थाने स्थाने, मित्रवचसा गौरवमनुभवन्तो हजयात्रां कृत्वा प्रत्यावृत्तो । प्रवेशपूर्वकं भोजितो । मात्रोक्तम्—त्वं मत्सुतः सुरत्राणादप्यधिकः । किमिष याचस्व । मातः! नाषापुरप्रत्यासन्ने मकडाणा 20 ग्रामे पाषाणस्य स्वनिरस्ति । तसाः प्रस्तरत्रयं स्वमातः सकाशाद्याचे । तयोक्तम्—तथा करोमि, यथा मे सुनुः समर्पयिष्यति । तथा उपायने तेजी ५०० प्रहितानि सार्द्धम् । इतः सुरत्राणः जनन्याः सम्प्रस्वमाययो । गुरुरुक्तः सुन्तेन यात्रा कृता । वस्तुपालप्रसादेन । हिंदुकं किं प्रशंसयि । तेनोक्तम्—तस्य भक्तिः सा या एक्या जिह्वया वक्तं न पार्यते । इदमुपायनम् । तदवलोक्याह—स किं याचते । प्रस्तरत्रयम् । एवं त्वं कथयम् हरामं जनयि । किं करोमि ?—तस्य सा मित्रियाऽहं बलादिष कथाप्ये । सुरत्राणेन फलहीत्रयमिपितम् । मार्गे 25 रहकलानि मज्यन्ते । मित्रिणा कथापितम्—यद् रहकलेषु उभयोरिष पक्षयोर्त्वण्डधारा घृतस्य देया । एवं महोत्सवे जायमाने फलहिकाः श्रीशत्रञ्जये प्राप्ताः । मत्री संघं संमील्य यात्रार्थमुपि गतः । तत्र संघसाञ्जलिपूर्वं विज्ञप्तिकां चक्रे—संघस्त्ववधारयतु । एप मे मनोरथः कदापि सिद्धं मा प्रयातु । यतः पूर्वतीर्थस्थानर्थं जाते एतिक्रम्बमुपविशति । एतद्युगान्तेऽपि मा भूयात् । परं न ज्ञायते । कदाचित्कालयोगेनानर्थः स्थात्तिदृदं विम्यं श्रीसंघेन प्रसादं विधाय स्थापनीयम् । संघसाङ्के क्षिप्तमित्ति । एवम्रुक्त्वा एकां युगादिदेवस्य फलहिकाम्, एकां अर्थिकस्य, एकां कपर्देः—एवमभिधाय भृमिगृहे व्यधात् । }

¹ B मुक्कलाप्य । 2 B मागतोडा । 3 एतद्वाक्यस्थाने B 'क्वतं एतत् ।' 4 B ब्रुडिता । 5 B शोकवान् । 6 B नृपसग्रन्थायातः । 7 B पृष्टम् । 8 B तेजःपाल । 9 P भविष्यति । 10 P 'क्यं' अग्ने 'त्वया' शब्दोऽधिकः । 11 B वार्ता पृष्टा । 12 B विद्धे ।

§१४३) एवं पुण्यानि राजकार्याणि कुर्वतोरेकदा राणक लूणप्रसादेन तेजल उक्तः –मिन्नन्! को राजा कार्यः १। वीरधवलः स्वर्गामी जातः। तर्पुत्रः विशुः। यदि तव विचारे एति तदा वीरमस्य राज्यं दीयते। मिन्नणा उक्तम् –स्वामिन्! मया स्वसामिस्रनोर्वासलस्याङ्गीकृतमस्ति। राणकः प्राह्—यद्यप्येवं तथापि मद्राक्त्यं मन्यस्व। मोन्नणा मानिते, रात्रौ वीरमः समेत्य राणकं लक्त्या प्रहृत्य, प्राह्—भो डोकर १ अद्यापि राज्याञ्चां न मुश्चिति , किं द्वितीयमपि त्रियमाणं अपेक्षसे १। एवम्रुक्त्वा गतः। राणकेन चिन्तितम्—अनेन कीलिकामङ्गो न अप्रतिक्षितः। स कोऽप्यस्ति यः प्रातःप्रहरमध्ये वीसलमानयति। नागडेन भट्टपुत्रेणोक्तम्—अहं धवलके रात्रिपाश्चान्यप्रदृदे यास्यामि। ‡तदनु करभीमारुद्य समेष्यिति। स लेखं दक्त्वा प्रहितः। वीसलं सुप्तमुत्थाप्य प्राह—यदि त्वं राजा तदा मे किं १। श्रीकरणम्। तिर्हं चल। करभीमारुद्यायात् । प्रातः राणकः सकलपरिग्रहं सम्मील्य सहस्रलिङ्गोपकण्ठे उत्तारकं दक्त्वा स्थितः। वीसलेन राणकस्तत्रैत्य नमस्कृतः ।

ततो राणकेन तिलकं कृत्वा त्र्यनादपूर्व धवलगृहे नीतः, सिंहासने उपवेशितश्व। वीरमः निकं ? किं ? याव-10 द्वक्ति ताविश्वसानिस्वनपूर्वकं श्रीवीसलदेवाज्ञा श्रुता। अश्वसहस्त्रेद्वाद्वाभाः समं ध्या भूत्वा स्थितः। इतस्तेजः-पालबुद्धा राज्ञाऽचिन्ति – वृद्धस्य वीरमोपरि मोहोऽस्ति, मा कदाचिदेतद्विधटयत् – इति विमृश्य वृद्धके विषं श्विश्वा सन्ध्यायां राणकपार्थे गन्तुं प्रवृत्तः। राणकेन तु चिन्तितमस्ति – मया विरूपं कृतम्। अद्यापि राज्यं प्रातवीरमस्य दासे। उक्तम् – द्वारे कोऽपि विश्वन् रक्ष्यः । इतो राजा द्वारस्थै निष्ध्यमानोऽपि मध्ये प्रविश्य राणकं प्राह—तात ! अमृतमिदं सत्वरं पिवत विश्वने तत्व विचारे आयातम् १। आयातं त्र्यानीतम्। राणकेन उक्तम् नत्वया राज्य-15 निर्वाहो भावी – एवमुक्त्वा पीतम्। तत्कालं दिवंगतः। तेजःपालस्य "राजस्थापनाचार्यः" इति विरुदं जातम्।

\$१४४) इतो मिश्रवुद्ध्या श्रीवीसलदेवेन तृतीये दिने वीरमो भाणितः—यन्मे वीरमस्तातसमः। अतो यदि विक्तः तदा राज्यं मुश्रामि, सेवां करोमिः । तदनु प्रधानैर्महाधरैश्रोक्तं वीरमं प्रति—देव! राजा मान्यः । यस्त्वेवं विक्तः । वीरमः प्राह—यदि मे नगरपश्चकं नृपो ददाति—एकं प्रह्लादनपुरं, द्वितीयं विद्यापुरं, तृतीयं वर्द्धमानपुरं, चतुर्थं धवलकं, मञ्चमं पेटलाउद्रपुरं। एतानि पञ्च पुराणिः, तथा वर्षं प्रति द्रम्म लक्ष ३। एवं 20 यदि नृपो मन्यते तदा प्रणामं करोमि। नृपेण मानितम्। मिश्रणा तत्कालं विकागरपरिसरे पञ्च प्रामाणि तन्नामा वासितानि। वीरमो मिलितः। नृपं प्रणम्य वीरमो वाटकं स्थितः। वीसलदेवस्य राज्यं निष्कण्टकं जातम्। नागडस्य श्रीकरणं जातम् । मिश्रणो व्यापारो निवृत्तः। नृपेण "वृद्धामात्या" इति दत्तमानाः सेवां कुर्वाणाः सन्ति।

(१९९) सूत्रे वृत्तिः कृता दुर्गसिंहेनापि मनीषिणा। विसूत्रेऽपि कृता तेषां वस्तुपालेन मन्त्रिणा॥*

एकदा वीरमेन नगरपश्चकं याचितम्। राज्ञा ग्रामपश्चकं दर्शितम्। तेनोक्तम्-नगराणि याचे। राज्ञोक्तम्-25 एषु दत्तेषु किमविशिष्यते?। तर्हि न स्थास्ये। त्रज्ञ। स सपरिच्छदो मालवं प्रति त्रजन्, राज्ञा जावालिपुरीयस्य चाचिगदेवस्य पार्थात् सहंवाडीघार्टसमीपे मारितः।

§१४५) इतश्र-अर्बुदचैत्ये गजशालां वीक्ष्य यशोवीरेण मन्त्रिणा पृष्टम्³¹-भवतां पूर्वजः कः श्रीकरणः १ । पृष्टम्-कथम् १ । श्रीकरणं विना गजशाला सत्या न भवति³² । तदनु तेजःपालेन गजः समानायितः । तं

^{1,} P 'राणक' नास्ति । 2 B तेजःपालो न्याहतः । 3 राज्यं कस्य दीयते । 4 B सुतस्तु । 5 B समेति । 6 B नास्तीदं वाक्यम् । 7 B मम वाक्याद् वीरमस्यास्तु । 8 B डोहरकर । 9 B जियन्तं । 10 B 'रात्रि' नास्ति । \ddagger एतद्-न्तर्गतपंक्तिस्थाने B आदर्शे "तद्दु करभीमधिरुद्ध चिंतरः ।" इत्येव पाठो विद्यते । 11 B चतुरकं । 12 B वीसलः समायातः । राणकं नमस्कृत्य यावदास्ते तावद् । 13 B विधाय । 14 B ०पुरस्तरं । 15 विधत्ते । 16 B सह । 17 B 'अस्ति' नास्ति । 18 B रक्षणीयः । 19 B कुरुत । 20 B समायातं । 21 B आयातेनानीतं । 22 B ज्याहतं । 23 B भविष्यति । 24 B कथयति । 25 नास्तीदं पदं B । 26 B मानयोग्यः । 27 B अभिद्धाति । 28 B अपरं । 29 B नगराणां परि । 30 B नास्तीदं वाक्यं । * P आदर्शे एव स्कोको नास्ति । 31 B उक्तं । 32 B गजशाला न घटते ।

नृपस्थोपायने कृत्वा, एककोटि १६ लक्ष, वर्षं यावत् चंडावके कृत्वा गृहीतम् । व्ययस्ताद्दगेव । केनापि कविना नृपं प्रति प्रोक्तम्-

(२००) एतावतैव वींसल ! पश्य प्राग्वाट-लाठयोर्भेदम् । एक इभानुपनिन्ये प्रथमश्चरमस्तु खरमेकम् ॥

5 तेजःपालेन स इस्ती ढौकने कृतः । लाटेन समराकेन वेसरश्रेकः । द्रम्म लक्ष ३६ त्रुटौ, द्वितीयवर्षे श्रीकरणं मुक्तम् ।

(२०१) बौद्धैबौंद्धो वैष्णवैर्विष्णुभक्तः, श्रौवैः श्रौवो योगिभियोंगरङ्गः। जैनैस्तावज्ञैन एवेति कृत्वा सत्त्वाधारः स्तूयते वस्तुपालः॥

११४६) सं० १२९८ वर्षे मन्त्री नृषं मुत्कलाप्य चिलतः । नागडस्तु राणकसार्थे मण्डलीं गतः। तत्र 10 तपोधनसाराविषये शिक्षां दत्त्वा अङ्केवालीआग्रामे०......प्रासादः। सरः। सत्रशालात्रयं च कारितम्। (В सङ्ग्हे अत्र एतदेव वर्णनं किञ्चिद्विस्तारेण लिखितं लभ्यते। यथा-)

{संवत् १२९८ वर्षे जातकेनायुपोऽन्तं परिज्ञाय नृपं मुत्कलापयामास—देव! क्षम्यताम्, यत्स्वामिन ऊणं खूणं वा कृतः । राजा—हे मित्रिन्! कथमेतत् १ । देवसेवायै यास्यामि । मित्रिन्! त्वं मदीय[तात]वीरधवलसमोऽतस्त्वां कथं प्रेषये । कदाचिदेयद्रम्माणां शङ्का भवतिः तदा न कार्यम् । मदीयं शरीरं तवायत्तम्, द्रव्यः किम्, क्षम्माणां पत्रं विदारियण्यामि । परं मा त्रज । मत्री प्राह—देव! द्रम्माणां किम् १, द्रम्मा बाह्याः । देहं तु तव पिण्डैः पोषितम् । परमवसाने प्रत्यासने देव! तीर्थसेवा युक्ता । अश्रुपातपूर्वं राज्ञा बीटकं दत्तम् । मित्रजनान् क्षमित्वा श्रीवस्तुपालो महता परिच्छदेन सह श्रीशत्रुज्ञयोपि चचाल । इतो राणकनागडो मित्रप्रयाणं श्रुत्वा सम्प्रेषितुं चचाल । मंडल्यां गतेन मित्रणाभिहितम्—राणक! राजकार्याणि सीदन्ति । यूयं प्रसादं कृत्वा वलत । तेनोक्तम्—तव गृहे बहुरसि । तवोपजीवनेन इयतीं ऋदिम् । करणीयं किमप्यादिश । मित्रणोक्तम्—

20 (२०२) न कृतं सुकृतं किञ्चित्सतां संस्मरणोचितम् । मनोरथैकसाराणामेवमेव गतं वयः ॥
राणकः प्राह-परं किञ्चन मनसि दुष्यति, ममाग्रे किं नोच्यते?। देव! मिय गते सित एते व्रतिनो दुःखिनो
भविष्यन्ति । मिञ्चन्! इत्थं कथमुच्यते?। यद्भवतां पार्थात् सुखिनः करिष्यामि । परिमयं चिन्ता न विधेया ।
इति राणको मुत्कलाप्य वलितः । मिञ्जी अकेवालिआग्रामे गतः । गुरवस्तत्रोक्ताः-भगवन्! मेऽनशनं प्रयच्छत ।
तत्र तेजःपालानुमत्या गुरुभिरनशनं प्रदत्तम् । मिञ्जी क्षमित-क्षामणापूर्वं पञ्च परमेष्ठिनः सरन् खर्गं गतः । संस्का25 रादनु तेजःपालेनास्थीनि श्रीशत्रञ्जये प्रहितानि । तत्र खर्गारोहणप्रासादः कारितः । अकेवालिआग्रामे प्रासादः
कारितः । सरोवरं च सत्रशाला च । तत्र धर्मस्थानत्रयं कारितम् । तेजःपालो यात्रां विधाय पत्तने समायातः ।)

§१४७) व्यापारे वर्ष १८ तद्तु बइठा ऊठि । तथा १३०८ वर्षे महं० तेजःपालेन स्वर्गमनाय राजा [Ps. वीसलदेवः] मुत्कलापितः । तदा द्रम्मा लक्ष २७ देया आसन् । राज्ञा मुक्ताः । [तथा राज्ञा द्रम्मा लक्षत्रयं धर्मव्ययाय वितीर्य*] तेजःपालः प्रहितः । श्रीसङ्घं क्षमियत्वा श्रीशङ्खेश्वरोपिर चिलतः । चन्द्रोमाणा30 ग्रामे गतः । 'जातकमवलोकितम्-यचन्द्रोमाणाग्रामे पाश्चात्यप्रहरे व्ययः । मन्त्री अनशनमादाय दिवमृगमत् ।
तत्र कीर्त्तनत्रयम् ।

§१४८) ईअथ मित्रिणि दिवं गते श्रीवर्द्धमानसूरयो वैराग्यादाम्बिलवर्द्धमानं तपः कर्त्तं प्रारेभिरे । श्रीशङ्केश्वर-पार्श्वनाथाभिग्रहं च जगृहुः । यत्तपिस सम्पूर्णे देवं नमस्कृत्य पारणकं करिष्यामः । सम्पूर्णे जाते देवं नन्तुं

¹ B द्रम्मान् विमुच्य । * Ps आदर्शे एवैतद्वाक्यं लभ्यते । † एतत्पंक्तिस्थाने P 'पाश्चात्यदिने दिवंगतः' इत्येव संक्षिप्तः पाठः । ‡ B आदर्शे एतत्यकरणं प्राप्यते ।

प्रस्थिताः । मार्गे श्रान्तास्तृषिता एकस्य तरोस्तले देवं नर्मस्कृत्यानशनाद्विनष्टाः । शङ्केश्वरेऽधिष्ठायको जातः । ज्ञानेन मित्रणो गतिमन्वेष्टं, प्रवृत्तः । अजानानो महाविदेहे श्रीसीमन्धरं नमस्कृत्य पप्रच्छ-भगवन् ! वस्तुपाल-जीवः क गतः । सामी आह-अत्रैव पुष्कलावतीविजये पुण्डरीकिण्यां कुरुचन्द्रो नाम नृपो जातः । स तृतीयस्रे सेत्स्यति । अनुपमदेवीजीवः श्रेष्टिनः सुता अत्रैव विजये जाता । साष्ट्रवार्षिकाऽस्माभिर्दीक्षिता, देशोनां पूर्वकोटिं तपस्तक्ष्वा सेत्स्यति । इति तेन व्यन्तरेणात्र भरते वस्तुपालानुपमदेव्योर्गतिः प्रकटीकृता ।

॥ इति वस्तुपाल-तेजःपालप्रबन्धः ॥

(एतत्प्रवन्धप्रान्ते P सञ्ज्ञके सङ्ग्रहे निम्नगतं विशेषवर्णनं लिखितं लभ्यते-)

११४९) अत्राग्रेतनः प्रबन्धः कथनीयः । वीरधवलेन वामनस्थल्यां जयतलदेविभातरौ साङ्गण-चाग्रुण्डराजौ मारितौ । युद्धे जाते १४ शततुरङ्ग स॰ ५ जंजी (?)

(२०३) जीतउं छहि जणेहिं सांभिल समहिर वाजीइ। बिहुं भुजि वीरतणेहिं चिहुं पगि ऊपरवटतणे॥—इति चारणोिकः।

§१५०) गोधाधियो घूघलमण्डलीकस्तेजःपालेन बद्धः धवलकपुरसभायामानीतः । तदा सोमेश्वरोक्तिः-

(२०४) मार्गे कईमदुस्तरे जलभृते गर्चादातैराकुले खिन्ने द्याकटिके भरेतिविषमे दूरे गते रोधसि। दाब्देनैतदहं ब्रवीमि महता कृत्वोच्छितां तर्जनी-मीदक्षे गहने विहाय धवलं वोढुं भरं कः क्षमः॥

६१५१) एकदा मन्त्री स्तम्भने आगतः । तत्राचार्येरुक्तम्-

(२०५) असिन्नसारसंसारे सारं सारङ्गलोचना।

मन्नी रुष्टः। श्रङ्गारिण एते। अष्टमे दिने—

यत्क्रक्षिप्रभवा एते वस्तुपालभवाददाः॥

द्शसहस्रदीनारा दत्ताः। न गृहीताः। भृगुपुरे लेप्यप्रतिमास्थाने अन्या कारिता तद्रव्येण।

§१५२) एकदा मित्रिभिः पलितं दृष्टा चिन्तितम्-

(२०६) अधीता न कला काचित् न च किश्चित्तपः कृतम्। दत्तं न किश्चित्पात्रेभ्यो गतं च मधुरं वयः॥

(२०७) आयुर्योवनिवत्तेषु स्मृतिशेषेषु या मितः। सैव चेजायते पूर्वं न दूरे परमं पदम्॥

११५३) सङ्घप्रारम्भे नरचन्द्रसरिभिरुक्तम्-

(२०८) चौलुक्यः परमाईतो चपदातस्वामी जिनेन्द्राज्ञया निर्श्रन्थाय जनाय दानमनघं न प्राप जानक्षपि। सम्प्राप्तिस्त्रिद्वं स्वचारुचरितैः सत्पात्रदानेच्छया त्वद्रूपोऽवततार गुर्जरभुवि श्रीवस्तुपालो धुवम्॥

मन्त्री यात्रायां वृषमं प्रति पपाठ-"आसं कस्य न वीक्षितं०॥"

(२०९) यहाये चूतकारस्य यत् प्रियायां वियोगिनः । यद्राधावेधिनो लक्ष्ये तद्ध्यानं मेऽस्तु ते मते॥ रैवते नेमिं प्रति-

(२१०) कल्पट्टमस्तरुरसौ तरवस्तथाऽन्ये चिन्तामणिर्मणिरसौ मणयस्तथाऽन्ये। धिग जातिमेव ददशे वत यत्र नेमिः श्रीरैवते स दिवसो दिवसास्तथाऽन्ये॥

10

20

25

30

151

Control to the AGL

15

25

§ १५४) एकदा मोजनी(दी)नसैन्यं ढिछीतश्रिलतम् । प्रयाणक ४ जातानि । राणकस्य सुद्धिर्जाताः। वस्तुपालो वीटकं गृहीत्वाऽश्वलक्ष १ युतोऽर्बुदिगिरौ गत्वा हतवान् । भग्रम् । राणकेन परिधापितः । उक्तम्−"त्वमेव के मुणवान् ०॥"

पूनडसा नागपुरीयो मिश्रसङ्घे मिलितः । तत्र-"अद्य मे फलवती पितुराञ्चारु" । श्रीयुगादिफलही, कपिह-5 पुण्डरीक-चक्रेश्वरी-तेजपुरविम्वपार्श्वमूर्त्ति-फलही ५ खानित आनीताः ।......िहिलीत आगतस्य मित्रणो

हेमलक्ष १० राणकेन दत्ताः । तेन तत्क्षणमेव ब्राह्मणेभ्यो दत्ताः । तदा काव्यानि-

(२११) निरीक्ष्य मन्त्रिन्! द्विजराजमेकं पद्मानि सङ्कोचमहो भजन्ति। समागतेऽपि द्विजराजलक्षे सदा विकासी तव पाणिपद्मः॥

(२१२) उचाटने विद्विषतां रमाणामाकर्षणे खामिहृदश्च वश्ये। एकोऽपि मन्नीश्वरवस्तुपालः सिद्धस्तव स्फूर्तिमियर्ति तन्नः॥

नानाकेनाप्युक्तं नागरेण-

(२१३) एकस्त्वं भुवनोपकारक इति श्रुत्वा सतां जिल्पतं लज्जानम्रशिराः स्थिरातलमिदं यद्वीक्षसे वेद्यि तत्। वाग्देवीवदनारविन्दतिलकः! श्रीवस्तुपाल ध्रुवं! पातालाद्वलिमुद्दिधीर्षुरसकृन्मार्गं भवान्मार्गति॥ अत्रापि षोडशसहस्रद्तिः।

§ १५५) एकदा अनुपमा अर्वुदचैत्ये आगता सूत्रधारान् कर्म्मस्थायमन्दादरानाह-

(२१४) भूपभूपञ्चवप्रान्तिनरालम्बविलिम्बनीम् । स्थेयसीं बत मन्यन्ते सेवकाः खाम्पि श्रियम् ॥ तया पृ०-शीव्रं निष्पद्यते स उपायः कः । तैः स्० निवेदितम्-प्रासः द्विम(ग्)णी कियताम् । कृतः । 20 पश्चप्रक्रिष्पन्नः ।

(२१५) इतोऽव्धिः परितो मृत्युरितो व्याधिरितो जरा। जन्तवो हन्त पीड्यन्ते चतुर्भिरिप सन्ततम्॥

§१५६) यशोवीरः प्रथमसङ्गमे श्रीअर्बुदे श्रीवस्तुपालं प्रति प्राह-

(२१६) श्रीमत्कर्णपरम्परागतभवत्कल्याणकीर्त्तिश्रुतेः प्रीतानां भवदीयदर्शनविधौ नास्माकमुत्कं मनः। श्रुत्वा प्रत्ययिनी सदा ऋजुतया खालोकविस्नम्भणी दाक्षिण्यैकविधानकेवलमियं दृष्टिः समुत्कण्ठते॥

§ १५७) मन्नी राजानं मुत्कलाप्य अङ्केवालीआग्रा० गतः सपरिजनः।

(२१७) गुरुर्भिषक युगादीकाः प्रणिधानं रसायनम् । सर्वभूतदयापध्यं सन्तु मे भवरुग्भिदे ॥ (२१८) लब्धाः श्रियः सुखं स्षृष्टं मुखं दृष्टं तनुरुहाम् । पूजितं दर्शनं जैनं न मृत्योर्भयमस्ति मे ॥ तत्रानशने मित्रिचिन्ता-

(२१९) सुकृतं न कृतं किञ्चित् सतां संस्मरणोचितम् । मनोरथैकसाराणामेवमेव गतं वयः ॥ (२२०) यन्मयोपार्जितं वित्तं जिनशासनसेवया । जिनशासनसेवैव तेन मेऽस्तु भवे भवे ॥. इति वदन् मन्नी वस्तुपा० दिवं ययौ । ततसेजःपाले दिवंगते लोकोक्तिः-

(२२१) किं कुम्मीः किमुपालभेमहि किमु ध्यायाम किं वा स्तुमः	
कस्याग्रे खमुर्खं खदुःखमिखलं सन्दर्शयामोऽधुना ।	
शुद्कः कल्पतरुयेदङ्गणगतश्चिन्तामणिश्चाजरत्	_
क्षीणा कामगवी च कामकलको भग्नो हहा दैवतः॥	
तं०] १३०८ तेजःपालो दिवं जगाम ।	
A A A A A	
(B सञ्ज्ञके आदशें पुनरेतत्पवन्धान्ते निम्नगतानि वस्तुपालसम्बन्धिकाव्यानि प्राप्यन्ते-)	
(२२२) सेजवालकसहस्रचतुष्कं साधिकं पश्चरातेश्च।	
पश्चकं च दातपश्चकमिश्रं स्यन्दनाभवरपिक्षिखिकानाम् ॥ १ ॥	
(२२३) द्यातानि चाष्टादशवाहिनीनां सुखासनानां प्रमितिस्तथैव।	
तपोधनानां द्विशतीसहस्रे शतं सहस्रं च दिगम्बराणाम् ॥ २॥	1
(२२४) त्रिंदाद्विमिश्रा त्रिराती चराणां रत्नासनानां वृषशोभितानाम्।	
शतानि च त्रीणि तु मागधानां चतुःसहस्राश्च तुरंगमाणाम् ॥ ३॥	
(२२५) अष्टी महाङ्गाश्च चतुःशतानि लक्षास्तथा सप्ति मानवानाम्।	
श्रीवस्तुपालस्य कृताऽऽद्ययात्रासख्ययमानन्दकरा जनानाम् ॥ ४ ॥	
(२२६) स्वस्ति श्रीब्रह्मलोकात्कविजनजननी भारती ब्रह्मपुत्री	1
धात्र्यां श्रीवस्तुपालं कुशलयति यथा कार्यमेतन्निवेद्यम्।	
योऽभूत्कलपद्रकलपः सकलसुमनसां नाधुना सोऽपि भोज-	
स्तस्मारसीदन्त एते जगित सुकृतिना रक्षणीयास्त्वयेव ॥ ५ ॥	
(२२७) खस्ति श्रीभूमिवासाद्विपिनपरिसरात्क्षीरनीराधिनाथः	
पंद्रमां श्रीवस्तपालं क्षितिधवसचिवं बोधयत्यादरेण ।	2
अस्या आस्माकपुत्र्याः कुपुरुषजनितः कोऽपि चापल्यदोषो	
निःशेषः शेषलोकम्पृणगुणभवता मूलतो मार्जनीयः॥ ६॥	
(२२८) मुखमुद्रया सहाऽन्ये द्धति करे सचिवमन्त्रिणो मुद्राम्।	
श्रीवस्तुपाल ! भवतो वदान्य ! तद्दितयमुन्मुद्रम् ॥ ७ ॥	
(२२९) कीर्त्तिः कन्दलितेन्दुकान्तिविभवा धत्ते प्रतापः पुनः	2
प्रौढिं कामपि तिग्मरिममहसां वुद्धिर्वधाराधिनी।	
प्रत्यजीवयतीह दानमसमं कर्णादिभूमीसुज-	
स्तितिश्चित्र तवास्ति यन्न जगतः श्रीवस्तुपाल ! वियम् ॥ ८ ॥	
मदं ग्रावीग्रीग्री	

(२३०) लक्ष्मीं नन्दयता रतिं कलयता विश्वं वशीकुर्वता

त्र्यक्षं तोषयता मुनीन्मुदयता चित्ते सतां जाग्रता।

सङ्घेऽसङ्घादावलीं विकिरता रूपश्चियं पुष्णता नैकट्यं मकरध्वजस्य विहितो येनेह दर्णव्ययः ॥ ९॥

30

(२३१) हंसैर्लब्धप्रशंसेस्तरिलतकमलप्रत्तरङ्गेस्तरङ्गे-नीरैरन्तर्गभीरैर्बकचढुलकुलग्रास[लीनै]श्च मीनैः। -पालीरूढदुमालीतलसुखशियजीतिश्च गीतै-भीति प्रकीडदातिस्तव सचिव! चलचक्रवाकस्तटाकः॥ १०॥

5 अत्र पं० सोमेश्वरेण पोडशयमकव्यये पोडशसहस्रा द्रम्माणां प्राप्ताः । [पुनः] पं० सोमेश्वरेण-

(२३२) दिग्वासाश्चन्द्रमौलिर्विहरति रिवरयं वाहवैषम्यकष्टं राहोः सातङ्कमिन्दुर्विचरति गरुडान्नागवरगों बिमेति। रत्नानां धाम सिन्धुस्त्रिदशगिरिपतौ स्वर्णमद्यापि यस्मा-र्तिक दत्तं रिक्षतं वा किम्रु किम्रुत जगत्यर्जितं येन गर्वः॥ ११॥

10(२३३) कलिकवलनजाग्रत्पाणिखेलत्कृपाणः चुतिलहरिनिपीतप्रत्यनीकप्रतापः । जयति समरसत्त्वारम्भनिर्दमभकेलिपमुद्दितजयलक्ष्मीकामुको वस्तुपालः ॥ १२॥

(२३४) यदि विदितचरित्रैरस्ति साम्यस्तुतिस्ते कृतयुगकृतिभिस्तैरस्तु तद्वस्तुपालः । चतुरचतुरुदन्वद्वन्धुरायां घरायां त्विमव पुनरिदानीं कोविदः कोऽविदग्धः ॥ १३॥

(२३५) मुञ्ज-भोजमुखाम्भोजवियोगविधुरं मनः।श्रीवस्तुपालवक्त्रेन्दौ विनोदयति भारती॥१४॥

(२३६) त्वं जानीहि मयास्ति चेतसि धृतः सर्वोपकारव्रती

किं नामा सविता न शीतिकरणो न खर्गवृक्षो नहि।

पर्जन्यो नहि चन्दनो नहि ननु श्रीवस्तुपालस्त्वया

ज्ञातं सम्प्रति शैलपुत्रिशिवयोरित्युक्तयः पान्तु वः॥ १५॥

(२३७) गाम्भीयं जलधिर्बलिर्वितरणे पूषा प्रतापे सारः सौन्द्रयें पुरुषव्रते रघुपतिर्वाचस्पतिर्वाद्धये। लोकेऽस्मिन्नपमानता[मु]पगताः सर्वे पुनः सम्प्रति प्राप्तास्तेऽप्युपमेयतां तद्धिके श्रीवस्तुपाले सति॥ १६॥

(२३८) श्रीवस्तुपालः श्रियमेष केषां हृदि स्थितो हार इवातनोति। विश्राणयन्यक्षिगतापरागकणा इवार्त्ति तु नियोगिनोऽन्ये॥ १७॥

(२३९) दीपः स्फूर्जिति सज्जकजलमलः खेहं मुहुः संहर-न्निन्दुर्मण्डलवृत्तखण्डनपरः प्रदेषि मित्रोदयम् । सूरः कूरतरः परस्य सहते तेजो न तेजखिन-स्तत्केन प्रतिमं द्र(ब्र ?)वीमहि महः श्रीवस्तुपालाभिधम् ॥ १८॥

(२४०) आयाताः कित नैव यान्ति कित नो यास्यन्ति नो वा कित स्थानस्थाननिवासिनो भवपथे पान्धीभवन्तो जनाः । अस्मिन्वस्मयनीयवृद्धिजलधिर्विध्वस्य दस्यून्करे कुर्वन्युण्यनिधिर्धनोति वसुधां श्रीवस्तुपालः परम् ॥ १९ ॥

虾

20

25

- (२४१) समुद्रत्वं श्वाघेमहि महिमधाम्नोऽस्य बहुधा

 यतो भीष्मग्रीष्मोपमविषमकालेऽप्यज्ञानि यः ।

 क्षणेन क्षीणायामितरजनदानोदकतनौ

 दयावेलाहेला द्विगुणितगुणत्यागलहरिः ॥ २० ॥
- (२४२) यः सप्ताननसप्तिसोदरयशाः सप्ताव्धिगमभीरिमा सप्तार्चिःपरितप्तकाञ्चनरुचिः सप्तर्षिसर्गावधिः । सप्तद्वीपधरानरालिमुकुट[ः]पुण्याय सप्त व्यधात् यात्राः सप्तजगचमत्कृतकृती सप्त क्षिपन्दुर्गतीः ॥ २१ ॥

(२४३) किमस्तु वस्तुपालस्य मन्त्रीन्दोः साम्यमिन्दुना । यद्ते व[सु]धामेष सुधामेवापरः पुनः ॥

(२४४) नाभीपङ्कजमङ्कजनमविधिना बृद्धेन रुद्धं हरे-स्तापव्यापदमापदुष्णमहस्रो लीलासरोजं पुनः । किञ्चैतज्ञलजं जलप्रकृतिकं तेन श्रिया शिश्रिये यत्पाणिनहि चेदमुष्य पुरतस्तस्यौ न दौस्थ्यं कथम् ॥ २२ ॥

(२४५) मुक्त्वापि पुण्डरीकाक्षं श्रीरिमं शिश्रिये किल । देहार्धनव(१)बन्धेन विरूपाक्षः प्रियां भिया ॥ २३ ॥

(२४६) अन्वयेन विनयेन विद्यया विक्रमेण सुकृतक्रमेण च। कापि कोऽपि न पुमानुपैति मे वस्तुपालसदशो दशोः पथि॥ २४॥ ॥ इति वस्तुपालसम्बन्धिकाच्यानि॥

(G.) सङ्ग्रहगतं वस्तुपाल-तेजःपालसम्बन्धिवृत्तम्।

§१५८) अथ व्यापारे प्राप्ते महं० श्रीतेजःपालः श्रीस्तम्भतीर्थव्यापाराय प्रहितः। तत्र नोडासईदस्यामिलितं 20 वीक्ष्य तस्य कोऽपि न भेटयति। अमात्योऽपि तद्विज्ञाय तं भेटयामास। अन्यदा तेन एकांते चिद्वडकवाचन-च्छलेन तस्य शिरुव्छेदितम्। तस्य भांडागारोऽपि धृतः। सर्वमिप टीपयित्वा गृहीतम्। उपविरक्षात्रये मृत्तिकां वीक्ष्य सा स्वयं गृहीता। सईदभागिनयेन राज्ञो मिलित्वा सर्वं कथितम्। राजा म० तेजःपालस्य कुपितः। मिल्रिणोऽग्रेऽकथयत्—भवता रम्यं न कृतम्। अकथित्वा त्वया कथं मारितः। तेनोक्तम्—राजन्! आज्ञोछंघन-कारकमन्यमिप न सहामि। राज्ञोक्तम्—तिहं उलिपतिविषये दिव्यं देहि, घटसपमाकर्षय। इति प्रतिपन्ने घटसपी-25 कर्षणसमये महं० श्रीतेजःपालेन सर्वसमक्षमित्युक्तम्—यन्मया सर्वमिप सईदस्य सत्कं राज्ञे दत्तम्। यदि कदापि सईदस्य धृलिर्मम गृहे तिष्ठति तदोत्सपृत्वल(१)मिति भिणत्वा सईदभागिनयस्य पर्यक्के घटात्सर्प आकृष्य क्षिप्तः। स च भृतिस्रयिक्षिशत्कोटिप्रमाणा गृहे स्थिता।

§१५९) एकदा कटकस्थेन राणकेन मत्रीशो लेखकं याचितः। मत्रिणोक्तम्-अत्र नास्ति। राज्ञोक्तम्-कल्ये समानेतव्यमेव। एवं स्थिते मत्रिणा तुरगारुढो देपाकः प्रेषितः। तेन पुरान्तश्रतुष्पथे गच्छता भक्त्या श्रीवीत-30 रागो नमस्कृतः। पश्राष्ट्रेखकं गृहादानीय दत्तं स्वामिनोऽग्रे। अत्रान्तरे तत्रैव पुरे कश्रिद्विजो व्यापारी वर्तते। तस्य पुत्रयुगं विनष्टम्। तृतीयोऽङ्गजो ग्रथिलो जातः। पश्राद्वर्त्तायां पण्मासं यावत् क्षिप्तः। ततो व्यन्तरेणो-क्तम्-व्यापारिन्! कथं निजपुत्रसारां न कुरुषे। तेनोक्तम्-किं करोमि १। मम देपाकपार्श्वात् पुण्यं दापय। ततो

у∘ я∘ स∘ 10

Court for the Arts

25

देपाकस्य राजादेशः प्रहितः । ततो मिश्रिशिवस्तुपालस्य महदुपरोधेन देपाकः सदने समागतोऽपि भयेन व्यन्तरपार्श्वे नाभ्युपैति । नृपरोधेनानीतः । व्यन्तरेण सन्मानितः । इत्युक्तं च-यत् त्वयाः तुरगाधिरूढेन श्रीवीतरागो
निमस्कृतः, तत्पुण्यं मे देहि । तेनोक्तम्-कथमस्य लग्नोऽसि । व्यन्तरेणोक्तम्-अनेन.....ना मया वारितेनापि
मम बलीवईयुगं प्रभुतयेव गृहीतम् । तदिरहेणाहं मृतः । ततो मयास्य पुत्रयुगं मारितम् । अस्य पातकं कथं
5 गृह्णामि, अतो मोक्ष्यामि । ततस्तेन पुण्यं दत्तम् ।

§ १६०) श्रीभृगुपुरात् खंडेरायसांखुलाकः श्रीस्तंभतीर्थे श्रीवस्तुपालोपरि कटकं गृहीत्वा समागतः । तदा निर्णीतदिने संग्रामे जायमाने भूणपालेन विंशतिः शंखपत्तयः शंखं भिणत्वात्मारिताः । तदा मन्त्रिणोक्तम् –रे ! शंखमातुः शंखाः कियन्तो जाता विद्यन्ते ? । तदाकर्ण्य शंखाः स्वयम्रत्थितः । सोऽपि श्रीमन्त्रि-भूणपालाभ्यां

पातितः । तदा श्रीसोमेश्वरदेवेनोक्तम्-

(२४७) श्रीवस्तुपाल ! प्रतिपक्षकाल ! त्वया प्रपेदे पुरुषोत्तमत्वम् । तीरेऽपि वार्द्धेरकृतेऽपि मात्स्ये दूरं पराजीयत येन शंखः ॥

§ १६१) अन्यदा पं० सोमेश्वरदेवेनोक्तम्-

(२४८) बाणे गीर्वाणगोष्ठीं भजित मघवति ब्रह्मभ्यं प्रपन्ने
च्यासे विद्यानिवासे कलयित च कलां कैशवीं कालिदासे।
माघे मोघां मघोनः सफलयित दृशं चाद्य वाग्रदेवतायाः
सोऽयं धात्रा धरित्र्यां निवसनसद्नं प्रस्तुतो वस्तुपालः॥
काव्यसैतस्य दृशसहस्रा मित्रणा दृजाः।

तेनैव एकदा सभायां मित्रकाव्यमिदमपाठि-

(२४९) पाणिप्रभापिहितकल्पतरुप्रवालश्चौिलक्यभूपतिसभानिलनीमरालः। दिग्चक्रवालविनिवेदिात.....शीमानयं विजयतां सुवि वस्तुपालः॥ इति श्रुत्वा मन्त्रिणि अधोविलोकयति तेन पुनिरदं प्रोक्तम्-

(२५०) एकस्त्वं भुवनोपकारक इति श्रुत्वा सतां जिल्पतं लज्जानम्रशिरा घरातलमिदं यद्वीक्ष्यसे वेद्यि तत्। वाग्देवीवदनारविंदतिलक! श्रीवस्तुपाल! ध्रुवं पातालाद्धलिमुद्दिधीर्षुरसकुन्मार्गं भवान् मार्गति॥

[एतच्छुत्वा] द्रव्यसहस्राणि चतुश्रत्वारिंशत्संख्यानि मन्नी ददौ ।

§ १६२) एकदा श्रीशत्रुञ्जयतलहिकायां श्रीसङ्घपूजायां जायमानायां [वस्त्रपोटली-] बंधनं कस्यापि पंडित-स्यापितं मित्रणा । ततस्तेनोक्तम्-तद्वीक्ष्य वस्तं मित्रीशाभिमुखं "किचित्तृलं किचित्सृत्रं०" इति भणिते सहस्रा दश दत्ताः ।

80 § १६३) एकदा केनापि खलेन बहुदानं दीयमानं विलोक्य राणश्रीवीरधवलसा विज्ञप्तम्-स्वामिन्! तव भाण्डागारो यथेच्छं व्ययमानोऽस्ति । तद्वचनाद्विलोकनार्थं तत्रागतः । तद्दिने ब्राह्मणश्रमणवनीपकदेशांतरिणां विशेषतो दानं दीयमानं दृष्ट्वा मनसि दूमितो राणकः । राणकेनोक्तम्-मन्त्रिन्! ईदशेन व्ययेन कथं पूजिये व्यति । मित्रिणोक्तम्-यावान् आदेशो भवति, तावान् विधीयते । राज्ञोक्तम्-इयन्ति दिनानि कथं ममादेशो न कृतः ?।

Donke by the Adi

यावता पुण्येन राजकुले कार्य तावद्विधीयते । राज्ञोक्तम्-तव व्ययेन मम किं पुण्यम् ? । मित्रणोक्तम्-राजन् ! केवलमहं भाण्डागारिक इवासि, सकलद्रव्यव्ययफलं तवैव । इत्युक्ते राणको जगाद-मित्रन् ! यद्येवं तदा द्विगुणं दानं देयम् ।

- §१६४) श्रीवस्तुपालः प्रथमयात्रायां पिशुनप्रवेशभयान्मश्रितेजःपालं तत्र विग्रुच्य प्रस्थितः। ततो मित्रतेजःपालस्य महाविपादः संजातः—यदहं श्रीशत्रुञ्जययात्रायां न चालितो मित्रणा। तदनु राणकेन तदनलोक्य क्ष्माहाग्रहेण प्रेपितः। ततस्तेजःपालेन महं० देपाक आत्मस्थाने स्थापितः। ततस्तेजःपालं समेतं वीक्ष्य मित्रणोक्तम्—त्वया न कृतं रम्यम्। यतः त्रभुरात्मीयो न भवति। तावता द्विजवामनेनेति राज्ञोऽग्रे निवेदितम्—राजन्! मन्त्री यात्राये न गतः, किं तु निधाननिक्षेपाय ग्रातः। यदि राजादेशो भवति, तदा द्रव्यमानयामि। राज्ञोक्तम्—मध्याद्वे सारयेथाः। यथा कटकमर्ण्यामि। तावता तद्विज्ञाय महं० देपाकेन मित्रणः संदियकः प्रहितः। स्वात्रावसरे संदियकम्रत्सुकं समागच्छन्तं वीक्ष्य मित्रणा तेजःपालस्थोक्तम्—इदं तव चरितमायाति। संदियकेन सर्व-10 मिपि निवेदितम्। मित्रिणा संवस्याप्रे प्रसादः समेत इति विज्ञप्तम्। निश्चि श्रातृद्वयेन मन्त्रं विधाय निधाननिक्षेपाय मानवा अरण्ये प्रहिताः। तत्र तेषां खनतां नवं निधानमुन्मीलितं वीक्ष्य मित्रणोक्तम्—नैवात्मनां राजभयम्। तावता द्वितीयसंदियकेनाभ्येत्य स्वरूपं कथितमिति—वामनोऽन्यायकारी राज्ञा विधतः। पुनः प्रसादो भवतां प्रहितः। ततः कुशलेन यात्रा विहिता।
- §१६५) अनुपमया गुरवो नंदीश्वरतपःकरणोद्यापनं पृष्टाः। गुरुभिरुक्तम्-वत्से! भवत्या न प्रष्टव्यम्। तयो-15 क्तम्-कथम्?। भवती पृच्छका, अहं कथकः। यदि न विधीयते तदा किम्। पुनरुक्तम्-भगवन्! कथ्यताम्। गुरुभिरुक्तम्-वत्से! जघन्यं वावनी ढोक्यते, मध्यमं वावन-वावनी, उत्तमं नंदीश्वरप्रासादः। ५२ आचार्यपद-५२ सिंहासन-५२ पाट एवं सर्वं विधीयते। देव्या प्रतिज्ञा विहिता-द्वितीयवेलायां तदा भोक्ष्ये, यदा प्रासादं कारियध्यामि। गुरुभिरिप ततोऽभिग्रहो गृहीतः-वयमाचाम्लान् तदा मोक्ष्यामः, यदा भवदभिग्रहः सेत्स्यति। भोजनवेलायां देव्या मित्रणो भाजने शालिभक्तं प्राशुक्तजलं च ग्रुक्तम्। मित्रणा कारणं पृष्टम्। तयोक्तम्-20 भवतामिभग्रहोऽस्ति-यत् गुरुद्त्तशेषं भोक्तव्यम्। गुरवः पृष्टाः सर्वं जगदुः। ततो वामदेवस्य सूत्रधारस्य पटं दर्शियत्वा प्रासादः कारितः।
- § १६६) एकदा तीर्थयात्रायां श्रीशत्रुखये सङ्घपतिना अवारितं सत्रागारा विहिताः। ततः सङ्घवात्सल्ये विधी-यमाने घृतं त्रुटितम् । सङ्घपतिचित्ते विषादो जात इति यद्विरंगो भविष्यति । स्रिभः श्रीयशोभद्राख्यैर्ज्ञातम् । आकृष्टिविद्यया श्रीपत्तनात् कस्यापि गृहात् घृतमानीतम् । वात्सल्यं पूर्णमजिन । ततो गुर्वनुज्ञया तेन तावन्तो 25 द्रम्मास्तस्यापिताः। तेनोक्तममी कीदशा द्रम्माः?। तेन समग्रोऽपि वृत्तान्तो निवेदितः। तेनोक्तम् यदि ममाज्यं श्रीशत्रुख्जयस्योपिर साधर्मिकवात्सल्ये व्ययितं तदाहं न ग्रहीष्ये। ततस्तेन घृतवसतिका श्रीपत्तने निष्पन्ना।
- § १६७) एकदा धवलकके कलशप्रतिष्ठायां मिलितेषु बहुषु स्रिषु द्वौ वक्तारौ पिप्पलाचार्यौ मिलितौ । तत्र ताभ्यामनुपमदेच्यै उपदेश इति दत्तः । यतः—पात्रदानमल्पं विनोददानं बहुतरम् । अनुपमदेच्योक्तम्-नैवम् । वचः स्मृत्वा स्थितौ । ततस्ताभ्यां रात्रौ वेषपरावर्त्तेन मित्रमन्दिरे गत्वा मित्रदेवीपुरतो महासतीचन्दनाचिरतं 30 गातुमारच्धम् । चतुर्विशतिसहस्रद्रम्मा लब्धाः । प्रातरनुपमदेच्यै दर्शितं सर्वम् । सत्यं मानितम् ।
- § १६८) अन्यदा तीर्थयात्रायां गच्छन्तो देशान्तरादागताः श्रीसङ्घा निमित्रताः श्रीवस्तुपालेन । तदा मन्त्री चरणप्रक्षालनं कुर्वाणः सेवकैर्निषिद्धः । तदा मित्रणोक्तम्—"अद्य मे फलवती०" ॥

§१६९) अन्यदा निशि पट्टशालास्थितश्रीविजयसेनस्रीन्नमस्कृत्य मन्नी अपवरकस्थितश्रीउद्दयप्रभस्रीणां वन्दनाय गतः। तन्नेते न विद्यन्ते। एवं दिनन्नयं समेत्य विलोकितम्। चतुर्थदिने विनयपूर्वं दृद्धगुरवः पृष्टाः। तिल्कम्-मन्निन्! अद्य कल्ये नगरेऽत्र चाचरीयाक एको महाविद्वानुमागतोऽस्ति। तस्य वचनविशेषश्रवणाय नित्यं स्रस्यो वेषपरावर्त्तेन यान्ति। तद्विज्ञाय मन्त्रिवस्तुपालस्तत्र गतः। स्रयः प्रच्छन्ना वीक्षिताः। प्रातः मन्त्रिणा ज्ञाकारितस्य चाचरीयाकस्य सहस्रद्वयी न्यासे कृता। इत्युक्तं च-यत् त्वया पौषधशालाद्वारे चचरे चचरो मण्डनीयः। एवं पण्मासं मण्डितः। ततः सत्कृत्य प्रहितः।

§१७०) मन्त्रिणा श्रीउद्यप्रभसूरयः पृष्टाः-कथं चतुर्विंशतिजिनेन्द्रध्यानदेव एक एव भवति । तत् कथं चतुर्विंशतिमध्ये को ध्येयः १ । गुरुभिरुक्तम्-महानयं सन्देहः । श्रीसरस्रतीं विना सन्देहिनर्णयो न भविष्यति । गुरुभिर्निशि देव्याराधनं विहितम् । श्रीभारत्या उच्छीर्षके श्लोकोऽयं समर्पितः-

10(२५१) अहं सारामि तादातम्यात्तं रूख्या परमेश्वरम्। स्थितं वाग्ब्रह्मणः पारे परं ब्रह्मोति यं विदुः॥
मित्रणोक्तम्-अत्रापि सन्देहः। परब्रह्मोति वाक्यं सर्वाण्यपि दर्शनानि निजनिजदेवस्य कथयन्ति। गुरुभिः
पनः सरस्रत्याराधनं विहितम्। देव्या पुनर्निशि कथितम्-

(२५२) सुवर्ण......ग्रीवामण्डनेऽन्त्यमणिद्वये । प्रभोर्यस्याङ्कितं नाम स्तुमहे परमेश्वरम् ॥ अर्हमिति सिद्धम् ।

15 § १७१) श्रीभृगुकच्छे श्रीम्रुनिसुत्रतनाथाधिष्ठायकाः श्रीवालहंसस्ररयो विद्वांसः । तेषां मठे घोटकसप्तश्रती-राज्यम् । एकदा मन्त्री सङ्घं विधाय तत्रायातः । सर्वः स्नात्रपूजादिविधिविहितः । श्रीस्ररयो नमस्कृताः । स्रिरिनः समस्तश्रीसङ्कसमक्षमाशीर्वादो दत्तः ।

(२५३) अस्मिन्नसारसंसारे सारं सारंगलोचनाः।

-इति वारसप्तकं पठितम्, व्याख्यातं च । ततो मन्त्रिणा चिन्तितम्-यत् सरयोऽतिविषयिणः । तदनु गुरु-

यत्कुक्षिप्रभवा मन्ये वस्तुपाल! भवादशाः॥

ततो मन्त्रिणा हर्षितेन ग्रामद्वादशकं श्रीदेवपादानां दत्तम्।

§ १७२) एकदा वङ्याग्रामे श्रीमाणिक्यस्ररीणां श्रीवस्तुपालेनाकारणं प्रहितम् । परं नागताः । तदनु मंत्रिणा मह(०त्य १)वदातवती विज्ञप्तिका निमंत्रणार्थं प्रहिता । तत्रेदं काव्यम्─

(२५४) इदं ज्योतिर्जालं जटलितविहायःस्थलमलं । सखे मा माणिक्य प्रथय परितः सर्वहरितः। अयं गुंजापुंजाभरणसुभगंभावुकवपुः पुलिंद्राणा(०दाना?)मिंद्रस्तव नहि परीक्षाक्षममितः॥

तथापि सरयो नायाताः । तदा द्वित्रीयविज्ञप्तिकायां श्लोकोऽयं प्रहितः । तद्यथा "जडसंगमे प्रहर्षां(?) द्विजिह्न 30 जनवस्लमोऽति तुच्छपदः । वटक्षप० ।" अनेन श्लोकेन स्रयो रुष्टाः । तत आशीर्वादे विशेषावदाते श्लोकोऽयं प्रहितः-

(२५५) वंशार्द्धार्द्धपरिस्फून्यों रे पिंजन! विज्ञंभसे। गुणालीजन्महेतृनां तृलानां हद्विपाटयन्॥ 婚

अनेन मर्म्मणा मंत्रिमनसि महान् विषादोऽजनि। तद्नु तत्रत्यमंत्रिणापार्श्वात्रवनिष्पादितत्रिषष्टिशला-कापुरुषचरितभंडारो रात्रौ चौरवृत्त्या निःकाशितः । प्रातः सरयो विषादिताः । चित्तनिर्वृत्त्यर्थं वाहरा विहिता । ततो मंत्रिणा दिनेषु सप्तसु गतेषु कस्यापि नथिकस्य हस्ते उपलेखपत्रे श्रीस्रीणां विज्ञप्तिका प्रहितेति-यद्त्र रूप-भवतां भवतां श्रीस्ररीणां पुस्तकभांडागारो वलितोऽस्ति । यदि कार्यं भवति तदाऽऽगंतव्यम् । श्रीस्रयस्ति द्विज्ञाय प्रस्थिताः । मंत्रिणा महाप्रवेशोत्सवो विहितः तद्नु मध्याहे श्रीसंघपूजायां श्रीस्रिरिभः काव्यमिदं श्रोक्तम्-

> (२५६) देव! स्वर्नाथ! कष्टं क इह ननु भवान्नन्दनोद्यानपालः खेदस्तत्कोऽद्य केनाप्यहह हृत इतः काननात्कल्पवृक्षः। हुं मा वादीः किमेतित्कमपि करुणया मानवानां मयैव प्रीत्मा दिष्टोऽयमुर्व्यास्तिलकयति तलं वस्तुपालच्छलेन ॥

वैरोचने रचितवत्यमरेशमैत्रीमेकत्र नाकनगरं च गते बितीये। दीनाननं भुवनमूर्द्धमधश्रापद्यदाश्वासितं पुनरुदारकरेण येन॥ 10

ततः श्रीसरयो मंत्रिणा विज्ञप्ताः । किमेतद्धुनागमनकारणम् ? । गुरुभिरुक्तम् -वयं सरखतीपुत्रकाः, भवांश्र सरस्वतीकंठाभरणमिति । यत्र सा तत्र वयम् । इति हर्षितः ।

§ १७३) श्रीवस्तुपालसभायां हरिहर-मदननामानौ पंडितौ महाकवीश्वरौ परस्परं निरंतरं विजय(विवद्य ?)मानौ स्तः।तौ द्वाविष परस्परं मत्सरं कुर्वतौ न तिष्ठतः। ततो मंत्रिणा दौवारिकस्थोक्तम्-यत् त्वया एकस्मिन् पंडितेऽन्तः- 15 स्थिते द्वितीयपंडितप्रवेशो न देयः। एकदा हरिहरे सदसि विद्याविनोदं वितन्वति मदनोऽपि समेतः। तेनोक्तम्-

'(२५८) हरिहर! परिहर गर्व कविराजगजांकुशो मदनः। द्वितीयेनोक्तम-

मद्न ! विमुद्रय वदनं हरिहरचरितं सरातीतम्॥

ततो मंत्रिणा प्रोक्तम्-यः पणे काव्यशतं प्रथमं विधास्यति, स महाकविः । एवं सति मद्नेन नालिकेरवर्ण्णने 20 काञ्यशतं त्वरितं विहितम्। अथ हरिहरेण काञ्यषष्टिः। ततो मंत्रिणोक्तम्-हरिहर! त्वया हारितम्। तेनोक्तम्-

(२५९) रे रे ग्रामकुविंद कंदलयता वस्त्राण्यमूनि त्वया गोणीविभ्रमभाजनानि बहुदाः स्वात्मा किमायास्यते। अप्येकं रुचिरं चिराद्भिनवं वासस्तदासूत्र्यतां यन्नोज्झन्ति कुचस्यलात् क्षणमपि क्षोणीभृतां वल्लभाः॥

ततो मन्त्रिणा हर्षितेन द्वाविप मानितौ ।

§१७४) एकदा व्यापारे व्यतीते नागडमंत्रिणि व्याप्रियमाणे श्रीव्रीसलदेवस्य मातुलो मूलराजः प्रातः श्रीवस्तुपालगुरुपौषधशालाप्रत्यासचे पथि वजन् लघुक्षुत्वकत्यक्तपुंजकेन लरंटितः । तदनु मंत्रिणा क्षुत्वकपरा-भवत्वात्तस्य करः छेदापितः । वंबारवो जातः । ततो रुष्टेन राज्ञा वस्तुपालवधाय सैनिकाः प्रेषिताः । मंत्रीशोऽपि राजानमागत्येति जगाद-किं मया कृतम् ?। राज्ञोक्तम्-प्रत्यक्षमिदम्। मंत्रिणोक्तम्-अहं तवायशः सोढुं नालम्। ३० दर्शनपराभवोद्भवमयशो अपरराजमंडले याति । इति वचः श्रुत्वा विचार्य च राजापि हर्षितः । प्रसादं ददौ ।

25

§ १७५) अंत्ययात्रायां महं वस्तुपालस्य आकेवालीयसरसःपाल्यां आकली समेता। तत्र स्थितो मंत्री। भूमौ मुक्तः। श्रीसंघे तत्रागते उत्सवे विधीयमाने च मंत्रिणोऽश्रुपातः समैजनि। कारणं पृष्टः। तदा मंत्रिणोक्तम् न ने संसारविषये चिंता वर्तते, परम्-

सुकृतं न कृतं किंचित् ॥ १॥

(२६०) तृपव्यापारपापेभ्यः सुकृतं स्वीकृतं न यैः।तान् धूलिधावकेभ्योऽपि मन्ये मूहतरान्नरान्॥

(G.) सङ्ग्रहगतं वीरधवलवृत्तम्।

§ १७६) अथ श्रीवीरधवलवारके नांदउद्रीपालितः, अढारहीउ बङ्ग हरदेवः बङ्गाचाचरीयाकस्य शिष्यः । अन्यदा आश्रापल्ल्यां समेतः । ततो दिवससप्तके जाते तत्परिवार इति कथयति—शंवलं नास्ति किंचित् । चाचरं श्विपत । स भणति—स्थिरीभवत । अहं नित्यं नगरमजुष्यमनोऽभिन्नायं विलोकयन्नस्मि । इतश्च महाराष्ट्रीयो गोविंद10 चाचरीयाकः समाययो । यस्पाष्टादशपुराणानि अष्टौ व्याकरणानि चउपईवंधेन सुखपाठेनागच्छंति । तेन चचरः श्विपः । पारुधाद्रम्माश्चतुर्विशतिसहस्रसंख्यका मिलितासस्य । ततो हरदेवचाचरीयाको विशेषतः परिच्छदेन प्रोत्साहितो लबदोसिकहट्टे सायसुपविष्टः । ततस्तेन सहजतो वार्चा कुर्वाणेन सीतारामप्रवंधः कथयितुमारेभे । प्रथमं दश द्वादश जना मिलिताः । कमेण बहवः । मध्यरात्रौ सुखासनाधिरूढा अमात्याद्याः शृष्वंतः संति । इतश्चोत्थितः यथा श्रोदणां विधातो न भवेत्तथा भणन् बिहः साश्चमतीनदीतीरं गतः । ततो गानं विसृष्टम् । उत्तः शीतभीता लोका इति वदंति—यत्त्वं तथा कुरुष्व यथा सुखेन नगरे गम्यते । ततस्तेन पुनरुत्तररामचरित्र-गानमारच्यम् । तदनु सर्वोऽपि जनः परमरसमग्रश्चतुष्पथे समानीतः । ततो लोकेन सुद्रिका-पट्टक्लादि-दानेन दामलक्षत्रयी दत्ता ।

(G.) सङ्ग्रहगतं वीसलदेववृत्तम्।

§१९९) श्रीजिनदत्तस्रिशिष्येण पं० अमरनाम्ना कोऽपि देशांतरी निरामयो विहितः । तेन श्रीसारखतमंत्रो २०दत्तः । तत्प्रभावान्महाकविरभृत् । ततः पं० सोमेश्वरदेवसान्निष्यात् प्रथमं गद्यभारतम्, तदनु च्छेकभारतं च चकार । ततः सोमेश्वरदेवेन श्रीवीसलदेव इति विज्ञप्तः-राजन्! कविः कर्ता एव, परं राजा ग्रंथं वर्त्तापयति । इत्युक्ते ग्रंथविलोकनहेतोः पूजा विहिता । शलाकया श्लोको विलोकितः । तद्यथा-

द्धिमथनविलोल्लोल्हग्वेणिदंभा०॥१॥

ततो वेणीकृपाण इति विरुदं जातम्। ग्रंथो विदितो जातः। श्रीबालभारते समग्रेऽपि निष्पन्ने निश्च व्यासेन 25 चोरितं पुरतकम्। प्रातयीविद्वलोकयित तावता पुरतकं नास्ति। महाविषादोऽजिन। तावता व्यासेनोक्तम्—कथं विषादं कुरुपे?। त्वया मम सपादलक्षग्रंथस्य चौर्यवृत्तिविद्विता। अन्यत् मम नामापि न गृह्णासि। तव ग्रंथः कथं वित्तिष्यते?। एवमुक्त्वा पुरतकमित्तम्। त्विद्वचारे यत्समायाति तिद्विधेयम्। ततः प्रातश्रतुश्चत्वारिशत्सर्गाधुरि एकैकं नवं काव्यं चकार। अन्यदा श्रीबालभारते जगिद्वदिते जाते वायडज्ञातीयमञ्जाजनवाणउटीपद्यनाम्ना पं० अमरस्थेति गदितम्—पंडित! तव चेत् सरस्वत्यिप प्रसन्ना जाता। तिर्हे कथं मिथ्यात्वं स्वीकृतम्?। कथमा-30 त्मीये चरित्राण्यपि न विद्यंते?—इति प्रतिबुद्धेन पंडितेन त्रिषष्टिशलाकापुरुषचिर्तं पद्मानंद*नामा ग्रंथः कृतः।

^{*} एतच्छन्दोपरि पृष्ठस्याधोभागे एवंरूपा टिप्पणी लिखिता लभ्यते-"तत्रारम्भः-मद्रोमिंध्यापथभ्रान्ता स्नाति श्रान्तिमलच्छिदे । चतुर्विशतितीर्थेशचरित्रामृतसागरे ॥"

- \$ १७८) श्रीवीसलदेवसाग्रेऽवसरे जायमाने रागानिभेज्ञस्य राज्ञो रागसंकेताः कृताः संति श्रीनागलदेव्या । श्रीरागस्य शरीरं, वसंतस्य कुसुमं, भैरवस्य भेरीरवः, पंचमसांगुलिपंचकं, मेघरागसाकाग्रः, नट्टनारायणस्य चकं, कानडा कर्णः, धनासी धान्यं, नाटसारि पासकः, सोरठी पश्चिमा, गूर्जरी सिंहासनं, देवशासायां द्वारशास्ता- दर्शनम्-एवम् । एकदा कोऽपि बहकारः समागतो देवशासायामवलगां करोति । राजा रागं न वेति । राज्ञी तु वारं वारं द्वारशासां दर्शयति । एवं बहकारेणोक्तम्-राज्ञि! भवती चेत् द्वारशासां विदारयति, ततोऽपि राजा व वेति । इत्युक्ते राजा हिसतः ।
- §१७९) एकदा श्रीवीसलदेवेन नागलदेव्यग्रे न्यगादि—यन्मां रागपद्धतिं शिक्षय । एवम्रुक्ते दिनपंचसप्तकानंतरं यवनिकांतरितया देव्या बहुदासिकाभि प्रत्येकं तदेव कार्यं निजगदे । राज्ञोक्तम्—देवि किमेतत् सर्वा अपि दासिकास्तदेव कार्यं निगदंति । देव्योक्तम्—देव काः कियंत्योऽभृवन् । राज्ञा सर्वा अपि नामग्राहं कथिताः । देव्य्ये—राजन् ! रागपद्धतिरेवमेव ज्ञायते । ततो देव्या वीणामादाय राजा रागान् सर्वानपि शिक्षितः ।
- §१८०) अन्यदा मध्यरात्रौ नागलदेवी राज्ञश्यरणसंवाहनं कुर्वाणा श्रांता। ततस्तयोक्तं वृद्धमहिलीवउलीपुरः—
 यत् त्वं चरणसंवाहनं कुरु । अहं श्रांतासि । ततो मयणसाहारेणोक्तम्—यत् त्वं आत्मानं पखाउजीपुत्रीत्वं न
 वेत्सि । पखाउजसत्कं भोजनं कुसणाती निर्विण्णा न । अधुना खिन्ना । ततो रुपितया (रुप्टया?) तया मयणसाहारस्य नासाच्छेदः कारितः । ततो देविगरौ गतः । राज्ञा सिंहणदेवेन पृष्टः । तेनेत्युक्तम्—अत्र स आगच्छिति ।
 साहारस्य नासा न स्थात् । इति श्रुतेन नृतना नासा कुतोऽप्यानीय तत्क्षणमारोपिता । लगा । अन्यदा पुनः 15
 यस्य नासा न स्थात् । राज्ञा पृष्टः स वक्ति—अन्यस्य समीपे नासा याति । परं सिंहणदेवसमीपे गतापि समागच्छिति । इति हृष्टेन प्रसादो दत्तः ।
- §१८१) श्रीवीसलदेवस्य द्वारमट्टेन नीराजनावतरणसमये प्रचुराकारणैरागताया नागलदेव्याः कथितमिति—कथं आत्मानं न जानासि? । इयतीं वेलां विलंबसे । इति कथिते कुपिता[ऽत्यथं] तद्वचनेन । मारणे गाढाग्रहां मत्वा राज्ञा न मारितः, किं तु मयणसाहारस्य नेत्राकर्षणं कृतम् । तेनापमानेन स मालवपतिनरवर्म्मसमीपं 20 गतः । तेनावर्जितेन ग्रासशासनादि समप्पितम् । एकवेलं राज्ञा कथितम्—मदन ! वीसलेन राज्ञा तव नेत्रे कथं किंति ? । गाढाग्रहं पृष्टेन तेनोक्तम्—विवेकनारायण ! गूर्जरधराधिपतिरस्यत्स्वामी विवेकच्रहस्पतिः । यथा किंति ? । गाढाग्रहं पृष्टेन तेनोक्तम्—विवेकनारायण ! गूर्जरधराधिपतिरस्यत्स्वामी विवेकच्रहस्पतिः । यथा किंति ? । गाढाग्रहं पृष्टेन तेनोक्तम्—विवेकनारायण ! गूर्जरधराधिपतिरस्यत्स्वामी विवेकच्रहस्पतिः । यथा रणभग्रस्य नृपाधमस्य मुख्यमस्याकीनानि पात्राणि द्वारमट्टादीनि न पत्रयंति । अत एवं विहितम् । स नरवर्माराजा वीसलेन वारत्रयं भग्नोऽस्ति । श्रुत्वेव स्थितः । [ज्ञातं] चरपरंपरया श्रीवीसलदेवेन । मयणसाहारः राजा वीसलेन वारत्रयं भग्नोऽस्ति । श्रुत्वेव स्थितः । [ज्ञातं] चरपरंपरया श्रीवीसलदेवेन । मयणसाहारः राजा वीसलेन वारत्रयं भग्नोऽस्ति । एकदा पृष्टम्—कथमीद्यवाक्येन नरवर्मराज्ञो विषादो न जातः ? 125 समाकारितः । अतीव मानं दत्तम् । एकदा पृष्टम्—कथमीद्यवाक्येन नरवर्मराज्ञो विषादो न जातः ? 125 तेनोक्तम्—स उभयवंशविग्रद्धः, न भवाद्यः । यतः—भवान् (भवत्?) पित्रपक्षे ल्रुणसीहः स पदातिमात्रः । मातृपक्षे महिषीभक्षका जेठेया इति । राज्ञा किमपि न कथितम् ।
- ११८२) एकदा श्रीवीसलदेवस दक्षिणे चक्षुपि अंजनीरोगो जातः। तद्यथा दिनत्रयस मध्ये बहुमिरुपचारैरपि नोपञ्चमित । ततोऽरिसिंहराजवैद्यसाकारणं प्रहितम् । तेन समेतेन गद्धितं इति—अहो प्रधाना! विहिते भेपजे राज्ञो घटिकाचतुष्टयं यावन्महती व्यथा भविष्यति । तदाहं मार्यमाणो रक्षणीयो भवद्भिः। तैरुक्तम्—भवतु । ३० इत्युक्ते भेषजं दत्तं वैद्येन । ततो विशेषेण वेदना जाता । ततो राज्ञोक्तम्—अम्रुं मारयत । परं स रक्षितः। इत्युक्ते भेषजं दत्तं वैद्येन । ततो विशेषेण वेदना जाता । ततो राज्ञोक्तम्—स मारितः। राजातीव अथ-घटिकाचतुष्कादनंतरं निरामयेन राज्ञा वैद्यसामंत्रणं प्रेषितम् । प्रधानैरुक्तम्—स मारितः। राजातीव दुःखितोऽभूत् । तदनु समानीतो वैद्यः। तत्पुरो राज्ञोक्तम्—मम भेषजं कथय, अन्यथा मारियण्ये । व्यथा दुःखितोऽभूत् । तदनु समानीतो वैद्यः। तत्पुरो राज्ञोक्तम्—मम भेषजं कथय, अन्यथा मारियण्ये ।

nor and Nation Conité for die Arts

सर्वसाधारणा । त्वं तु कुत्रापि यास्यसि । अतोऽहं सर्वविदितं औपधं विधास्ये । तेन पीळुकुलीयकः कथितः । ततो राज्ञा सन्मानितः । बहुद्रव्यं दत्तम् । औपधं सर्वत्र विदितं कृतम् ।

३१८३) अन्यदा आञ्चापल्यां राजीमतीछिपिकया गुरुपार्श्वे आगमोक्ततपांसि द्वात्रिंशन्मितानि कृतानि । तत आंविलवर्द्धमानतपोऽभिग्रहे गुरुभिरुक्तम्—यत्तपिस क्रोधो न विधीयते । क्रोधेन तपःक्षयो भवति । इति क्रोधसाभिग्रहो गृहीतः । एवं राजश्रीवीसलदेवस्य सदिस महं० सातृकस्य व्यासस्य च होडा जाता । यन्मनुष्यः सक्रोधो भवत्येव । मंत्रिणोक्तम्—अहमक्रोधिनं दर्शयिष्यामि । ततो वंठपार्श्वातुरगखुरै रंगमांडमंगे कृते तस्याः, तया तु तुरगचरणानां शीतलजलेन क्षालनं विहितम् । राज्ञा तदवगत्य तस्याः पंचांगप्रसादः, सर्वांगाभर-णानि दत्तानि । ततस्त्या तेन द्रव्येण प्रासादः कारितः ।

१८४) मंत्रिणि श्री[बस्तुपाले] दिवंगते पं० सोमेश्वरदेवेन व्यासविद्यासमर्थिता(०र्थना?) त्यक्ता । ततः 10 श्रीवीसलदेवेन महानप्युपरोधो विहितः । विशेषग्रासलाभोऽपि दर्शितः । परं [तेनोक्तम्-मंत्रीश्री]बस्तुपालसाग्रे व्यासविद्यां विधाय नान्यस्य पुरो विद्धामि । ततो राज्ञा गणपतिनामा व्यासः कृतः ।

§ १८५) पुरा मुद्गलवंदीकृतवसाहजगड्ड श्रीवीसलदेवेन दुर्गादागत्य निशि·····(अत्रार्द्धप्राया पंक्ति-

र्नष्टा)..... द्रव्यमादाय नष्टः । भद्रेश्वरे व्यवहारी जातः ।

\$ १८६) अथ मद्रेश्वरे वसाहजगहूनामा वसित । अन्यदा राजकीयप्रवहणे वाजिपंचकराशिविहितः । आग15 च्छमानं यानं तटे एव भग्नम् । राजा समुद्रोपकंठे विलोकनाय गतः । तत्र समेतेन मनुष्येणकेन प्रवहणमध्यस्वरूपं समग्रमपीति कथितम् । याने १४४ घोटका आसन् । तेषां मध्यात् प्रधानाश्चपंचकं वसाहजगहूकस्य ।
तेषां मध्ये करडाकनामा सर्वोत्तमस्तुरगो विद्यते । ततो वसाहेनोक्तम्-मदीया अश्वाः समेष्यंत्येव । राज्ञोक्तम्कथमस्याकं तुरगा यास्यंति, कथं तवोद्गरिष्यंति ? । वसाहेनोक्तम्-तवापि ममापि च भाग्यं सदृशं नेति वार्तां
कुर्वतोर्द्वयोः समुद्रान्तश्चतुर्भिस्तुरगैः सह करडाकः प्रकटीवभूव । समागतश्च सकलोऽपि लोकश्चमत्कृतः ।

(१८७) अन्यदा सं० १३१५ वर्षे दुर्भिक्षकाले श्रीवीसलेन चणकत्रुटौ भद्रेश्वरव्यापारिणो नागडस्य लेखः प्रहितः । जगङ्कोऽत्र धृत्वा समानेतव्यः । तेन तस्य लेखं दर्शयित्वा श्रीपत्तने तेन सह गतः नागडः । सर्वाण्यपि रंककुटुंबानि तत्रागतानि । तेषां दानं दातुमारब्धम् । ततः स्थालैः ३६००००० तटा कृता । विशुद्धवेषाणां विणक्पुत्राणां मध्ये तं सामान्यवेषस्यं वीक्ष्य राजा नोपलक्षयित । ततो मंत्रिणा दर्शितः । राज्ञोक्तम् कथ-मीद्दश एव वेषः । तेनोक्तम् –राजन् !

(२६१) तन्वंति डंबरभरैर्मिहमा न मन्ये श्वाच्यो जनस्तु गुणगौरवसंपदैव । शोभाविभूषणगणैरितरांगुलीनां ज्येष्ठत्वमेव रुचिरं खलु मध्यमायाः॥

इति अष्टादश्चर्यंडैः सिंगिणिविंदेशराज्ञा प्रहिता तस्यार्पिता । उक्तं च-राजन्! किमर्थमहमाकारितः?। राज्ञोक्तम्-चणकहेतोः । तेनोक्तम्-मयानंतगुणं लाभं विचार्य कणकोष्टागाराः सर्वेऽपि रंकहेतोर्द्चाः। राज्ञोक्तम्-तिहैं मया वडरंकेन भाव्यम् । एवं हिंपितेन मृदकशत १८ चणकसमर्प्पणं विहितम् ।

अट्ट य मूडसहसा वीसलदेवस्स सोल हम्मीरा । एकवीसा सुलताणा पयदिश्वा जगडु दुकाले ॥ नवकरवाली मणिअडा तिहिं अमाला चियारि । दानसाल जगडूतणी कित्ती कलिहि मझारि ॥ नियातदानदाता हरिकाताहृदयहारशूंगारः । दुर्भिक्षसंतिपाते त्रिजगडू जगडू चिरं जीयात् ॥



[†] अत्र पृष्ठस्योपरितनभागे एताहशी टिप्पणी—

३६. विश्वासघातकविषये नन्द्पुत्रप्रबन्धः (B.)

§ १८८) एकदा पाटलीपुरे नन्दो नृपस्तस्य भानुमती देवी। एकदा नृपस्त्वाखेटकं गतः। तत्र भोजनवेला जातः। नपो देवीदर्शनं विना न अनक्ति । इतो वररुचिना देवीभारतीप्रसादादेवीरूपं कृतम् । गुह्यदेशे बिन्दुः पपात । एकवेलमपाकृतः । पुनस्तथैव । तेन चिन्तितमत्रास्ते । राजा देवीं निर्वर्ण्य हृष्टो भ्रुक्तश्च । बिन्दुं दृष्ट्वा कृपितो नूनमसावन्तः पुरे विनष्टः । राजा रक्षकेण च्छनं वररुचिर्मारितः । आरक्षकेण भूमिगृहे स्थापितस्तस्य पुत्रान् 5 पाठयति । इतो नृपस्य तनयो राजपाट्यां गतोऽश्वापहृतो वनं ययौ । अश्वस्तु मुक्तमात्रो मृतः । कुमारोऽपि फला-स्वादं कृत्वा वासार्थं वृक्षं प्राप्तः । तेत्र उपरि रिंछोऽस्ति । इतो नरगन्धाद् व्याघ्रः समायातः । कुमारः प्राणभया बृक्षमारूढः । रिंछेनोक्तम्-एहि एहि त्वं ममातिथिः । व्याघ्रस्तु वृक्षमूले स्थितः । रिंछेनोक्तम्-व्याघ्रस्य मम वैरमिसत । त्वया तु न भेतव्यम् । कुमारस्तस्य समीपं गतः । रिंछेनोक्तम्-स्वस्थीभूय निद्रां कुरु । स रिंछांके शिरो दत्त्वा सुप्तः । व्याघ्रेणोक्तम्-भो! रिंछासुं नरं यद्यप्यसि तदाऽऽवयोः प्रीतिः स्यात् । आवां स्वजनावेकत्र 10 वनवासिनौ । तेनोक्तम्-नाहं विश्वस्थाः । अम्रं युगान्तेऽपि नार्प्यामि । इतः कुमारो जागरितः । रिंछेनोक्तम्-त्वं जागृहि, शयनमहं करोमि। परमसौ मां याचयिष्यति। असौ कपटवानिसत्। त्वया तु मलिनता न कार्या। एवमुक्तवा खकेशान् शाखायां बद्धा सुप्तः । इतो व्याघ्रेणोक्तम्-भो राजपुत्रामुं ममार्णय । यथा त्वां जीवन्तं मुश्चामि । अन्यथा वनात्कथं यास्यसि । असौ मलिनोऽस्ति प्रातस्त्वां हत्वा खादयिष्यति । कुमारेण रिंछस्तद्वचसा क्षिप्तः । स केशैर्वद्धैः स्थितः, न पतितः । तेन कुमार उक्तः-रे किमिदम् श्रिथुना किम्? । स चरणयोर्निप-15 त्याह-अहं भुछः । तेनोक्तम्-त्वं वचनाद्धष्टः । अतस्ते तत् यातु । तेन सदैन्यमुक्तः-अनुप्रहं देहि । तेनोक्तम्-'विसेमिरा' एवं जल्पसि । यदि कोऽप्यमुं व्याख्यानयिष्यति तदा ते वचः पडुतरं स्यात् । इतः प्रभाते तुरगपदैः सैन्यमायातम् । व्याघ्रस्तु वनं गतः । रिछोऽपि गतः । कुमारः पुरमाययौ । परं 'विसेमिरा' एतदेव वक्ति । मात्रिकैर्जल्प्यमानोऽपि तदेव वक्ति । पण्डितेन आरक्षकः पृष्टः-नृपसभायां का वार्ता? । खरूपं श्रुत्वोक्तम्-मां तत्र नयसि तदा सर्जं करोमि । तेनोक्तम्-चल ।...कथमाकारणं विना गम्यते ?। आरक्षकेण नृपः पृष्टः-देव 120 मम गृहे युवत्येकाऽऽयातास्ति सा सजीकरिष्यति । नृपेणाहूता । पण्डितः स्त्रीवेषो नृपसभां गतः । यवनिकान्त-रितः स्थितः । कुमारो जल्पितस्तेन-

> (२६२) विश्वासप्रतिपन्नानां वश्चने का विदग्धता। अङ्कमारुह्य सुप्तस्य हन्तुः किं नाम पौरुषम्॥ इत्युक्ते आद्याक्षरो मुक्तः।

(२६३) सेतुं गत्वा समुद्रस्य महानदाश्च सङ्गमे। ब्रह्महा मुच्यते पापान्मित्रद्रोही न मुच्यते ॥ इति द्वितीयाक्षरः ।

(२६४) मित्रद्रोही कृतग्रश्च यो वै विश्वासघातकः। तावत्ते नरकं यान्ति यावचेन्द्राश्चतुर्दश ॥ [इति तृतीयाक्षरः।]

(२६५) राजस्तवं राजपुत्रस्य यदि कल्याणमिच्छसि। देहि दानं द्विजातीनां वर्णानां ब्राह्मणो गुरुः ॥ [इति चतुर्थाक्षरः।]

पु॰ प्र॰ स॰ 11

25

- (२६६) नगरे वससि हे बालेऽटच्यां नैव, यास्यसि । सिंहच्याघमनुष्याणां कथं जानासि भाषितम् ॥
- (२६७) देव! द्विजयसादेन जिह्नाग्रे मम'भारती। तेनाहं नन्द! जानामि भानुमतीतिलकं यथा॥
- 5 नृपेणोपलक्ष्य पण्डितो मानितः । आरक्षकस्य प्रसादो दत्तः ।

॥ इति विश्वासघातकविषये नन्दपुत्रप्रबन्धः ॥

(G.) सङ्ग्रहे नन्दनृपोह्रेखः।

§ १८९) पाटलीपुरे नंदनामा नृपोऽजिन । महाक्रपणः कस्यापि किमपि न दत्ते । ततः सर्वेषां द्वेष्योऽजिन । अत्रांन्तरे कालदोषेण स मृतः । तदनु परकायप्रवेशिविद्यासिद्धिजेन राज्ञः शवे खात्मा निवेशितः । ततः शवं 10 सम्रुत्थितम् । सकलराजलोकस्य महानंदोऽजिन । सर्वेषां राज्ञा प्रसादो दत्तः । मंत्रिणः सर्वेऽपि तदौदार्यं विलोक्य पुरे द्विजदेहसंस्कारं कारितवंतः । स एव राजा कृतः ।

३७. वलभीभङ्गप्रबन्धः (P.)

- § १९०) मरुमंडले पछीग्रामे काकू-पाताको आतरो । तयोर्लघुर्धनवान । ज्यायांस्तु तद्वहे वृत्त्या वर्तते । एकदा प्राष्ट्रकाले लघुक्तिः-केदारास्ते स्फुटिताः। खकर्म निन्दन् कुदालस्कन्धो यावद्याति तावत्कर्मकराः सेतून 15 बन्धयन्ति । के युयम् ? । तैः प्रोचे-भवज्ञातुः कर्मकराः । मदीयाः क सन्ति ?। वलभ्याम् । गतस्तत्र सः, गोपुरस-मीपे आभीराणां संनिधौ तार्णगृहे स्थितः । अत्यंतं कुशतया तै रंक इति नाम कृतम् । इतः कोऽपि कार्पटिको कल्प-प्रमाणेन रैवतशैलादलाबुना सिद्धरसकूपात तुंविका भृता। तामादाय कावडिमध्ये गुप्तीकृता मध्ये मार्गस्य याति। तुंबकमध्याद्शरीरिणी 'काकूइ तूंबडी' इति वाणीमाकर्ण्य जातविस्थर्भीर्वलभ्यां तस्य .च्छिबनो वणिजः सद्यनि समागतः । तत्र स रंक इति ज्ञात्वा पूर्वनामभीतः सरसमलाबु तत्र स्थापयांचके । स्वयं सोमेश्वरयात्रायां गतः । 20 गलद्रिन्दुनाऽधस्तापिका खर्णमयी । सिद्धरसं मत्वा सर्वं कुष्ट्वा गृहज्वालनं कृतम् । सर्वजनस्य समक्षं रोदित । खच्छन्न प्रकटीकरणम् । लोकैः पर्यवसापितस्तथैव प्रज्वलितं गृहं मुक्त्वाडन्ये गोपुरे गृहं कृतम् । तत्र मोगाः संति । तस्मिन् साहसादुवास स निर्भयः । क्षेत्रे रात्रौ वसति । पत्नीं प्रति गृहे वक्ति पतामि ३ । प्रातः कथितम् । सा क्षेत्रे स्वयं गृहे । पुनः शब्दे पतेति प्रोक्तः । स्वर्णपौरुषसिद्धिप्रदः । सन्त्वैक-अगण्यपुण्यप्रभावात् स्वर्णपुरुष-सिद्धिः । तत्र प्राज्याज्यक्रयः । अन्यदा घृतभांडमक्षीणं प्रेक्ष्य सुस्थके चित्रकवल्ली दृष्टा । स्त्रियाः कैतवेन 25 गृहीता । कार्पण्यनिधिः । अथ स्त्रसुताया रत्नखितकांचनकंकतिकायां राज्ञा स्त्रसुताकृते प्रसममपहृतायां तडिरोधो जातः। "काके शौचं०॥" सोऽपि म्लेच्छान् वलभीभंगाय। यदृच्छास्वर्णदानम्। तदनुपकृत एकश्छत्र-धरो निशि राज्ञि सुप्तजाग्रदवस्थे पूर्वसंकेतितनरसमालापः । असिन् स्वामिनो नास्ति विचारलेशोऽपि, न परमपि पृच्छति । रंकवणिजा प्रेरितः सूर्यपुत्रं शिलादित्यं प्रति याति । प्रातः प्रयाणविलम्बं दृष्टा तस्य स्वर्णदानम् । पुनर्द्वितीयदिने पुनः "सिंहस्यैकपदं० ॥ कः स्थास्यति मे स्वामिनः० ।" प्रयाणम् ।
- 30 § १९१) खेडमहास्थाने देवादित्यसुता बालविधवाऽर्कसंसुखावलोके सौरं मंत्रं जपति । तेनैव सुक्ता । गर्भः । लज्जमानेन पित्रा वलभ्यां प्रस्थापिता । पुत्रजन्म । सोऽष्टाब्दः । लेखशालापराभृतो पितृनामानवगम्य मर्तुकामो-ऽर्केण करे कर्करोऽर्पितः । सापराधे शिलाऽन्यथा तवैव सा इत्युक्तः । ततः शिलादित्यः । तत्पुरनृपेण परीक्षायै

तथाकृते मृते राज्ञि स एव राजा । अर्कदत्ताश्वारूढो नभश्चर इवेच्छाविहारी । जैनः । शत्रुज्ञयोद्धारकः । कदा-चित् सौगतैस्तमिष्ठितम् । तद्भागिनेयो मर्छनामा श्रुष्ठः वेषपरावर्तेन बौद्धपार्श्व । खे भारत्योक्तम् –के मिष्टाः १ । बिह्याः । पण्मासान्ते –केन सह १ । घृतगुडान्याम् । इत्युक्ते तुष्टा भारती । जिताः सौगता निष्कासिताः । शिला-दित्येनाचार्यपदं कारितम् । श्रीमह्हवादिद्धरिः ।

§ १९२) इतो वलभ्याः श्रीचन्द्रप्रभविम्बं सांबाक्षेत्रपालादि अधिष्ठातुर्वलेन व्योम्नि शिवपत्तने गतम् । अश्विनीप्- 5 णिमास्मां रथाथिरूढा श्रीवीरप्रतिमा श्रीमालपुरे । ततः पूर्देवतया श्रीवर्द्धमानस्रीणां बहिर्भूमौ रोदनेन ज्ञापनम् ।

(२६८) का त्वं सुंद्रि जल्प देविसदृशे किं कारणं रोदिषि
भंगं श्रीवलभीपुरस्य भगवन् पश्याम्ययं प्रत्ययः।
भिक्षायां रुधिरं भविष्यति पयो लब्धं भवत्साधुभिः
स्थातव्यं सुनिभिस्तदेव रुधिरं यस्मिन् पयो जायते॥

पुरीसमागताः श्रावकाणां पुरः प्रोच्याशिवं चिलताः । तैश्र समं शकटसहस्र १८ चिलताः । मोढेरपुरे रुधिरं पतद्भहे पयो जातम् । पुरीपरिसरे म्लेच्छाः । रंकेण पंचशब्दवादकान् बहुस्वर्णेन विभेद्य तस्य तुरगसारोहण-काले एव क्रियमाणे पंचशब्दसाराविणे तार्श्यवदुड्डीय स दिवम्रुत्पतितः । किंकर्तव्यतामृहः शिलादित्यस्तैर्निजन्ने । "भवंत्युपा० ॥" "तावचंद्र० ॥"

(२६९) पणसङ्गी वासाइं तिन्निसयाइं अइक्रमेऊणं। विक्रमकालाउ तओ वलहीभंगो समुप्पन्नो॥

॥ इति वलभीभङ्गप्रबंधः॥

(G.) सङ्ग्रहे वलभीभङ्गवृत्तम्।

§ १९३) अथ पातसाहिकटके चिलते यवनव्यंतर एको वलभ्यामुपागतः। क्रुत्रापि प्रवेशं न लभते। िकयद्भिदिनैः किपशिर्षिमेकं रिक्तं वीक्ष्य स्थितः। ततस्तत्र किथहिरिद्री द्विजो नित्यमिष्रहोत्रहेतोः किपलगोष्ट्रतमादातुं स्वां भार्या 20 प्रहिणोति। तया विषण्णतया तद्भ्यंतरावेशेन स्वरम्त्रमानीयार्पितम्। तेन होमो दत्तः। प्रातर्यावता विलोकयित तावता सुवर्णं दष्टम्। नित्यमेवं विधत्ते। त्राह्मण्या तु निजसख्या अग्रे किथतम्। एवं परंपरया पुरे सर्वत्र स्वर्म्मृत्र]होमोऽजनि। तेन पुरं निर्देवतं जातम्। यवनव्यंतराः प्रसृताः सर्वत्र। ततो यवनकटकमागतम्।

§ १९४) वलभ्यां श्रीदेवचन्द्रसरयो रात्रौ सुप्ताः कांचन देवतां प्रत्यक्षां द्वादशवर्षरूपां पत्रयंति सा। पृष्टं च-"का त्वं सुंदरि॰ ॥" तत्स्वरूपं परिज्ञाय गुरुभिः श्रीसंघस्य राज्ञश्च निवेदितम् । ततः कियानपि श्रीसंघो निःसृतः । 25

§१९५) अथ राज्ञोक्तम्-भगवन्! निजन्यंतरैः शुद्धिः कार्या। ततः स्रिमिनिजन्यंतरद्वयं प्रहितम्। तत् द्वयं वलमानं यवनन्यंतरेर्धृतं, कृद्धितं च। दिनत्रयं स्थापितं च। तावता गुरूणां उसेरिर्जाता। दिनत्रयं यावत् कटके चिलते सुक्तम्। ततस्ताभ्यां समग्रमपि स्वरूपं श्रीपूज्यानां निवेदितम्। गुरवो गताः। राजा स्थितः। अधिनी-पूर्णिमादिने रथयात्रायां श्रीमालपुरे श्रीमहावीरः, कासद्रहे श्रीयुगादिदेवः, हारीजे श्रीपार्श्वनाथः, श्रीशत्रुंजये बलभीनाथश्राययौ। तदनु रंकेण सर्वेऽपि यवना रणे क्षिप्ता मारिताः।

15

10

andby National

३८. श्रीमाताप्रबन्धः (B.P.)

§ १९६) पूर्वसां लखणावतीपुरी। राज़ा लखणसेनः। तस्यान्वये राजा रत्नपुद्धः। तस्य राजपाव्यां व्रजतः काचित् स्त्रीं सगर्मा अक्षतपात्रकरा सम्मुखा जाता। नृपेणाक्षतपात्रनालिकेरोपरि दुर्गा निविष्टा दृष्टा। नृपेण शाकुनिकः पृष्टः। तेनोक्तम्—अस्याः सुतोऽत्र नृपो भावी। राज्ञा आरक्षक आदिष्टः—यदेनां प्रछनं पुराद्धिनींत्वा गर्चायां विश्वप। सा तलारेण नृपादेशाद्धिनींता। तयोक्तम्—क मां नयसि १। तेनोक्तम्—मारियप्यामि। तया भयभीतयोक्तम्—अहं बिर्भूमौ यास्यामि। सा गता। भयाद्गभः पपात। सा चीवरेणावेष्ट्याययौ। तैर्मारिता सा। स बालो एकया हरिण्या दृष्टः। कृपया स्तन्यं पायितः। सा प्रतिदिनं तं पालवति। छुब्धकेन एकेन वालं स्तन्यं पाययन्ती मृगी दृष्टा। नृपाय निवेदितं वालस्वरूपम्। राज्ञा तलारः पृष्टः। तेनोक्तम्—सा मृत्युवेलायां बहि-भूमौ गता। नृपेण बालस्ततः समानीय पुरपरिसरे मुक्तः। यथा धेनोश्ररणपातेन मरति। इतस्तस्य बालस्य 10 क्षुधितस्य वाक्यमुत्पन्नम्।

(२७०) यो मे गर्भस्थितस्यापि वृत्तिं कल्पितवान् पयः। दोषवृत्तिविधानाय स किं सुप्तोऽथवा मृतः॥

काचिद्वेनुर्नवप्रस्ता तत्रागत्य पाययति । नृपेण चिन्तितं न म्रियते । स धवलगृहे आनीतः । श्रीपुञ्जेति नाम कृतम् । कालेन नृपतिना राज्यं दत्तम् । श्रीपुञ्जस्य राज्यं पालयतः क्रमेण पुत्री जाता । तस्याः शरीरं 15 दिव्यम्, मुखं वानर्याः । क्रमेण प्रौढा जाता । कोऽपि न याचते । तस्याः खेदपराया जातिसरणमुत्पेदे । पाश्चात्य-मवी दृष्टः । तया नगरमध्ये शब्दः पातितः । यः कोऽपि मरुखल्याः समायातः सोऽभ्येतु । एकः पुरोऽभृत् । कुमार्या पृष्टः-अर्बुदं वेत्सि ? । सर्वं वेबि । तत्र कामिकतीर्थाग्रे कुण्डमस्ति, तस्य तटे वंशजाल्यस्ति । तत्र जाल्यां वानरीशिरो लग्नमित । इतो मत्सकाशाद्रव्यमादाय तत्र गत्वा तच्छिरो जलान्तः क्षिप्त्वा समागच्छ । स तत्र गत्वा यावजले क्षिपति तच्छिरस्तावदेव कुमार्याः श्रीमाताया मुखं दर्शनीयं जातम् । नृपेण पृष्टा-वत्से ! किमि-20 दम् ? । तयोक्तम् देव! मरुखल्यामष्टादश[शती]देशमध्ये नन्दिवर्द्धनो नाम पर्वतस्तत्र कामिकतीर्थमस्ति । तस्य तीरे वंशजाली। तत्राहं पूर्वभवे वानरीरूपाऽधिरूढा। फालच्युता वंशकीलेन विद्धा मृता । मम शरीरं गलित्वोदके पतितम् । तत्प्रभावादहं तव पुत्री जाता । शिरस्तत्र स्थितम् । अतो मे ईदृशं मुखम् । अधुना जनः प्रेषितः । तेन शिरिस जले क्षिप्ते वदनं स्वभावे जातम् । इतस्तसिन्नरे समायाते परिणयनपराश्चुखी जाता । अतिनिर्ब-न्धेन पितरावाप्टच्छच, बहुपरिकरेण अर्बुदाद्रावाययौ । तत्र तपः कर्त्तं प्रारेभे । इतस्तत्र रसीअउ तपस्वी तपः 25 करोति । स तां दृष्ट्वा क्षुव्धः । पाणिग्रहणार्थं ययाचे । तयोक्तम्-यदि सूर्योदयाद् अर्वाक् द्वादश पाजा अत्र पर्वते करोपि, तदा त्वां परिणये । तेन तपः शक्त्या शीघ्रं चकार । इति कियत्यपि रात्रिशेषे श्रीमातया तपःप्रभावा-त्कुकुटः खरः कृतः । स तं श्रुत्वा विभातमिति कृत्वा क्षुच्यः । हृदयस्फोटान्मृतो व्यन्तरो जातः । साऽपि सपश्चात्तापा वैश्वदेवे प्रवेशं कृत्वा देवी श्रीमाता जाता।

॥ इति तपसि श्रीमाताप्रबन्धः॥

30(G.) सङ्ग्रहगतं श्रीमातावृत्तम् ।

§ १९७) पुरा रत्नपुरे रत्नशेखरो राजाऽऽसीत्। तेन दिग्विजयव्यावृत्तेन प्रवेशमहोत्सव.....तीति
पृष्टः । ताभिः संतानाभावानेति कथितम् । ततः संतानहेतोर्नवांतःपुरचिकी राजा शाकुनिकेन बहिर्निष्कांतः ।
ततः शाकुनिकेनापन्नसत्त्वां कामपि कामिनीं काष्ठभारवाहिनीम्रद्धीक्ष्यास्याः सुतस्तव राज्ये भविता एवं जगाद ।

25

30

ततो विषिण्ण(०षण्ण)मनसा राज्ञा सा गर्चायां क्षेपिता। तया प्रस्य बालो मुक्तः। नवप्रस्ता हरिणी तं निज-स्तन्येन जीवयति। अथ टंक्यालायां हरिण्येकिता द्रम्माः पतंति। राजा तथा विज्ञायानीय च गोपुरद्वारि सायं मुक्तः। तत्रस्थो बालः संडेन रक्षितः। ततो राज्ञा समानीय स बालो लीलितः श्रीपुंजराजा बभूव।

श्रीपुंजराज्ञः पुत्री श्रीमाता मर्कटम्रुखी जाता । तस्या जातिसरणं जातिमिति-पुरा अर्बुदाचले मर्कटी फालां ददाना शाख्या विद्धा । कुंडोपिर गलित्वा देहं पिततम् । शिरो शाखायां विलग्नमेव स्थितम् । ततो देहं मानवाकारं कुंडपतनप्रभावादजिन । ततस्तत्रागत्य शिरोऽपि तया तत्र क्षिप्तं कुंडे । ततोऽर्बुदे तपसंतीं तां तत्र रसीयाकनामा योगी ददर्श। प्रार्थितं तेनेति—यन्मम पत्नी भव । तयोक्तम्—द्वादशपद्या विधेहि एकरात्रि मध्ये । तेन तथाकृते श्रीमात्रा कृत्रिमकुर्कुटा वासिताः । कृत्रिमश्चनश्चरणयोर्विलग्नाः । ततो हृदयस्कोटनेन स स्वयं विनष्टः ।

३९. जगदेवप्रबन्धः (G.)

§ १९८) मुद्रलपातसाहिसमीपात्समागतो जगदेवः श्रीसिद्धराजभूपतिना नवलक्षकंकणं परिधापितः । अत्रांतरे 10 केनापि कविना काव्यमिदं न्यगादि-

(२७१) उन्मीलन्मणिरिइमजालजिटलश्चायं रणे कङ्कणं विभ्राणस्तव वैरिवीरकदनकीडाकठोरः करः। हित्वा संयति जीवितानि रिपवो ये खर्ग्गमार्गं गता-स्तानाकष्टुमिवाविवेदा सहसा चण्डसुतेम्मण्डलम्॥

इति पठिते तसे तत्कङ्कणं दत्तम्।

एकदा सभायां अधो विलोक्यमानस्य चिंताप्रपन्नस्य कस्यापि कवेः पार्श्वे जगदेवेन पृष्टम्—कवे! महती चिन्ता!। तेनोक्तम्—विमर्शनाऽस्ति । शृणु !

(२७२) द्रिद्रान् सृजतो धातुः कृतार्थान् कुर्व्वतस्तव। जगद्देव! न जानीमः कः श्रमेण विरंस्यति॥ इति पठिते जगद्देवेन सुवर्णलक्षो दृत्तः।

जगद्देवन समागतस्य कस्यापि कवेः पार्श्वे नवविशेषं देशस्त्ररूपं पृष्टे तेनोक्तम्-देव ! चित्रमित । असत्सार्थे पान्थस्यकस्य पार्श्वे सरसः सम्रुत्थितेन चक्रवाकेनैकेनेति पृष्टम्-

(२७३) चक्रः पप्रच्छ पान्धं कथय जनपदः कोऽपि संपत्स्यते में वस्तुं नो,यत्र रात्रिभवति स च विचिं खेति तं प्रत्युवाच । नीते मेरी समाप्तिं कनकवितरणैः श्रीजगद्देवनाम्ना सूर्येऽनन्तर्हिते स्यात्कतिपयदिवसैर्वासराद्वेतसृष्टिः ॥

इत्युक्ते जगदेवेन सुवर्णसहस्रा दश दत्ताः।

कर्सिन्निप पण्डिते समागते श्रीजगद्देवन वारं वारं पृष्टे सित जीवेति वारं वारं जल्पित पंडितः, नान्यत् । तेनोक्तम्-कथमेतत् जीवेति वचः १। कविनोक्तम्-"त्विय जीवित जीवंति ।।"

(२७४) स्वस्ति क्षत्रियदेवाय जगदेवाय भूभुजे । यद्यशःपुंडरीकान्तर्गगनं भ्रमरायते ॥

dire Candle Name Diselse Ne (le 7.4)

४०. पृथ्वीराजप्रबन्धः (B.P.)

६१९९) यथा-शाकंभरीपूर्यां चाहमानान्वये श्रीसोमेश्वरो नृपलस्य तन्जः पृथ्वीराजः, तद्वाता यथोराजः। तस्य शल्यहलः श्रीमालज्ञातीयः प्रतापसिंहः, मन्नी कइंबासः। तयोरुभयोः परस्परं विरोधः। स राजा पृथ्वीराजो योगिनीपुरे राज्यं करोति। तस्य धवलगृहद्वारे न्यायघण्टाऽस्ति। [†]स महावलवान्, धनुर्भृतां धुरीणो नृपः। यशोराजस्तु ज्ञाशीनगरे कुमारश्चलावित्तं । तस्य वाराणस्याधिपतिना श्रीजयचन्देन सह वैरम्। एकदा गर्जनकात् तुरुका-धिपतिः पृथ्वीराजेन सह वैरं वहन् योगिनीपुरोपिर चचाल। पृथ्वीराजस्यामात्यो दाहिमाञ्चातीयः कइंबासनामा मन्नीक्वरोऽस्ति। तस्यानुमत्या नृपस्तुरङ्गमलश्चद्वयमादाय, गजानां पश्चकृत्या सम्मुखश्चलितः। तुरुकसैन्येन सह युद्धं जातम्। भग्नं शाकसैन्यम्। सुरत्राणो जीवन् गृहीतः। स्वर्णातृगडे श्चिस्वा योगिनीपुरे समानीय मातुर्वचसा मुक्तः। एवं वार ७ बद्धा बद्धा मुक्तःं, करद्ध्य कृतः। प्रतापसिंहः करमुद्याहियतुं याति गर्जनके। एकदा 10 मशीति विलोकितुं गतस्तत्र स्वर्णटङ्ककलश्चं दुर्वेसादीनां ददौ। मन्त्रिणा नृपायाभिद्धे—देव! गर्जनकद्रव्येण निर्वाहः स्थात्। स तु इत्यं विद्वति। राज्ञा पृष्टम्। तेनोक्तम्—देवस्य तदा ग्रहवैपम्यं मत्वा मया धर्माव्ययः कृतः।ज्योतिर्विदः पृष्टाः। तस्तु कष्टमुक्तम् । इतः शल्यहक्तो नृपस्य कर्णे विलग्नः—यदेष मन्नी वारं २ तुरुष्कानान्यति। नृपो रुष्टः। तद्वसमा मन्त्रिणं इन्तुं बुद्धिमकरोत्। इतः रात्रौ सर्वावसरादुत्थिते मन्त्रिणि प्रतोलीद्वारान्त्राः सुते राज्ञा दीपिकाभिज्ञानेन वाणं मुक्तम्। तन्मित्रणः कक्षान्तरे भृत्वा दीपधरस्य करे लग्नम्। दीपिका विद्याः क्राच्या। कलकले जाते नृपेण पृष्टम्—रे किमिदम् १। देव! मन्निणः धातकेन वाणमुक्तम्। रे! मन्नी जीवति देव! क्रशल्या। इतः पाश्चात्ययामिन्यां चन्दवलिद्दिको द्वारमङ्गो नृपं प्राह—

- (२७५) इक्कु बाणु पहुवीसु जु पइं कइंबासह मुक्कओं, उर भिंतरि खडहडिउ धीर कक्खंतरि चुक्कउ। बीअं करि संधीउं भंमइ सूमेसरनंदण! एहु सु गडि दाहिमओं खणइ खुइइ सइंभरिवणु। फुड छंडि न जाइ इहु लुब्भिउ बारइ पलकउ खल गुलह, नं जाणउं चंदबलदिउ किं न वि छुटइ इह फलह॥
- (२७६) अगहु म गहि दाहिमओं रिपुरायखयंकर,
 कुडु मंत्रु मम ठवओं एहु जं बूय मिलि जग्गर ।
 सह नामा सिक्खवउं जह सिक्खिविउं वुज्झहं,
 जंपइ चंदबलिहु मज्झ परमक्खर सुज्झह ।
 पहु पहुविराय सहंभरिधणी सयंभरि सउणइ संभरिसि,
 कहंबास विआस विसदृविणु मिन्छबंधिबद्धओं मरिसि ॥

नृपेण भेदभयात् अन्धार्यां क्षेपितः । आद्यौ प्रहरिकसमये मं (?) सर्वावसरे मन्त्री समायातः । विस्तितितः । 30 भट्टो निष्कासितः । तेनोक्तम्—देव ! पुमर्भवतः कल्याणमतः परं न करोमि । सिद्धसारखतोऽहं । तव म्लेच्छैर्वद्ध-स्थाचिरान्मरणं भविष्यति । स निर्गत्य वाराणस्थां गतः । राज्ञा श्रीजयचन्देनोक्तम्-मया त्वमाहृतः परं नायातः । देव ! तवापि मृत्युरासन्नोऽतोऽत्रापि न स्थास्ये ।

¹ B श्रीगोखवालज्ञाः । †-† एतद्न्तर्गता पंक्तिः B आदर्शे नोपलम्यते । 2 B नास्ति पदमिदस् ।

§ २००) इतः कड्वासे विस्त्रिते नृत्नो मन्त्री जातः। नृपः प्रतापसिंहस्य भातृन्यमतिविलिनं मत्वा कारायां चिक्षेप । मित्रणि विस्त्रितेऽपि न त्यजित । स सुरत्राणाय मिलितः । तेन कटकं शकानामहूतम् । आयातं श्रुत्वा पृथ्वीराजः सम्मुखो निःसृतः । तुरङ्गलक्ष ३, गज सहस्र १०, मनुष्य लक्ष १५; एवं.....आशीमतिक्रम्याग्रे कटकं गतम्। इतः सुरत्राणस्य मित्रणो वार्ता जाता। तेन कथा-पितम्-प्रस्तावे आकारियण्यामि । अथ पृथ्वीराजः प्रसुप्तः दिनानि १० परं कोऽपि न जागरयति । यो 5 जागरयति तं मारयति । इतः प्रधानेन सुरत्राण आकारितः । राजा न जागर्ति । मन्दं मन्दं केऽपि सामन्ता युध्वा मृताः । केऽपि अणष्टाः । अश्वसहस्रविशव्यमाने [भगिन्या] नृपो जागरितः । खद्गमाकृष्य धावतः भगिन्योक्तम्-स्वं जनं मारयसि । कटकं सर्वं तव निद्राणस्य मारितम् । नृपस्त्वाह-अहमन्त्रि-......तिसन् विनष्टे नृपः शाकंभरीं मनिस कृत्य नाटारम्भाश्वे आरुख प्रणष्टः। आत्रा सह पृष्टि-धावितैस्तुरकैर्न गृह्यते । इत आशी......देशे पर्वतिकाद्वयस्य मध्ये भट्टोऽस्ति । तव (तत्र १) दुर्ग प्रिप्य जस-10 राजः स्थितः । तेन किञ्चित्कटकं खलहितम् । स तत्र मारितः । सुरत्राणसाहबदीनेन स मंत्री पुच्छरहितः सर्पवत्कृतः । स्थाने गतः केन गृहीतुं शक्यः ? । तेनोक्तम्-छन्देन । वाद्यान् वादयतः, यथा तुरगो नृत्यति । तथा कृते तुरगो निर्तेतुं प्रवृत्तो न चलति । नृपस्य कण्ठे शृङ्गिण्यः पेतुः । राजा गृहीतः सुरत्राणे [न]। खर्णनिगडे प्रक्षिप्य योगिनीपुरे समानीतो भाषितश्र-राजन् ! यदि जीवन्तं मुश्रामि ततः किं कुरुषे ? । नृपतिः प्राह-मया त्वं सप्तवारान् ग्रुक्तस्त्वं मामेकवेलमपि न ग्रुश्चिति । इतो नृपोत्तारकसम्मुखं सुरत्राणः सभायामुपवि-15 शति । नृपः खिद्यते । स प्रधानः समभ्येति-देव ! किं क्रियते, दैवादिदं जातम् । नृपेणोक्तम्-यदि मे शृङ्गिणीं बाणांश्वार्पयसि, तदाऽम्रं मारयामि । तेनोक्तम्-तथा करिष्ये । पुनर्गत्वा सुरत्राणाय निवेदितम्-यदत्र त्वया नोपविश्वनीयम् । सुरत्राणेन तत्रायःपुत्तलकः स्वस्थाने निवेशितः। राज्ञः शृङ्गिणी समर्पिता। राज्ञा वाणं मुक्तम्। अयः पुत्तलको द्विधा कृतः । नृपेण शृङ्गिणी त्यक्ता । न मे कार्यं सरितमन्यः कोऽपि मारितः । तद्तु सुरत्राणेन गर्त्तायां प्रक्षिप्य लोष्टेईतः । सुरत्राणेनोक्तम्-अस्य रुघिरे भूमौ पतिते शिवं स्यात् । तथैव मारितः । संवत् 20 १२४६ वर्षे दिवं ययौ । योगिनीपुरं परावृत्त्य सुरत्राणस्तत्र स्थितः ।

॥ इति पृथ्वीराजप्रबन्धः ॥

(G.) सङ्ग्रहे पृथ्वीराजविषयकवृत्तम्।

§२०१) श्रीयोगिनीपुरे श्रीप्रथिमराज्ञ उपिर अष्टादशिमर्ठक्षेरथानां पातसाहिरागतः। तदा एकादशीपारणं विधाय निद्राग्रथिलो राजा प्रसप्तोऽस्ति। तदा महाविग्रहे जायमाने प्राकारे खंडिः पतिता। राजानं कोऽपि भीत्या 25 न जागरयति। कुलिकयांगुष्टमोटनेन जागरितः। तावता तां मारयित्वा पुनः सुप्तः। द्वितीयदिने वीरचतुष्टयेन जागरितः। स्वरूपं ज्ञात्वा यावता स्वयं प्राकारवातायने निविष्टस्तावताऽरिभिविशेषविग्रहो मंडितः। अत्या-कुलेन राज्ञा तारादेवी स्मृता। प्रत्यक्षीभृता। तया निश्चि श्रीपातसाहिसमीपे सुक्तः सः। यावता तन्मारणाय प्रहारं सुंचितं, तावता चतुर्भुजो दृष्टः, सुक्तः। द्वितीयवेलायां जटाधारी दृष्टः, सुक्तः। तृतीयवेलायां ब्रह्मा दृष्टः। दैव्या भणितोऽपि न मारयति। वस्त-प्रहरणादि गृहीत्वा समागतः। प्रातस्तत्सवं पातसाहेर्द्शितम्। इति 30 कथापितं च—यथा वस्त्राण्यानीतानि तथा मारयिष्ये। पातसाहिना सर्वाणि वस्त्राणि याचितानि। राज्ञोक्तम्—प्रयाणसप्तके प्रेपयिष्ये। तथा विहिते कटकं तथैव चिलतम्। राजा जीवग्राहं गृहीतः। वंदीकृतस्य तस्यान्यदा भोजनं स्थानेनात्तम्। तदवलोक्य विषण्णः। आः किमेतत्! मदीया रसवती संहिसप्तश्चत्या समागतवती। सांप्रतिमयमवस्था। ततो मृतो युद्धेन।

४१. जयचन्दप्रबन्धः (P.)

§ २०२) कान्यकुळादेशे वाराणसी पुरी नवयोजनविस्तीर्णा द्वाद्वशयोजनायामा । तत्र श्रीविजयचन्द्रांगजो राष्ट्रकूटीयो जैत्रचन्द्रो राज्यं करोति। तस्य कर्प्रदेवी परमग्रीतिपात्रम् । अथ नगरवास्तव्य[स्र] कसापि शालापतेः पुत्री सुहागदेवी पुरीप्रत्यासक्ते ग्रामे परिणीताऽस्ति । सा एकदा भर्जा अपमानिता रुष्टा पितृगृहं प्रति चचाल । मार्गे यान्त्या गोमयोपिर फणी कृतफणस्तच्छीपें खझरीटस्तं दृष्ट्वा चिन्तितवती—यदि कोऽपि दक्षो मिलति तदा पृच्छामि । इतः पुराद्विद्याधरो नामा द्विजस्त्युग्रमे भिक्षार्थं त्रजन्मार्गे मिलितः । तया पृष्टं शकुनं वेत्सि १ । तेन ओमित्युक्ते, तयाऽभिहितम् अस्य किं फलम् १ । तेनोक्तम् च्हदमतीव सुन्दरम् । इतः सप्तमे दिने त्वं नृपतेः सर्वे-धरी भविष्यति । परं मम किम् १ । तयोक्तम् चरिदे मे त्वयोक्तम्, तदा ते श्रीकरणम् । तेनोक्तम् ममाभिज्ञानं नाम च शृणु अहं द्विजपाटके उत्तराश्रिते देवधरद्विजभागिनेयो विद्याधरो नाम । सा 'एवं' प्रतिश्रुत्य गता पितृगृहम् । सप्तमे दिने राजपाट्यां नृपेण त्रजता गृहद्वारे वनदेवीव दृष्टा । सानुरागो धवलगृहं गत्वा शालाप-तिमाह्य पुत्रीं ययाच । तेन दत्ता, धवलगृहं नीता । तया नृपो द्विजाय प्रतिपन्नं निवेदितः । राज्ञा विद्याधरा आहृताः । श्रतसप्तकं मिलितम् । देवी सौभाग्यदेवी प्राह—स विद्याधरो वामनेत्रे काणोऽस्ति । तेषामिप शतत्रय-मायातम् । उत्तरसां द्विजपाटके देवधरस्य भागिनेयः ममानीयताम् । अश्ववारः प्रहिताः । स सङ्गीभूय स्थितोऽस्ति । अश्ववारेच्याहृतम् मो विद्याधर ! राजा आकारयति । तस्य मातुलपङ्गोक्तम् ने क स , क राजकुलं; किं कथं श्रीकरणं लभ्यसे १ । तेनोक्तम् चद्रविष्यति तद्रष्टच्यम् । स राजकुले गतः । सर्वमुद्राधिकारी कृतश्च । स महात्यागी नित्यं त्राक्षणानामष्टादशसहस्रमग्रासने मोजयति ।

§ २०३) अथैकदा राजा जैत्रचन्द्रः कथान्तरे इत्यशृणोत्–यद्धङ्गालदेशे लखणावतीपुरी तत्र लखणसेनो राजा। तस्य दुर्गो दुर्गाद्योऽस्ति। तदनु नृपः प्रतिज्ञामकरोत्–यत् गतमात्र एव दुर्ग गृह्णामि वा यावन्तो दिनास्तत्र लगन्ते ता०कुमारमित्रवाक्यम्–

20(२०७) उपकारसमर्थस्य तिष्ठन् कार्यार्दितः पुरः । मूर्त्या यामर्त्तिमाचष्टे न तां कृपणया गिरा ॥

नृपेण लखणसेनमाहृय सगौरवं परिधाय दण्डं मुक्तवा खराज्ये प्राहिणोत् । श्रीजैत्रचन्द्रोऽपि पश्चाद्रलितः खनगरीमायातः । इति लखम(ण)सेनपराजयप्रबन्धः ।

तदनु चन्दबलिइभट्टेन श्रीजैत्रचन्द्रं प्रत्युक्तम्-

(२७८) त्रिण्हि लक्ष तुषार सबल पाषरीअइं जसु ह्य, चऊदसइं मयमत्त दंति गज्जंति महामय।

वीस लक्ख पायक सफर फारक धणुद्धर,
ल्हूसडु अरु बलुयान संख कु जाणइ तांह पर।
छत्तीस लक्ष नराहिवइ विहिविनडिओं हो किम भयउ,
जइचंद न जाणउ जल्हुकइ गयउ कि मूउ कि धरि गयड॥
पतनागतं वर्षद्वयेनोक्तम् । तेनैव पूर्वमुक्तम्-

(२७२) जइतचंदु चक्कवइ देव तुह दुसह पयाणउ, धरणि धसवि उद्धसह पडह रायह भंगाणऔं। 婚

30

25

सेसु मणिहिं संकियउ मुक्क हयखरि सिरि खंडिओं, तुहओं सो हरधवलु धूलि जसु चिय तृण मंडिओं। उच्छलीउ रेण असिंग गय सुकवि व(ज)ल्हु सचउं चवइ, वग्ग इंदु बिंदु भुयजुअलि सहस नयण किण परि मिलइ॥

§२०५) अथैकदा सुहागदेव्या नृपो व्याहृत:-देव! राज्यं कस्य दास्थथ ! नृपेणोक्तम्-कर्प्रदेव्यात्मजस्य । 15, मम पुत्रस्य कथं न ! । त्वं सङ्घहणी, अतस्ते पुत्रोऽयोग्यः । सा त्वर्द्धराज्यस्वामिनी । धनेन परिपूर्णा । तया तदैव मनिस विधाय गर्जनके स्वपुरुषान् प्रहित्य सुरत्राणः सहावदीन आनीतः । योऽन्तरा पृथ्वीराजं विगृह्य योगिनीपुरे स्थितः । तया कथापितम्-मया आहृतः समागच्छेथाः ।

इतः पृथ्वीराजे दिवं गतौ अीजैत्रचन्द्रेण वर्द्धापनकान्यारब्धानि । गृहे गृहे घृतेनोदम्बरक्षालनमारब्धम् । तूर्यरवः प्रववृते । मन्त्री राजकुले न याति । केनाप्युक्तम्-देव ! पृथ्वीराजमरणं मन्त्रिणो विचारे नायातम् । 20 एवं चतुर्थदिने मन्त्री राजकुरुं प्राप्तः । राज्ञोक्तम्-मन्त्रिन् ! चिराद् दृष्टोऽसि । देव ! राजकार्यव्यप्रतया नायातं मया। देव! केयं खडखडा?। राज्ञोक्तम्-किं न वेत्सि पृथ्वीराजमरणम्?। एवं विधे वैरिणि मृते वर्द्धापनकानि किं न विधीयन्ते । मित्रणोक्तम्-तिसिन् हते विषादं कर्तुं युज्यते हर्षो वा ? । राज्ञोक्तम्-कथम् ? । देव ! प्रतोली भवति, तस्यामयोमयानि कपाटानि, अर्गला च अयोमया। यदा सा भज्यते, कपाटौ च पृथम्भवतः, तदा दुर्गस किं सात् ?। तथा देव ! स पृथ्वीराजस्तव अर्गलासम आसीत्। तसिन् विनष्टे गृहसूत्रं कर्तुं 25 युक्तं वा वर्द्वापनकम् ?। तिष्ठतु वर्द्वापनकम् । देव ! यदद्य पृथ्वीराजस्य तत्कल्ये आत्मनो ज्ञेयम् । मित्रणा मेलापकः प्रारब्धः। तया सुरत्राणस्य कथापितम्-यद्त्रैव स्थेयं परत्र न गन्तव्यम्। देव्या नृपो विज्ञप्तः-देव! मेलापकः किं कुरुते ? । तुरुष्कः प्रत्यासन्नखस्वभूमौ विद्यते तव नामापि न गृह्णाति । कोशव्ययं मन्त्री वृथैव कुरुते । .राज्ञा मन्त्री उक्तः-सर्वः कोऽपि विसीदति मेलापकं विसर्जय । मन्त्रिणोक्तम्-अस्तु । अनेन कार्यमस्ति । पुनरेकदा तया नृपो व्याहृतः । मित्रणोक्तम्-देव ! वर्षद्वयं अहं व्ययं करिष्ये । नृपेणोक्तम्-सोऽपि 30 मदीयम् । मन्त्रिणा सामन्तान् प्रेष्य नृपो व्याहृतः-देव! बीटकस्य प्रसादं कुरु यथा तपोवने यामि । नृपेण देव्या वचसा विसृष्टः। वर्षद्रयाद्नु तथा सुरत्राणः समाकारितः। स भारं विमुच्य जरीदकेन धावितः(१)। नृपस्य कटकेन सह युद्धे जाते सुरत्राणो भग्नः प्रणष्टः । इतः सुरत्राणपत्या पति चिन्तातुरं विलोक्य उक्तम्-देवासे श्यामता कथम् १ । सुरत्राणेनोक्तम्-युवत्या वार्त्तया समागताः परं पश्चाद्गमनं दुर्घटम् । देव ! मम ख्रमं जातं यत्-अह-पु॰ प्र॰ प्र॰ 12

म्मद्गुत्रमहमदं यदि सेनान्यं करोषि तदा ते जयः स्यात् । तदा ते आकारिताः । तेषां पश्चशती मिलिता । देव्योक्तम्—स वामनेत्रे काणोऽस्ति । स आकारितः दलपतिश्च कृतः । इतः शेषमपि कटकमानीतम् । इतः सुहाग-देव्योक्तम्—देव ! राज्यं कस्य १ । कर्पूरदेव्यास्तनयस्य । यदि मत्स्नोर्ददाति भवान् तदाऽद्यापि परचकं चलति । राज्ञोक्तम्—त्वयाऽऽनीतम् १ । तया प्रोक्तम्—अन्येन केन १ । तदा स्त्रीचरितं नीतिं च स्मृत्वा—ज्येष्ठपुत्रमभिषिच्य, वितामदृष्टव्यमुखाऽऽसीरित्युक्तवा दृष्टा (१ ज्येष्ठा)याः सुतं राज्ये निवेश्य, पितमारिकायास्तस्याः सुतं दृद्धि (०द्धं १) सहादाय नृपो युद्धाय निस्ससार । महित संयुगे जायमाने नृपेणोक्तम्—रे गिलितकंसस्य ६४ जोटकानि निःश्वानानां किं स्फुटितानि १ । [कथं]न श्रूयन्ते । देव ! वाद्यमानानि सन्ति परं शृङ्गिणीगुणैरुपलप्ता- (१रुद्धा)नि । नृपस्तत् श्रुत्वा उदरे शिक्षकां श्विष्टा पुत्रं चाग्ने करिण्यिधरोप्य यमुनायां करिणमश्चेप्सीत् । स पश्चत्वमाप । ज्येष्ठपुत्रोऽपि निःसृत्य युद्धे विनष्टः । संवत् १२४८ वर्षे चैत्र ग्रुदि १० दिने वाराणसीमा- विदाय सुरत्राणः प्रवेशं कर्तुं प्रवृत्तः । कर्पूरदेवी यमगृहं प्रविष्टा । द्वितीया सुहागदेवी लघुपुत्रमादाय प्रतोल्यां स्थिता। सुरत्राणेनोक्तम्—केयम् १ । देव ! यया त्विमहानीतः । सुरत्राणेन वदने निष्टीवनं कृत्वा एकस्य धगडाय, या पत्युनं जाता सा मे भविष्यित इति वदता, प्रदत्ता । पुत्रस्तु तुरुष्टः कृतः ।

॥ इति श्रीजैत्रचन्द्रनृपतेः प्रवन्धः ॥

(G.) सङ्ग्रहे जयचन्द्रनृपवृत्तम्।

15 ६२०६) अन्यदा कोपकालाग्निरुद्र १, अवंध्यकोपप्रसाद २, रायद्रह्वोलादि विरुद्दानि श्रीपरमर्दिनः श्रुत्वा श्रीजयचन्दोऽसहमानस्तदुपरि ससैन्यश्रचाल । तद्देशभंगं कुर्वाणः कल्याणकटकनाम्नीं राजधानीमाजगाम स क्रमेण । परं कोऽपि विज्ञप्तिकां कर्तुं न शक्रोति यत्कटकमागतम् । परं खयं परमर्दिराजा परसैन्यं दृष्टा दुग्गां-तः..... । ततो राजा सैन्येन रुद्धः । वर्षमेकं जातम् । पश्चात्परमर्दिना राज्ञा मल्लदेवमहामात्येन सह मंत्रं विधाय तत उमापतिधरं मंत्रिराजमाकार्य इत्युक्तम् –यत् मंत्रिविद्याधरसमीपं गल्वा तस्य किंचित्कथयित्वा त्वं 20 सैन्यमुत्थापय । ततः स 'आदेशः प्रमाण'मित्युक्त्वा सायं प्रतीहारमुक्तः सन् मंत्रिविद्याधरसमीपमगमत् । उमा-पतिधरमंत्रिणा एकं सुभाषितं पत्रे विलिख्य मंत्रिराज्ञो विद्याधरस्याग्रे मुक्तम् । तदिदम् –

(२८०) उपकारसमर्थस्य तिष्ठन् कार्यातुरः पुरः । मूर्त्त्या यामित्तिमाचष्टे न तां कृपणया गिरा ॥
एतदर्थमवधार्य निशीथे एव पल्यंकिश्वतो राजा समुद्धत्य क्रोशपंचके मुक्तः । प्रातः राजा दुर्ग्गं न
पश्यित । ततः पृष्टम् । मंत्रिणा विद्याधरेणोचे सर्वं स्वरूपम् । राजा कुद्धः । ततो विद्याधरः प्राह-राजन् ! कथं
25 ममोपिर कोपं कुरुपे । कणवृत्तिः कापि न गताऽस्ति । ततो राजाह-अतोऽहं कुद्धः, यतस्त्वया मम लीला
विनाशिता । अनेन सुभापितेन मम राज्यमपि कथं नार्पितम् । एतद्भणने विरुद्दानि मुक्तानि । मानं राज्यं च सर्वे
मुक्तम् । इति भणित्वा जयचन्द्रः स्वस्थानमगमत् ।

. ४२. वराहमिहिरवृत्तम् (G.)

§ २०७) पुरा वराहमिहिरो विद्यार्थी ज्योतिःशास्त्रं पठन् उपाध्यायगोरक्षणां करोति। तत्र नित्यं लग्नं मण्डियत्वा 30 पठिताभ्यासं करोति । एकदा सिंहलग्नं मण्डितम् । प्रमादाद्विसर्जनं विस्मृतम् । गृहगतेन तेन भोजनसमये स्मृतम् । तत्र गतः । शिलोपरि निविष्टः सिंहो दृष्टः । निर्भयेन सता सिंहोदराधो लग्नं विसर्जितम् । सूर्यस्तुष्टः । पण्मासं विमानस्थितेन नक्षत्रग्रहतारागणं विलोक्य समागतेन 'वाराहीसंहिता'प्रमुखज्योतिःशास्त्राणि निर्ममे । अथ वराहमिहिरस्य पुत्रो जातः । ततः पित्रा जातके चतुरशीतिवर्षाणि आयुर्वित्तम् । तदनु जिनदीक्षा-दीक्षितश्रीभद्रवाहुपार्थे वर्द्धापनिकाकृते मनुष्यः प्रहितः । तद्वचः श्रुत्वा स्रिरिभिरुक्तम्—जातस्य सप्तदिनानि आयु-रित्त । सप्तदिनान्तेऽस्य मार्जारिकया मरणं भविष्यति । तेन सर्वत्र मार्जारिका रिक्षता । निर्णातवेलायां अर्ग-लिकामार्जारिकया मरणमजिनः। ततो विषण्णेन तेन पुस्तकैः सह काष्ट्रभक्षणं प्रारब्धं यावता तावता तत्रागतेन श्रीभद्रवाहुना कथितम्—कथं काष्ट्रसाधनं कुरुषे ?। शास्त्राणि न वितथानि । परं या दीरिका भवताऽभिज्ञाने विहि-ताऽभृत् सा कुब्जिकया महाकष्टेन प्राप्ता। तदा वेलाव्यतिक्रमोऽजिन । तया तु सप्तदिनान्येवायुस्ततो मानितम् ॥

४३. नागार्जुनप्रबन्धः (Br.)

§ २०८) ढंकपर्वते श्रीशत्रञ्जयशिखरैकदेशे राजपुत्ररणसिंहस्य भोपलानाझीं सुतां जातानुरागो वासुकिर्नागराजः सिषेवे । पुत्रो जातः । नागार्जन इति नाम कृतम् । स च वासुकिना सुतस्नेहात् सर्वासामीपथानां पत्राणि फलानि भोजितः । तत्प्रभावेन सर्वसिद्धिभिरलङ्कृतः सिद्धपुरुष इति ख्यातः । पृथिवीं विचरन् पृथिवीस्थान-10 पचने सातवाहननृपस्य कलागुरुर्जातः । स च विद्याध्ययनार्थं पादिलप्तकपुरे पादिलप्ताचार्यं विद्यार्थी सेवते । स गुरुः पादतललेपबलेन तपोधनेषु विहरितुं गतेषु श्रीशत्रञ्जयादिषु देवान्नत्वा स्थानमायाति । आगतानां नागार्जनश्ररणक्षालनं कृत्वा स्वाद-वर्ण-गन्धादिभिः सप्तोत्तरं शतमीपधानाममीलयत् । तेनोपदेशं विनाऽपि जलेन चरणलेपे कृते कुर्कुटोत्पातम्रत्पत्य पतितो त्रणजर्जरिताङ्गो गुरुभिः पृष्टः-किमेतत् । पूज्यपाद-प्रसादः । कथम् । यथास्थिते उक्ते गुरवस्तस्य कौशल्येन रिज्ञताः । गुरुभिरुक्तम्-गुरून् विना कलाः कथं 15 फलदाः स्युः । प्रसादमाधातु गुरवः । भवतो मिथ्यात्ववासितस्य कलां न दिन्न । श्रावकत्वमङ्गीकुरु । तेन तथा कृते, तन्दुलजलेन लेपं कृत्वा गगने स्थैरं त्रजित स ।

§ २०९) एकदा सैरं विचरता गुरुग्रुखात् श्रुतम्—यत् रसिसिद्धं विना दानेच्छा न पूर्यते । तदनु रसं परिकर्मयितुं प्रवृत्तः । स्वेदन-मर्दन-जारण-मारणानि चके । परं स्थेपं न बभाति । गुरवः पृष्टास्तैरुक्तम्—दुष्ट-निर्दरुनसमर्थश्रीपार्थनाथस्य दृष्टो साध्यमानः सर्वरुक्षणोपरुक्षितया महासत्या मृद्यमानो रसः स्थिरीभूय 20 कोटिवेधी भवति । तत् श्रुत्वा स श्रीपार्थनाथप्रतिमामन्वेष्टुमारेमे । इतश्च नागार्जुनेन स्विता वामुिकध्यातः । प्रकटीभूतः । पृष्टं च—श्रीपार्थस्य काश्चिद्दिच्यां प्रतिमां कथय । तेनोक्तम्—पुरा द्वारावत्यां श्रीसमुद्रविजयेन श्रीनेमिनाथम्रुखात् श्रीपार्थस्य काश्चिद्दिच्यां पृतिमां कथय । तेनोक्तम्—पुरा द्वारावत्यां श्रीसमुद्रविजयेन श्रीनेमिनाथम्रुखात् श्रीपार्थप्रतिमा प्रासादे स्थापयित्वा पूजिता । पूर्वाद्वानन्तरं समुद्रेण प्राविता । प्रतिमा तथैव समुद्रमध्ये स्थिता । कालेन कान्तीपुरीवासिनो धनपतिनामकस्य सांयात्रिकस्य यानपात्रं देवतातिशयात् खिरुत्तम् । अत्र जिनविन्यं तिष्टतीति दिच्यवाचा निश्चित्य, तत्र नाविकान् निश्चित्य आमतन्तुभिः सप्तिर्भिबद्धो-25 द्वता प्रतिमा । स्वपुरे नीत्वा प्रासादे स्थापिता । चिन्तातीतो लामो जातः । स नित्यं पृतां करोति । ततः सर्वातिशयसम्पन्नं तिद्वम्यं ज्ञात्वा नागार्जुनो रसिमद्ध्ये सेडीनदीतटेऽपहत्यानीतवान् । तस्य पुरतः श्रीशातवाहनस्य गृपस्य चन्द्रलेखां देवीं महासतीं व्यन्तरीसान्निध्यादानीय प्रतिनिश्चं रसमर्दनं कारयति । एवं तत्र भूयो भूयो गतागतेन देव्या बाधव इति प्रतिपनः । तया तेषामौष्यानां मर्दने कारणं पृष्टम्—कोटिवेधी रसोऽसौ । अन्यदा देव्या खपुत्रयोरक्तम्—यत्सेडीनदीतटे नागार्जुनस्य रसिसिद्धिभविष्यति । तौ रसलुन्थौ ३० नागार्जुनान्तिकमागतौ । कपटेन रसं जिष्टक्ष छन्नं अमन्तौ यसा रन्धनीगृहे नागार्जुनो श्चनक्ति तामालपतः । त्वं नागार्जुनरसवर्ती लवणबहुलां कुर्याः । यदा तां क्षारां विक्ति तदा कथनीयम् । पण्मासान्ते क्षारैत्युक्तया

[†] जैनानां मते देवानां मनुजेन सह सम्बन्धो न युज्यते-टिप्पनी।

तयोक्तम् । ताभ्यां रससिद्धिनिश्चिता । तस्य वधोपायं पृच्छन्तौ अमतः । केनाप्युक्तम् – अस्य दर्भाङ्करान् मृत्युः । नागार्जनेन द्वौ क्रुतपौ भृतौ ढंकपर्वतस्य गुहायां श्विप्तौ । पृष्ठचराभ्यां ताभ्यां ज्ञातौः वलमानो दर्भाङ्करेण जन्ने मृतः । क्रुतपौ देवतया हृतौ ।

(२८१) अजाते चित्रलिखिते मृते च मधुसूदन!। क्षत्रेषु त्रिषु विश्वासश्चतुर्थो नोपलभ्यते॥

देवतया कुपितया, द्वाविप पश्चात्तापपरी-आवाभ्यां किमकारि यः खटिकासिद्धः कलावान् स हतः; तं हत्वाऽऽवाभ्यां किं साधितमिति-चिन्तयन्तौ मारितौ ।

॥ इति नागार्जनप्रबन्धः ॥

४४. श्रीपाद्लिप्तसूरिप्रबन्धः (B.)

(२८२) जयन्ति पादलिप्तस्य प्रभोश्चरणरेणवः। श्रियः संवनने वर्यचूर्णतः प्रणताङ्गिनाम्॥

§ २१०) तत्र कोशला नाम नगरी। विजयब्रह्मा भूपः। तत्र प्रसिद्धः प्रफुछः श्रेष्ठी। रूपेणाप्रतिमा [प्रतिमाणा नाम] भार्या परं वन्ध्या। अनेकौषधदेवपूजोपयाचितैरपि नापत्यमाप। अन्यदा विखिन्ना श्रीपार्श्वनाथचैत्ये
वैरोखादेवीं कर्पूरागुरुभिः सम्पूज्योपवासाष्टाहिकां चके। ततो देवी प्रकटीभ्य पुत्रवरं ददो, इत्याख्यातवती च15 पुरा निमविद्याधरान्वये श्रीकालिकाचार्यसन्ताने विद्याधरगच्छे श्रुतसम्रद्रपारगश्रीआचार्यनागहित्तगुरूणामनेकलब्धिवतां पुत्रेच्छया पादप्रक्षालनजलं पिव। ततः प्रातरुपाश्रये गत्वा तपोधनहक्तित्यतं पाद्रोदकं पीतम्।
प्रभुनमस्कृतः। धर्मलाभपूर्वमित्यादिदेश-यतो दश्रहस्तान्तरे पयःपानेन तव पुत्रो दश्रयोजनान्तरे यम्रनापरतीरेऽनेकप्रभावनिधानं वर्द्धिष्यते। तथान्ये तव पुत्रा नव मविष्यन्ति। तयाऽभाणि-प्रथमपुत्रो भवतां दत्तः।
गुरुभिर्भणितम्-संघमुख्यो भविता। जातः पुत्रः। प्रभूणामपितः। अष्टवार्षिको नीत्वा शुभलग्ने प्रवज्यां दत्त्वा
20 च मण्डननामगणिसमीपे मुक्तः पठनाय। वर्षमध्ये श्रुतपारगो जातः। अन्येद्यरारनालं गुर्वादेशेनानीयेर्यापथिकीं
प्रतिकम्य गुर्वग्ने गाथां पठितवान्-

(२८३) अंबं तंबच्छीए अपुष्पिअं पुष्पदंतपंतीए। नवसालिकंजीयं नववहृइ कुडूएण मे दिन्नं॥

इति श्रुत्वा गुरुभिः प्राकृतशब्देन पिल्नो इति-शङ्काराधिना प्रदीप्त इत्युक्तः । ततोऽसौ दशमे वर्षे पदस्था25 पनायां मथुरागमने सङ्घोपकारं [कृ]त्वाऽऽकाशगमनिसद्धौ कितिचिदिनानि स्थित्वा पाटलीपुत्रपत्तने गतः । तत्र
मुरंडो राजा । तस्य केनापि गुप्तमुखदंडकार्पणे प्रभुणा श्रीपादलिप्तेन उष्णोदकेन मदनं स्फेटियत्वा बुद्धोन्मोचने
तथा गंगेटीसमा(१)गुरूणां समीपे मूलपर्यन्तपरिज्ञापनाय प्रेषणे नद्यां तारियत्वा मूले बुद्धिते बुद्ध्या मूलं,परीक्षा ।
श्रीमदाचार्यस्तन्तुप्रथिततुम्बकोन्मोचने प्रहिते केनापि नोन्मुक्तम् । ततो मुरंडनृपितः समीपमागत्योन्मोचिते
प्रभूणां गौरवं चके । अन्यदा राज्ञः शिरोवेदनायां श्रीगुरुभिराकारितैः शिरोवेदनाविनाशार्थमात्मीयजानुस्त30 र्जन्या प्रनः पुनः स्पृष्टा-

(२८४) जह जह पएसिणिं जाणुअंमि पालित्तउ भमाडेइ। तह तह से सिरवयणा पणस्सए मुरंडरायस्स ॥



अन्ये मंत्ररूपामिमां गाथां जपन्ति, ततः शिरोवेदना याति । प्रभावतो राजा नित्यं भाक्तं करोति । एकदो-पाश्रयागतेन राज्ञा पृष्टम्-एते तपोधना भवतां भणितं दानमानादि विना कुर्वन्ति ? । इति पृष्टे गंगा कुतो वहति ? । तपोधनेन गंगायां गत्वा दण्डकं नारियत्वा—पूर्वाभिम्रुखी वहति—इति गुरोरम्रे कथितम् ।

(२८५) निवंपुच्छिएण भणिओ गुरुणा गंगा कओमुही वहइ। संपाइअव्वं सीसो जह तह सव्वत्थ कायव्वं॥

इत्थं नृपो गुरुभिः समं तिष्टन् दिनानि गच्छन्ति न ज्ञातवान् । अन्यदा लाटदेशे ओंकाराख्यनगरे प्रभवो बालैः समं कीडन्ति । देशान्तराद्वन्दितुमायातश्रावकाणामुत्तरं कृत्वा सिंहासनोपवेशे पुनरायातश्रावकोपलक्षणे वालः कीडतीति सत्यभाषणे बालग्ररीर्वचसा जहर्षः । अन्यदा गुरवो मार्गे गच्छत्स शकटेषु तपोधनेषु विहर्तुं गतेषु कीडनसमेतवादिनो विप्रतार्य पटीं प्रावृत्य सिंहासने सुप्ताः । बादिभिरागत्य पुनर्विभातकथकताम्रचूडस्रः (खरः) कृतः । प्रभुभिर्विडालखरे कृते बादिनो मानहीना जाताः । पश्रात्तेरुक्तं मध्ये कः? गुरुभिरुक्तम्-देवः । तैरु-10 कम्-को देवः? । गुरुभिरुक्तम्-अहम् । तैरुक्तम्-कोऽहम् । गुरुभिरुक्तम्-का देवः? । गुरुभिरुक्तम्-कस्त्वम् । गुरुभिरुक्तम्-देवः । इति पुनरावृत्त्या निर्जिताः । तथापि गाथामेकां पप्रच्छः-

(२८६) पालित्तय कहसु फुडं सयलं महिमंडलं भमंतेणं। दिहो सुओं व कत्थिव चंदणरससीअलो अग्गी॥

सूरयोऽविलम्बेनोत्तरं ददुः-

(२८७) अयसाभिओगमणद्मिअस्स पुरिसस्स सुद्धहिअयस्स । होइ बहुं तस्स फुडं चंदणरससीअलोअग्गी ॥

इति वादिजयः कृतः।

§ २११) अन्यदा श्रीशचुअये तीर्थयात्रां कृत्वा कृष्णभूपरिक्षतं मानपे(के)टपुरं श्रीपादिलप्तपुरवः प्राप्ताः । तद्व शचुअये रैवतके संमेतेऽष्टापदे च तीर्थयात्रां चिक्रिपवः सुराष्ट्रादेशमायाताः । तत्र ढंकानामपुरीं विहरन्तः समेतास्त्र नागार्जनो योगी भावी गुरुशिष्यः । तह्नुचं चेदम्—संग्रामराजपुत्रः, प्रिया सुन्नता, श्रेपाहि-20 स्प्रमस्चितपुत्रस्य नागार्जननामकरणम् । स वर्षत्रयदेश्यः क्रीडन्—सिंहाभकं विदार्य तन्मांसं खादन् पितृवारितः । यत्थ्व कुरु नसी न भक्ष्यते । तदायातसिद्ध पुरुषेणाष्ट्यातम्—मा विपीद, तव पुत्रो रसिद्धो भावी । तद्व कलाविद्धिः कुर्वन् संगीतं रसिद्धो जातः । सृरिं तत्रायातं ज्ञात्वा पर्वतभूमौ स्थितः । खशिष्येण पादलेपेच्छुः तृणरत्वपात्रे सिद्धरसं ढौकितवान् । गुरुणा स्थित्वा भित्तावास्काल्य शतखण्डे कृते शिष्यं विच्छाय सुस्तमावर्य्य भोजनं दापियत्वा व्यावर्तमानस्य काचपात्रे निरोधं कृत्वा प्राप्तु प्रेपितम् । उद्घाट्य विलोकिते क्षारगन्धेन निरोधं 25 ज्ञात्वा कुम्पको भगः । दैवयोगाद्वित्तंयोगे सा समृता मृत् सुवर्णं जाता । नागार्जनेन ज्ञातम् । तस्य प्रभोर्मलम् त्रादिसंगेन पाषाणादयोऽपि सुवर्णोभवन्ति । अहमेतावन्ति दिनानि यावदनेकोपधोपक्रमं सुधा कृतवान् । अस्य प्रभावे का कथा । ततोऽसौ विनयनम्रो मदं त्यक्त्वा प्रभुपादसेवाचरणक्षालनादिकां देहशुश्रुषां करोति । श्रीसरयः साधुषु विहर्तुं गतेष्वाकाश्चयानेन पूर्वोक्तपंचतीर्थेषु यात्रां कृत्वा नित्यमायान्ति । ततो नागार्जनः पादल्योपधानि जिज्ञासुश्वर्यक्षिणां वित्ता सिद्धः । गुरुणोक्तम्—अहं तव बुद्धा तुष्टो विद्यां ददामि । यदि मे जिनशासन-भाक्तं गुरुदक्षिणां ददासि । यतः । यतः भाक्त-भाक्तं गुरुदक्षिणां ददासि । यतः ।

20

(२८८) दीहरफणिंदनाले महिहरकेसरिदसामुहदलिले । ऑपिअइ कालभमरो जणमयरंदं पुहइपउमे ॥

ततो विश्वहितं जिनधर्ममाद्रियस्व । तेनोक्तम्-पूज्यादेशः प्रमाणम् । ततो गुरुणोक्तम्-आरनारुमिश्रतन्दुरुं-नैकेनौषधानि पिष्टा पादलेपे खगमनसिद्धिः । ततस्तेन कृतज्ञतया विमलाद्रिसमीपे महासमृद्धं श्रीवीरप्रतिमाधि-5 ष्टितं गुरुमूर्तियुतचेत्यान्वितं श्रीपादलिप्ताभिधं पुरं चक्रे । तत्र श्रीवीराग्रे श्रीगुरुभिः श्रीवीरस्तवश्वके । 'गाहाजु-अलेणे'त्यादि । अत्र सुवर्ण्णसिद्धिराकाशयानं च गुप्तमस्ति । तथा गुरोः श्रीनेमिचरितं श्रुत्वा कौतुकाद्रैवतकाद्रे-रथः स्वर्णसिद्ध्याकाशयानवलेन सर्वं दशार्णमण्डपादि नागार्जनश्वके । अद्यापि लोकेस्तत्सर्वमप्यालोक्यते ।

§ २१२) अन्यदा प्रतिष्ठानपुरे श्रीशातवाहनराज्ये चत्वारः शास्त्रसंक्षेपकृतो महाकवयः समेताः । राज्ञः पुरत्तैः श्लोकस्यैकैकः पादः पठितः । तथाहि─

(२८९) जीणें भोजनमात्रेयः, कपिलः प्राणिनां दया। बृहस्पतिरविश्वासः, पंचालः स्त्रीषु माईवम्॥

एवं तदुक्ते राज्ञा महादाने द्वे भोगवती वाराङ्गना न स्तौति । केवलं पादलिप्तानेव स्तौति । तं मुक्तवाऽऽकाशगामी विद्यासिद्धो महाकविः सर्वगुणनिधिरन्यो न हि । इति ज्ञाते राज्ञः सन्धिविग्रहकः शंकरी नाम मत्सरी
असहमानोऽवादीत् । ततो मानखेटपुरात् कृष्णभूपितं मुत्कलाप्य शातवाहनेन श्रीपादलिप्ता आनीताः । नगर15 द्वारे बृहस्पतिविद्धान् परीक्षार्थं रोप्यकचोलके घृतं विलीनं प्रहितवान् । प्रभुभिद्धारिणीविद्यया तन्मध्ये सूत्रप्रोतां
सूचीं प्रक्षिप्य प्रहिता । इति जये भूपः प्रवेशं महोत्सवेन कारितवान् । उपाश्रये स्थिताः । नित्यं भूपथरणोपासि
कुरुते । तत्र नव्या 'तरङ्गमाला कथा' कृता, व्याख्याता च । पाश्चालकविः मत्सरेण न स्तौति । मद्भन्थाद्
उद्धत्यानेन कृता । अन्यदा कपटमृत्युना प्रभूणां तद्गृहद्वारे शिविकागमने पाश्चालेन शोकाद् उक्तम्-

(२९०) आकरः सर्वशास्त्राणां रत्नानामिव सागरः। गुणैर्न परितुष्यामो यस्य मत्सरिणो वयम्॥

तथा-

(२९१) सीसं कहव न फुटं जमस्स पालित्तयं हरंतस्स । जस्स मुहनिज्झराओ तरंगलोला नई वृढा ॥

पाश्चाल! तव वचनाद् अहं मृतोऽपि जीवित इति गुरोरुत्थाने महीश्रुजा निष्कास्प्रमानो मित्रं भणित्वा 25 पाश्चालो गुरुभिद्रानमानाभ्यामावर्जितः। ततो गुरवो निर्वाणकलिकाम्, सामाचारीम्, प्रश्नप्रकाशज्योतिःशास्तं च कृत्वा आयुःक्षयं परिज्ञाय नागार्जनेन समं श्रीशत्रुज्जयं गताः। तत्र नाभेयं नत्वा द्वात्रिशहिनान्यनशनं कृत्वा देहं ग्रुक्त्वा द्वितीयकल्पे इन्द्रसामानिकः सुरो जातः।

॥ इति श्रीपादलिप्तगुरूणां प्रवन्धः॥

(G.) सङ्ग्रहे पादलिप्तसूरिवृत्तम् ।

30 § २१३) एकदा श्रीपादलिप्तसूरयो यात्रायां गगने गच्छन्तः पुरुपाकारच्छायया दृष्टाः । ततो नागार्जुनेन वन्दन-हेतोः प्रार्थिताः । तरुक्तम्-यात्रां विधाय वलंतः समेष्यामः । तथाविहिते कृटबुद्धा जलेन स्वागतिमपाचरण-प्रक्षालनं कृतम् । तद्वर्ण्णगंधरसास्वादतः सप्तोत्तरशतमौपधीनां परिज्ञातम् । वतस्ताः सर्वा अपि संमील्य चरण-

Region for the Arts.

हेपोऽकारि । तदनु स दर्दुरवदुत्पुत्य पतितः । एवं गुरुभिर्दृष्टः । गुरुभिरुक्तम्-किमेतत् ? । तेन निजक्दं प्रका-शितम् । गुरुभिः सुशिष्यं विज्ञाय तन्दुलजलेन लेपः कथितः । ततो गगनगामिनी विद्याऽजनि ।

एकदा वर्षासु पौषधशालाद्वारि जले क्रीडमानं शिष्यप्रायं पृष्टाः कैरिप वादिभिः-श्रीपालित्तय स्रिवरा वसतौ संति ?-इति पृष्टाः स्रयः तानन्यमार्ग्गेण वाहियत्वा स्वयं सिंहासने कपटिनद्रया सुप्ताः । तैः समागत्य कुर्कुटस्वरो विहितः । श्रीस्रिमिम्मार्जारस्वरोऽकारि । वचनेन भिक्षताः । ततः पृष्टमिति । तद्यथा-'पालित्तय कहसु फुडं० ॥' ततो गुरुभिरुक्तम्-'अयसाभिओगसंतावियस्स० ॥' एतया नमस्यया पराजिताः । नमो विधाय गताः ।

४५. श्रीअभयदेवसूरिप्रबन्धः (B. Br.)

§ २१४) श्रीबुद्धिसागरस्रिमिः श्रीजिनेश्वरस्रिभिश्च वसतिनिवासे कृतेऽन्यदा श्रीजिनेश्वरस्रयो विहारेण धारापुरीं गताः। तत्र श्रेष्ठी महीधरः, भार्या धनदेवी, तत्पुत्रोऽभयकुमारनामा। अन्यदा श्रेष्ठी गुरुवन्दनाय गतः। 10 संसारमसारमाकण्यं वैराग्यवानभयः पितरमाएच्छ्य दीक्षाग्रहणे ग्रहणासेवनारूपशिक्षाद्वयपुतः समग्रसिद्धान्त-पारगामी महािकयो जातः। गुरुभिराचार्यपदस्थापने श्रीअभयदेवस्रिविंहरन् पत्यपुरे श्रीवर्द्धमानस्रिषु दिवं गतेष्वभयदेवस्ररीणां तत्र स्थितानां महादुर्भिक्षे सिद्धान्तास्तद्भृत्तयोऽपि त्रुटिताः। यदवस्थितं तदिष दुःखवोध-त्वात् खिलं जातम्। शासनदेवी रात्रौ प्रभुं जगौ—यदङ्गद्वयं मुक्तवा नवाङ्गानां दृत्तं कुरु । स्रिराह्-श्रीसुधर्म-स्वामिकृतसिद्धान्तविवरणे मन्दमितत्वादुतस्त्रप्ररूपणादनन्तसंसारित्वम्। परं त्वामनुखङ्कयां करिष्यामि। देव्यो-15 कम्—यत्र सन्देहस्तत्राहं सर्चव्या। यथा श्रीसीमन्धरस्वामिपार्श्वाद् सन्देहभङ्गं कुर्वे । प्रभुभिर्ग्रन्थपूर्णताविं यावदाचाम्लाभिग्रहोऽग्राहि। समपूर्णेषु ग्रन्थेषु शासनदेव्या पुस्तकलेखनाय रत्नखचिता स्वर्णमयी ऊतरी समव-सरणे मुक्ता। सर्वत्र दिश्वता कोपि मूल्यं न कुरुते। तथा राजमहाराजश्री[भी]मेन द्रम्मलक्षत्रयदाने पुस्तकानि लेखियत्वा समग्रदेशाचार्याणां दत्तानि।

§ २१५) अथ श्रीअभयदेवसूर्यो धवलकके आगताः । आचाम्लतपसा रात्रिजागरणेन च प्रभूणां रक्तविकारो 20 जातः । तदा जनो वदति—यदुत्स्त्रप्ररूपणया शासनदेव्या रुष्टया देहं विनाशितम् । गुरुभिः शोकेनाऽनश-नार्थं रात्रौ धरणेन्द्रः स्मृतः । तेन सर्परूपेण देहलिहने गुरुभिर्ज्ञातम्—कालेन दष्टः । धरणेन्द्रेण खमे आदिष्टम्—यन्मयाऽयं तव रोगो प्रलः । एकं जिनोद्धारं कृत्वा प्रभावनां कुरु । श्रीकान्तीपुरीयधनेन वणिजा समुद्रान्तरा यानपात्रल्यमे व्यन्तरोपदेशेन धनेन मूर्चित्रयमाकृष्टम् । एका चारूपप्रामे । द्वितीया श्रीपत्तने अविलीतले श्रीनेमिनः । तृतीया स्तंभनप्रामे सेडिकानदीतटे तरुजाल्यन्तरा भूमिमध्ये न्यस्ताऽस्ति तां प्रकाशय । अत्र 25 महातीर्थं भविष्यति ।

(२९२) पुरा नागार्जुनो योगी रससिद्धो घियां निधिः। रसमस्तम्भयद्भूम्यन्तःस्थविम्बप्रभावतः॥

ततः सम्भनकाख्यो ग्रामस्तेन न्यसः। तदेषाऽपि तव कीर्त्तिः स्यात्-शाश्वती पुण्यभूषणा। अन्यादृष्टा वृद्धा सुरी मार्गं कथयिष्यति । श्वेतश्वारूपः पुरः क्षेत्रपालोऽपि प्रातः संघस्य पुर आयातः। वाहनसहस्तेकयुताः ३० सरयो वृद्धा-श्वेतश्वानदार्शितमार्गाः सेडीतीरमायाताः। वृद्धा-श्वानौ तिरोहितौ। तत्र गोपालाः पृष्टाः-यत् किमीप पूज्यमस्तीह १। तेषामेकेनोक्तम्-अत्र जाल्यां किमप्यस्ति। यतोऽत्र ग्रामे महिणल्लपट्टिलकस्य गौर्नित्यं चतुर्भिस्तनैः क्षीरं क्षरति। गृहे न दुद्धते। तत्र तैः क्षीरं दृष्ट्वोपविषय श्रीमदाचार्यैः 'जयतिहुअण ०' इत्यादिवृत्त-

20

25

द्वात्रिंशता स्तवे कृते श्रीपार्श्व प्रकटीभूते, समग्र [सङ्घ] सिहतेर्वन्दिते, देहरोगो गतः । तत्र स्नात्रपूजाद्यं कृत्वा प्रासादार्थं द्रव्यं मीलियत्वा मिहपपुरात् श्रीमल्लवादिशिष्य आम्रेश्वराभिधो नियुक्तः । कर्मान्तरं कारयामास । श्रुमे मुहूते श्रीअभयदेवसरयो विम्बं स्थापयामासः । धरणेन्द्रादेशात् स्तोत्रमध्याद्वृत्तद्वयं मन्त्रगर्भितं निस्काशितम् । तस्मिन् प्रत्यक्षीभवने, त्रिंशद्वृत्ता स्तुतिर्जाता । सा पत्र्यमाना क्षुद्रोपद्रविनाशिनी । ततः प्रभृत्यदस्तीर्थं मनोवाञ्छितपूरणं जातम् । रोगशोकादिदुःखदावघनाघनः । अद्यापि कल्याणके प्रथमकलशो धवलक्रकीयस्य सङ्घस्य । विम्बासनस्य पश्चाद्धागेऽक्षरपंक्तिरतिह्यात् श्रूयते । पूर्वं कथैषा प्रथिता जने ।

(२९३) नमेस्तीर्थकृतस्तीर्थं वर्षे द्विकचतुष्टये । (२२२२) आषाढश्रावको गौडोऽकारयत् प्रतिमात्रयम् ॥

(२९४) श्रीमानभयदेवोऽपि शासनस्य प्रभावकः। पत्तने श्रीकर्णराज्ये घरणोपास्तिशोभितः॥

(२९५) विधाय योगनीरोधं धिकृतापरवासनः। परलोकमलंचके धर्मध्यानैकधीनिधिः॥

॥ श्रीअभयदेवस्रिवन्धः ॥

४६. वाग्भटवैद्यवृत्तम् (G.)

15 §२१६) पुरा मालवके वाग्मटनामायुर्वेदवेदी प्रथमं कुपथ्येन निजदेहे रोगानुत्पाद्यति, औषधेन पुनिन्वारयति । एवमेकदा जलोद्रसुत्पादितम्, तदौषधं विहितम् । कुटुंबकस्येति उक्तं च-यन्मम चतुःप्रहरं यावत् जलं याचितमपि न देयम् । दैवयोगेन कुटुंबस्य तद्वचो विस्मृतौ गतम् । प्रहरचतुष्टयानन्तरं जलोद्ररे क्षीणेऽपि जलं न पायितः । पिपासापीडितो मृतश्र । अतः-

(२९६) कचिदुष्णं कचिच्छीतं कचित् कथितशीतलम्। कचिद् भेषजसंयुक्तं कचिद्वारि न वारितम्॥

§२१७) राज्ञः श्रीभोजस्य सिंहद्वारि वाग्भटवैद्यपरीक्षार्थमिश्वनीकुमारौ पक्षिरूपं विधाय नित्यं नित्यं वारत्रयं 'कोऽभुक्' इति रवं विधाय गच्छतः । राज्ञा तदनवगत्य सर्वेऽपि विद्वांसः पृष्टाः । कोऽपि किमपि न कथयति । तदा वाग्भटेनोक्तम्-

(२९७) अशाकभोजी घृतमत्ति योऽन्धसा ' पयोरसान् शीलति नातिपोऽम्भसाम्। अभुक् विरुट् वातकृतां विदाहिनां मलप्रमुक् जीण्णभुगल्पशीररुक्॥

ततोऽश्विनीकुमाराभ्यां निजरूपमाविर्भूय वाग्भटोऽतिप्रशंसितः।

§ २१८) अथ वृद्धवाग्भटजामात्रा लघुवाग्भटेन कृष्णच्छायाप्रवेशदर्शनेन राज्ञः क्षयरोगोत्पत्तिर्निवेदिता । 30 राज्ञोक्तम्-ततो मम वर्षत्रयमेवायुरस्ति । तेनोक्तम्-नैवं राजन्!

(२९८) यावदुच्छुसति प्राणी तावत् कुर्यात् प्रतिकियाम् । कदाचिद्देवयोगेन दष्टारिष्टोऽपि जीवति ॥

婚

रसं विधाय देवं निरामयं विधास्थामि । रसे जाते रसं गृहीत्वा राजसदसि समागतः । तत्रागतेन रसक्रपको भग्नः । राज्ञोक्तम्-आः क्रिमेतद्विहितं भवता १ । तेनोक्तम्-राजन् ! किमौपधेन कार्यम् १ । देवो निरामयो जातः । रस्गन्धदर्शनेन च कृष्णच्छायासिमात् क्षयरोगो निःसृत्य गतः ।

एकदा श्रीनृपस्य शिरिस शिरोत्तिरतीय जाता। ततो वाग्भटेनोक्तम्—राजन्! शिरिस दर्दुरी जाताऽस्ति। तत-स्तेन शस्त्रकर्मणा तालु उत्तारितम्। दर्दुरी दृश्यते परं न निःसरित। धर्तुं न शक्यते। तद्यु जलभृतस्थालं ५ धृतम्। तत्रापि नायाति। ततो जामात्रा लघुवाग्भटेन तद्वलोक्य निजरुधिरभृतस्थालं दर्शितम्। तद्गन्धेन सा तत्रागता। राजा निरामयो जातः। ततः पृष्टेन लघुवाग्भटेनोक्तमिति—यदियं रक्तजा, रक्तं विना जले नायाति। ततः प्रमुदितो वृद्धवाग्भटः सकला अपि कलाः शिक्षयति।

४७. रैवततीर्थप्रवन्धः (P.)

§ २१९) अथ श्रीनेमे रैवतकाचलस्थस्योत्पत्तिर्यथा-भारते क्षेत्रेऽतीतचतुर्विश्वतिकायां तृतीयतीर्थङ्करसागर-10 समये उज्जयिन्यां नरवाहनो नृपः । अन्यदा तसिन् पुरे सागरजिनः समवसृतः । स नन्तुं ययौ । व्याख्याया-मतु केवलिपर्षदं वीक्ष्य पृष्टम्-प्रभोऽहं केवली कदा?। खामिनाऽऽदिष्टम्-आगामिचतुर्विशतिकायां श्रीनेमिजिन-तीर्थे निर्वाणं ज्ञानं च भविष्यति । इति ज्ञात्वा ततस्तसिन् भवे श्रीसागरतीर्थेश्वपार्श्वे दीक्षां गृहीत्वा, तपः कृत्वा, पश्चमदेवलोके दशसागरोपमायुरिन्द्रो जातः । तेन तत्र स्थितेनाविधज्ञानेन पूर्वभवं ज्ञात्वा वज्रमयीं मृत्तिकामानीय श्रीअरिष्टनेमिपूजानिमित्तं विम्वं कारितम् । खर्गे दशसागरोपमं यावत्पूजितम् । आत्मनश्रायुःप्रान्तमविधना 15 विज्ञाय श्रीनेमेदीक्षा-ज्ञान-निर्वाणकल्याणकत्रयस्थानं विलोक्य श्रीरैवतकगह्नरे खर्गानेमिप्रतिमां गृहीत्वा समेतः । तत्र गह्वरमध्ये चैत्ये गर्भगृहत्रयं कृत्वा रत्न-मणि-खर्ण-मयविम्बत्रयं कृत्वा तत्र [स्थापितं]...... काञ्चनवलानकं कृतम् । तत्र वज्रमृत्तिकामयविम्बं स्थापितम् । ततः स इन्द्रः स्वर्गाच्युत्वा बहु संसारं आन्त्वा श्रीनेमितीर्थसमये महापल्लिदेशे क्षिति[पु]रनगरे.....शीनेमिस्तत्र समवसृतः । पुण्यसारो वन्दितुं समागतः । श्रीनेमिना उपदेशो दत्तः । श्रीनेमिपार्श्वे धर्मावाप्तिः । पृष्टाः खामिनः पूर्वभववृत्तान्तः...... 20 रैवतके गत्वाऽऽत्मकृतं नेमिविम्बं पूजयित्वा नमस्कृत्य खनगरे समागत्य, सुतं राज्ये निवेश्य, नेमिपार्थे दीक्षां गृहीत्वा, तपसा कर्माक्षयं कृत्वा र्जितम् । मोक्षं गतः । श्रीनेमे रैवतकाचले कल्याणत्रिकं सम-जिन । पुण्यवद्भिस्तत्र लेप्यमयं विम्बं चैत्यं च कारितम् । लोके च पूज्यमानं जातं......कसीरदेशात् कल्प-प्रमाणेन रैवतकगिरौ श्रीनेमिं नमस्कर्तुं समागतः। तत्र विम्बं स्नात्रजलेन गलितं दृष्ट्वा मासद्वयक्षपणं कृतं.....खर्णमयं विम्बं समानीय खापितम् । यतः-

> (२९९) नववाससएहिं नवुत्तरेहिं रयणेण रेवयगिरिम्मि । संठविअं मणिविंबं कंचणभवणाओ नेऊण ॥

तथा वामनावतारे वामनेन रैवते श्रीनेम्यग्रे बलिबन्धनसामर्थ्यार्थं तपः कृतम्।

४८. देव्यम्बाप्रबन्धः (B. Br.)

§ २२०) सुराष्ट्रामण्डले कोडीनारपुरे सोमभट्टो द्विजः । स श्रावकस्य देवशर्मद्विजस्य पुत्रीमम्बिकानाम्नीं 30 परिणीतवान् । पुत्रद्वयमस्ति । इत एकदा तस्य गृहे किश्चित्पर्वास्ति । तत्र पाके निष्पने तपोधनौ विहर्तुमायातौ । श्रश्च गृहे नास्ति । अम्बया महाभक्त्या प्रतिलाभितौ । प्रातिवेदिमकया श्वश्र्वग्रे निवेदितम् । वैश्वदेवेऽपूजिते प्राप्ति । अम्बया महाभक्त्या प्रतिलाभितौ । प्रातिवेदिमकया श्वश्र्वग्रे निवेदितम् । वैश्वदेवेऽपूजिते प्राप्ति । अम्बया महाभक्त्या प्रतिलाभितौ । प्रातिवेदिनमकया श्वश्र्वग्रे निवेदितम् । वैश्वदेवेऽपूजिते ।

द्विजेष्वभुक्तेषु श्र्द्राणामत्रं दत्तम् । एषा वध्ः न सामान्या । तयाऽऽराटिः कृता । सोमभट्टे समायाते उक्तम् । तेन तातादिना ताडियत्वा निष्कासिता । सा सुतद्वयमादाय, एकं कट्यां कृत्वा परमङ्गुल्यां, निःसृता । श्वश्र्वा पुत्रः पृष्ठे सानुतापया प्रहितः—त्विरतं गत्वा सैमानय । इतः शिशुः सुतस्तृपितो नीरमयाचत । तया श्रीनेमिचरणौ स्मृत्वा मही पादेन दारिता । दीर्घिका प्रादुर्वभूव । सुतो नीरं पायितः । वृद्धेनरेक्तम्—अहं क्षुघितः । तत्राष्रः प्रकटीवभूव । तत्र सहकारलुम्बि गृहीत्वा पुत्रायार्पयत् । इतः पाश्रात्ये प्रियमायान्तं दृष्टा भीता श्रीनेमिपादौ स्मृत्वा कूपे पुत्रैः सह झम्पां ददौ । सोऽपि स्त्री-भूणघातिनं स्वं मन्यमानः पृष्टौ झम्पां ददौ । अम्बा रैवतके श्रीनेमिचैत्येऽिष्ठात्री जाता । सोमस्तस्या वाहने सिंहो जातः ।

॥ इति देव्यम्बाप्रबन्धः ॥

४९. उज्जयन्ततीर्थात्मकरणप्रबन्धः (P.)

§ २२१) सुराष्ट्रायां गोमण्डलन[ग]रे सप्तशतयोधैः सह सप्तपुत्रावृतस्त्रयोदशशतशकटयुतस्त्रयोदशकोटीस्वामी धारानामा श्रावकः सङ्घं कृत्वा तीर्थ[न]मस्यै गतः । विमलाद्रौ युगादिं नत्वा रैवततलहिङ्कायां स्थितः। तीर्थं दिग्वस्नैः पूर्वमधिष्ठितमस्ति । तैरपि पश्चाशद्वर्षभोगात् पश्चाद्वौद्धान् वादे जित्वा आत्मायत्तं कृतम् । दिगम्बराणां द्वादशवर्षाणि जातानि । श्वेताम्बरीयधाराकेनोक्तं चतुरशीतिमण्डलाचार्याणां समीपे-यदहं देवं नन्तुं समेतः । तैरुक्तम्-दिगम्बरीभृयागच्छ । तेनाचिन्ति-प्राणान्तेऽपि खगुरुलोपं न कुर्वे । अन्यदुज्जयन्तर्नातं 15 विना गृहे न यामि । चिन्तार्तो जातः । पुत्रैरूचे-किं कारणम्? । हे पुत्रास्तीर्थं नन्तुं न लभ्यते । पुत्रैरुक्तम्-दिग्वस्नाधिष्ठिते तीर्थेऽपि किं कार्यम्? । तातेन कथितम्-पूर्वमात्मीयमेव, इदानीमेभिरधिष्ठितम्। एवं तिहं बला-दिप यास्यामः, चिन्ता न कार्या। तत्पुत्रैर्मण्डलाचार्याणां कथापितम्-यद्भयं बलादिप तीर्थं वन्दिष्यामहे। तैर्निजभक्तसंगारस ज्ञापितम्। तेन किञ्चित्सैन्यं प्रहितम्। तैः पुत्रैस्तस्य सैन्येन साकं युद्धं प्रारब्धम्। सप्त पत्राः सप्तश्चतयोधसहिता मारिताः। सङ्घपतिर्धाराको न भुङ्के । तृतीयोपवासेऽम्बिकयाऽभाणि-वत्स ! कन्यकुज्ञ-20 देशे गोपालपुरे आमो राजा । स पूर्वभवे भृण्डपर्वते तपस्वी तपस्तावा नृपोऽभूत । तस्य पार्श्वे बप्पभट्टिस्रयः सन्ति । तैरेते जीयन्ते नान्येन । एतेषां मन्त्रा व्यन्तराश्च सबलाः । इति ज्ञात्वा तत्र गच्छ । धाराकः सङ्घं मुक्तवाऽष्टश्रावकैः सह तत्र गतः । श्रीसूरयस्तदा आमराजस्य सभायाश्राग्रे रसेन व्याख्यां कुर्वाणाः सन्ति । धारा-केन नत्वा सङ्घाज्ञा तेषां दत्ता । राज्ञा साक्षेपमैषिष्ट । आचार्येस्तत्पार्श्वतो वृत्तान्तः पृष्टः । तेन समूलं वृत्तान्त-मुक्तम् । राज्ञा स्वभावश्रवणरैवतप्रभावाकर्णनहर्षपूरवशादिभग्रहो गृहीतः -श्रीनेमिनतिं विना न भोक्ष्ये । तद्भा-25 र्यया कमलादेच्या कथितम्-सोमेश्वरनमस्करणं विना न भोक्ष्ये। ततः सर्वेऽपि चलिताः। लक्ष १ पोठियां, उष्टसहस्र २०, हस्ति ७००, घोटक लक्ष १, पदाति लक्ष ३, श्रावकसहस्र २०। राजा त्रिंशत्तमे दिने स्तम्भ-तीर्थे आगतः । रात्राविन्वकयाऽभाणि-राजन ! श्रीनेमिस्तव सत्त्वेनात्रैष्यति । प्रभाते पारणं कार्यम् । यत्र च गृहली पुष्पप्रकरश्रोपरि त्वया तत्र खनितव्यं हस्तेन नेमिः प्रग(क)टीभविष्यति । प्रभाते तदेव जातम् । नेमिं नतः । राजपल्याऽभाणि-स्वामिन्! पारणं क्रियताम् । त्वां विना कथं करोमि । तत् क्षणात्सोमेश्वरलिङ्गः प्रादु-30 रभूत । तिहने नदीस्थाने सोमनाथेन न्छिरा (१) नीतो अभिज्ञानाय । तत्रेभ्यानां देवकुलद्वयकृते द्रव्यमर्पितम् । एतसिन्पुरे प्रासादद्वयं कारयितव्यम् । यथा वलमानाः पश्यामः । ततः प्रयाणकं जातम् । सङ्घसमीपे मानुषं प्रहितम् । स्रिरिमिर्मण्डलाचार्यपार्श्वे-यदि युध्यते तदा बहुजीवसंहारो भवतिः अतो वादे जय-पराजयौ ज्ञेयम् । सभ्याः कृताः । मासं यावद्वादो जातः । श्रीनृषेण धाराकेन च प्रभूणामग्रे विज्ञप्तम्-बहवो दिना जाताः । प्रभुणाऽ-भाणि-अद्य निर्वाहियिष्यामि । एकत्रिंशे दिने प्रभ्रणा भणितं मण्डलाचार्याग्रे-यदद्य मण्डले कुमारी उपवेश्या ।

Description Ace

कुमारी यस तीर्थं दत्ते तस्य तीर्थं जातम् । तैर्भणितम्-एंतत्प्रमाणम् । प्रथमं दिग्वस्त्रमण्डले मण्डिता कुमारी । पात्रं नापूरि तैः । ततः श्रीबप्पभद्वस्रयो वसतौ ध्याने उपविष्टाः । सङ्घेशो वासान् दत्त्वा प्रहितः । तेन कन्या-श्रीर्षे वासाः क्षिप्ताः । ततः पात्रेणाभाणि-

- (३००) इक्कोवि नमुकारो जिणवरवसहस्स वद्धमाणस्स । संसारसागराओ तारेइ नरं व नारिं वा ॥
- (३०१) उर्जितसेलसिहरे दिक्खा नाणं निसीहिआ जस्स । तं धम्मचक्कविद्वं अरिट्टनेमिं नमंसामि ॥

इति गाथाद्वयं तस्या मुखात्सर्वेरिष श्रुतम् । तिहनादात्मीयं तीर्थं सञ्जातम् । ॥ इति उज्जयन्ततीर्थात्मकरणप्रवन्धः ॥

५०. वज्रस्वामिकारितशत्रु अयोद्धारप्रबन्धः (P.)

10

§ २२२) अथैकदा दशपूर्वधराः श्रीवज्रस्वामिगुरवो मधुमत्यां नगर्यां समायाताः । श्रीशत्रुञ्जयदेवं नन्तुं गताः । देवं नमस्क्विद्धिभोंजमेकमागतं दृष्टम् । देवार्चकः पृष्टः –रे ! किमिदम् । देव ! प्रत्ययान् प्रयति । चिन्तितम् जिनशासनस्य मुख्यमिदं तीर्थम्, परं तत्र कपदीं मिश्यात्वी जातःः एतन्न सुन्दरम् –इति विचिन्त्य मुहुयानगरे , पुनरायातः । चिन्तितं ध्यानवलेन –अस्य तीर्थस्य क उद्धारः कर्ता ? । अस्य नगरनिवासी सौराष्ट्रिकप्राग्वाटो भावडश्रेष्टिपुत्रो जावडः । तं मत्वा देशनामध्ये उक्तम् । तच्छुत्वा जने गते जावडस्तु स्थितः –प्रभो ! यदादिष्टं 15 अन्यः कोऽप्यहं वा ? । भवानेव । भगवन् ! ममाष्टादश प्रवहणानि कापि सन्ति न वा, तन्न ज्ञायते । वर्ष १२ जातानि । अधुना भोजनमिषे कष्टेन भवति । स एवगृहे गतः । अङ्गशौचं कृत्वा यावदेवपूजायां प्रवृत्तः तावद्वर्धापनिकेनेत्युक्तम् –यत् प्रवहणान्यष्टादश क्षेमेणागतानि । श्रेष्टिना विम्बसाप्रे जलं मुक्तम् ।

(३०२) हूगरबालिण वलिणि वलि कित्तीसु अब्भडभंज। अत्तागमणु न जाणिउं तुह पनरह मुह पंच॥

20

यत्तेषु द्रव्यमेष्यित तत्तीर्थार्थे। अस्वा वाहणवस्त्न्युत्तार्य गुरूणां [पार्थे] गतः। प्रमो! योग्यता जाता। उद्धाराय यत्त्र्यम् । गुरुभिविंमृष्टम् – आदौ विम्बं पोतके (?) कियते। तन्नागपुरप्रत्यासन्नमकडाणाप्रामे मम्माणी-नामखाणौ विम्बं निष्प स्ते मृले द्रामलक्ष एकं व्ययति। तत्राश्वानवीरिकयेण (?) क्रीत्वा विम्ब-मानीयताम्। जाविडस्तु द्रव्यमादाय तत्र गतः। विम्बं क्रीत्वा आनिनाय। कपर्देरनुभावाद्धिम्बं यावतीं भूमिं दिने च[टिति] तावतीं रात्रौ पश्चाद्याति। गुरुभिरुक्तम् – श्रेष्टिन्! उपवासं कृत्वा धौतवसनानि परिधायकस्य 25 चक्रस्य तले त्वया स्थेयम्, अपरस्य श्रेष्टिन्या। प्रीतौ दम्पती तथा स्थितौ। तयो......िथतं स्वरूपेण। प्रातरुत्थायोपरि नीतम्। इतः श्रीवजस्तामी श्रीमरुदेव्याधिष्टायकं ध्यानवलाद्भोगवलाच स्वायत्तं चके। क्रमेण शेषा अपि स्वायत्तीकृताः। ते तु कपर्दिनमन्वेषयन्ति। स तं यातं वा। एवं पण्मासप्रान्ते कपर्दी क्रीडायां गतः। श्रेपव्यन्तरैः स्थानं श्चन्यं मुक्तम्। इतो लेप्यविम्बं मण्डपे समानीतं शैलमयं मध्ये स्थापितम्।

§ २२३) तत्र नृतनकपर्दी स्थापितः । स पूर्वं टीम्बाणाग्रामे-कोऽपि मधुमत्यां कथयति-कोलिक आसीत् । 30 तस्य द्वे भार्ये-एका हा[िंडः] अपरा कुहािंडः । स चीवरं प्रत्यहं वणयित । उभयतस्ताभ्यां प्रान्ताया.....करे मद्यभुम्भल्यो वर्त्तेते । यदा यस्याः समीपे स याति सा तदा तं पाययित । इतश्च सुव्रताचार्यास्तनुगमिकायां गताः । तैर्द्यष्ट्वा विमृष्टम् । एष अविरतः । अस्यायुः कियत् । घटीद्वयं विमृष्टय् आहू्य उक्तः-भोस्त्वया अनिच्छता

Contro for the Arts

ग्रन्थिवन्धनं कार्यं तत्र गतेनोन्मोचनं कार्यम् । नमो अरिहंताणं इति कथनीयं मुखे । इत्युद्त्वा सूरमो गताः । इतः शकुनिकागृहीतसर्पमुखाद्गरलं तन्मद्ये पपात । तेनाज्ञातेन पीतम् । स मृतः, अणपन्नी-पणपन्नीव्यन्तराणां मध्येऽवतीर्णः । इतः कलकलं कुर्वाणाः सर्वेऽपि राजभवनं ययुः । यदस्माकं कोलिको निरपराधो त्रतिभिर्मारितः । तेन अनार्येण सूरयो धृत्वा वधाय आदिष्टाः । स कोलिकस्तु नमस्कारप्रभावान्मृत्वा व्यन्तरो जातः । प्राग्भवं निरूप्य गुरूणां परिभवं दृष्ट्वा ग्रामोपरि शिलां चकार । राजप्रमुखः सर्वो जन आत्रों जातः । इतो व्यन्तरे-णोक्तं मारियण्यामि । कथम्? । मम गुरून् शीघं मुश्चत यथा न मारयामि । एते ममोपकारिणः । एतेषां प्रसा-दान्मया देवत्वं प्राप्तम् । ततः सर्वेर्गुरवः क्षामिता नृपप्रभृतिभिः । इति च लोकसमक्षं जगौ—

(३०३) मजासी मंसरओ इक्षेण वि चेव गंठिसहिएण। सोहं तु तंतुवाओं सुसाहुवाओं सुरी जाओं॥

10 व्यन्तरस्तु नमस्कृत्य गतः । स यक्षः कपर्दीनाम दत्त्वा श्रीवज्रखामिभिस्तीर्थे स्थापितः । इतः पूर्वकपर्दी आयातः । विम्वपरावृत्तं दृष्ट्वा आरार्डि विधाय निस्मृतः । तदा पर्वतस्तु द्विधा जञ्जे । सदाफला वनस्पत्यिप तदा ज्वलिता । अतः कपर्दिना गुरव उक्ताः—प्रभो ! ममापराधं क्षान्त्वा इहैव मां स्थापयत । गुरुभिरुक्तम्—त्वमन्दिः । तव मिथ्यात्वं गच्छतो वारा न लगति । त्वमाऽत्र न कार्यम् । अहमन्यत्र गत उद्वेगकारी भविष्यामि । गुरुभिरुक्तम्—त्वं याहि । ततः स देवपत्तने गतः । तत्र तैर्व्यन्तरैरपरद्वारे क्षेपितः । तत्र कपर्दिवारिका । ज्ञाता । इतः प्रतिष्ठा जाता । तथा महाध्वजवेलायां श्रेष्टी सपत्नीक उपरि गत्वा नर्त्तितुं प्रवृत्तः । ततः पूर्वकप्रविनाऽपहत्य क्षीरोदार्णवे क्षिप्तः । लोके इति ख्यातिर्जाता—भौतिकेनापि पिण्डेन स्वर्गं गतः । एवं द्रम्मलक्ष १९ व्ययेन श्रीयुगादिदेवविम्वं प्रतिष्ठाप्य स्थापितम् ।

॥ इति श्रीशत्रुञ्जयोद्धारप्रवन्धः॥

५१. कपर्दियक्ष-जावडिप्रबन्धः (Br.)

20 § २२४) मधुमत्यां नगर्यां कपिंदामा कोलिकः । आिंड-कुहािंडनाम्यौ कलत्रे अभक्ष्यापेयसक्तः । तत्प्रस्तावे योगन्धराचार्यास्समाजग्धः । अन्यदा तंगिणकायां गच्छद्धिः पूज्येभीर्यावचनेस्ताड्यमानः कोलिको दृष्टः । आचार्यं भिणितम् – अहो कोलिक ! आगम्यतामस्पत्समीपे । तेन चिन्तितम् – िकमिप याचिष्यन्ति वस्तादिकम् । आचार्येण श्रुतेन विलोकितम् – िकयदायुरस्य । ततः पश्यन्ति घिटकाद्वयं यावत् । अहो कोलिक ! प्रत्याख्यानस्य प्रथमं पदं नमो अरिहंताणं इति त्वया भणनीयम् । मद्यं पिवताऽभक्ष्यं भक्षयता ग्रन्थिश्छोटनीयः । नमो अरिहं- वाणमिति भिणत्वा भक्षणपानानन्तरं तथैव ग्रन्थिर्वन्धनीय इति प्रतिश्रुते, स्रिपु गतेषु शकुनिकागृहीतसर्पग्र- स्वाइरलं मांसखंडमध्ये पपात । तद्रक्षणादसौ मृतः । अणपन्नी-पणपन्नीव्यन्तरमध्ये प्रवलो व्यन्तरो जातः । अविधना दृष्टम् – गंठिसहितपसः प्रभावादहं देवो जातः । इतश्च तद्रार्याभ्यां राजकुले गत्विति कथितम् – महाराज ! पाखिष्डिभरावयोभिर्ता मारितः । किमिप कथितं तन्न जानीमः । मिथ्यादृष्टीनां च वचनात् राज्ञा गुसौ कृताः स्रयः । तेन व्यन्तरेणात्मशरीरमधिष्टाय राज्ञोऽग्रे भिणतम् – यन्महाराज ! क्षाम्यन्तां आचार्याः । अन्यथा अत्याद्यापिरि शिलां पातियिष्यामि । राज्ञा पादयोर्विलग्य स्रयः क्षामिताः । शिला संहृता । लोकविदिता गाथा भणिते –

(३०४) मंसासी मजरओ इक्केणं चेव गंठिसहिएण। सोहं तु तंतुवाओ सुसाहुवाओ सुरो जाओ॥



इति प्रभूणामग्रे नाटकं रचितम् । पश्चाद् ईदशं चोक्तम्-भगवन् ! मया किं कर्तव्यम् ? । प्रभुणोक्तम्-भो ! त्वया पाश्चात्यभवे बहूनि पातकानि कृतानि, तेषां शुद्धिहेतोः श्रीशत्रु अयमहातीर्थे सङ्घसाहाय्यकारी भव । तस्य कपदिनामा यक्षः सङ्घातः । अग्रीयकपदिना सह तस्य वर्ष १२ विग्रहः सञ्जातः । कोऽपि न पराजीयते ।

इतश्र मधुमत्यां नगर्या प्राग्वाटज्ञातीयश्रेष्ठी जाविडः, भार्या सीतादेवी, प्रवहण १८ प्रियत्वा समुद्रमध्ये प्रवहणसहितचित्रवल्ली (?) मध्येऽपतत् । क्रमेण वर्ष १८ सञ्जातानि । एकयाऽपि रीत्या निस्सरीतुं न शक्यते । 5 बहुनां देवानां आराधना कृता । पुनः कस्यापि साहाय्यं न जातम् । तदा चिन्तितम्-एकदा व्याख्यानमध्ये श्वेताम्बराचार्येरिति भणितम् । यृतः-'कान्तार०' इत्यादि । नृतनकपर्दिना रात्रौ स्वमं प्रदत्तम्-यदहो जावड ! यसिन् पक्षेऽभ्रं दृश्यते तसिन्पक्षे प्रवहणानि चालनीयानि । अग्रे पुनः ऋयाणकं वापितं जावडेन । प्रवहणानि लघुत्वेन न सश्चरन्ति । कसिंश्रिद्वीपे समागत्य छगणकर्करैर्भृत्वा पश्चमिदने समुद्रं निस्तीर्य मधुमत्यां नगर्यां समा-गतो जावडः । छगणानि सुवर्णीभृतानि, कर्करा रत्नानि सञ्जातानि । तदनन्तरं सङ्घं कृत्वा श्रीशत्रुञ्जये श्रीऋप-10 भदेवनमस्करणाय गतो जावडः। यावत् स्नात्रं करोति तावद् अग्रीयलेप्यमयविम्बस्य नासिका गलिता। महाविषादो जातः । एतस्मिन् प्रस्तावे दशपूर्वधरेण श्रीवजस्वामिनाऽऽदिष्टो जावडः-अद्य रात्रौ कपर्दियक्षस्य भोगं कृत्वा कायोत्सर्गे स्थीयताम् । तत्करणानन्तरं रात्रौ कपर्दिना भणितम्-यदहो जावड! मम्माणाकरे मम्माणनगरे बाह्ये पूर्वदिशि या राइणिर्विद्यते तस्या अधः फलहिका मम्माणापापाणमयं विद्यते, तां कार-यित्वा इहानय । तस्या घटापने मूल्ये चानयने लक्ष ९ व्यये जाताः । पर्वतोपरि यावनमात्रं दिनेऽध्यारोहयते 15 तावन्मात्रं रात्रौ वलति । श्रीवजस्वाम्यादेशात् रथकलचकसाध एकत्र स्वयमन्यत्र श्रेष्टिनी स्थिता । तद्भाग्या-देवतासाहाय्याच न निवृत्तो रथकलः । उपरिगतं विम्बम् । वज्रस्वामिगणधरेण प्रतिष्ठितम् । अग्रेतनं विम्बग्रुत्था-प्यते नोत्तिष्ठति । षण्मासावधि भोगकरणेन श्रीवजस्वामिध्यानेन सर्वान् व्यन्तरान् आत्मायत्तीकृत्य षण्मासान्ते काप्याघे (!) क्रपर्दिनि क्रीडार्थं गते, नूतनकपर्दिवचनेनाद्यविम्बग्रुत्थाप्य नूतने स्थापिते, तद्धिष्ठायके नूतने कप-दिंनि कृते, आद्य आराटिं मुक्तवान् । तदनुभावात्पर्वतो द्विधा जातः । ध्वजारोपणप्रस्तावे जावडो भार्यासद्वितः 20 प्रासादोपरि नृत्यन् आद्यकपर्दिनोत्पाट्य वैताट्यपर्वते उत्तरश्रेण्यां नीतः । एवं विम्बस्थापनम् ।

(३०५) श्रीविक्रमादिखन्पस्य कालादष्टोत्तरे वर्षशते व्यतीते । शतुश्रये शैलशिलामयस्य कारापिता जावडिना प्रतिष्ठा ॥

॥ इति श्रीकपर्दियक्ष-जावडिप्रबन्धः ॥

५२. लाखणराउलप्रवन्धः (B. P.)

५२२५) शाकम्मरीपुर्या चाहमांनो ठक्ष्मणः। स वर्त्तनाय भार्यामादाय एकमन्त्यजं च सहायं कृत्वा देशान्तरं चिल्रातः। मार्गवशास्त्रङ्कुषुरे सरःपरिसरे देवकुले दिनं विश्रान्तः। इतः सन्ध्यायां द्विजैरागत्योक्तम्—हे पान्थ! पुरस्य मध्ये समागच्छ। अत्र मेदानां प्रतिभयेन रात्रौ कोऽपि बहिनं तिष्ठति। लाखणेनोक्तम्—वयं पथिका मार्गस्थाः। प्रतोल्यः सूर्योदये उद्घाट्यन्ते। अतोऽत्रैव स्थासामः। द्विजैक्कम्—अप्रमत्तेः स्थेयम्। तेषु गतेषु लाखणः सह सहायेनं सज्जीभूय स्थितः। इतो रात्रौ मेदधाटी प्रसृता। लाखणेन सह महायेन युद्धं कृतम्। जन २० पतिताः। ३० ताबुभाविष धातार्त्तौ पतितौ। प्रातद्विजैरेत्य पत्नी पृष्टा—कस्ते भर्ताः कः सखाः। तया दर्शिताबुत्पाव्य नीतौ। पालितौ। रुद्धधातेन तेन द्विजा सुत्कलापिताः। तैरुक्तम्—क यास्यसि । तेनोक्तम्—यत्र निर्वाहो भविष्यति। वयमत्रैव करिष्यामस्त्वयाऽस्थाकं पुरे मेदोपद्रवो रक्ष्यः। स स्थितः। द्विजैस्तु ग्रासः कृतः। तेन जनाः ५ अन्ये

25

¹ B ससखायः। 2 B मेदानामुपद्वत्रो रक्षणीयः।

स्थापिताः । प्रतोलीं दातुं न यच्छति । मेदानां स्थानेषु गत्वा तेषु घाट्यां निर्गतेषु पाश्चात्ये उपद्रवं करोति । तैः कथापितम्—यद्वयं नङ्कसीमायां नैष्यामः । त्वया नो प्रामेषु नागम्यम् । क्रमेण जनाः १२० स्थापिताः पार्थे । समीपप्रामेषु वला विहिताः । मेदानां कथापितम्—मम करदेषु प्रामेषु नोपद्रवः कार्यः । एकदा घाटीमादाय मेदपाटे गतः । तत्र घाटी भग्ना । लाखणो घातजर्जरः कृतः पतितः । इतस्ते यावदुच्छृसितुं जनाः प्रश्चास्तावदसिण देव्या गोत्रजया शकुन्तिकारूपं कृत्वोपिर निपत्य रक्षितः । रात्रौ उत्थाय मन्दं मन्दं खपुरं गतः । एकदा देव्या व्याहृतम्—त्वां महान्तं विधास्ये चिन्ता न कार्या । प्रातमीलवेशमुकेरको वातप्रेरितो मुत्कलः समेष्यति । त्वया कुण्ड्यः कुङ्कमजलैर्भृत्वा प्रतोल्युपर्युपविश्य स्थेयम् । अग्रे गच्छतां हयानां छटा देयाः । येषां ता लगिष्यन्ति तेषां वर्णपरावत्तों भविष्यति । मध्ये प्रवेशं च विधास्यन्ति । प्रातस्त्रथैव कृतम् । बहवोऽश्वाः प्रविष्टाः पुरान्तः । तथा महान्तमेकमश्चं दृष्टा स्थानपालेन गले लगित्वोक्तम्—भव भव इति । तदनु प्रविशन्तः स्थिताः । ववाहरायां समागतायां पृष्टम्—असाकमश्चाः प्रविष्टा भविष्यन्ति । लाखकेनोक्तम्—मध्ये समेत्य पश्यते । तैर-श्वसाधनं निरैक्षि हृते हयौ लव्यो । तावादाय गताः । येषां छटा लग्नसेत्रधाः श्वाः स्थिताः । एवमश्वसहस्व-श्वाः । महदाधिपत्यं जातम् ।

§ २२६) एकदा खर्गुंहोपर्युपविष्टेन काचिद्विप्रवधः कान्ती दृष्टा । पश्चाद्विजानाहूय प्रोक्तम्-अहं भवतां पुरं त्यक्षामि । तरुक्तम्-कथम् १, तवेह गतस्य किं विनष्टम् १। यदि मे भूमिमर्प्यत बाह्ये गृहार्थे वासाय व तदा 15 तिष्ठामि । द्विजैः पुरस्य बाह्ये वासाय भूरिपता । तत्र धवलगृहमार्च्धम् । काष्ट्रदले निष्पद्यमाने, भित्तयः पृथुला जाताः । पृष्टास्तु हस्ताः । सूत्रकारेरिचिन्ति-किमुत्तरं करिष्यामः । वेश्या एका पृष्टा-वयं केनोपायेन निस्तरिष्यामः । तयोक्तम्-न भेतव्यम् । सा वर्द्वापनार्थं स्थालमादायाक्षत्रेर्भृत्वा राजकुलं गता । पृष्टा राज्ञा-किमिदम्य । देव ! लाखणगृहं वर्द्वितम् । कथम् १ । पश्यत, भित्तयः पृथुलाः पृष्टा न्यूनाः । स तदेव शकुनं मत्वा तां सत्कृत्य प्राहिणोत् । तत्र राजकुलद्वारे गोत्रदेवीप्रासादो महान् कारितः । तथाऽष्टादश जैनाः प्रासादा

20 महान्तो निष्पन्नाः, प्राकारश्च । एवं क्रमेण नड्डलराज्यं जातम् ।

\$२२७) एकदा कस्यापि श्रेष्ठिनः पुत्री कुमारिका दृष्टा। सा पाणिग्रहार्थे याचिता। तया पिता व्याहृतः—मम श्रावकत्वं प्रयाति, पुत्राथामिपमक्षिणः स्युः। अतो यदिति मन्यते—यन्मे पुत्रा मातृशाले वर्द्धनीयाः। इति मानिते सा परिणीता। सुते जाते मातृशाले प्रेष्यते । तत्र सर्वे पुत्रास्तस्या वर्द्धिताः । राउलेनोक्तम्—तव पुत्राणां किं ग्रासं दृदामि । भाण्डागारे सुश्च, तथा वणिजां च पङ्किं दृापय। राउलेन तथा कृतम् । वणिग्भिः सह विवाहादि25 सम्बन्धा जाताः । ते भाण्डागारिका जाताः। तस्य सुता आसल-राउलप्रभृतयः ३२ (द्वात्रिंशत्) जाताः।
ते वलापर्वतस्य तीरे पृथक् २ स्थापिता दुर्गेषु तदा। तस्यान्वये राउलकेह्ण-केतृनाम्ना शास्ताद्वये राज्यद्वयं जातम्। नङ्कले सुवर्णिगरौ च। लाखणपूर्वजाः—वासुदेव नरदेव वीकम वहांभराज दुर्लभराज वान्दण गोऊ
अजयरा वीघरा सिंघरा। लाखण-बलिराज सोही माहिन्द अणहिल जीन्दराज आसराज आह्रण कीतृ समरसीह उदयसीह चाचिगदेव सामतसीह काह्वडदेव—इत्यादि।

॥ इति लाखणराउलप्रबन्धः॥

¹ B कुरुते। 2 B त्वसाकं। 3 B विश्वातः। 4 B जर्जरितः। 5 B असिणि। 6 B तुरगाणां। 7 B भवतु भवतु इत्युक्तं। 8 B वहारया समागतया। 9 B अवलोक्यत । 10 B विलोकितं। 11 B एवं सहस्र १२ अधानां जाताः। 12 B वेश्मो॰। 13 B ब्राह्मणी। 14 B यातस्य। 15 B वासार्थे। 16 B सूत्रधारैः। 17 P 'गृहं' नास्ति। 18 B सुत्रसुत्पचेत पितृगृहे प्रेषयति। 19 B ते तत्र वाह्निताः। 20 B ततो राउलेन पंकिर्दाणिता। 21 B वर्णिग्भिः सह पाणिप्रहः पुत्राणां कारितः। * एतद्न्तर्गता पंकिः B प्रतौ न लभ्यते। 22 B वासदेव। 23 B नास्ति। 24 B गाइ।

५३. ,चित्रकूटोत्पत्तिप्रबंन्धः (P.)

§ २२८) कान्यकुब्जे काक्यां शम्भलीशो नृपो राज्यं करोति । इतः शिवपुरे कतिचिद्धामाधीशिश्वत्राङ्गदो नृपः । एकदा तस्र सभायां कोऽपि योगी समेतः । स नित्यमेति राजानं न वक्ति । पण्मासान्ते नृपेण सेवाकारणं पृष्टः स आह-देव! निर्जनं कुरु। तथा कृतम्। राजन्! मम गुरुणा विद्या दत्ताऽस्ति। तस्याः पूर्वसेवा जाता, उत्तरसेवा तिष्ठति । सा तु त्वां द्वात्रिंश छक्षणं विना न भवति । राज्ञा मानितम् । देव्यष्टमीदिनेऽसिहस्तेन त्वया कूटाद्रा-5 वागम्यम् । ओमित्युक्ते स गतः । देव्या पटान्तरितया तच्छतम् । तया अमात्याग्रे उक्तम् । मन्त्रिणोक्तम्-यदा नृपो याति तदा मम कथ्यम् । नृपः सन्ध्यायां शिरोत्तिमिषेण तां विसुज्य, यदा चलितस्तदा देव्या मन्त्री ज्ञापितः । स पश्चाचचाल । नृपोऽत्राग्रे गतो योगिनमैक्षिष्ट । मन्त्र्यपि च्छन्नं स्थितः । योगी नृपमित्रकुण्डपार्श्व विम्रच्य स्नानाय गतः । मन्त्री प्रकटीभूय नृपमाह-देव! अयं कपटी । त्वां हत्वा खर्णपुरुषं कर्ता । अतो गम्यते । नृपः प्राह-वाग् मे मा यातु । मन्त्री आह-यदाऽसौ कथयति फेरकान् देहि तदा त्वया कथ्यम्-अहं न वेबि, 10 भवानग्रे भवतु । इत्युक्त्वा मन्त्री वृक्षान्तरितोऽभृत् । योगी समेतः । तेन ध्यानमारब्धम् । अग्निकुण्डमुदीपितम् । नपं प्राह-फेरकान देहि। त्वमपि मम दर्शय नाहं वेदि। स उत्थाय तथा कर्तुं लगः। उभावपि त्वरितं धावतः। योगी वैश्वानराभिमुखं नृपमप्रेरयत् । तावन्मित्रणा राज्ञा च सोऽन्तः क्षेपितः । स खर्णनरोऽभृत् । उभावपि तं लात्वा गृहमागतौ । तत्प्रभावाद्वित्तं जातम् । स पश्चात् पुरस्थानमवलोकयन् पर्वतमधिरूढः । तत्रे यावान् दुर्गो दिने निष्पद्यते तावात्रिशायां पतिति । पूजया तत्रत्यो व्यन्तरस्तुष्टः । तेनोक्तम्-अहं पुरस्य भारं सोढुं न क्षमः । 16 अतः स्थानान्तरे कुरु । तत्र जलाद्यं पूरियप्यामि । पश्चाहुर्गः पर्वतोपरि अन्यत्र प्रारब्धः । चित्रकूटेति नाम . कृतम् । वासे जायमाने उपरि लोका न मान्ति । पश्चात्रृपेणोक्तम्-कोटीध्वजा मध्ये वसन्तु, लक्षेश्वरा बहिः । एवं कोटीध्वजानां गृहसहस्रम् । एवं पुरे निष्पन्ने काशीश्वरेण शम्भलीशेन दुर्गो वेष्टितः । स स्वर्णपुरुषं याचते । विग्रहे वर्ष १२ जाते राज्ञा घासं शिरसि दत्त्वा खनराः प्रहिताः, मध्यतनं खरूपमादातुम् । यावते यासयुता मन्त्रिगृहाधस्तात् सन्ति ताबद्गबाक्षस्थितया मन्त्रिपुत्र्या पिता उक्तः-तात! पर्वताधस्तादेते वाणिज्यकारका 20. एतान् दिनान् किं स्थापिताः ?। शुल्कमादाय किं न प्रेष्यन्ते ?। तेन सित्वोक्तम्-एतत्परचकं मत्वा, मया त्वं दुर्गस्यैव मध्ये दत्ता। तव पुत्रोऽपि जातः। परमेतन्न याति। तां वार्तां श्रुत्वा तैर्नृपात्रे उक्तम्। स निराशीभूयं गन्तुं प्रवृत्तः। खदलं प्रेषयत् । स दुर्गमवलोकयन् यदा गन्तुं लग्नः, तावता गवाक्षस्थितया बाकरीवेश्यया सक्तमुक्तम्-

(३०६) गण्डूपदा किमधिरोहति मेरुग्रङ्गं किं वारवेरज(?)गिरौ निरुणद्वि मार्गम्। शक्येषु वस्तुषु बुधाः अममारभन्ते दुर्गग्रहग्रहिलतां त्यज शम्भलीश!॥

नृपः प्राह—तथा कुरु यथा दुगं गृह्णामि । तया प्रोक्तम्—कटकं सम्बद्धं कुरु । अयमत्रत्यो मध्याहे प्रतोलीत्रय-मुद्धाट्य दानं दत्ते । यदाहं स्नात्वा केशविवरणं करोमि तदा ढौकनीयम् । सङ्केते मिलिते दुगों मेलितः । चित्राङ्ग-दस्तु स्वर्णपुरुषं कण्ठे बङ्का वाप्यन्तः पपात । नृपेण सा स्वनितुमार्ग्या । तत आदेशो जातः—विरम वा कटकं हिनिष्यामि । स नृपश्चित्राङ्गदपुत्रं राज्येऽघिरोप्य स्वपुरीं गतः । ततोऽभिष्ट्यते—'चित्रक्टमिदं भद्रे॰' इति । ॥ इति चित्रक्टोत्पत्तिप्रवन्धः ॥

५४. श्रीहरिभद्रसूरिप्रबन्धः (B.)

§ २२९) चित्रक्र्टे हरिभद्रो द्विजश्रतुर्दश्चिद्यापारीणो महावादी । तस्य इयं प्रतिज्ञा यस्याहं भणितं न परि-च्छिनिश्च तस्य शिष्यो भवामि । तत्र श्रीबृहद्गच्छे श्रीजिनभद्रस्रस्यः कृतचतुर्मासकाः सन्ति । तेषां प्रवर्तनी याकिनी साध्व्यु[पा]श्रयेऽस्ति। एकदा प्रतिक्रमणानन्तरं काऽपि साध्वी आवश्यकं गुणयति । तया गाथा उक्ता-

Chiefe Shi the And

20

25

(३०७) चिक्किदुगं २, हरिपणगं ५ं, पणगं चक्कीण ७, केसवो ६, चक्की ८। केसव ७, चक्की २, केसव ८, दुचिक्क ११, केसी अ १२, चक्की अ १२॥

इयं गाथा हरिभद्रेण गुण्यमाना श्रुता । अजानँस्तत्र प्रविष्टः । त्रवर्त्तन्या उक्तम्-कः प्रविद्यत्यप्र ? । तेनो-क्तम्-अतिचिगचिगापितम् । प्रवर्त्तन्या उक्तम्-नृतनं लिप्तं चिगचिगायते । प्रसादं कृत्वा अस्या अर्थं कथयत । यदि श्रवणेच्छा तदा गुरूणां पार्थादवगन्तव्या । स गतः । प्रातर्गुरूणां पौपधागारे गतः । उक्तम्-इमां गाथां व्याख्यानयत । गुरुभिरुक्तम्-किं प्रतिज्ञायाः ? । तेनोक्तम्-सा तथैव । तिर्दे एपा सिद्धान्तगाथा पूर्वापरसम्बन्धं परीप्स्यते; स च दीक्षां विना तपश्चरणं च विना न भवति । तिर्दे मे दीक्षां दीयताम् । तदा ब्रह्मलोकः सम्भूय उक्तवान्-वयं दातुं न दबः । हरिभद्रेणोक्तम्-कथं न दत्थ ! ।

- (३०८) पक्षपातं परिलज्य मध्यस्थीभूयमेव च। विचार्य युक्तियुक्तं यद् याद्यं लाज्यमयुक्तिमत्॥
- (३०९) पक्षपातो न मे वीरे न द्वेषः कपिलादिषु । युक्तिमद्भचनं यस्य तस्य कार्यः परिग्रहः ॥
- (३१०) दुर्योधनस्वकुलनाशकरो बभूव विष्णुईरस्त्रिपुरदाहकरः किलासीत्। क्रोंचो गुहोऽपि दृढशक्तिहरं चकार वीरस्तु केवलजगद्धितसर्वकारी॥
- १३११) स्वार्थारम्भप्रणतिशारसां पक्षपातात् सुराणां द्यात्मानं करजकुलिशैदीनवेन्द्रं निहन्तुम्। सि...तिश्चिम्रवनगुरुः सोऽपि नारायणोऽस्मिन् रागद्वेषप्र......कस्य न स्यात्पश्चत्वम्॥
 - (३१२) विष्णुः समुचतगदायुतरौद्रपाणिः द्यम्भुर्लुलन्नरिद्योऽस्थिकपालमाली । अल्पन्तद्यान्तचरितातिद्ययस्तु वीरः कं पूजयाम उपद्यान्तमद्यान्तरूपम् ॥
 - (३१३) मातृमोदकवद् बाला ये गृह्णन्यविचारितम्। ते पश्चात्परितप्यन्ते सुवर्णग्राहको यथा॥
 - (३१४) नेत्रैनिरीक्ष्य विषकण्टककीटसप्पीन् सम्यग् यथा ब्रजति तान् परिहृत्य सर्वान् । कुज्ञानकुश्चितिकुमार्गकुदृष्टिदोषान् ज्ञात्वा विचारयत पर.....वादः ॥ भो! मया सम्यग् यत्तिमृष्टम् ।
 - (३१५) न वीतरागादपरोऽस्ति देवो न ब्रह्मचर्यादपरं [चिरत्रम्]। नाभीतिदानात्परमस्ति दानं चारित्रिणो नापरमस्ति पात्रम्॥

इति द्विजान् सम्बोध्य दीक्षां जगृहे । कृतयोगोद्वहनः सिद्धान्तसारमधीतश्च गुरुणा पदे स्थापितः । श्रीहित्यस्य इति नाम कृतम् । तैश्रतुर्दशशतानि कृतानि सिद्धान्तरहस्यभूतानि [प्रकरणानि] । चिन्ति-तम्—क एतान् लेखिय्वपति ? । विणक् दरिद्री एको दृष्टः । तस्य व्याहृतम्—मत्कृतान् ग्रन्थान् लेखय । गुर्वाज्ञा प्रमाणिमत्युक्ते, गुरुभिरुपदिष्टम्—अद्य मण्डिपकायां ये मध्चिछ्यमयाः स्तम्भाः समायान्ति तानादाय गृहे अधिय पश्चादागन्तव्यम् । तथाकृते स हिरण्यकम्बाभिर्धनवान् जातः । तेन रूप्यपत्रेषु खर्णाक्षरैस्तानि लेखि-तानि । गुरुभिश्चित्रक्र्टोपरि प्रासादे औपधानि सम्मील्य स्तम्भः कृतः । तत्र प्रक्षिप्य ग्रुक्तानि । स स्तम्भो न पानीयेन गलित, न च्छिद्यते, नाग्निना द्वाते ।

dre cerebi lighten Desire for the Area

§ २३०) • एक[दा] स्ररीणां भागिनेयौ वृतं जगृहतुः । स्र्रिभः प्रमाणान्यध्यापितौ । ताभ्यां बौद्धानां प्रमा-णानि दुरवबीधानि श्रुतानि. । गुरव उक्ताः-भगवन् ! भवतामादेशेन बौद्धदेशे गत्वा तेषां प्रमाणान्यधीत्य जैनाभित्रायेण कृत्वा यास्यावः । गुरुभिवर्प्ररितावपि निर्वन्धं कृत्वा चेलुतः । बौद्धदेशे गतौ । तत्राव्यक्तवेषौ विद्यामठे पठितुं प्रवृत्तौ । खस्याने समेतौ ग्रन्थपरावर्तने प्रवृत्तौ । बौद्धाधिष्टात्र्या तारादेव्या वायुयोगात पत्रमु-इाप्य लेखशालायां क्षिप्तम् । 'नमो जिनाय' इति दृष्ट्वा छात्रैरुपाध्यायस्य दर्शितम् । तेनोक्तम्-कोऽपि जैनश्छन- 5 मधीते । ततोऽत्र वाटिकाद्वारि जिनप्रतिमां मण्डयध्वम् । सर्वेऽप्युपरि चरणं दत्त्वा त्रजतः । जैनस्तु न यास्यति, तदा ज्ञास्यते । सर्वेऽपि चरणं दत्त्वा निःशङ्कं गताः । उभाभ्यां विमृष्टम्-वयं ज्ञाता असाकमेतत्परीक्षार्थं कृतम् । ततो बृद्धेन कर्णात् खटिकामादाय वम्भस्त्रं कृतम् । उपरि चरणं दत्त्वा गतौ । निजाश्रयात् शास्त्राण्यादाय निर्गतौ । बौद्धाचार्येर्नृपं प्रत्युक्तम्-यत् देव ! शासनसर्वस्वमादाय द्वौ श्वेताम्बरौ नष्टौ । नृपस्तु अनुपदं जातः । इतो हंसेनोक्तम्-वत्स! अहं रहितस्त्वं कस्थापि शरणे प्रविशेथाः । हंसस्तु युद्धा मृतः । परमहंसः कसिन्निप पुरे 10 प्रविश्य शरणे गतः । पृष्ठिलग्नं कटकमायातम् । बहिस्तनेन याचितः-भोः ! त्वमपि बौद्धभक्तः । तद्धं धर्मविद्धे-षिणमर्पय । तेनोक्तम्-शरणागतं नार्पये । यादशस्तादशो वाऽस्तु । परमहंसेनोक्तम्-मम बौद्धाचार्यवीदोऽस्तु । यद्यहं पराजीयते तदा मार्यः । बौद्धैर्जितो मारितः । इतस्तस्य रुघिरालिप्ता रजोहृतिः कयाचिदेव्या शकुनिकारू-पया चित्रकूटे पौषधागारे परित्यका । गुरुभिरुपलक्षिता । निषद्यादर्शनात् ज्ञातमरणाः शिष्याणां रौद्रध्यानं गताः । बौद्धानामुपरि प्रकुपिताः। इत उपाश्रयात्पाश्चात्ये तैलकटाहिर्मण्डिता । तत्र मन्त्रबलेन आकाशमार्गेण बौद्धा 15 एत्य कटाह्यां पतन्ति पतङ्गवत्। एवं सप्तशतानि। ततो गुरुभिर्ज्ञातवृत्तान्तैः श्रावक एकः शिक्षां दत्त्वा प्रहितः। स मध्ये प्रवेष्टुं न लभते । तेनोक्तम्-गुरूणां श्रीजिनभद्रस्रीणां पार्श्वादहमागतोऽसि । मध्ये मोचितः । तेनो-क्तम्-प्रभो ! अहमालोचनाथीं गुरूणां सकाशे गतः । मया प्रायिश्वतं याचितम् । गुरुभिरहं भवतां पार्श्वे प्रहितः । प्रसादं विधाय मम प्रायश्चित्तं दीयताम् । प्रभो ! मया पश्चेन्द्रियजीवस्य विराधना कृता। साऽत्यर्थं द्यते । गुरुभि-रुक्तम्-सुबहु प्रायश्चित्तमेष्यति। तर्हि भवतां किं भविष्यति यदि मम इयत् । ततो ज्ञातम्-मम गुरुभिर्वृत्तमवग-20 तम् । तदा हि अवाज्यसीजाताः। श्रावकेणोक्तम्-गुरुभिः कथापितम्, कथं समरादित्यचरितं नावगतम्?। तेन एकसिन् भवे पिष्टमयः कुर्कुटो हतः, एकविंशतिवारान् पिष्टकुर्कुटसङ्कान्तेन व्यन्तरेण वैरं कृतम् । तत् रमृत्वा श्रीहरिभद्राचार्या वधानिवृत्ताः । पुनः सङ्घं मील्य प्रायश्चित्तं कृतवन्तः । तद्नु 'समरादित्यचरितं' वैराग्यामृत-मयं चकुः । कालेनानशनं कृत्वा दिवं गताः । इति प्रतीतम् ।

(३१६) महत्तराया याकिन्या धर्मपुत्रेण धीमता । आचार्यहरिभद्रेणाष्ट्रकवृत्तिरियं कृता ॥
।। इति श्रीहरिभद्रद्धरीणां प्रवन्धलेशः ॥

५५. सिद्धर्षिप्रवन्धः (B. Br.)

§ २३१) अथ सिद्धं: [प्रवन्ध] उच्यते-श्रीमालपुरे दत्त-श्रुमंकरी श्रातरी महद्धिंकी श्रीमालज्ञातीयो । इतश्र श्रुमंकरस्य सुतः सीधाकः । दत्तस्य सनुर्माघः । स सीधाको बाल्यतोऽमि द्युतव्यसनी पित्रा कृष्णाक्षरितः । एकदा रममाणेन हारितम् । पितुर्गृहाचीर्यं विधाय दत्तम् । अन्यदा रममाणेनोक्तम्-द्रम्म ५०० यावत् कीड-३० यध्वम् । द्रम्मान् ददामि, शिरो वा ददामि । तैरुपवेशितो द्युतकारैः, तेन हारितम् । द्रम्मा याचिताः । रात्री श्रीवीरप्रासादे धरणकं दत्त्वा सुप्तेषु द्युतकारेषु सिद्धः प्रासादिभत्तेर्श्चम्पां ददौ । पौषधागारमध्ये पतितः । गुरु-भिर्वाकृतः-कस्त्वम् १ । तेन स्वनाम उक्तम् । ग्रहणयोग्यं किमस्ति १ । तेनोक्तम्-तथ्यम्, परं मम दीक्षां यच्छत । विष्ठा प्रकृतः । विष्ठा प्रकृतः ।

ind a Gandhi Nations

20

द्युतकाराः प्रातः शिरो ग्रहीष्यन्ति । अतो दींक्षा स्तोंककालमप्यस्तु । गुरुभिर्नक्षत्राण्यवलोक्य प्रशावकं मत्या दीक्षितः । प्रातः श्राद्धासं दृष्टा गुरून्तुः-प्रभोऽद्य कल्ये परिवारः किं स्तोकोऽस्ति, यदस्य घटानुकारिमाणिक्यस्य दीक्षा दत्ता ? । भवतु यादशस्तादेशो वा । इत उपवेशने स्वाध्यायपुस्तिकां दृष्ट्या 'उपदेशमालाः'मादिमध्यावसानां विलोक्य पाठं दद्ते । गुरुभिश्चिन्तितमहोप्रज्ञाऽस्य । इतो द्युतकाराः समायाताः । भो ! बिहरेहि । किं वासण्डेन छुट्यसे । श्रावकरुक्तम्-किं देयम् ? । पश्चशती द्रम्माणाम् । वयं दास्यामः । कस्यापि कारणे दीनोऽसौ मुच्यते । पुनरस्ताकं पार्श्वे समेष्यति । श्रावकरुक्तम्-यास्यति ततो यातु । द्युतकारुक्तम्-तिर्हं असाभिर्मुक्तः । ते गताः । स सिद्धान्तमधीतवान्, प्रमाणग्रन्थाश्च । सिद्धेनोक्तम्-भगवन् ! बौद्धा महावादिनः श्र्यन्ते । तत्र गत्वा तान्निर्जित्य समेष्यामि । गुरुभिरुक्तम्-जैनानामेष धर्मो न यत् कस्यापि सम्मुखं गम्यते । य उपविष्टानां सम्भयति सोऽभ्यते । सनिर्वन्धात् वजन् स्वरिभिरुक्तः-यदि तत्र गतः परावर्त्यसे तैस्तदा वयं मुत्कलापनीयाः । 10 इदं किमादिष्टम् ? । बौद्धानां देशे गतः । तेषां स्वरूपं दृष्टम् ।

(३१७) मृद्धी शय्या प्रातरूतथाय पेया मध्ये भुक्तं पानकं चापराह्ने । द्राक्षाखण्डं शर्करां चार्धरात्रौ मोक्षश्चान्ते शाक्यसिंहेन दृष्टः ॥

एवंविधानाञ्चीर्वादांश्च ग्रुश्राव-

(३१८) ध्यानव्याजमुपेत्य चिन्तयसि कामुन्मील्य चक्षुः क्षणं पद्यानङ्गदाराजुरञ्जनिममं त्रातापि नो रक्षसि । मिथ्या कारुणिकोऽसि निर्धृणतरस्त्वत्तः कुतोऽन्यः पुमान् सेर्घ्यं मारवधूभिरित्यभिहितो बुद्धो जिनः पातु वः॥

(३१९) आत्मा नास्ति पुनर्भवोऽस्ति सततं कर्मास्ति कर्त्ता विना गन्ता नास्ति शिवाय चास्ति गमनं बुद्धोऽस्ति बद्धो न च। इत्येवं गहनेऽपि यस्य न मुनेर्व्याहन्यते शासनं खयोतैरिव भास्करस्य किरणा बुद्धो जिनः पात वः॥

तथा 'शुष्कां शष्कुलीं भक्षयतो भगवतो बौद्धस पश्चद्यानानि समुत्पन्नानि' इत्यादि श्रुत्वा बौद्धाचार्यं जगी— यदहं जैनः, परं त्वद्दर्शनमादिरिष्यामि । तैर्ह्षष्टेष्ट्राय निवेदितः—यदसौ जैनः स्वदीक्षां ग्रहीष्यति । नृपेण गौरवं कृतम् । दुक्कलानि परिधापितः, अलंकृतश्चाभरणेः । प्रातर्लग्रं बौद्धदीक्षायाः । रात्रौ तेन गुरूणां वचः स्मृतम् । श्रातः पणवन्धं तेषां निवेद्य चिलतः । श्रीमाले श्रीजिनसिंहसूरीणां पार्श्वे प्राप्तः । आचार्य ! मुत्कलाप्यसेः मया तेषां शासनं तत्त्वभूतमवगतम् । गुरूभिरुक्तम्—किश्चद्यसानि द्वापय । तेनोक्तम् । गुरुभिः प्रत्वेदं कृत्वा प्रेषितः । तत्र तैः परावर्तितः । पुनर्गुरुसमीपे आयातः । तैस्तु बोधितः । एवं सप्तवेला एहिरे-याहिरांचके । अष्टमवेलायां बौद्धेरुक्तमिहैव तिष्ठ तत्र वा । तेनोक्तम्—चतुरो वादिनो मया सह प्रेषयत । तानादाय श्रीमाले पौषधागारे अवयातः । उक्तं द्वारस्थेन—आचार्य ! मुत्कलाप्यसे । तैरुक्तम्—मध्ये आगच्छ । मध्ये आयातः । नितं विनाप्युपविष्टः । गुरुवो 'लिलितविस्तरा'वृत्तेः पुस्तकमुपवेशने विमुच्य स्वयं ततुगमनिकायां चिलताः । तेन सोष्टुण्ठमिन्हितम्—एमिवौद्धाचार्यराकान्तानां ततुगमनिका सुलभा एव । सूरयो गताः । स पुस्तिकां वाचितितं प्रवृत्तः । 'सिवमयल'इत्यालापवृत्तिमनुचिन्त्य बौद्धैः सह वादं कृत्वा गुरुष्वनागच्छत्स तानिरुत्तरिचके । गुरुष्वापतेषु, अभ्युत्थानं कृतम् । गुरुवो विद्यप्तः—एकोऽहमामं आत्मपश्चमो भृत्वा समागमम् । उक्तं तेन—

(३२०) नमोऽस्तु हरिभद्राय तस्मै,श्रीप्रभसूरये । मदर्थं निर्मिता येन वृत्तिरुंखितविस्तरा ॥ तैः सह प्रववाज । पश्चादुपदेशमालावृत्तिः कृता । पश्चात्स्र्रिपदमनुपाल्य समाधिना दिवं गतः ॥

1। इति सिद्धर्षिप्रवन्धः ॥

५६. शान्तिस्तवप्रबन्धः (P.)

§ २३२) कोरण्टके वीरचैत्ये देवचन्द्रनामोपाध्यायः । तत्र श्रीसर्वदेवाचार्या वाराणस्याः सिद्धिक्षेत्रे गन्तुं मनसः 5 समायाताः । तत्र कियहिनाः स्थिताः । उपाध्यायः पदेऽस्थापि । देवस्ररिरिति नाम कृतम् । स्वयं यात्रायां गताः । तत्पट्टे प्रद्योतनसूरयः । ते च विहरन्तो नड्डले गताः । तत्र श्रेष्टी जिनदत्तः, प्रिया धारिणी, सुतो मानदेवः स्रीणामुपाश्रये गतः । धर्म श्रुत्वा प्रव्रज्यां जग्राह । सर्वसिद्धान्ततत्त्वज्ञो जातः । स्रीश्वरैः पदे स्थापितः । जया-विजयारूयो देव्यो नमतः । अथ तक्षशिलायां पश्चशतीतीर्थपवित्रितायां महान् रोगो जातः । न कोऽपि कस्यापि वेश्मनि याति । पुरीं शून्यप्रायां वीक्ष्य सङ्घेनाचिन्ति-सर्वेऽप्यिष्ठायका नष्टाः । इति चिन्तिते शासन-10 देच्या उपदिष्टम्-सर्वे व्यन्तरास्तुरुष्कव्यन्तरेरुपद्वताः । वर्षत्रयानन्तरं तुरुष्कभङ्गो भावी । इति ज्ञात्वा यदुचितं तत्कार्यम् । पुना रोगशान्त्यै उपायोऽस्ति । नङ्कलनगरे श्रीमानदेवस्ररीणां चरणोदकेन सिश्चत स्वमानुषाणिः यथा डामरं नश्यति । एवमुक्त्वा तिरोदधे । तैः सर्वैः सम्भूय वीरदेवनामा श्रावको नड्ले प्रहितः । स तत्र गतः । . नैषेधकीं कृत्वा मध्ये गतः। सूरयो ध्यानपरा दृष्टाः। जया-विजयादेव्यौ नमस्कर्तुमागते, उपवरककोणे उपविष्टे। यदा स मध्ये उपवरकं गतस्तदा [दे]व्यौ दृष्ट्वा चमत्कृतः । अहो राजर्षयोऽमी । एतेषां पादोदकात्कथं शान्तिर्भ- 15 विष्यति । मयि दृष्टे ध्यानमारव्धम् । स्ररिणा ध्यानं मुक्तम् । ततः सावज्ञं वन्दिताः । देव्यौ तचित्तं ज्ञात्वाऽदृष्ट-बन्धनैस्तं बबन्धृतुः । स प्रभुणा मोचितः । आगमनकारणे स्रितिः पृष्टे, श्रावकवीरदेवेनोक्तम्-तक्षशिलासङ्घनो-पद्रवरक्षार्थं प्रश्रुपादमूले प्रेषितः। मम वि[क]ल्पो जातः। जयादेच्या उक्तम्-यत्र भवाद्याश्छिद्रान्वेषिणः श्रावकास्तत्र गुरवो नागमिष्यन्ति । स्वरिभिरुक्तम्-वयमत्रस्थाः शान्ति करिष्यामः । श्रीशान्तिनाथ-पार्श्वनाथ-मञ्जगर्भ श्री'शान्तिस्तव'मर्पयित्वा प्रहितः । स तस्यां गतः । तस्मिन् पठ्यमाने शान्तिर्जाता । वर्षत्रया[नन्तरं] पुरी 20 तुरुष्कैर्भमा । अद्यापि भूमिगृहे तस्यां पित्तलानि विम्वानि सन्ति । ततः प्रभृति एप स्तवः सञ्जातः ।

॥ इति शान्तिस्तवप्रबन्धः ॥

५७. न्याये यशोवर्मनृपप्रवन्धः (B. Br. P.)

§ २३३) कल्याणकटके पुरे यशोवर्म्मनृपतिस्तेन धवलगृहद्वारे न्यायघण्टा बद्धा। एकदा राज्याघिष्ठात्री देवी नृपत्रतपरीक्षार्थं घेनुरूपं कृत्वा वत्सस्य तत्कालजातस्य मार्गे कृत्वा स्थिता। नृपस्नुर्वहिलामारूढस्तत्रायातः। वेगेन 25 वहिलां वृत्सचरणयोरुपरि भूत्वा गतां। वत्सस्तु मृतः। घेनुः कोक्र्यते, अश्रृणि मुश्चिति। केनाप्युक्तम् –राज-द्वारे गत्वा न्यायं याचस्व। सा गता। तया शृङ्काग्रेण घण्टा चालिता। नृपस्तु भोजनायोपविष्टः। शब्दं श्रुत्वा बभाषे—रे! कोऽयं घण्टां चालयिति?। सेवकैर्विलोक्योक्तम्—देव! कोऽपि न, मुज्यताम्। नृपः प्राह—निर्णयं लब्ध्वा भोक्ष्ये। नृपः स्थालं त्यक्त्वा प्रतोल्यां स्वयमायातः। कमप्यदृष्ट्वा घेनुं प्राह—केन पराभृतासि?। तं मम दर्शय। साऽग्रे भूता, नृपः पृष्ठौ लग्नः। तया वत्सो दिर्शितः। नृपेणोक्तम्—केनेयं वाहिनी वाहिता?। स पुरो भवतु। 30

¹ B वाहिन्यधिरूढः। 2 B वाहिनी। 3 B याता।

कोऽपि न बक्ति । नृप आह—तदा मोक्ष्ये यदां स प्रकटीमविष्यति । लङ्क्तने जाते प्रातः कुमारेणोक्तम्—देवाहमपराधी । मम दण्डं कुरु । नृपेण वाहिनीमानाय्य सार्ताः पृष्टाः—कोऽस्य दण्डः ? । तैरुक्तम्—देव ! राज्यधर एक एव
कुमारस्तस्य को दण्डः । नृपः प्राह—कस्य राज्यम् , कस्य सुतः । मम नगाय एव महान् । यद्भवति तहूर । तैरुक्तम्—
यो यस्य कुरुते, तस्य तद्धिधीयते । नृपेणोक्तम्—इह स्विपिष्ट । स सुप्तः । नृपेणोक्तम्—वाहिनीसुपरि वेगेन वाह5यत । कोऽपि न कुरुते । नृपस्तदाह—(B नृपः कामाश्राविण्यामिदमवादीत्—) मे पुत्रस्तेहो न, विनश्यतु वा जीवतु । यावत्स्वयसुपविश्य वेगेन वाह्यति कुमारचरणयोरुपरि तावहेवी प्रकटीभूय पुष्पवृष्टिं चक्रे । न गौर्न वत्सः । राजन् ! मया तव चित्तपरीक्षणं कृतम् । नृपस्य सुतो वल्लभो न्यायो ना । पुत्रादिप न्यायस्तव वल्लभः ।
चिरं राज्यं कुरुः ।

॥ एवं न्याये यशोवर्म्मप्रवन्धः॥

५८. अम्बुचीचनृपप्रबन्धः (Br. P.)

§ २३४) एकदा द्वारिकायां कृष्णो राज्यं करोति। पाण्डविषत्व्यो विदुरः कृष्णेन प्रधानः कृतः। दिनं प्रति १६ गद्याणा ग्रासे कृतास्त्रस्थापरं न किमिप। एकदा विदुरेणोक्तम्—त्वं मेऽधिकं न द्वासि, अतः कस्याप्यन्यस्य पार्श्वे यास्यामि। कृष्णः प्राह—तव प्राप्तिरियती, नाधिकास्तीति। विदुरेणोक्तम्—प्राप्तिरस्ति परं त्वया वारिता। तिर्हि राजान्तरं व्रज—इत्युक्तः। कृष्णेन स प्रहितः। कृष्णेन सर्वेषां भूपतीनां कथापितम्—यद्विदुरस्य १६ गद्याणाधिकं 15 न देयम्। स सर्वत्र भ्रान्त्वा समायातः। कृष्णाग्ने बभाषे—मम त्वं काल इव पृष्ठे लग्नः। तवाज्ञयाऽधिकं कोऽपि न यच्छिति। कृष्णः प्राह—तिर्हि द्विजरूपं कुरु। अहमिप तव बहुको भविष्यामि। हस्तिकलपपुरेऽम्बुचीचो नृपतिर्महान्त्यागी। परं कर्णयोर्ने भृणोति। तृषितस्त्वम्यु इति विक्ते, बुभुश्चितश्रीचु इति वदिते। तस्य पुरे आव्राभ्यां गम्यते। गतौ तत्र। विदुरो भव्यविप्रवेषं चकार, कृष्णस्तु बहुकरूपम्। विदुरेण नृपस्प्राज्ञीर्दत्ता। नृपेण प्रधानसम्भुक्त्रमालोकितम्। प्रधानरुक्तम्—कलशे करं श्विश्वा चीरिकाया आकर्षणं कुरु। विदुरेणाधः करं श्विश्वा कृष्टा, 20 विलोकिता। ग० १६ तत्र लिखिताः। बहुकरूपेण कृष्णेनोपरितनी गृहीता। तत्र चीरिकायां कोटिलिखिता। प्रधानरवादि—अकिश्चित्करोऽयम्। एष च भाग्यवान्। अस्ताकं दाने पोडञ्च निकृष्टाः। कोटिः सर्वोत्तमा। ततः प्रत्यावृत्तौ। कृष्णेनोक्तम्—

(३२१) न विद्या धनलाभाय जनजाङ्यसमृद्धये। आत्मानमम्बुचीचं च मां च दृष्ट्वा सुखी भृव॥

25 त्वं विदुरोऽहं कृष्णो नृपस्त्विकश्चित्करः । इति विमृश्य विदुरः खस्थो जातः ।

॥ इति अम्बुचीचप्रवन्धः ॥





(P.) सङ्ग्रहगता अवशिष्टां विधि-परोपकारादि्विषयकप्रकीर्णप्रबन्धाः ।

५९. विधिविषये उदाहरणम् ।

§ २३५) पोतनपुरे नरवाहनो नृपः । सुमित्रो मन्त्री । अन्यदा अन्तःपुरे पुत्री जाता । नृपेणोत्सवे कारिते, षष्टीदिनेऽमात्यस्य विसायो जातः । षष्टीदिने विधिरेत्य ललाटेऽश्वराणि श्विपति । तदेतत्सत्यं असत्यं वा-इति सन्देहे, ख्रयं खङ्गमाधाय छत्रं स्थितः। अर्द्धरात्रौ स्त्रीरायाता। सा कुङ्कममादायाक्षराणि क्षित्रवा यान्ती मित्रणा 5 प्रणामपूर्वं पृष्टा-देवि ! प्रसादं कृत्वा कथयं, कान्यक्षराणि क्षिप्तानि ? । तयोक्तम्-मा पृच्छ । निर्वन्धेन पृष्टा आह-इयं कोरिकसुतस्य पत्नी भविष्यति । इत्युक्तवा तिरोदधे । प्रातर्मन्त्री विषण्णस्तं वृत्तं नृपाय आचल्यौ । नुपेणोक्तम्-तस्य सुतो जातमात्रोऽस्ति, स बालोऽपि न्यापाद्यः । इत्युक्ते मित्रणोक्तम्-देव! बालहत्यां कः करोति । तदैव व्यापादियिष्यामः । ऋमेण कन्या वर्द्धिता, सोऽपि वर्द्धितः । राजगृहे कर्माणि कुरुते । पोडशवापिके तसिन्नमात्येनोक्तम्-देव! स डिम्भः कथं व्यापादनीयः? । इतः कस्मैचिन्नपपुत्राय कन्या दत्ता । यण्मासान्ते 10 लग्नं मत्वा नृपेण सं भूर्जानर्पयित्वा (?) विधिनिमत्रणाय उक्तः-रे वत्स! विधि निमन्यागच्छ । तेनोक्तम्-स्वामिन्! सा कास्ते । तन्न जाने-मित्रणोक्तम् । लङ्कायां स चलितः । अग्रे गच्छन् कसिंश्वित्पुरे श्रेष्टिहट्टे उपविष्टः । तेन पृष्टम्-क यास्यसि ?। तेन स्वभावोक्तौ गृहे नीत्वा श्रेष्ठिना भोजितः। उक्तम्-विध्यग्रे मम सन्देशो वाच्यः-. मदीयं भवनं कथं ज्वलति ?। तेनोक्तम्-कथयिष्ये। तं श्रुत्वाऽग्रे गच्छन् पुरमेकमुद्भसं दृष्टा मध्ये प्रविष्टः। शोभा-भिरामं पश्यन् राजाङ्गणे नृपसिंहासनाऽग्रे निविष्टः । सन्ध्यायां पुरशोभा जाता । नृपः समाययौ । तेन नम-15 स्कृतः। को असि त्वम् ?। खरूपे उक्ते स०-मम सन्देशो विध्यप्रे वाच्यः-यन्मे पुरं प्रातर्दिशो दिशं कथं याति ?। तच्छत्वा प्रा[त]श्रिलितः । समुद्रोपकण्ठे गतः । चिन्तातुरो मत्स्येनैकेन च्याहृतः-भो मनुष्य! कोऽसि त्वम् १ . खभावोक्तौ तत्रापि तेनाप्युक्तम्-यदि मे सन्देशं कथयसि तदा तत्र नयामि । तेनोक्तम्-वद । तेनोक्तम्-नदीये जठरे दाघः कथम् १। स पृष्टिमिधरोप्य उपकण्ठे मुक्तः । तेनोक्तम्-वलनं कथम् १। सप्तप्रहरान् प्रतीक्षयिष्ये । इति श्चत्वा स गतः। इतः प्रतोलीराक्षसेषु धावितेषु तेनोक्तम्-विधेः खरूपं समर्प्यं वलनेष्यामि । तैर्मध्ये ग्रुक्तः । स 20 रावणनृपालयसप्तमभूमौ कुचेलां कोद्रवदलनपरां विधि राक्षसनिवेदितां ननाम । खरूपेऽपिंते सा हृष्टा जाता । वत्स! त्वं गच्छ। लग्नसमये एष्यामि। सन्देशान् पृष्ट्वा समुद्रोपकण्ठे गतः। तत्र तं मत्स्यं दृष्ट्वा, तेन पृष्टः-मत्स-न्देशं कथय । पूर्वभवे त्वं विद्यापारगो ब्राह्मणः । विद्यादाने क्रपणो जातः । मृत्वा मत्स्यो जातः । पूर्वभव-विद्यया तव देहो दह्यते । यदि विद्यां ददासि, तदा ते स्वास्थ्यं भविष्यति । सोऽपि जातिं स्मृत्य तस्यैव विद्या-मदात् । पुनः परतटे नीतः स विद्यावान् । पुनः शून्यपुरे सन्ध्यासमये नृपाय मिलितः । तेन शून्यताकारणे 25 पृष्टे, उक्तम्-अत्रैव पुरे तव पिता दुर्गरोधे सन्नह्य बहिनिःसृतः । धारातीर्थे मृतः । मस्तकं विना त्वया अपि संस्कारः कृतः। करोटिका कालदण्डचण्डालगृहेऽस्ति । तया डिम्भानि रब्बापानं कुर्वन्ति । पश्चात्तव तातो व्यन्तरो जातः । स यथा यथा तां करोटिकां ताप्यमानां पश्यति तथा तथा कुद्धः सन् पुरं ग्रून्यं विधत्ते । रात्रौ तया शीतया जातया खास्थ्यं करोति । नृपेण तामानीयाविसंस्कारः कृतः । तस्मिन् पुरे खास्थ्ये जाते, खपुत्रीं दुन्ता बहुपरिकरः प्रेपितः । पुनः श्रेष्टिपुरे गतः । श्रेष्टिनातिथ्ये कृते वार्ता पृष्टा । तेनोक्तम्-विचवानपि त्वं 30 क्रपणस्तव गृहे देवगुरुसुहासिण्यादयो निःश्वस्य शापं यच्छन्ति-ज्वलत्वस्य गृहम्। तेन सत्यं मत्वा दानेश्वरो जातः । खपुत्रीं दत्त्वा प्रेषितः । इतो लग्नदिने स खपुरे गतः । जनैर्वरी मत्वा मध्ये नीतः । केनाप्यलक्षितेन

Centi for the Arts

किश्विनोक्तम् । हस्तमेलकवेलायां पुरे पूर्ववरः समाययो । स केनाप्र्यसत्कृतो मध्ये समागतः । विवाहं मत्वा युद्धसजो जातः । इतो विधिना समेत्य नृप उक्तः—राजन् ! मा विषीदः भो मन्त्रिन् ! त्वमपि मा विषीदः । किं विसरिस त्वया पृष्टाऽहम् ? । मयोक्तं पूर्व महाक्यमन्यथा कथं भवति । एषाऽस्यैव भवतु । अन्यां परिणाप्य द्वितीयः प्रेषितः । इति विधिर्यद्विधत्ते तद्भवति, मनुष्यकृतं न भवति ।

६०. परोपकारविषये उदाहरणम् ।

(३२२) नीचाः शरीरसौख्यार्थमृद्धिच्यापाय मध्यमाः । कसौचिदद्धुतार्थाय यतन्ते पुनरुत्तमाः ॥

§ २३६) कश्चित्परोपकारी न्यायी पुमान् अन्यायनगरे गतः । तत्र राजाप्रभृति सर्वेऽप्यन्यायिनो वसन्ति । तेन स्वजीवनार्थं विकेतुं कोहलकानि समानीतानि । विकेतुं लगः । 'ईल्ठ' सम्बन्धेन नवकोहलकानि गतानि । 10 चत्वारो विलोक्यन्ते । खेटके पतितः । स आत्मानं विकेतुं कामोऽपि न छटति । तेन पुरुषेण चिन्तितम्—कथं अथापि प्रतीकारं करोमि १ । रमशानभूम्यां गतः । तत्र मृतकानां दाघं दातुं न ददते । मृतकमहत्त्वानुमानेन द्रव्यं याचते । लोकेः पृष्टम्—कस्त्वम् १ । राज्ञीशालकः । तस्य द्रव्यं ददाति । ततोऽनन्तरं दाघो भवति । तेन कियद्भिदिनैर्द्रम्माः सहस्रदशो मेलिताः । राज्ञः (०ज्ञा १) पुरोहितः पृष्टः । तन्नूम्यां समागतः । द्रम्मानां सहस्रं याचते । पश्चशत्या निर्वाहः । राज्ञोऽग्रे लोकेन रावा कृता । राज्ञा शब्दितः । स मुक्तकेशः कौपीनवासाः 15 प्रत्यक्षपिशाच इव दृष्टः । पृष्टः—कस्त्वम् १ । राज्ञीशालकः । कोऽपि राज्ञीशालको वर्त्तते कसिन्नगरे १ । तेनोक्तम्—'नव कोहलां ईछ तेर' एवं कुत्रापि वर्तते । तेन समस्ता द्रम्मा राज्ञः समर्पिताः । तस्य राज्ञा व्यापारो दृष्तः । नगरेऽन्यायो रिक्षतः । समस्तलोकानामुपकारकरो वभृव ।

६१. उद्यमविषये उदाहरणम्।

(३२३) उद्यमेन हि सिद्ध्यन्ति कार्याणि न मनोरथैः। पुरुषस्य चोपविष्टस्य देवता न च सिद्धिदाः॥

§ २३७) केनापि पुंसा देवी चामुण्डा आराधिता। परितोषं गता क०-याचख। तेन कथितम्-यचिन्तयामि तत्प्राप्तिः। तव भविष्यति-इति कृत्वा देवीभवनान्निःसृतः। चिन्तितम्-मम शरीरे सर्वाङ्गीणानि आभरणानि भवन्तु। जातानि। गृहस्रोपिर व्रजन्मार्गे सार्थेन सह चौरैर्दृष्टः। सार्थो गृहीतः। स उपविश्य स्थितः। केऽपि नंष्ट्रा गताः, केऽपि योधिताः। स लकुटैः कुट्टियत्वा गृहीतः। आभरणानि गतानि। शरीरे दृमितो गाढं देवीं 25 भज्जनाय लोढीं गृहीत्वा गतः। देव्या कथितम्-कथं मां भज्जसे १। त्वया चौरात् कथं न रक्षितः १। यदि युद्धं कुरुत त्वं तदा स्कन्धाभ्यामवतरामि, यदि पलायनं कुरुत तदा पादाभ्यामवतरामि। उपविश्य स्थितस्तदाऽहं किं करोमि १। देव्या स भङ्गं कुर्वनिषिद्धः। ततः स्वगृहे गतः। यदि उद्यमः कियते तदा सिद्धिर्भवति।

India Quality at House Control () the Arki

६२ दानविषये उदाहरणम्।

(३२४) पश्चाइत्तं परैर्दत्तं लभ्यते वा न वा खलु । खहस्तेनैव यद्त्तं तदत्तसुपतिष्ठति ॥

(३२५) सचस्तृप्यति भोक्तारं यस्योद्देशेन दीयते। सत्यं वदामि कौन्तेय! यो ददाति स भुञ्जते॥

§ २३८) कयाचित्रप्रोपितमर्तृक्या पत्यागमनकारणं विलोकयन्त्या दिना घनतरा गताः । मर्तुः पार्थात्पश्चा-देको जनस्त्रस्याः समाचारदर्शनार्थं समायातः । सा अन्यासक्ता दृष्टा । तया चिन्तितम्—अहमनेन ज्ञाता । स पुनरिप भर्चारं प्रति चलनाय लग्नः । तस्य चलतो द्वौ मोदकौ समिपंतौ सम्बलार्थम् । एको विषमिश्रितो द्वितीयो न । यथैष विषमिश्रितमोदकभक्षणेन विनश्य भर्तुरग्रे गृहस्त्ररूपं न कथयति । स चलितः । तस्येव ग्रामगोन्द्रके निर्विण्णो भर्चा तस्या उपविष्टो दृष्टः । श्रुधाऽऽकान्तः । तत्र द्वौ जनावुपविष्टौ । तेनैको मोदकस्त्रस्या भर्तृयोग्यं 10 दृत्तः । एकस्तेन भक्षितः । विषमिश्रितमोदकभक्षणेन लहितः । मूच्छां प्राप्तः । तावता दृण्डपाश्चिकप्र्वेतः ससला । लोको मिलितः । तस्योपद्रोतुं लग्नः । मारणार्थं नीतो जनः । भार्यायाः श्रुद्धिर्जाता । मोदकभक्षणेन दृरदेशादायातो मम भर्चा विनष्टः । स जनो मारणार्थं नीतोऽस्ति । तया चिन्तितम्—मम विरूपदानतस्तात्कालिकं फलं जातम् । अहमेनं जनं मुञ्चापयामि । तया तत्र गत्वा कथितः—याद्यं दानं दृत्तम्, तस्य तात्कालिकं. फलं दृष्टं ताद्यम् । जनो मुञ्चापितः । लोकानामग्रे कथितम्—याद्यं दीयते ताद्यं प्रत्यक्षं दृश्यते; याद्य दृत्तं 15 ताद्य लब्धम् । तस्याः सत्यकथनेन विषं जित्रत्वोत्तारितम् । स निरामयो जातः । तदनन्तरं सा तस्य विषये एकचित्ता गृहस्थम्ममं पालयति । याद्यदीयतेऽन्यस्य तादक् प्रत्यक्षं दृश्यते—इति भावः ।

.(३२६) अपलपित रहिस दत्तं प्रत्ययदत्तेन संशयं कुरुते। तस्य हि नश्यित सर्वं मूलतस्तान्निशम्यैताम्॥

६३. कर्णवाराविषये उदाहरणम्।

§ २३९) देवदत्तेन व्यवहारिणा प्रवहणगतेन एकसात्मीयवणिक्पुत्रस्य हस्ते चत्वार्यमूल्यकानि रत्नानि गृहे कलत्रयोग्यानि प्रहितानि । तेन वणिक्पुत्रेण चतुर्प्रामपूं(क्)टजनानां लक्षां दन्ता साक्षिणः कृताः । यदा देवदत्तः समायाति तदा युष्माभिरिति कथनीयम्—वयं साक्षिणः कृत्वा, तव कलत्रयोग्यानि चत्वारि रत्नानि प्रदत्तानि । कियद्भिदिनैः प्रवहणे समायाते देवदत्तः कुशलेनागतः । कलत्रपार्थे पृष्टम्—मया तव योग्यानि चत्वारि रत्नानि प्रहितानि, आनय तानि, प्रविलोक्यन्ते; रत्नपरीक्षकाणां दर्श्यते । तया कथितम्—मम योग्यं केनिचन्न समर्पितानि । 25 वणिक्पुत्रः पृष्टः । तेन कथितम्—मया चतुरो नगरमध्यस्थान् व्यवहारिणः साक्षिणः कृत्वा तव प्रियायोग्यानि समर्पितानि । वैरिप कथितम्—तव प्रियायोग्यानि समर्पितानि वयं साक्षीकृत्य निश्रयेनासिन्नर्थे न सन्देहः । तेन चिन्तितम् अहमनेन वणिक्पुत्रेण साक्षिभिश्च [म्रपितानि वयं साक्षीकृत्य निश्रयेनासिन्नर्थे न सन्देहः । तेन चिन्तितम्—अहमनेन वणिकपुत्रेण साक्षिभिश्च [म्रपितानि वयं साक्षीकृत्य निश्रयेनासिन्नर्थे न सन्देहः । देवदत्त-स्तस्य गेहे गतः । पुत्रस्य मात्रा स आवर्जितः । तया कथितम्—किमर्थं समायातः ? । कर्णवारां प्रच्छनाय । 30 तया कथितम्—अरे वत्स ! तव पिता नगरमध्यस्यां समग्रां कर्णवारां कुर्वन् लोकानां मध्याद्भहुतरं द्रव्यं समान-यत् । त्वं किमपि न कुरुपे । अन्यन्तां लघुं भणित्वा कोऽपि न मन्यते । मातरहमपि तस्य पुत्रो भवामि । समग्रं निर्णयं करिष्ये । यतः—

20

Centre for the Arts

(३२७) सिंहशिशुरपि निपतित मदकुलझङ्कारभूषिते करिणि। न पुनर्नखमुखविल्लि(लिखि)तभूतलकुहरस्थिते नकुले॥

तस समीपे देवदत्त उपविष्टः। कर्णवारा कथिता। व्यवहारिणश्रत्वारोऽप्याकारिताः। पृथक् पृथगुपविशिताः। तेषां समीपे पृ०, तैः क०-वयं साक्षीकृत्य तस्य प्रियायोग्यं समर्पितानि। भव्यम्। तेन स्वबुद्ध्या पडस्र्धीलोअको विभज्य चतुर्णां समर्पितः। कथितं च-यावन्मात्राणि सन्ति तावन्मात्राणि कुर्वन्तु। चत्वार्यपि रत्नानि तैः कूट-साक्षिभिरन्यादद्यानि २ कृतानि। तेन कर्णवारीपुत्रेण कथितम्-भोः वणिक्पुत्र! रत्नानि सकालेऽपि समर्पय, मा राजग्राज्यो(ह्यो) भव। एते क्टसाक्षिणश्र राजग्राह्या भविष्यन्ति। ततस्तेन श्रेष्टियोग्यानि रत्नानि समर्पितानि। पादयोश्र पतितः। कर्णवारीपुत्रस्य पदं जातम् । अतः सत्यां कर्णवारां कुर्वतां द्रव्यप्राप्तिर्यश्रश्र इह लोके परलोकेऽपि। श्रेष्ट्यपि रत्नानां सौष्ट्यं विलसित्वा स्वर्गभाग्जातः।

॥ इति कर्णवाराविषयकप्रवन्धः॥

(G.) सङ्ग्रहगता अविश्वाधाः प्रबन्धाः ।

§ २४०) श्रीवाक्पतिराजकविना भारतं कर्तुं प्रारब्धम् । तावता निश्चि द्वैपायनः समागतः । तेनोक्तम्-किमर्थं -पादमवधारिताः । तेनोक्तम्-तव पार्श्वे याचितुम् । किम् १ यत् त्वं भारतं मा कृथाः । पुरतकमर्पय । तेन तथा-कृतम् । गीर्वाणवाण्यपि निषिद्धा । ततो गौडवधनामा प्राकृतग्रन्थो विहितः ।

15 § २४१) श्रीसारंगदेवप्रयानो राज्ञा रामदेवेन पृष्टो निजस्वामिनः कीर्तिस्कृर्ति अवादीत्। राज्ञोक्तम्-सर्वं भव्यम्, परं पानं करोति । पानकः अयाङ्क् अलङ्कः । तेनोक्तम्-देव! सत्यम्, परं मातृ-भगिनी जानाति । रामदेवस्य पितृव्यसुता छखाईराणी अन्तः धुरेऽस्ति । इति श्रुत्वा लजितः ।

§ २४२) अथ अभयदेवनामा द्विजः प्रभासे सरखत्यां स्नानं विधाय समागत्य च श्रीसोमेश्वरं नमस्कृतः । तद्धर्मशिलायाः पुरः शक्ररी जीवन्ती पतिता तस्यैव शरीरे लग्ना मृता च । तेन सानुकम्पेन प्रायश्चित्तं पृष्टम् । 20 केनापीति गदितम्-सुवर्णरूपमयी दीयते शक्ररी । तेन न मानितम् । ततः सर्वत्र प्रायश्चित्तहेतोर्श्वमन् श्रीस्तम्भ-तीर्थे गुरुर्जीववधमांसभक्षणप्रायश्चित्तं सिद्धान्ते वाचयन्नभृत् । तेन श्चतम् । यद्यस्य जीवस्य यावन्तीन्द्रियाणि भवन्ति, तद्वधे तावन्मितशतोपवासा विधीयन्ते । तन्मानितम् । ततो दीक्षात्ता । श्रीअभयदेवसूर्यो जाताः ।

§ २४३) क्रम्भीपुरे यशोधनो व्यवहारी। तस्य पुत्रो विद्यानन्दो विस्तरेण परिणीतः। दीपालिकायामागता वधुः। तेनोक्तम्—कथा कथ्यतामिति। तया लजया नोक्तम्। सा ग्रुक्ता। ततः पित्राऽपरां परिणायितः। पूर्व25 वदुक्ते सापि ग्रुक्ता। पुनः पित्रा दूरं गत्वा कन्यां याचियत्वा परिणायितः। तया पृष्टया कथितम्—कीदशीं कथां कथयामि १ अनुभूतां, श्रुतां वा, दृष्टां वा। तेनोक्तमनुभूताम्। एवग्रुक्ते तया मन्दं २ द्रव्यं पितृगृहे प्रविष्टं कृतम्। एकदा निश्चि गृहं ज्वालितम्। तदनु निर्धनतयात्मचतुर्थकुदुम्वं निःसृतम्। कसिन्नपि नगरपाद्रे सम्बलमिषेण पिता गतः, मातापि गता, सोऽपि तां विहाय गतः। सा तु द्रव्यवलेन राजकुमारवेषं विधायावलगां जग्राह। तस्य पिता महिषविचोऽजनि। माता मासोपवासिन्यजनि। स कोरिको जातः। त्रयमपि तया संगृहीतम्। वर्षान्ते अवतम् । अद्यापि कथां कथयामि नो वा। जातम्। एवं पुनः व्यवहारी जातः विहितो भार्ययां।

Contro by the Ada

\$ २४४) क्रेनापि राज्ञा वाह्यालिगतेन कथित्युमान् करीरशिखरस्थानि करीराणि विचिन्वज्ञदितः —रे सुप्राप्यानि अमूनि विहाय कथं कष्टप्राप्यानि चिनोषि । तेनोक्तम्—सुप्राप्यानि पश्चादिष ग्रहीष्यामि, पूर्वमहमसाध्यानि साधिय-ष्यामि । राज्ञा तुष्टेन व्यापारो दत्तः । स महासुखं सुद्गे । एकदा प्रातः पृष्टः —कथसुन्मना इव दृक्यसे ?। तेनोक्तम्— कुसुमश्चय्यायां वृन्तेन दूमितोऽसि । ततो राज्ञा उन्मत्त इति सर्वमादाय व्यापाराक्रिवीसितः । एवं यावत्—

जा जा पडइ अवत्थडी०॥

5

§ २४५) राजा-ऽमात्य-तलारक्ष-व्यवहारिणां पुत्राः मित्राणि च कर्म-बुद्धि-विक्रम-व्यवसायान् मन्यन्ते । विवादे जाते देशान्तरं प्रति चलिताः । एकेन व्यवसायप्रयोगात् कस्यापि हट्टे द्रव्यप्रपार्जितम् । द्वितीयेन [धाटीतो(१)] ग्रामो रक्षितः । तृतीयेन बुद्धिवशात् तटस्थेन सरोवरमध्यकीर्तिस्तंभपाशो दत्तः । चतुर्थस्य कर्म-वशात् पदाभिषेको जातः ।

(३२८) यद्भविष्याधिको धीरैर्व्यवसायी प्रकीर्तितः। तसाद्प्यधिको लोके भाग्यवान् राजिलो यथा॥

10

§ २४६) कर्मोपक्रमप्रशंसकं नरद्वयं राज्ञा केनापि कूपे प्रक्षिप्तम् । दिनत्रयं जातम् । राज्ञा तयोमीद्कदशकं प्रहितम् । उपक्रमवता गृहीतम् । मोदकपश्चकं कर्मप्रशंसकस्यापितम् । तन्मध्ये रत्नपश्चकमभृत् । राज्ञा तौ वाह्यनि - क्वासितौ । भाग्याधिकेन रत्नानि दर्शितानि । अतो भाग्यमेव श्रेयः ।

§ २४७) वंसन्तपुरे जितशत्रुराजा सभां सचित्रां कारयन्नस्ति । अत्रान्तरे चित्रकरदारिका भक्तमादायागता । 15 - इतश्च बृद्धो बाह्यभूमो गतः । ततस्तया तत्र कीडया स्वि बहिंबहं चित्रितम् । ततो विलोकनायागतेन नृपेण पिच्छश्रान्त्या करः क्षिप्तः । नस्तावली भग्ना । सा हसिता । राज्ञोक्तम्—कथम् १ । तयोक्तम्—चत्वारोऽपि मूर्खाः । एकश्चतुष्पथे घोटकं त्वरयन् दृष्टः । द्वितीयो मम पिता, यो भक्ते समागते बहिर्गन्ता । तृतीयो राजा, यः समभूमि मत्पितुर्वृद्धस्य चित्रार्थं ददाति । तुर्यस्त्वम् । ततस्तेन सा परिणीता । ततः सा राज्ञोऽप्रे कथां कथयति—राजन् ! शृणु । कोऽपि अस्तमनं जातम् । स कथं जानाति । राजन् ! राज्यन्धत्वात् ।

द्वितीयदिने—राजन्! व्यवहारिस्ता काचित् पित्रा मात्रा आत्रा मातुलेन च चतुर्षु स्थानेषु दत्ता। लग्नदिने चत्वारोऽपि वरा विवादं विद्धते। सा विवादं विज्ञाय मृता। एकेन सह गमनं कृतम्। द्वितीयेन तस्या अस्थीनि तीर्थे प्रक्षिप्तानि । एकः पिण्डं ददाति । तुर्यो मृतसंजीविनीविद्याग्रहणार्थं देशान्तरे गतः । तेन कुत्रापि कृदमानं बालकं चुल्लके श्विप्तवती कापि नारी दृष्टा। तेनोक्तम्—आः किमेतद्विहितम् १। तया पुनर्जीवितः। तेन 25 तत्र विद्यामादाय सापि जीविता। पुनश्चतुर्णां वादो मारुयकेन भगः। येन जीविता स पिता। येनास्थीनि तीर्थे क्षिप्तानि स आता। यः सहोत्पन्नः सोऽपि आता। पिण्डदाता भर्ता ब्रेयः।

तृतीयदिने—केनापि राज्ञा चौरद्वयं [पेटीमध्ये निःक्षिप्य नद्यां] प्रवाहितम् । कस्मिन्नपि नगरे केनापि राज्ञा निष्कासितम् । पृष्टम्-कियन्ति दिनानि जातानि । ताभ्यां तुर्य दिनं [कथितं] कथं ज्ञातम् ? । राजन् ! चातु-र्थिकज्वरप्रभावतः ।

पु॰ प्र॰ स॰ 15

dire Gandhi Nation

चतुर्थं दिने-कस्यापि राज्ञोऽन्तःपुरद्वयम् । एकया महे गन्तुकामगा निजाभरणपेटिका कस्याश्चित्रिजसख्याः समर्पिता । तया हारश्चोरितः । तया समेतया पेटिकां दृष्टा कथितम्-मम हारः केनापि चोरितः । राजन् ! कथं

ज्ञातः ?। काचमयपेटित्वात्।

पश्चमिद्ने-कसापि राज्ञो रत्नचतुष्टयम्-नैमित्तिको, रथकारः, सहस्रयोधी, वैर्द्यश्च विद्यते । अन्यदा तस्य राज्ञः ५ सुता विद्याधरेणैकेनापजहे । ततो राज्ञोक्तम्-य आनेष्यति स परिणेष्यति । इत्यसुक्ते नैमित्तकेन मार्गो दर्शितः । रथकारेण गगनगामी रथश्चके । सहस्रयोधिना स जितः । सा राजपुत्री विद्याधरमारिता वैद्येन सजीकृता । एपां को भर्ता ? । वादे जायमाने तया काष्टमक्षणं कृतम् । नैमित्तिकेनापि तथा सह कृतम् । द्वाविष सुरंगान्त-भृत्वा सुखं स्थितौ ।

§ २४८) कुत्रापि केपामपि आचार्याणां जलोदरमुत्पन्नम् । केनापि वैद्येन खरूपं विलोक्य पृष्टम्-यूयं किं 10 कुरुथ ? । तैरुक्तम्-प्रन्थ एकः प्रारब्धोऽस्ति । तत्र सरोवर्णनं क्रियमाणमास्ते । तदवगत्यौषधं कारितम्, इत्युक्तं च-यन्मरुदेशवर्णनं विधत्त । तथाकृते आचार्याणां जलोदररोगोऽगमत् ।

§ २४९) केचिदाचार्या अतीव विद्वांसः कर्मयोगात् कुष्ठिनो जाताः । तत औषधोपचारैरपि रोगमनिवर्तमानं वीक्ष्य श्रीसेरीसके यात्रायां यात्वा देवाग्रे त्रिविधाहारप्रत्याख्यानं विधायोपविष्टाः । दिनसप्तकमजिन । पश्चा- चतुर्थाहारोऽपि त्यक्तः । तदात्वागतव्यन्तरैः स्थितव्यन्तरपार्श्वे पृष्टमिति—कथं भवतामियन्तो दिवसा महाविदेहे 15 लगाः । तैरुक्तम्—महं तेजःपालकलत्रं भीमगान्धिकगृहे सुतात्वेनोत्पन्नमास्ते । तथा परिणयनोचितया पाणि- ग्रहणं परित्यज्य श्रीसीमंधरस्वामिकरेण दीक्षा गृहीता । पित्रा पाणिग्रहणद्रव्यं तत्परित्रज्यायाः समये व्ययितम् । तदुत्सवं विलोकयतामसाकमियन्ति दिनानि लग्नानि । ततस्तैराचार्याणां कथितमिति—भवान् सप्तमभवे भाव- सारोऽभूत् । तेन रङ्गभाण्डतप्तजलेन वाडिमध्ये नक्कलनालकसप्तकं विनाशितम् । तेन कर्मणा त्वं सप्तमभवेऽसिन् कुष्टी जातः । तवायुः स्तोकमास्ते । कर्म्भापि परिक्षीणम् । यदि भणिस ततस्तवारोग्यतः दीयते । परमागामिभ- 20 वेऽपि कर्म वेदियिष्यसि । तद्वचो निश्चस्य प्रातः श्रावकानापृच्छय सुर्यस्तथैव स्थिताः ।

§ २५०) अन्यदा वामनश्यकीवास्तव्यः पण्डितवीसलो लोलीयाणके गतः। तत्र जायमाने जागरणे व्यासे-नैकेन वाहगसाग्रे लोलीयाणकं व्याख्यातम्। यद्य मनुष्याणामेकादशसहस्रा उपोषिताः सन्ति। स्नानं कुर्वन्ति च। वीसलेनोक्तम्-किं स्नानेनामुना १। पुरे मदीये लघुकासीरे वामनश्यकीनामनि गोलक्षमेकं वाल-ही-ओजेनिनदीद्वये स्नानं कृत्वा तृणमपि खादति।

25 § २५१) कस्यापि व्यवहारिणः स्त्रमे मुखे उन्दरिका प्रविष्टा । तेन रोगो जातः । पण्मासाः संजाताः । केनापि मतिमता वैद्येन भोजनं दत्त्वा ऊपालो दत्तः । तदन्तः कृत्रिमा मूपिकाः पतिताः । ततो नीरोगो जातः ।

§ २५२) बहूनां विदुषां सभाक्षोभो भवति, इत्यर्थे कथा-पण्डितौ द्वौ कुत्रापि पठित्वा कसिश्विदेशान्तरे महति रायतने गतौ । ततो बीजपूरकमेकं भेटाकृते गृहीत्वा भूपसमीपं गतौ । सभां महतीं विलोक्य क्षुभितौ । राज्ञः पुरो बीजपूरकं मुक्तम् । राज्ञोक्तम्-पूर्णं पूर्णं किमेतत् १ । पण्डितेनोक्तम्-राज्ञो भेटायां 'लींबउस'केन 30 भाव्यम् । ततो हिसतः । तावता द्वितीयेनोक्तम्-यत् भवति 'भसाक्षोभः' ।

Code Court to Selection

§ २५३) कच्छदेशे बहुचौरोपद्रवं विज्ञास राज्ञा जिणहा नामा व्यापारी प्रेषितः।स चौरं मारयत्येव । एकदा चारणेन चौरी कृता । स.धृतः आरक्षकेण । चारणं भणित्वा मित्रजिणहाकस्य देवपूजां विद्धतो विज्ञप्तम् । करसंज्ञया त्रित्रणोक्तम्—मारयत । तदा चार्रणेनापाठि । 'इक्क जिणहा ईक्क जिणवरह०'।

§ २५४) एकदा पारणादिनोपरि श्रीयशोभद्रस्रीणां क्षमाश्रमणानि समागतानि । दाक्षिण्यात्सर्वत्र मानितम् । ततस्तिहिने ग्रामग्रामात् श्रीसङ्घः सकलोऽपि मिलितः । यत्र न यान्ति तत्र ते श्राद्धा विषादं कुर्वते । अतस्तां 5 बहुरूपिणीं विद्यां स्मृत्वा रूपान् विधाय सर्वेषां मनोरथाः पूरिताः ।

§ २५५) रावणविजयं विधाय समेतेन श्रीरामेणायोध्याप्रवेशे समस्तलोकपार्थे 'धान्यस्य कुशलं गृहे' इत्थं पृष्टम् । लोकानां चेतसीति जातम् –यद्वर्षाणि चतुर्दशयावद्वने स्थितः । अन्नप्राप्तिनं जाता । अतः प्रथममेवेदं पृष्टम् । इङ्गिते राज्ञा तदवगत्य महाजनो निमन्नितः। प्रहरद्वये आकारितः । तेषां सुवर्णस्थाले महामूल्यानि रत्नानि सुक्तानि । एकेकस्थाभिम्रुखमालोकयति । एकेनोक्तम् –देव ! नवीना रसवतीयम् । परं रत्नानि न शक्यंते भोक्तम् । 10 यद्येवं जानीथ तदा मम पृच्छायां कथं हसिताः १ । शृणुत – 'उत्पत्तिर्दुर्लभा यस्य ।

(३२९) अन्नं प्राणा बलं चान्नम् अन्नं जीवितमुच्यते । परमौषधमन्नं हि सर्वमन्ने प्रतिष्ठितम् ॥

§ २५६) खरतराणामाचार्याणां निश्च कोऽपि रंको दुर्भिक्षे परिश्रमन् शालाद्वारि समागतः प्रकरोति ।
गुरुभिः श्रुतो वारितोऽपि न याति । ततो गुरुभिर्विहिनिःसृत्य वारितः—अरे ! अन्यत्र याहि । वयं दर्शनिनः ।
ततो विशेषतश्ररणयोर्लगित्वा स्थितः । ततो गुरुभिस्तपोधनम्रत्थाप्य श्रावकस्थैकस्याकारणं प्रहितम् । तस्य भोज-15
नायापितः । तेन निजगृहै नीत्वा निजवालकशीताशनं भोजितः । अत्याहारेण विम्नचिकया मृतः । शुभध्यनिन
व्यन्तरोऽजिन । ज्ञानेन ज्ञात्वा पुनरपि रंकवेषं विधाय तथैवागतः । गुरुभिरपि तथैवोत्थाय वारितः । स
निजरूपं प्रकटीकृत्येति जगाद—भगवन् ! भवतां प्रसादेन ममेदशी संपत्तिरजिन । ततः किमपि याचध्वम् ।
तैरुक्तम्—वयं किं याचामहे । यस्तवानं दत्तं तानेव हि व्यवहारिणो विधेहि । अपरं यो गुरून् पूजियध्यति
तस्य गृहे न दारिष्टाम्—इत्युक्त्वा मम पूजां कारय सर्वत्र ।

§ २५७) कस्यापि राज्ञो राज्ञी वदति-नृप! मम श्रातुर्व्यापारं देहि। विषजींयम् (१)। राजाह-राज्ञि! व्यापारस्तस्य दीयते, यो व्यापारं कर्जुं जानाति। सा न तिष्ठति। ततो दत्ता हस्तिपदरक्षा। ततश्रतुष्पथे लोकैः सह
कलहं क्रत्वाऽऽगतः। ततो राज्ञा कस्यापि पूर्वव्यापारिणो नित्यमवलगां विद्धतः पदश्रष्टस्य हस्तिपदे रक्षाव्यापारो दत्तः। चतुष्पथे तत्र डालं दत्त्वा यो य आयाति तस्य तस्याग्रे वदति-अत्र राज्ञो गजशाला भविताः,
अत्र पुनः पट्टहस्तिन आलानस्तम्भो भावी। एवं भणतस्तस्य व्यवहारिभिरुक्तम्-इह मा कृथाः, अस्मद्वृहाणि 25
पातियिष्यन्ति। इति च्छन्न कृत्वा द्रव्यं गृहीतम्। प्रातर्लक्षसंख्यधनान्यादाय राज्ञोऽत्रे ग्रुक्तानि। पृष्टं च नृपेण।
भणितो यथार्थः। हिर्पतेन भूपेन महान् व्यापारो दत्तः।

30

परिशिष्टम्. १. 1

प्रबन्धचिन्तामणिगुम्फितकतिपयप्रबन्धसंक्षेपः।

§ २५८) अवन्तिदेशे प्रतिष्ठानपुरे विक्रमो राजपुत्रो भट्टमात्रयुतो रोहणे तदासम्नपुरे कुम्भकारगृहे खनित्रम् । प्रातः खनीपार्थे भट्टेन मातुर्मृतिः । हा दैवमिति । सपादलक्षमूल्यं रत्नम् । वलन् भट्टेन कुशलम् । तत्करा-उदाच्छिद्य खनीकण्ठे-

(३३०) धिग् रोहणगिरिं दीनदारिक्र्यत्रणरोहणम् । दत्ते हा दैविमित्युंक्ते रत्नान्यर्थिजनाय यः॥
ततो अवन्तिदेशपार्श्वे पटहस्पर्शेन राजा । मुहूर्तं विनापि सो दध्यौ । कोऽपि कोपी सुरः प्रतिदिनं नृपं
हन्ति । निश्चीथे भोजनादीनि पल्यक्के निजदुक्लाच्छादितोच्छीर्पकम् । दीपच्छायामाश्रित्य कृपाणपाणिः । तुष्टोइहमित्रवेतालो भक्त्या । नित्यं देयम् । प्रतिपन्नम् । आयुःप्रश्ले खखामिप्रश्लः । शतमेकं नोनाधिकम् । यतः—

(३३१) सा नित्थ कला तं नित्थ ओसहं तं किं पि नित्थ विन्नाणं। जेण धरिज्ञइ काया खज्ञंती कालसप्पेणं॥

रणेन जितो अग्निवेतालः सिद्धः। यतः-

.(३३२) सत्त्वैकतानवृत्तीनां प्रतिज्ञातार्थकारिणाम्। प्रभविष्णुर्न देवोऽपि किं पुनः प्राकृतो जनः॥

§ २५९) प्रियङ्गमञ्जरी कन्या पं० वेदगर्भः । आम्रसंबन्धे कोपितः । पतिविलोकनाय वने, तृषा, पशुपालः, 15 करचण्डी । योग्यं ज्ञात्वा गृहे आनीतः । षण्मासीं वपुःसमारणा । खिस्ति० । प्रधानमुहूर्ते नृपसमायाम् । श्वीभात् । उशरद् । नृपविस्तयम् । पण्डितः प्राह-

(३३३) उमया सहितो रुद्धः शंकरः शूलपाणियुग् । रक्षतात् तव राजेन्द्र ! टणत्कारकरं यशः ॥
ततो नृपेण खपुत्रीं । पण्डितोक्तं मौनमेव कु । तया परीक्षार्थं पुत्तकशोधने विन्दुमात्रारहितान्यक्षराणि ।
निक्च्छेदिन्या महिपीपाल एव निर्णीतः । अतःप्रभृति जामातृशुद्धिः । चित्रभित्तौ महिपीनिवहे द्शिते तदाह्वा20 नोचितानि वचांसि । महिपीपाल एव नि । कालीदेवीमारराध । पुत्रीवैधव्यभीतेन नृपेण दासी । देव्येव तुष्टा ।
तज्ज्ञात्वा राजसुताऽऽगता तत्र । अस्ति कश्चिद् वाग्विशेषः १ । कुमारसंभवादिकाव्यत्रयम् । कालिदासप्रवन्धः ।
§ २६०) श्रे० दान्ताककारितावासगृहीतशयनेन पतामीत्युक्ते सुरे पत इत्युक्ते नृपे पतितं कनकपुरुषं प्राप्त-

वान् । [सुवर्ण] प्ररुपसिद्धिः ।

§ २६१) अन्यदा कोऽपि विदेशी साम्रद्रिकज्ञः । अपलक्षणराजा पण्णवितदेशस्वामी । कर्नुरात्रम् । कृपाणि-25 कामाक्त । अं दर्शयामि तव । ३२ लक्षणाधिकं नावगतम् । पारितोपिकर्म् । सत्त्वपरीक्षाप्रबन्धः ।

§ २६२) अथ परकायप्रवेशं विना सर्वमफलम् । श्रीपर्वते भैरवानन्दयोगिपार्श्वे पूर्वे तत्रागतविप्रेण सह प्राप्य बलन्तौ खदेशे मृतपट्टहित्तनमालोक्य-

(३३४) वर्ष्मप्राहरिके द्विजे निजगजस्याङ्गेऽविद्याद्वियया, विमो भूपवपुर्विवेदा न्यातिः श्रीडाशुकोऽभूत्ततः। पह्णीगात्रनिवेदानात्मनि नृपे व्यासद्य देव्या सृतिम्, विमः कीरमजीवयन्निजतनुं श्रीविक्रमो लब्धवान्॥

-परवपुःप्रवेशविद्यासिद्धिः।

१ नृपाभावे च देशं विनाशयति। (टिप्पनी)। २ प्रथमं धूमं ततो ज्वालां ततः साक्षात् सः। (टिप्पनी)। मेबदूत, रधुवंश। (टिप्पनी)।

§ २६३) श्रीविकमनृपो राजपाटिकायां श्रीसङ्घसहितं श्रीसिद्धसेनाचार्यं सर्वज्ञपुत्र इति । परीक्षार्थं मानसं नमस्कारम् । आचार्यण-.

(३३५) धर्मलाभ इति प्रोक्ते दूरादुच्छितपाणये। सूरये सिद्धसेनाय ददौ कोटिं नराधिपः॥ राज्ञा दीयमाने निरीहतया नाहतैराचार्येर्भूरनृणी विधीयतामनेन कनकेन ततस्तथैव कृतम्'।

§ २६४) अन्यदा कोऽपि निःखः करात्तायसकुशदरिद्रपुत्रकः । उपालब्धेन भूपेन दत्तदीनारलक्षमादाय गतः । 5 राजा तं पुत्रकं कोशे नि॰। यामत्रयेणागतगजाश्वलक्ष्म्यो निशि॰ सन्वादनुमता जग्धुः। चतुर्थयामे सन्चनामा पुरुषः । छुर्यात्मघातं यावत् । तावत् तस्मिन् तुष्टे स्खलिते च पूर्वगता अप्याजग्मः । गमनसङ्केतव्याघातिना सत्त्वेन विप्रद्धव्धानां न गतिर्योग्या वः । विक्रमादित्यसत्त्वप्रबन्धः ।

§ २६५) अथ श्रीभोजो नित्यं भावनाभावितः प्रातः रेटङ्कतान् ददौ । (३३६) रोदिको मन्नी-आपदर्थं धनं रक्षेत्। राजा-भाग्यभाजः क चापदः। मन्नी-दैवं हि कुप्यते कापि। राजा-सञ्जितोऽपि विनइयति॥

10

15

सभाभारपट्टे । पश्चशतीपण्डिताग्रे राजा-

(३३७) इदमन्तरमुपकृतये प्रकृतिचला यावदस्ति सम्पदियम्। विपदि नियतोदयायां पुनरुपकर्तुं कुतोऽवसरः॥

निजकरनिकरसमृद्ध्या धवलय भुवनानि पार्वणदादााङ्क !। सुचिरं इन्त न सहते इतविधिरिह सुस्थितं कमपि॥

अयमवसरः [सरस्ते सलिलैरुपकर्त्तुमर्थिनामनिशम्। इदमपि सुलभमम्भो भवति पुरा जलाभ्युद्ये॥]

(३४०) कतिपयदिवसस्थायी पूरो दूरोन्नतश्च भविता ते। तटिनितटद्रमपातनपातकमेकं चिरस्थायि³॥

(३४१) यदनस्तमिते सूर्ये न दत्तं धनमर्थिनाम् । तद्धनं नैव पद्यामि प्रातः कस्य भविष्यति ॥ -इति खकुतं श्लोकम्।

§ २६६) अन्यदा राजा राजपा० । [काष्ट्रवाहं प्रति-] (३४२) कियन्मात्रं [जलं विप्र! जानुदर्भ नराधिप!। कथमीदगवस्था ते न सर्वत्र भवादशाः॥] (३४३) लक्षं लक्षं पुनः [लक्षं मत्ताश्च द्श दन्तिनः। दत्तं भोजेन तुष्टेन जानुद्वप्रभाषिणे॥]25 § २६७) अन्यदा निशीथे राजा-

(३४४) यदेतचन्द्रान्तर्जलदलवलीलां पकुरुते तदाचष्टे लोकः शशक इति नो मां प्रति तथा। चौर:- अहं त्विन्दुं मन्ये त्वद्रिविरहाकान्ततरूणी-कटाक्षोल्कापातवणदातकलङ्काङ्किततनुम् ॥

30



एकदा रात्री नष्टचर्यायां तैलिकेन द्वीपदी पुनः २ प्रातः पृष्टः क०-अम्मीणउ संदेसडउ नारय कन्ह कहिज । जग दालिहिहि दुत्थिउ बलिबंधणह मुहूज ॥

२. जाउ रुच्छि धणकणकलिय अन मयगल मयमत्त । तरल तुरंगम जाउ सवि तउ म न जायसि सत्त ॥

३. हिमसमयो वनविद्वर्जवपवनस्तिडिच ते विभवम् । इन्त सहन्ते यावत् तावद् द्वम ! कुरु परोपकृतिम् ॥

15

20

25

(३४५) अमुष्मे चौराय प्रतिनिहितमृत्युपतिभिये प्रभः प्रीतः पादादुपरितनपादद्वयकृते । सुवर्णानां कोटीर्दश दशनकोटिक्षतगिरीन् करीन्द्रानप्यष्टौ मदमुदितगुञ्जनमधुलिहः॥

5 १२६८) खधर्मवहिकां ग्रेक्ष्य-

(३४६) तत्कृतं यन्न केनापि तइत्तं यन्न केन चित्। तत्साधितमसाध्यं यत् तेन चेतो न दूयते॥

इति दर्पान्धे पुरातनो मन्त्री कोऽपि श्रीविक्रमादित्यधर्मवहिकायां प्रथमं काव्यम्-

(३४७) अष्टौ हाटककोटयस्त्रिनवतिर्मुक्ताफलानां तुलां पश्चाद्यान्मदमत्तगन्धमधुपक्रोधोद्धराः सिन्धुराः ॥ तारुण्योपचयपपश्चितद्दशां वाराङ्गनानां द्यातं दण्डे पाण्ड्यन्येण ढोकितमिदं वैतालिकस्यार्पितम् ॥

इत्याकर्ण्य निर्गर्वनृपः।

§ २६९) आगतसरखतीकुटुम्बम् । दासी-

(३४८) बापो विद्वान् [बापपुत्रोऽपि विद्वान् आई विदुषी आई ध्यापि विदुषी। काणी चेटी सापि विदुषी वराकी राजन् मन्ये विद्यपुत्रं कुदुम्बम्॥] ज्येष्ठं प्रति समसापदम्-'असारात्सारमुद्धरेत्'। दानं वित्ता०।

तत्पुत्राय-

हिमालयो नाम नगाधिराजः, प्रवालशय्या शरणं शरीरम्-इति भूपवाक्यम् । (३४९) तव प्रतापज्वलनाज्ञगाल, हिमा०। चकार मेना विरहातुराङ्गी, प्रवाल०॥ ज्येष्टभायां प्रति-'कवणु पियावउं खीरु'।

(३५०) जईय रावणु जाइयउ दहमुह इक्कु सरीरु। जणि वियंभी चिंतवइ कवणु पियावउ खीरु॥

§ २७०) अन्यदा गूर्जरदेशविद्वत्ताज्ञानाय श्रीभीमं प्रति गाथा-

(३५१) हेलानिइलियमहे भकुं भपयडियपयावपसरस्स । सीहस्स मएण समं न विग्गहो नेय संघाणं॥

(३५२) अंधयसुआण कालो भीमो पुहवीइ निम्मिओ विहिणा। जेण सयं पि न गणियं का गणणा तुज्झ इक्कस्स ॥

श्रीगोविंदाचार्यकृता गाथेयम् । अन्धधृतराष्ट्र १०० सुता हता भीमेनेति ।

§ २७१) दामरसन्धिविग्रही । अत्यन्तकुरूपः ।	
(३५३) यौष्माकाधिपसन्धिविग्रहपदे दूताः कियन्त्रो द्विज!,	
मादक्षा बह्बोऽपि मालवपते! ते सन्ति तत्र त्रिधा।	
प्रेष्यन्तैऽधममध्यमोत्तमगुणप्रेक्ष्यानुरूपऋमं	
तेनान्तर्गतमुत्तरं प्रददता धाराधिपो रञ्जितः॥	-
§ २७२) अन्यदा शीत्तौँ निशि कंचिन्नरं प्रेक्ष्य प्रातः-कथं शीतं सोहम् १-त्रिचेल्या। राजा-का सा १	
(३५४) रात्रौ जानु[र्दिवा भानुः कृशानुः सन्ध्ययोर्द्धयोः।	
राजन्! शीतं मया नीतं जानु-भानु-कृशानुभिः ॥]	
§ २७३) भूपतितकणाशं रोरं प्रति-	
(३५५) नियउयरपूरणहा असमत्था तेहिं किं पि [जाएहिं।	10
सुसमत्था वि हु जे न परोवयारिणो तेहि वि न किं पि॥	
(३५६) परपत्थणापवन्नं मा जणि ! जणेसु एरिसं पुत्तं ।	
मा उयरे वि धरिज्ञसु पत्थियभंगो कओ जेण॥	
राज्ञोचे-कस्त्वम् ? तेनोचे-] राज्ञशेखरनामाहम् । तस्य हिस्तिनीदानं कृतम् । पुनस्तेनोक्तम्-	
(३५७) शीतत्रा न पटी॰, निर्वाता न कुटी॰, वृत्तिर्नार्भटी॰,	1
श्रीमद्भोज तव प्रसादकरटी भंक्तां ममापत्तटी ॥	
§ २७४) अर्जुनसाध्यो दुःसाधो राधावेधो भोजेन साधितः । हट्टशोभायां तैलिकेन स्विकेन स्विज्ञाने	न
र्गर्वः कृतः।	
६५८) भोजराज! मया ज्ञातं राधावेधस्य कारणम् । धाराया विपरीतं हि सहते न भवानपि	11
§ २७५) सर्वदेवांगजौ शोभन-धनपालौ । तदुपाश्रये श्रीवर्द्धमानस्रित्सैन्निमन्त्रितः प्राह-	20
६५९) भजेन्माधुक्रीं [वृत्तिं मुनिम्लेंच्छकुलादपि । एकान्नं नैव भुक्षीत वृहस्पतिसमादपिं ॥]	
६६०) अपमानात्तपोवृद्धिः सन्मानाच तपःक्षयः। अर्चितः पूजितो विप्रो दुग्धा गोरिव गच्छति	11
६६१) पुनराप्याय्यते धेनुस्तृणैरमृतसंभवैः। एवं जापतपोभिश्च पुनराप्याय्यते द्विजः॥	
-याज्ञवल्क्यः । संतोषतुष्ट आरब्धस्नाने धनपाले विहर्तुमागतसाधुभ्यां दिधसंबन्धेन बुद्धे-'कतिपयपुर	(-
गमी॰'।	25
बोधात्पूर्वं शोभनम्रुनिम्-गर्दभदन्त भदन्त ! नमस्ते । मर्कटकास्य वयस्य ! सुखं ते ।	
§ २७६) अन्यदा नृपो मृगया० । एण वेधे । धनपालः-	
(३६२) रसातलं यातु तवात्र पौरुषं कुनीतिरेषा शरणो ह्यदोषवान्।	
निहन्यते यद् बलिनापि दुर्बलो हहा महाकष्टमराजकं जगत्॥	
(३६३) किं कारणं तु धनपाल! मृगा यदेते व्योमोत्पतन्ति विलिखन्ति भुवं वराहाः?।	30
देव! त्वदस्त्रचिकताः श्रयितं स्वजातिमेके मगाङ्कमगमादिवराहमन्ये॥	

(३६४) वैरिणोऽपि हि मुच्यन्ते [प्राणान्ते तृणभक्षणात्। सदैवैते तृणाहारा हन्यते पदावः कथम्॥]

संन्यस्तमृगयो नृपो नगरं प्रति॰।

the following the beautiful the file of the Artis

निधानसंबन्धे प्रतिबोधः सर्वदेवस्य । शोभनस्य दीक्षा (टिप्पनी) ।

(३६५) नाहं खर्गफलोपभोग[तृषितो नाभ्यर्थितस्त्वं मया, सन्तृष्टस्तृणभक्षणेन सततं साधो न युक्तं तव। खर्गं यान्ति यदि त्वया विनिहता यज्ञे ध्रुवं प्राणिनो, यज्ञं किं न करोषि मातृपितृभिः पुत्रैस्तथा बान्धवैः॥]

5 पुना राजप्रश्न:-यूपं कृत्वा०।

(३६६) सत्यं यूपं तपो ह्याग्निः कर्माणि समिधो मम । अहिंसामाहुतिं दद्यादेष यज्ञः सनातनः ॥
-इति ग्रुकसंवादादर्हद्वर्गीभिम्रुखो राजा ।

§ २७७) अन्यदा सरखतीकण्ठाभरणप्रासादे खत्तके रत्या सह हस्ततालदानपूर्व सारं मृर्तिमन्तमालोक्य हासायोक्तः पण्डितः प्राह−

10 (३६७) स एष भुवनत्रयप्रधितसंयमः शंकरो, बिभर्ति वपुषाऽधुना विरहकातरः कामिनीम् । अनेन किल निर्जिता वयमिति प्रियायाः करं, करेण परिताडयन् जयति जातहासः सरः ॥

> (३६८) पाणिग्रहे पुलकितं वपुरैशं भूतिभूषितं जयति । अङ्करित इव मनोभूयस्मिन् भसावशेषोऽपि ॥

> > इत्यादिना त्रीतो नृपः।

15 § २७८) यानवणिग्मदनमयपद्धिकायां प्रशस्तिकाच्यानि । नृपोक्तः स आह । नीरधौ शिवायतने, मदन-पट्टिकां नियोज्येयं प्रशस्तिः ।

(३६९) अयि खलु विषमः पुराकृतानां भवति हि जन्तुषु कर्मणां विपाकः । सर्वेरिप पण्डितैरस्रोत्तरार्द्धे पूर्यमाणे विसंवदित नृपोक्तो धनपालः-

हरशिरसि शिरांसि यानि रेजुईरिहरितानि लुठन्ति गृधपादैः॥

- 20 चेद्विसंवादस्ततः कवित्वनियमः। राजा तदैव यानानि नीरधौ। तथैव कृते पण्मासैः काव्यार्द्वम्। §२७९) तिलकमञ्जरीग्रन्थे वाच्यमानेऽधः कचोलम्। [मामत्र कथानायकं, विनीता स्थाने अवन्ती, शका-वतारपदे महाकालं कुर्वन् यद्याचसे तत्तुभ्यं ददामीति।]
 - (३७०) दोम्रहय निरक्खर लोहमइय नाराय तुज्झ किं भणिमो । गुंजाहिं समं कणयं तुलंतु न गओसि पायालं॥
- 25 राज्ञा दग्धा कोपात् सा प्रतिः । सुतासान्त्रिध्यात् पुनरुद्धरिता ।

§ २८०) कापि पर्वणि स्नानव्यग्रे लोके अलब्धिभक्षो भार्याताडितो विप्रो राजनरैः सभानीतः । राजोक्तः-

(३७१) अंवा तुष्यति न मया न [खुषया सापि नाम्बया न मया। अहमपि न तथा न तया वद राजन्! कस्य दोषोऽयम्॥]

सर्वपण्डितानवबोधे खबुद्ध्या राजा ज्ञात्वा लक्षत्रयी प्रसादीकृता । कलहमूलं दारित्यमेव ।

30 § २८१) अन्यदा सर्वदर्शनमुक्तिमार्गे पृष्टे पण्मासावधौ निशि श्रीशारदा नृपं प्रति—'श्रोतच्यः सौगतो०।' श्लोकमिमं राज्ञे दर्शनिभ्यश्च समादिश्य तिरोहिता।

(३७२) अहिंसालक्षणो धर्मो मान्या देवी सरखती। ध्यानेन मुक्तिमाप्नोति सर्वेद्दीननां मतम्॥

§ २८२) .परोन्नत्यां राज्ञोक्तः श्रीमानमुङ्गस्तरिरात्मानमापाद[४४]शृङ्खलाबद्धं कारियत्वा प्रति काव्यं शृङ्खला-भङ्गः । इत्थं प्रभावना । श्रीमानतुङ्गाचार्यप्रबन्धः ।

(३७३) उत्थायोत्थाय बोव्हव्यं किमच सुकृतं कृतम् । आयुषः खण्डमादाय रविरस्तमयं गतः॥ (३७४) लोकः पृच्छति मे वार्तो शारीरे कुशलं तव । कुतः कुशलमस्माकं आयुर्याति दिने दिने॥

(३७५) श्वः कार्यमय कुर्वीत पूर्वाह्ने चापराह्निकम् । मृत्युर्ने हि प्रतीक्षेत कृतं चास्य न वा कृतम् ॥ ३ (३७६) मृतो मृत्युर्जरा जीर्णा विपन्ना किं विपत्तयः। व्याधयो व्याधिताः किन्न दृप्यन्ति यदमी जनाः॥

॥ श्रीहर्षसानित्यताश्लोक ४ प्रवन्धः ॥

§२८३) श्रीभोजो भीमं प्रति वस्तु ४। वेश्यया स्पृष्टः पटहः। गणिका १, तपस्त्री २, दानेश्वर ३, धूत-कार ४−इति वेश्योक्तम्। श्रीभीमो भोजं प्रति प्रा०। वस्तुचतुष्टयप्रवन्धः।

§ २८४) अन्यदा निश्च वीर०-

10

(३७७) माणसणा(डा) दस दस दसा सुणीइ लोअपसिद्ध । मह कंतह इक्क ज दसा अवर ति चोरिहिं लिद्ध ॥

प्रातः कृपयानीय प्रत्येकं लक्षमूल्यं बीजपूरद्वयं प्रच्छनं दत्तम् । तेन तत् खरूपमज्ञात्वा पत्रशाकाहे । तेना- प्यज्ञाते कस्यापि मेटार्थम् । तेन श्रीभोजाय ।

(३७८) वेलामहल्लकलोलपिल्लियं जइ वि गिरिनईपत्तं। अणुसरइ मग्गलग्गं पुणोवि रयणायरे रयणं॥

15

परेषामदशाः । यतः-

(३७९) प्रीणितादोषविश्वासु वर्षास्विप पयोलवम्। नामुयाचातको नूनं नालभ्यं लभ्यते कचित्॥

(३८०) सुखस्य दुःखस्य न कोऽपि दाता परो ददातीति कुबुद्धिरेषा। पुराकृतं कर्म तदेव भुज्यते शरीर हे निस्तर यत्त्वया कृतम्॥

20

† टिप्पन्याम्-पुरा मयूर-बाणाख्यौ भावुकशालकौ राजमान्यौ । बाणः स्वभगिनीमिलनाय ययौ । मयूरेण निश्चि तामनुनीयमानाम-श्रुणोत् ।

'गतप्राया राग्निः कृशैतनु शशी शीर्थत इव प्रदीपोऽयं निद्रावशसुपगतो घूर्णित इव । प्रणामान्तो मानस्त्रजसि न तथापि कुधमहो...

भूयो भूयः पठन् बाणः-

कुचप्रत्यासत्या हृद्यमपि ते चंडि ! कठिनम् ॥'

सा लिखार प्रतिकाल्यं सिककपदं श्चिरिकया छिन्दन् पंचिमः कार्येनिरालम्बः, सूर्यप्रसादात् पुनर्नवो देहः । राज्ञो विस्मयः । मयूरस्त्रदीर्घ्यया पादौ पाणी च छित्ता पष्ठेऽक्षरे भवानीप्रसादेन नवौ पाणी पादौ च जातौ । तयोमिहिमा वादश्च । राजादेशात् काश्मीरं प्रति चेळतुः । सरस्वत्यादेशेन जिताजितनिर्णये जितस्य पुस्तकानि अप्नौ ज्वाल्यानि-इति प्रतिज्ञा । धारासमीपे-रे रे शाटकमलनिर्धाटक! नगरे का वार्ता? । अश्वावहं । । लोहकार०-सृतका यत्र० ॥ कुलाल.......लिकया-पर्वताप्रे० ॥ नापितस्य-जलनाडी पत्थरि० ॥ चित्रकरस्य-विहितानिर्विषा ॥ सरस्वतीपुरे देव्या समस्यापिता-'शतचन्द्रं नभस्तलं ।' 'दष्टं चाणूरमल्लेन' । बाणेन शीघ्रं-दामोदरकराघातविद्वलीकृतचेतसा दृष्टं ॥ मयूरस्य सूर्यसान्निध्यात् पुस्तकेष्वदग्धेषु ह्योमानम् । शिवशासनं विनाःन्यत्र कास्तीदशी शक्तिस्ततो.....चाहूताः श्रीमान-तुङ्गाचार्यः ।

पु॰ प्र॰ स॰ 16

15

(३८१) लोकं विलोका धनधान्यवरेण्यपुण्यं प्राप्य प्रधानवनिताजनिताभिरामम्। किं मृढ! कांक्षसि मुधा वसुधातलेऽस्मिन् रे जीव पीवरतरं सुकृतं कृतं न॥ ॥ बीजपूरप्रवन्धः॥ '

§२८५) एको न भव्य इति [रात्रौ] पाठितेन शुकेन सभायां [प्रातः] केनाप्युत्तरमददता पण्मासावधि ग्राचित्वा वररुचिर्देशान्तरं अमन् श्वमोचादानासमर्थपशुपालं लात्वा वस्नान्तरितस्कन्धारोपितश्वः। नृपसभां नृपप्रश्नः। स प्राह-देव! लोभ एको न भव्यः। यतः-

- (३८२) अहो लोभस्य [साम्राज्यमेकच्छत्रं महीतले । तरवोऽपि निधिं प्राप्य पादैः प्रच्छादयन्ति यत्॥]
- (३८३) तावन्नीतिर्विनीतत्वं मितः शीलं कुलीनता । यावन्नहि जयी लोभः क्षोभं नाभ्येति जन्तुषु ॥ ॥ एको न भव्य-प्रवन्धः ॥
- (३८४) कविषु कामिषु भोगिषु योगिषु द्रविणदेषु जितारिषु साधुषु । धनिषु धन्विषु धर्मधनेषु च क्षितितले नहि भोजसमो दृपः ॥
- (३८५) किं नन्दी किं मुरारिः किम्र रितरमणः किं विधः किं विधाता, किं वा विद्याधरोऽयं किमथ सुरपितः किं नलः किं कुवेरः। नायं नायं न चायं न खलु निह न वा नापि नासौ न चैष, कीडां कर्तुं प्रवृत्तः खयमि च हले भूपितभौंजदेवः॥
 - (३८६) क्षुद्राः सन्ति सहस्रदाः खभरणव्यापारमात्रोद्यताः, स्वार्थो यस्य परार्थ एव स पुमानेकः सतामग्रणीः ।

† एतद्त्रे टिप्पन्यां इमे श्लोका लिखिता लभ्यन्ते—

देव त्वं जय! कासि ? लुब्धकवध्ः पाणौ किमेतत्पलं, क्षामं किं सहजं व्यामि नृपते यद्यस्ति ते कौतुकम् । गायन्ति त्वदरिप्रियाश्चतिटनीतीरेषु सिद्धाङ्गनाः, गीतान्धा न चरन्ति देव! हरिणासेनामिषं दुर्वलम् ॥ सीतेति नाम । वादी नष्टः ।

चेतोहरा युवतयः स्वजनोऽनुकूळः सद्बान्धवाः प्रणयगर्भगिरश्च भूताः ।
गर्जन्त दन्तिनिवहास्तरलास्तुरङ्गा राजन् ! न किंचिदिह नेत्रनिमीलनेऽस्ति ॥ १ ॥
शीतत्रा न पटी न चामिशकटी नास्ति द्वितीया पटी, निर्वाता न कुटी प्रिया न गुमटी भूमौ च घृष्टा कटी ।
वृत्तिनारभटी न तुन्दलपुटी नायास्ति मे सङ्कटी, श्रीमद्भोज ! तव प्रसादकरटी भंकां ममापत्तटी ॥ २ ॥
वक्त्रांभोजं सरस्वत्यविवसति सदा शोण प्वाधरस्ते, बाहुः काकु स्थवीर्यस्मृतिकरणपटुर्दक्षिणस्ते समुद्रः ।
वाहिन्यः पार्श्वमेताः कथमपि भवतो नैव मुज्जन्त्यभीक्ष्णं, स्वच्छेऽत्र मानसेऽस्मिन् कथमवनिपते तेऽम्बुपानाभिलाषः ॥ ३ ॥

आवाल्याधिगमान्मयैव गमितः कोटिं परामुन्नतेरसाःसंकथयैव पार्थिवमुतः संप्रत्यसौ लज्जते । इत्थं खिन्न इवात्मजेन यशसा दत्तावलम्भोऽम्बुधेर्यातस्तीरतपोवनानि तपसे बृद्धो गणानां गणः ॥ ४ ॥ शौर्यं शत्रुकुलक्षयाविध यशो ब्रह्माण्डभाण्डाविधस्त्यागस्तर्कुकवाञ्छिताविधिरेयं क्षोणी समुद्राविधः । श्रद्धा पर्वतपुत्रिकापतिपदद्वन्द्वप्रणामाविधः श्रीमद्भोजमहीपतेर्निरविधः शेषो गुणानां गणः ॥ ५ ॥

सुरताय नमस्तुभ्यं जगदानन्ददायिने । अत्र विजया-आनुषङ्गि फल्टं यस्य भोजदेव भवादशाः ॥ ६ ॥ 螹

दुःपूरोदरप्रणाय पिबति स्रोतःपर्ति वाडवो, .जीमूतस्तु निदाघसम्भृतजगत् सन्ताप्विच्छित्तये॥

॥ श्रीभोजप्रवन्धः ॥

§ २८६) सपादलक्षप्रहितक्षुरिकातः पालिताब्दयुगशीला वक्कलादेवी वेश्या श्रीभीमेनोढा । तसाः पुत्रः हर-पालदेवस्तदङ्गजिल्लक्षयवनपालदेवस्तस्य श्रीकुमारपालः । श्रीसिद्धभीतः कियन्त्यब्दानि देशान्तरे व्यतिक्रम्यागतः 5 पत्तने श्रीकर्णश्राद्धे । आलिगकुम्भकारगोपितः । ततः क्षेत्रे स्डमध्ये अन्वागतनरैः कुन्ताग्रेण । ततः प्रान्तरं व्रजन् उंदरदंका २०; ततो दिनत्रयक्षुधार्तः । क्यापि करम्भकेन प्रीणितः । एवं परिश्रमन् उदयनपार्थे शम्बलार्थं स्तम्भतीर्थे पौषधागारं गतः । उदयनपृष्टाः श्रीहेमस्ररयः—राजायं भावी । द्वयोः प्रत्येकं राज्यप्राप्तिपत्र-मर्पितम् । कुमारः—यद्यदस्तथ्यम् , ततस्त्वमेव राजाऽहं सेवकः । प्रश्वभिर्जनशासनप्रभावकेन भाव्यमिति हृष्टो मित्रणा शम्बलादिना प्रीणितो मालवे । कुण्डिगेश्वरप्रासादे ।

(३८७) पुन्ने वाससहस्से सयंमि वरिसाण नवनवइ अहिए। होही कुमरनरिंदो तुह विक्रमराय सारिच्छो॥

गाथामालोक्य जातप्रत्ययः । श्रीसिद्धस्तं श्रुत्वा तमाचोरितर्व्वाकवाहडेन नामा(?) पत्तने मुहडासाप्रताप-मह्नपत्नी बा० ऊमादे बंधुर्वणिगट्टे ।

(३८८) पुत्रादिप प्रियतमैकवराटिकाणां मित्रादिप प्रथमयाचितभाटकानाम्। आजानुलम्बितमलीमसञाटकानां वज्रं दिवः पततु मूर्प्ति किराटकानाम्॥

प्रातर्भावुकेन राजसभां नीतः । संवृतांचल एकः । योजितकरोऽन्यः । कुमारपालः पश्चाग्रद्वर्षदेवयो राज्यम् । हता राजवृद्धाः विश्वासघातकत्वात् । नर्मादिपरभावुकाङ्गभङ्गो नेत्रकर्षणम् । यतः-

(३८९) आदौ मयैवायमदीपि नृनं तन् नो दहन्मामवहेलितोऽपि। इति भ्रमादङ्गलिपर्वणाभिस्पृदोत नो दीपमिवावनीपम्॥

(३९०) प्रभासमृद्धिरेवैषा जीवितं राज्यसंपदः । यथाम्भः कमलशोभायै तैलं वा दीपदीधितेः ॥ शास्त्रम् । ततः प्रोढिमा । आलिगकुम्भकारस्य सप्तश्चतप्राममितचित्रक्रृटीयपट्टी । श्रीउद्यनाङ्गजो महामात्यो बाहडदेवः । कर्षका अङ्गरश्चपदे ।

§ २८७) श्रीपत्तने लातानशनाम्बाविमानभङ्गे विश्रीरत्यस्यया श्रीहेमस्रिर्मालवे । 'आपण पइं प्रसु०' इति चिंतापराः । श्रीउदयनोक्तागमाः कृतज्ञमौलिना श्रीकुमारेणोक्तम्-नित्यं आगन्तव्यम् । श्रीहेम०-सुंजीम० ॥ 25 राजा एको वासः । इति प्रेत्य शुभायेति । ततः सदा गमनागमने । कोऽपि मत्सरी । विश्वा० ॥ सिंहो० ॥ रात्रौ भोजने । अधामधा० ॥ मृते खज० ॥

(३९१),पयोदपटलच्छने नाश्चन्ति रविमण्डले। अस्तं गते तु भुञ्जाना अहो भानोः सुसेवकाः॥
यश्चन्द्रगणिनासने प्र०।राजा-जीवं विना कथं प्र०१। गुरवः-भवतां गजाद्या रिपौ सजी०, उत नित्येवायं
राजच्यव०। तद्गुणरिक्षतेन पूर्वप्रतिपन्नराज्ये दीयमाने प्रभुः। राजप्रति०॥ संनिहीणि०॥ इति प्रीणितो ३०
राजा। श्रीहेमस्रिचिरित्रं पृष्टः श्रीउदयनः प्राह-

§.२८८) धन्धुके [मोढकुले] चाचिग-चाहिणिपुत्रश्राङ्गदेवोऽष्टाब्दः श्रीदेवचन्द्रसूरिभिस्तत्रागते रममाणो दृष्टः।

१ संवत् ११९९ वर्षे कार्तिक श्रुदि २ रवौ हस्ते पट्टाभिषेकः।

25.

लक्षणानि वीक्ष्य-यद्ययं क्षत्रियकुले तदा सार्वभौमः, यदि विणग्-निप्रकुले तदा महामात्यः, चेहर्शनं प्रतिपद्यते तदा युगप्रधान इवेति विचार्य तत्पुरसङ्घं मेलियत्वा गृहं गताः । चाचिगे प्रामान्तरे मात्रा स्वागतादिना
श्रीसङ्घर्त्तोषितः । श्रीसङ्घो मत्पुत्रार्थमागत इति हर्षाश्रृणि सुञ्चन्ती स्वं रत्नगर्भ मन्या विषणा । स्तरतिपता
मिथ्यात्वी। प्रामेऽपि नास्ति । सजनानुमता माता गुरुभ्यो निजं पुत्रं ददो । आचार्यः प्रश्ने ओमित्युचरन् गृहीतः ।
तत् ज्ञानान्सुक्ताहारः पुत्रदर्शनावधि चाचिगः । उदयनः स्वावासे बांधवभक्त्या प्री० । तदनु चाङ्गदेवं तदुत्सङ्गे
निवेश्य पञ्चाङ्गप्रणामपूर्वं दुक्लत्रयं लक्षत्रयं च ढोिकितवान् । चाचिगः प्राह-क्षत्रियमूल्ये १०८०, अश्वमूल्ये
१७५०, सामान्यस्थापि वणिजो मूल्ये नवनवित कलभौ इति । त्वं लक्षत्रयं ददत् स्थूललक्षायसे । मत्सुतोऽनर्घ्यस्तवभित्तरनर्घ्यतमा तिर्हे अस्य मूल्ये भित्तरस्तु। द्रव्यं न लामि। मन्त्री-साधु साधुः युक्तं बृहि। चाचिगःयूयमेव प्रमाणम् । ततो गुरुभ्यो द०।

10 (३९२) धनधान्यादिदातारः सन्ति कचन केचन । पुत्रभिक्षाप्रदः कोऽपि पुनरत्र न दृश्यते ॥ दीक्षया कुलयुगोज्ज्वलनम् । यतो महाभारते-

(३९३) तावद् भ्रमन्ति संसारे पितरः पिण्डकांक्षिणः। यावत् कुछे विशुद्धात्मा यती पुत्रो न जायते॥ श्रीहेमस्रिपादाः।

§ २८९) श्रीसोमेश॰ राजादेशात् । यत्र तत्र समये॰ ॥ १ ॥ भवबी॰ ॥ २ ॥ राज्ञाऽऽरात्रिकाद्यनु तमेकान्ते विवार्गागारे-मत्समस्त्वत्समः शंभ्रसमो निह । भाग्यवशादेतत्रयसंपत्तिः । शिवदं देवं ब्रूहि । आचार्याः-ईशमेव प्रादुःकुर्वे । यथा तन्मुखेन शिवमार्गं वेत्सि । नृपाश्चर्यम् । आवयोरेकाग्रयोः सर्वं सुकरम् । मया ध्यानं त्वया धृपोत्क्षेपः । जलाधारोपरिहेमाभः । दुरालोकश्वश्चपातिरूपः । असंभाव्यखरूपः । तपसी प्रादु॰ । राज्ञः स्तुतिः । नृपेणादेशं देहीत्युक्ते, मोहनिशादिनमुखात्तनमुखादिति तद्वाणी । राजन्नयं महिषः सर्वदेवतावतारः । ज्ञानमयः । एतिहृष्ट एवासन्दिग्धो मोश्चः । तिरोद्धे । श्रीहेमाचार्यो राजिकिति यावद् ब्रूते, राजा तावन्ननाम 20 पादांभोजम् । तदादेशात्त्यकं मांसमद्यम् । ततः पत्तने बोधः । आज्ञावर्तिषु॰ । तृतीयंत्रताधिकारे मृतकद्रव्य-द्वासप्तितश्वमितं पद्धं पाटितवान् ।

§ २९०) सुराष्ट्रासंसुमाररणे आसुनानीतद्शायां काष्ट्रप्रासादोऽपनीय नव्यपापाणरचनायां कृताभिग्रहो रण-भग्न उदयनो देवद्रव्यं २ याचन् स्वजनैरुक्तं वाहडामडसुतौ करिष्यथः । पात्राभावे तद्वेषधारिणं वण्ठं ननाम । आराधना ।

(३९४) जिने वसित चेतिस त्रिभुवनैकचूडामणौ कृतेऽनदानसिद्धधौ सकललोकबद्धाञ्जलिः। समस्तभवभावनाप्रतिकृतिं समभ्यस्यतः स चान्लसम्मयक्षणः कचिदुपैति पुण्येऽहिन ॥

स्वर्गः । वण्ठोऽपि तद्भावनाद्रैवतेऽनशनः । ततः स्वजनैः पत्तने उक्तौ वाहड-आम्बडौ कृताभिग्रहौ । वर्षत्रवेण संपूर्णः प्रासादः । मम्माणिविम्बम् ।

३ ९९ लक्षाः स्यु:-टिप्पनी । २ देशेषु अष्टादशसु १४४४ प्रासादाः का० । मारि निवारवामास ।

(३९५) त एव जाता जगतीह जन्तवः खंकीयवैशस्य त एव भूषणम् । य एव देवे च गुरौ च बान्धवे यथाखमौचिखविधानतत्पराः ॥

> मोक्षार्थे खधनेन शुद्धमनसा पुंसा सदाचारिणा। बद्धं तेन नरामरेन्द्रमहितं तीर्थेश्वराणां पदम्, प्राप्तं जन्मफलं कृतं जिनमतं गोत्रं समुद्योतितम्॥ ॥ श्रीशत्रुद्धयोद्धारः॥

§ २९१) कपर्दिनानुमतेन केनापि सभायां कामन्दकीनीतौ-

(३९६) पर्जन्य इव भूतानामाधारः पृथिवीपतिः । विकलेऽपि हि पर्जन्ये जीव्यते न तु भूपतौ ॥ राज्ञोक्ते 'मेघस्य राज्ञ उपम्या ।' इति संसद्धेषें । श्रीकपिदैनोक्तम्-उपमा १, औपम्यं २, उपमेयं ३ । ततो 10 नृपेण वर्षेण व्याकरणं काव्यम् । विचारचतुर्भुखप्रवन्धः ।

§ २९२) 'रोम्णां ग्रहणमाकरे' मूलपाठे पं० उदयचन्द्रः प्राह-'प्राणित्वीङ्गाणा'मित्ये कत्वम्। ततो रोम्गो ग्र०॥

§ २९३) घृतपूरयोग्यायोग्ये । एकभिडवन्धप्रासादाः ३२ कारिताः । प्रायश्चित्तप्र० ।

§ २९४) उन्दरद्रव्येणोन्दरवसही कारिता। करम्भसम्बन्धे करम्बकविद्दारः । सपादलक्षीयमारितयूकव्यवहा-रिसारेण यूकावसही ।

§ २९५) नृपेणोक्त आलिगनामा प्रधानपुरुषः प्राह-श्रीसिद्धेऽष्टनवित्युणाः, द्वौ दोषौ । त्विय द्वौ गुणौ, दोषा अष्टनवितिरित्युक्ते, असमाधौ छुरिकां चक्षः । श्रीसिद्धस गुणाः ९८ रणासुभटता-स्त्रीलम्पटताम्यां तिरो-हिताः । तव कार्पण्यादयो दोषा रणशूरता-परनारीसहोदरताभ्यां तिरोहिताः । आलिगप्र० ।

(३९७) युकालिक्षदातावलीवलवलहोलोहलत्कम्बलो दन्तानां मलमण्डलीपरिचयादुर्गन्धरुद्धाननः। नासावंद्यानिरोधनाद्गिणिगिणत्पाठप्रतिष्ठास्थितिः सोऽयं हेमडसेवडः पिलपिलत्खिहः समागच्छति॥

अशस्त्रो वधः । पौषधागारपार्थे । श्रीयोगशास्त्रं श्रुत्वा-

(३९८) आतङ्ककारणमकारणदारुणानां वक्त्रेषु गालिगरलं निरगालि येषाम् । तेषां जटाधरफटाधरमण्डलानां श्रीयोगशास्त्रवचनामृतमुजिहीते ॥

॥ वामराशिवित्रप्रवन्धः ॥

§ २९६) सुराष्ट्रातश्चारणी-(३९९) लच्छि वाणि मुहकाणि ए पइं भागी मुहु मरउं। हेमसूरि अत्थाणि जे ईसर ते पंडिआ।। नृषेण दत्तसहस्तप्रभुपादानां प्रा० आरात्रिकानं०-

20

25

15

plot cootin to said

15

20

(४००) हेम तुहाला कर मरू जिह अचन्भुअरिद्धि। जे चंपह हिठा मुहा तीह उपहरी सिद्धि॥

त्रिःपाठे लक्षत्रयम् । चारणप्रबन्धः ॥

§ २९७) यात्रामनोरथे नृपे युगलिका—डाहलदेशीयः श्रीकर्णस्त्वां प्रति । राजा खेदं गुर्वन्ते । श्रेयांसि० ॥१॥ कृ प्रश्चः—प्रारम्यते० ॥ प्रारम्य विभिन्दता । विभैः० ॥ २ ॥ द्वादशयामे धर्मेण विभापगमः । किंकर्तव्यमृदो नृपः । ताम्बृलत्यागे । युगलिका—रात्रौ प्रयाणे वटलप्रकण्ठहारेण मृतः श्रीकर्णः । द्वासप्ततिसामंतयुतः श्रीसङ्घेन सह सप्तदशहस्तमिते प्रश्चजन्मभूमिखयंकारितविहारे प्रभावनां कृत्वा श्रीशत्रञ्जये । त्वया चरणग० ॥ १ ॥ यत्त्वया जगतीनाथ । न्यहन्यत मनोभवः० ॥२॥ दुक्खक्खउ० ॥३॥ विविधप्रार्थनावसरे—इकह पुल्लह० ॥४॥ पठितनवे चारणे नवलक्षान् ददौ राजा । नृपादेशात् आंबडेन त्रिषष्टिलक्षे रैवतकपद्या । तीर्थयात्राप्रबंधः ।

10 § २९८) देशादाकारितश्रीदेवचन्द्रस्रितिः कनकोत्पत्त्यवसरे । मुद्गरसप्रायदत्तविद्यया त्वमजीर्णभाक्, कथ-मिमां विद्यां मोदक० तव मन्दाग्रेर्द्दामि इति । श्रीहेमचन्द्रस्रिरदेवत्वात् ६ मासै राजाऽपि ।

> (४०१) खस्ति श्रीमति पत्तने नृपगुरुं श्रीहेमचन्द्रं मुदा खःशकः प्रणिपत्य विज्ञपयति खामिन् त्वया सत्कृतम्। चन्द्रस्याङ्कमृगे यमस्य महिषे यादस्सु यादःपते-विष्णोर्मतस्यवराहकच्छपकुले जीवाभयं तन्वता॥

(४०२) नम्रं शिरः कुरु तुरुष्क कलिङ्ग लिङ्गं त्यक्तवा वनं व्रज गजवजमङ्ग यच्छ। मुश्रायुधं मगध मालव मालपोचैर्नन्वेष गूर्जरपतिः कुपितोऽभ्युपैति ॥

(४०३) मौलिं मालवनायको नमयति खामङ्गुलिं जाङ्गल-खामी कृन्तित दक्षिणक्षितिपतिर्गृह्णाति दन्तैस्तृणम् । सिन्धौ सिन्धुपतिर्निमज्जति नगोत्सङ्गे च वङ्गेश्वरो नइयत्याद्यु निशम्य यस्य जियनः प्रस्थानभेरीखरम् ॥

॥ श्रीक्रमारपालप्रबन्धः ॥

§ २९९) [मरुवास्तव्यः] श्रीमाल ऊदाको विणग् वर्षायां घृतक्रयार्थम् । [टिप्पण्याम्-रात्रौ व्रजन् कर्म-करैरेकसात्केदारादपरिसन्नीरैः पूर्यमाणे 'के यूयम् ?' अग्रकस्याग्रकाः । ममापि क्वापि सन्ति ? । तैः कर्णावत्यां 25 तवापि सन्ति । शकुनप्रन्थिः । सकुदुम्बस्तत्र कर्णावत्यां [वायटीय]प्रासादे छीम्पिकाभोजनं तद्द्तस्थितिः । लक्ष्मीशृद्धौ नव्यावासस्वाते निधिः । ततः स उदयनमन्त्री । [टि०-तत्रातीतादिचतुर्विशतिजिन ७२ सगलंकृतः प्रासादः कारितः ।]

(४०४) कृतप्रयत्नानिप नैति कांश्चन खयं शयानानिप सेवते परान् । द्वयेऽपि नास्ति द्वितयेऽपि विद्यते श्रियः प्रचारो न विचारगोचरः॥

30 तदक्कजा बाहडदेव १, आम्बड २, चाहड ३, सील् ४ [अपरमातृकाः]।

鰤

§ ३००) सान्तू राजपा० खकारितप्रासादे वाराङ्गनास्कन्धन्यस्तहस्तं कमपि चैत्यवासिनं ददर्श । देवान् वन्दित्वा स नतः । स लजितः श्रीमलधारहेमान्ते प्रवज्य संवेगात् श्रीशृतु झये १२ वर्षं तपस्तेपे । (४०५) रे रे चित्त कथं भ्रातः प्रधावसि पिशाचवत्। अभिदं पश्य चातमानं रागत्यागातसुखी भव॥ (४०६) संसारमृगतृष्णासुं मनो धावसि किं मुधा। सुधामयमिदं ब्रह्मसरः किं नावगाहसे॥

देववन्दनाय तत्र गतः श्रीसान्तुःसं प्रेक्ष्य विस्रयः । सः-

(४०७) जो जेग सुद्धधम्मंमि ठाविओ संजएण गिहिणा वा। सो चेव तस्स जायइ धम्मगुरू धम्मदाणाओ ॥

॥ लजाप्रबन्धः ॥

§ ३०१) जित ८४ वादः कुमुदचन्द्रः श्रीदेवस्त्रिव्यरत्तप्रभः प्रदोषे गुप्तवेषो रात्रौ कु० मठे । तेन कस्त्व-मित्युक्ते । अहं देवः । को देवः । अहम् । अहं कस्त्वं था । श्वा कः । त्वम् । त्वं कः । अहं देवः । इति 10 चक्रभ्रमदोषात्।

हंहो श्वेतपटाः किमेष कपटाटोपोक्तिसण्टक्कितैः संसारावटकोटरेऽतिविकटे मुग्घो जनः पास्रते। तत्त्वातत्त्वविचारणासु यदि वो हेवाकछेशस्तदा सत्यं कौमुदचन्द्रमङ्गियुगलं रात्रिंदिवं ध्यायत॥

15

कः कण्ठीरवकण्ठकेसरसटाभारं स्पृशत्यंहिणा कः'कुन्तेन सितेन नेत्रकुहरे कण्डूयनं काङ्क्षित । कः सन्नह्यति पन्नगेश्वरशिरोरतावतंसश्चिये यः श्वेताम्बरशासनस्य कुरुते वन्चस्य निन्दामिमाम् ॥

श्रीसिद्धराजसभावादावसरे कुमुदः श्रीहेमचन्द्रं प्रति । पीतं तक्रम् । श्रेतं तक्रम्, पीता हरिद्रा । युवयोः को 20 वादी ? । श्रीदेवस्वरिभिरयं वालः । अनेन को वादः । त्वमेव बालो योज्यापि कटीद० वस्तं न धत्ते ।

- (४१०) खद्योतस्रतिमातनोति सविता जीणोंर्णनाभालय-च्छायामाश्रयते दाशी मराकतामायान्ति यत्राद्रयः। इत्थं वर्णयतो नभस्तव यशो जातं स्मृतेगोंचरं तद्यस्मिन् भ्रमरायते नरपते ! वाचस्ततो मुद्रिता ॥
- नारीणां विदधाति निर्वृतिपदं श्वेताम्बरपोह्नसत्-कीर्तिस्कातिमनोहरं नयपथप्रस्तारभङ्गीगृहम्। यस्मिन् केवलिनो विनिर्जितपरोत्सेकाः सदा दन्तिनो राज्यं तज्जिनशासनं च भवतश्चीलुक्य! जीयाचिरम्॥



25

§ ३०२) ३६०००० ग्रामकन्यकुङ्जदेशकर्याणकटकपुरे श्रीभूयराजा राजपा० । स्त्रीं प्रेक्ष्य कामार्तः । यतः— (४१२) न पद्यति दिवा घूकः काको नक्तं न पद्यति । कामार्तः कोऽपि पापीयान् दिवा नक्तं न पद्यति ॥

खनरेणानायि प्रोक्तखनीचत्वार्त-पूर्वे धृतकरा सा मुक्ता लिखतेन राज्ञा । स्वकरौ छेदितौ गवाक्षगौ निज-5 यामिकैरेव । महाकालाराधनादागतौ करौ । मालवदेशं तसौ दत्त्वा तापसः संजातः ।

§ ३०३) कन्य० एकदेशगूर्जर० वडीयारदे० पश्चासरग्रामे चापोत्कटवंश्यं झोलिकास्थं बालं वनाऽग्रे आरोप्य माता रन्धनादिः श्रीशीलगुणस्रिभिस्तन्मातुर्श्च दच्वार्षितो वीरमितगणिन्या पाल्यमानः। वनराजनामा ८ वर्षः। देवपूजा विना० मृषकान् मार०। गुरुणा निषिद्धोऽपि दण्डयोग्या अमी। तस्य जातके राजयोगं मत्वाऽयं महाराजा भावीति मातुः सम०। [चौर मातुलेन सह] धाट्यादिना चरित। काकरग्रामे धनिगेहं सुष्णन् दिधिभाण्डे 10 करे पतिते सुक्तोऽहमिति सर्व हित्वा गतः। अन्यदा तद्भिगन्या श्रीदेव्या निश्चि गुप्तवृत्त्या बन्धुवात्सल्यात् स्नानादिनोपकृतो मम राज्ये त्वयैव तिलकं विधेयम्। अन्यदा चौरैः कापि वने रुद्धेन जाम्बाकेन ५ शरमध्यात् २ भग्ने। श्रीवन[रा]जेनोक्तं मे महामात्यो भावीति।

§ ३०४) अथ कन्यकु० तद्राजसुता महणका कंचुकसंबन्धे गूर्जर० पश्चकुलं पण्मासैरुद्राहित २४ लक्षपारुथ-कद्रमान्, ४००० तेजीतुरङ्गान्, [सौराष्ट्रघाटे] लात्वा यान् श्रीवनराजेन हत्वा वर्षं वने स्थित्वा, पुरनिवेशाय 15 भूमिं विलोकयता अणहिलगोपः प्राप्तस्तेन यत्र शशकेन श्वा त्रासितस्तत्र तन्नाम्नाणहिल्लपुरम्। [५० वर्षायः] प्रतिपन्नभगिन्या तिलकम्। जाम्बाको महामात्यः। आचार्यवचसा श्रीपार्श्वप्रतिमालंकृतं निजाराधकमृतिंयुतं पत्रासरं कारितम्। सं० ८०२।

§ ३०५) श्रीमृलराजा³ [स्वकारितप्रासाद] धर्मस्थानारश्चं विलोकयन् सरस्वतीतीरे एकान्तरोपक पंचप्रास्याक कांथडिकं तपस्विनं आरोपिततृतीयज्वरकम्पमानकंथाकं प्रेक्ष्योवाच । सर्वथा कशं न हीयते । म्रुनिः-अभुक्तं

20 कर्म न० । नृपेण धर्मस्थानरक्षणायाभ्य० सः ।

(४१३) अधिकारात् त्रिभिर्मासैर्मठापत्यात्रिभिर्दिनैः । इति नरकवाञ्छा चेहिनमेकं पुरोहितः ॥ इति निषिद्धो नृपः ।

§ ३०६) श्रीपरमारवंश्यश्रीहर्पभूपो राज० शरवणमध्ये जातमात्रं वालं प्राप्य देव्यै० स मुझ इति नाम । ततः [राजः] सीन्धलः सुतः । मुझे राज्यं रुद्रादित्यो महामात्यः । उत्कटत्वात्सीन्धलो निष्काशितः । गूर्जरदेशे 25 कासद्रासने निजपल्लीं कृत्वोवास । दीपाली निश्चि मग० चौरवध्यभूमिपार्थे शूकरं प्रति वाणम् । शबेन सङ्केतः । सीन्धलेन निवार्य शरेण हतः किरिः । सीं० तव सङ्केतकाले शूकरवधः श्रेयानथाधुनेति । तत्साहसतुष्टः । प्रेतो भूम्यपाति वाणवरं श्रीमुझानत्यसमयं प्रकाश्य गतः । मालवे गतः । श्रीमुझसम्पदैकदेशं प्राप्तः । पुनरुत्क० नेत्रे किर्पते । ग्राममेकं दत्तं ग्रासार्थम् । पञ्चरगेन भोजः सुतः । तज्ञातकम् ।

३ टि०-१०९८ वर्षे मूलराज्याभिषेकः।

मुखार्कः श्रूयते शास्त्रे सर्वकल्याणकारकः । अधुना मुखराजेन योगश्चित्रं प्रशस्यते ॥ स्वप्रतापानले येन लक्षहोमं वितन्वता । सुचितस्तत्कलत्राणां बाष्पावग्रहनिग्रहः ॥ कच्छपलक्षं हत्वा सहसाविकलम्बराजमायातम् । संगरसागरमध्ये घीवरता द्शिता येन ॥

४ टिप्पन्यां-वयजलदेवनामानं निजं विनेयं तेन राज्ञोऽभ्यर्थनया जात्यचुस्णसाष्टी पलानि सृगमद ४ कर्ष्र १ द्वात्रिंशद्वाराङ्गनाः । प्वं ग्रा० कृत्वा स्थापितः स्वयं ब्रह्मचारी० । राज्ञा परीक्षा । ताम्बूलप्रहारेण कृष्टिनी सज्जां च० इत्यादि ।

५ दि०-गय गय रह गय तुरय गय, पायकडानि भिच । समाद्विड करि मंतणुं महंता रुदाइच ॥

१ टि॰-सतीत्वं दासदास्य ऽहं सत्यम् । २ राज्यरक्षायै परमारराजपुत्राबियोज्य ।

(४१४) पश्चादात् पश्चवर्षाणि मासाः सप्त दिनत्रयम्। भोक्तव्यं भोजराजेन सगौडं दक्षिणापथम्॥

[ज्ञानिपार्श्वात्पुत्रभिक्षां याचितः। अभ्यस्तशास्त्रषद्त्रिंशदण्डायुधः, अधीत्य ७२ कलाऽकूपारपारंगतः समस्त-लक्षणलितः स ववृधे।] इत्याकर्ण्य श्रीमुक्केनान्त्यजेभ्यः स०। तैः सानुकम्पैरभीष्टदेवं स०।

(४१५) मान्धाता स महीपतिः कृतयुगालंकारभूतो गतः, सेतुर्येन महोदधौ विरचितः कासौ दशास्यान्तकः। अन्ये येऽपि युधिष्ठिरप्रभृतयो यावत् भवान् भूपते, नैकेनापि समं गता वसुमती मन्ये त्वया यास्यति॥

इति राज्ञे सम । श्रीमुझः खेदादि । यौवराज्ये भोजः।

§३०७) अथ तिलङ्गदेशपतैलपनृपरणे बद्धो मुझः । कारायां तद्भगिन्या सह भार्या सं० । मृणालवती स्वमुखं दर्पणे विलोकयन्ती विषण्णा मुझेनाभाणि ।

(४१६) पभणइ मुंज मुणालवइ जुवणु गियउं म झूरि। जह सकर सयखंड थिय तोह स मींठी चूरि॥

इति तां मो० । निजप्रधानदापितसुरङ्गासङ्केते राजा तां प्रतीक्षमाणस्तया स्वित्रातुः कथितम् । तैरुपेन प्रतिकुटं भ्राम्यमाणो मुद्धः-

(४१७) सउ चित्तहं [सट्टी मणहं बत्तीसडी हियाहं। अम्हे ते नर ढाढसी जे वीसस्या त्रीआहं॥ 15

(४१८) झोली त्रृटी किं न मूयउ किं न हूउ छारह पुंज । हींडइ दोरी दोरीयउ जिम मंकडु तिम मुंजु ॥

एकसिन् दिने एकां भिक्षोत्तरं कुर्वाणां स्त्रीं प्राह मुझ:-

(४१९) भोली मूघि म गबु करि पिक्खिव पहुसयाई। चऊदसहं बहत्तरहं मुंजह गयह गयाई॥

[इत्थं सुचिरं भिक्षां भ्रामित्वा भूपादेशात्] अन्यदा वधकाले [नरैरुक्तमिष्टदैवतं सरेत्युक्तं] मुझेन-(४२०) लक्ष्मीर्यास्यित गोविन्दे वीरश्रीर्वारवेश्मिन । गते मुझे यशःपुक्ते निरालम्बा सरस्वती ॥ श्रूलीप्रोतं नित्यं दिधिलप्तमौलिं तैलपः कारयामासामर्पादिति ॥

§ ३०८) कियतां कार्पटिकानां त्वं राज्यं ददासीति भवान्योक्तो भवस्तां गां पङ्कमग्नां कृत्वा नृरूपस्तटस्थः पान्थान् उ० । तैरासम्वश्रीसोमेश्वरदर्शनोत्कैरुपहसितः । केनापि कृपावता पथिकवृन्देनोद्धरणप्रारम्भे सिंहरूपेण व्यम्भुना त्रासिते कश्चिदेकोऽवज्ञातभयस्तस्याः पार्श्वे स्थितः । स एव योग्यो राज्यस्थेत्युक्ता गौरी भवेनेति ।

१ टि॰-इदं काव्यं पत्रके आलिख्य नृपतेः समर्पयामास । तद्दर्भनात् नृपतिः खेदमेदुरी भूणहत्माकारिणं स्वं मन्यमानः । श्रीभोजो-नमानितयुवराज्यादिना । मुझस्तु तिलक्कदेशीयराज्ञा तैलपदेवनाम्ना सह योह्यं गतः । तेन भन्नो बद्धः विडंड्य निपातितश्च ।

२ तज्ञ गतोऽसौ वृद्धां मां त्यस्यतीति विसृशनया।

३ टि॰-आपद्गतं इसिस किं ब्रविणान्धमुग्ध, लक्ष्मीः स्थितः न भवतीह किमत्र चित्रम् । किं खं न पश्यसि घटीजेळयञ्चचके, रिक्ता भवन्ति भरिताः पुनरेव रिक्ताः ॥ १ ॥

15

§ ३०९) कश्चित्कार्प० श्रीसोमेश्वरयात्रायां यान् पथि लोहकारौकिस निश्चि भार्यया खपितं छुर्या हैत्वा कार्प-टिकशिषे छुरी मुक्ता बुम्बापातः। तलारकैस्तस्य करौ छिन्नौ। तेन दैवोपालम्मे निश्चि श्रीसोमेशः पूर्व एकेनाजा कर्णयोर्धता परेण मारिता। ततः साऽजेयं नारी, येन मारिता स पितः। त्वया कर्णौ धृतौ। तदागमे उछ-सितकोपे त्वत्करौ गतौ। ततो मे उपालम्भः कथिमिति॥ कृपाप्रबन्धः॥

5 §३१०) प्रतिष्ठाने श्रीशातवाहनो राजपा० आसन्ननद्यां झपहासे ज्ञानसागरसाधुना-त्वं पूर्वं काष्ठवाहको नित्यं सक्तुतीमनम् । अन्यदा मासोपवासिनं मुनिं प्रेक्ष्य पूर्वभवे कस्यापि न दत्तम् । यतः-

(४२१) रम्येषु वस्तुषु मनोहरतां गतेषु रे चित्त ! खेदमुपयासि कथं वृथा त्वम् । पुण्यं कुरुव्व यदि तेषु तवास्ति वाञ्छा पुण्यैर्विना नहि भवन्ति समीहितार्थाः ॥

तद्दानाच्वं श्रीशातवाहनः । देवग्रस्तझपेण ह० ।

10 (४२२) मीनानने प्रहसिते भयभीतमाह श्रीशातवाहनमृषिभेवतात्र नद्याम् । यत्सक्तुभिर्मुनिरकार्यत पारणं प्राक् दैवाद्भवन्तमुपलक्ष्य झषो जहास॥

जातस्मृतिः । अहोदानम् । यतः-

(४२३) दानपात्रमधमर्णमिहैकग्राहि कोटिगुणितं दिवि दायि। साधुरेति सुकृतैर्यदि कर्तुं पारलौकिककुसीदमसीदत्॥

(४२४) पूर्वपुण्यविभवव्ययबद्धाः सम्पदो विपद् एव विसृष्टाः । पात्रपाणिकमलार्पणमासां तासु शान्तिकविधिर्विधिदृष्टः ॥

ततः प्रभृति पात्रदानादि ॥ श्रीञ्चातवाहनपात्रदानप्रबन्धः ॥

§ ३११) खेडमहास्थाने देवादित्यसुता रूपवती बालविधवार्कसन्धुखावलोके तेनैव युक्ता, गर्भे, वने युक्ता। पुत्रजन्म। साष्टाब्दः। लेखशालिकपराभृतो मातृपार्श्वे पितृनामानवग्रम्य मर्तुकामोऽर्केण करे कर्करोऽपितः। साप20 राघे शिलान्यथा तवैव शिलेत्युक्तः। ततः स शिलादित्यः। तत्पुरनृपेण परीक्षाये तथा कृते मृते राज्ञि स एव
राजाः अर्कदत्ताश्वारूढो नमश्रर इवेच्छाविहारी महाप्रतापी जैनमुनिवासितः श्रीशत्रुख्योद्धारकः। कदाचित्सौगतैः
श्रेताम्बरपराभवे श्रीशत्रु० अधिष्ठितम्। तद्भागिनेयो महानामा क्षुष्ठः। वेषपरावर्तेन बौद्धपार्श्वे पठन् निशीथे खे
यान्त्या भारत्योक्तः के मिष्टाः। वह्याः। पुनः पण्मासान्ते निश्येव केन सह। वृतगुडाभ्यामित्युक्ते तुष्टायां भारत्यां
जिताः सौगता निःकाशिता देशात् शिलादित्यं सभापतौ। तत आचार्यपदं श्रीमह्नवादिद्धरिः॥ मह्नवादिप्रबन्धः॥

25 § ३१२) श्रीमालपुरे माघपण्डितः । पित्राऽपि [टि०-कुम्रुदपण्डितेन] खपुत्रापित्राकरणाय वर्षशतिदन-मितनाणकहारकान् दत्त्वा भोगायानेकशो दत्त्वा च विषेदे । तिहद्धयाँगतश्रीभोजं सवलं रख्जयामास । मरकत-बद्धा भूमिर्दिच्या । काचबद्धा सश्चारक्त्रभूः । दैवज्ञोक्तप्रान्ते पादे श्वयथुः । पुण्यक्षये देशमोचः । यतः-

९ टिप्पण्यां—भोजान्ते भोजनम् । शीतवौँ प्रावरणम् । प्रच्छादककदशनं भोजितः छादितश्च रात्रौ स्तोकान्नं स्निग्धम्*। प्रतलमा-च्छादनम् । श्रुपिरत्रम्बकस्तम्भान्तःप्रविष्टाभितापेन न शीतावौँ राजा ।

^{*} दिप्पण्या उपरि दिप्पणी—५०० गर्वा दुग्धं २५० पानं यावत् ४ गावः । तापिते तस्मिन् कण्डारकेण शालिविधीयते पाके शर्करा-दिना संस्कृते स्तोके परिवेषिते राजा तृष्ठः ।

(४२५) देशं स्वमिष मुश्रन्ति मानम्लाने महाशायाः । दिंवावसाने ब्रजति द्वीपान्तरमहर्मणिः ॥ धारायां गतः । पुरतकप्रहणकार्पणपूर्वं श्रीभोजात्कियद् द्रव्यमानेयुमित्युक्ता भार्या गतोपलक्षिता नृपेण । विषादः । पुरतकाद्यपत्रे काव्यम्

(४२६) कुमुदवनमपश्चि श्रीमदम्मोजखण्डं त्यजित मुद्रमुख्कः प्रीतिमांश्चकवाकः। उदयमहिमरिइमर्याति शीतांशुरस्तं हतविधिललितानां ही विचित्रो विपाकः॥

असैव काव्यस सर्वोर्वामूल्यम् । परं लक्षं १, सा मार्गे याचकैः । नाक्षराणि ० – प्रस्मृतः किमथवा ।।
गृहागता पत्या प्रशंसिता । अन्यदा भिक्षा ० – अर्था न सन्ति न च ग्रं ।।
(४२७) दारिक्र्यानलसन्तापः शान्तः सन्तोषवारिणा । दीनाशाभङ्गजन्मा तु केनायम्रपशाम्यति ॥
वजत वजत प्राणाः ।। ततो मृतः । नृषेण तज्ञातेर्भिक्षमाल इति ।। पण्डितमाघप्रवन्धः ॥

§३१३) डाहलदेशे देमतराज्ञी महायोगिनी गणकवचसोत्तम्भितगर्भा १६ यामान् यावत् श्रीकर्णजन्म । 10 अष्टमयामे सापि मृता । मुखे हारावाप्तिर्नयन० ॥ श्रीकर्णप्रवन्धः ॥

§ ३१४) श्रीसिद्धराजोपरोधेन श्रीहेमव्याकरणं १ वर्षेण सम्पूर्णम् ।

(४२८) भ्रातः पाणिनि ! संवृणु प्रलपितं कातस्रकन्था वृथा
मा कर्षाः कटु शाकटायनवचः क्षुद्रेण चान्द्रेण किम् ।
कः कण्ठाभरणादिभिर्बठरयत्यात्मानमन्यैरपि
भ्रूयन्ते यदि तावदर्थमधुराः श्रीसिद्धहेमोक्तयः ॥

§३१५) मालवान्महास्थाने श्रीसिद्धराजा जैनप्रा० ध्वजं प्रेक्ष्य कुपितः। विप्राः−देव अयं ध्वजारोपः पुरापि। यतो नगरपुराणे−

(४२९) पश्चादादौ किल मूलभूमेर्ददोर्द्धभूमेरि विस्तरोऽस्य। उच्चैस्त्वम्रष्टैव तु योजनानि मानं वदन्तीति जिनेश्वराद्रेः॥

ततो जैनप्रा० ध्वजाः ।

§ ३१६) डाहलदेशीयनुषसमंखामता । 'आयुक्तः प्राणदो लोके।' प्रिता श्रीप्रश्वभिः।

§३१७) जाम्बान्विधिश्रीसञ्जनदण्डेशेनोद्ग्राहितवर्षत्रयसुराष्ट्राद्रव्येण काष्ट्रप्रासादमपनीय श्रीनेमित्रासादो-द्धारः। चतुर्थवर्षे आनायिते सञ्जने नृपेण द्रव्ये मार्ग्यमाणे तत्रत्यागतव्यवहारिभिदीयमाने । द्रव्यं पुण्यं वावधा-रयतु स्वामीत्युक्ते सञ्जने राजा पुण्यमग्राहीत् । ततः पुनरप्यधिकारः । तीर्थद्वये योजन १२ ध्वजा दत्ता ।

१ टिप्पण्याम्-अर्था न सन्ति न च मुञ्जिति मां दुराशा त्यागाञ्च सङ्कुचिति दुर्केलितः करो मे । याञ्चा च लाववकरी स्ववधे च पापं प्राणाः स्वयं त्रजत किं परिदेवितिन ॥ श्चत्क्षामः पथिको मदीयभवनं पृच्छन् कृतोऽप्यागतस्तिकं गेहिनि किंचिदिस्त यदयं भुद्धे श्चुधापीडितः । वाचास्तीत्यिभिधाय नास्ति च पुनः मोक्तं विनैवाक्षरैः स्थूलस्थूलविलोकलोचनगलद्वाष्पाम्भसां विन्दुभिः ॥

· श्रीमालेषु धनवत्सु सत्सु श्रुधाविनष्टे पुरुषरते भिल्लमा**०**।

२ टिप्पणी-दण्ड-मुण्ड-डम्भनानि सोमेश्वरे दृष्ट्वा सिदेशस्य गिरिनारे हर्षः ।



20

(४३०) चपव्यापारपापेभ्यः खीकृतं सकृतं न यैः। तान् धृलिधावकेभ्योऽपि मन्ये मृहतमान्नरान् ॥

॥ इति श्रीरैवतकोद्धारप्रवन्धः ॥

§ ३१८) अन्यदा श्रीसिद्धराजः श्रीसोमेश्वरयात्रां कृत्वा वलन् रैवतं गन्तुमिन्छविंप्रैर्मात्सर्याछिङ्काकारमिति निषद्धः श्रीशत्रञ्जये आकृष्टकृपाणिकैविंप्रैनिंपिद्धो रात्रौ कार्पटिकवेषेणारुरोह । सरोमाञ्चं देववन्दनम् । द्वादश-ज्यामोद्वाहितं दत्तम् ।

§ ३१९) श्रीपत्तने आभडवणिय कांस्यकारगृहे घर्घरादिना ५ विशोपकैराजीविकः । श्रीहेम० पार्धे २ प्रति-कामन अधीतरत्नप॰ परिग्रहं प्रमाणीकुर्वन प्रश्लभिः सामु॰ द्रमा ३ [लक्षाः-टि॰] मोकला मोचिताः। अन्यदा कापि प्रामेऽजाव्रजं चरन्तं प्रेक्ष्य कण्ठे पाषाणं मुल्येन लात्वा मणिकारपार्श्वादुत्तेजितं श्रीसिद्धराजम्रक-टावसरे लक्षद्रव्येण दत्तम् । तेन द्रव्येणागतमाञ्चिष्ठाठामानि क्रीत्वा तद्विक्रयावसरे सांयात्रिकैर्जलचौरभयात्तद-10 न्तर्निहिता हैमकाम्ब्यः । ततः श्रीसिद्धराजमान्यो जैनप्रासादादि ॥ वसा० आभडस्य प्रबन्धः ॥

§ ३२०) अन्यदा श्रीसिद्धराजेन धर्मतत्त्वादिपृष्टेषु सर्वदर्शनिषु निजस्तुतिपरनिन्दकेषु आकारितश्रीहेमस्रिरः १४ विद्यारहस्यं विमस्य पौराणिककथा-

पुरा कश्चिद् व्यवहारी पूर्वोढां पत्नीं हित्वा सङ्ग्रहिणीकृतसर्वस्वः पूर्वया वशीकरणायाभ्यर्थितगौडदेशीयेनोक्तम्-रिश्मबद्धां गामिव तव पतिं करोमीत्युक्त्वाऽचिन्त्यौषधं दत्त्वाऽऽहारान्तर्देयम् । तथाकृते पतिगीः । तत्प्रतीकारम-15 जानन्ती विश्वविश्वाकोशान् स० । निजं निन्दन्ती एकदा मध्यन्दिने तापाकान्तापि शाङ्वलभूमिषु तं चारयन्ती कस्यापि तरोस्तले विश्रान्ता विलयन्ती खे वाणीम० । तत्रागतो विमानारूढो भवो भवान्या तदुःखकारणं पृष्टो यथावस्थितं निवेद्य च तस्यैव तरोञ्छायायां पुंस्त्वहेतुमौषघं तन्निबन्धादादिश्य ति०। सा तदनु तच्छायां रेखा-द्भितां कृत्वा तन्मध्यवर्तिन औषधाङ्करान् लात्वा मुखे क्षि० । तेनाप्यज्ञातौषधेन स'गौर्नरः । यथा तदज्ञातभेष-जाङ्करः समीहितकार्यसिद्धिं चकार, तथा कलियुगे मोहात् तिरोहितं पात्रपरिज्ञानम् । ततः सर्वदर्शनाराधनेन 20 तदपि मोक्षदं भवतीति निर्णयः।

तथा, द्वैपायन-युधिष्टिरभीमसंवादे पात्रपरीक्षायाम्-

(४३१) मूर्जस्तपस्वी राजेन्द्र! विद्वांश्च वृषलीपतिः। उभी तौ द्वारि तिष्ठेते कस्य दानं प्रदीयते ॥

सुखासेव्यं तपो भीम! विद्या कष्टदुरासदाी युधिष्ठिर:-(833) विद्वांसं पूजियप्यामि शरीरैः किं प्रयोजनम् ॥ 25

मीम:-(833) श्वानचर्मस्थिता गङ्गा क्षीरं मद्यघटस्थितम्। अपात्रे पतिता विद्या किं करोति युधिष्ठिर ॥

🤋 टिप्पण्याम्-पत्नी प्रस्ता दुग्धं न प्राम्मोति बालकः सीद्ति तद्र्थमजां गृहीतुकामो गतः । नीलं जलं धृतंव ज्ञातं रत्नम् । गृहीता सा सटोकरा तन्मध्यरतम् ।

२ टिप्पण्यां-विसा॰ आभटेन पूर्वे निर्धनेन ९ लक्षाः परिप्रहपरिमाणे मुत्कलाः कृताः । पुनर्धने जाते तपोधनानां १ वृतघटं प्रति-दिनं सत्रुकारोऽवारितः । सदा साधर्मिकवात्सस्यम् । प्रतिवर्षे सर्वदर्शनार्चा । एवमप्रशस्तिप्रासाद-प्रतिमा-पुस्तकादि गुप्तकृत्या साधर्मिकादि दानादिपुण्यानि कृतानि । ८४ वर्षायुःप्रान्ते धर्मन्ययविहकायां ९८ लक्षदर्शने खेदः । पुनः सुतैः २ लक्षे सप्तक्षेत्र्यां दस्वा अष्टलक्षीं च मानयित्वा कोटिः पूर्णीकृता । पुनः सुवास्तादशा एवाऽभवन् ।

द्वैपायनः (४३४) न विद्यया केवलया तपसा वार्षि पात्रता। ,यत्र वृत्तमिमे चोभे तद्धि पात्रं प्रचक्षते॥

एवं गुणोपेतपात्रभक्त्या मुक्तिः। इति प्रभुनिवेदिते श्रीसिद्धराजः सर्वधर्मान् आ० ॥ सर्वदर्शनमान्यताप्रवन्धः॥

§ ३२१) मांगूः क्षत्रियः पाराच्यौ भूम्याम् । भोजने घृतकुतपः । दाढायां सोहल १, अपाटवे पथ्ये यवागूः ५ माना । अर्द्धाहारे कं वैद्येनोक्ते पुनः ५ माना । निषिद्धः । नृपेण निरा० । समयोचितम् । स्नानावसरे गजः 5 श्वानेन । तद्वलेन पीडितो मृतः ।। मांगूप्रवन्धः ॥

§ ३२२) ओतुना खद्भगुकसाकमृतश्रीजयंकेशिराजानं श्रुत्वा निजतातपुण्याय श्रीमयणछदेवी श्रीसोमे॰ । त्रिवेदिनं विद्रं जलन्यासावसरे प्राह-यदि भवत्रयपातकं लासि, तदा ददामि नान्यथेति । गजादि तसे । सोऽपि ददानस्तयोक्तः प्राह-त्वं पूर्वार्जितपुण्येनेहशी जाता । दानादिना भवेन भवः श्रेयस्करः । भवत्या भवत्रयपातकं मे पापघटं लात्वाधमः कश्चिद्विद्रः स्वं तहापकं च भवाम्भोधौ पातयति । मया तु वित्तमेतदादाय पुनर्ददता 10 लब्धादष्टगुणं पुण्यमिति ॥ पापघटप्रवन्धः ॥

§ ३२३) श्रीसिद्धे निश्चि सुप्ते वण्ठौ पराक्रम-कर्मणि प्रा०।

(४३५) यदिह क्रियते कर्म तत्परत्रोपभुज्यते । मूलसिक्तेषु वृक्षेषु फलं शाखासु जायते ॥

नृपेण तदाकर्ण्य कर्मवि०। अपरिदने खप्रशंसकस्य लेखः। असै वण्ठाय शताश्वसामन्तता देयेति। सान्त्-पार्श्वे निश्रेण्या अङ्गमङ्गे मञ्चकेन गृहे, अपरो लेखं लात्वा गतः। प्रातःसामन्तता इति श्रुत्वा राजा कर्मैव ब०। 15 यतः—नैवाकृति०।।

(४३६) यथा धेनुसहस्रेषु वत्सो विन्दति मातरम्। तथा पूर्वकृतं कर्म कर्तारमनु धावति ॥

(४३७) नमस्यामो देवान्नजु हतविधेस्तेऽपि वदागाः विधिर्वन्ध्यः सोऽयं नजु विहितकर्मैकफलदः। फलं कर्मायत्तं तत्किममरैः किं च विधिना नमः सत्कर्मभ्यो विधिरपि न येभ्यः प्रभवति॥

॥ कर्मप्राधान्यप्रबन्धः ॥

§ ३२४) जातस्मृतिः श्रीमयणछदेवी श्रीसोमेशयात्रायां ः वाहुलोडपुरद्वासप्ततिलक्षपाटितपट्टा सपादकोटिम्ल्यां हेमपूजां तुलापुरुषादिना सर्वान् प्री० ।

(४३८) सङ्ग्रहेकपरः प्राप समुद्रोऽपि रसातलम् । दाता तु जलदः पद्य भुवनोपरि गर्जति ॥
रात्रस्थातेशेनागताऽत्र कार्पटिका पुण्यं याच्यमित्युक्ता दर्पान्धा निजनरानायिता सती याच्यमानाप्यददाना
कियद् व्ययितमित्युक्ताह-अहं भिक्षावृत्त्या शतयोजनानिदीकृत्यात्रागता कल्ये कृतोपवासा पारणकिदेने
कसाद् अपि खलं प्राप्य तत्खण्डेनेशं सम्पूज्य तदंशमितथये दत्त्वा पारितम् । त्वं पुण्यवती यसा एवंविधं
कुटुम्बदानादि । ममाल्पपुण्ये कथं लोभः । यदि न कुप्यसि तदा ब्रवे । ममाधिकं पुण्यम् । यतः –

^{•†} टिप्पण्यां-एकोऽपि यात्रिकः पञ्चशती द्रम्माणां याच्यते । नरखीयुग्ममपि एतदेव । पश्चान्मातृ-पुत्रौ हस्ते रूपित्वा गच्छतः । इत्यादि विद्वतं रद्वा मयणछदेवी० ।

10

15

20

(४३९) सम्पत्तौ नियमः शक्तौ सहनं यौर्वने व्रतम् । दारिक्रो द्रानमिखल्पमपि लाभाय कथ्यते ॥ दानं दरिद्रस्थ ॥ निगर्वा जाता ॥ श्रीमयणछदेवीयात्राप्रवन्धः ॥

§ ३२५) श्रीसिद्धराजः सागरकण्ठवर्ती । चारणौ-(४४०) को जाणइ नरनाह चित्तु तुहालउं चक्कवइ । लहु लंकह लेवाह मग्गु निहालइ करणउत्तु ॥ 5 (४४१) घाई घोया पाय जेसल! जलनिहि ताहिला । पइं लइया सविराय इक्कु विभिषणु मिलिह मुहु॥

§३२६) छलान्वेषिणं मालवाधीशमागतं याचितेशयात्रापुण्यं तद्दानेन सान्तः पराश्चुखीचकार । आगत-भूपकोपे तत्पुण्यं मया तव दत्तमिति बोधितः।

(४४२) यस्योवीतिलकस्य निर्मलयदाःसन्दोहसन्दोहितां सामग्रीमवलोक्य लोलनयनः कैलासदीले वसन्। कास्थीनि क वृषः क निर्जरनदी केन्दुः क भोगिप्रभुः पप्रच्छेति शिवां समाधिविगमे देवः शिवः साद्धतम्॥

(४४३) मद्रैनिंद्रादिरद्रैः कुरुभिरुरुभयैः सोपलिङ्गैः कलिङ्गै-रङ्गैरुत्सष्टरङ्गैरवगणितधनुर्दण्डतूणैश्च हूणैः । सुद्धैः शौण्डीर्घजिद्धौरनुसुतविभवारण्यवाटैर्विराटै-र्लाटैः खिद्यल्लाटैरजनि गजघटाभोगरुद्धेऽस्य युद्धे ॥

(४४४) मुद्गानुद्गतमुद्गरानुरुगदाघातोद्धतान् व्यन्तरान् वेतालानतुलानलाभविकटान् झोटिङ्गचेटानपि । जित्वा सत्वरमाजितः पितृवने नक्तंचराधीश्वरं बद्धा बर्बरमुर्वरापतिरसौ चक्रे चिरात्किङ्करम् ॥

॥ श्रीजयसिंहप्रबन्धाः ॥



(G.) सज्ज्ञकसङ्ग्रहस्यान्ते पातंसाहिनामाविछः।

- (१) ९ं० १२६३ वर्षे पातसाहि साहवदीनेन गजणपुरात्समागर्त्य पृथ्वीराजं लाहउरमून्धउरयोरन्तराले निहत्य दिल्ली गृहीता । वर्ष ३ राज्यं कृतम् ।
- (२) ततः सं० १२६६ वर्षे मार्गमासे सुरत्राणसमसदीनो दाउदपुरात् ढिह्न्यां समागतः। वर्ष २६ राज्यं कृतम्।
- (३) ततः संवत् १२९२ वर्षे श्रावणशुदि २ द्वितीयायां कटकादागत्य क्टं कृत्वा पूर्वसुरत्राणं हत्वा पातसाहि 5 पेरोजः समजनि । मास ६ राज्यं कृतम् । पश्चादाखेटके गतो यम्रनातटे कयलोषरीय्रामे मारितः ।
- (४) ततस्तत्पुत्री दउलती। दिनपञ्चकं यावद्राज्यं कृतम्। पञ्चात्सा ग्रुख्यैर्लम्पटत्वेन मलिका नाम्नी व्यापादिता।
- (५) ततः परं वर्ष ३ मास ६ ग्रून्यं जातम् । तदा मिलिकक्षवडीपुत्र मोजदीन मिलिको ढिल्ल्यां समभृत् । सं० १२९६ वर्षे राज्यं वर्षद्वयं यावत्कृतम् । स नानामिलकभेदेन मृतः ।
- (६) ततः पातसाहि पेरोजपुत्रः अलावदीनो नानामलिकेन राज्ये स्थापितः । वर्ष ३ राज्यं कृतम् ।
- (७) ततः सं० १३०१ वर्षे आसाढमासे पूर्वस्यां दिशि बहडाइचनगरान्मलिक समसदीनः समागतः । तेन ढिल्ल्यां वर्ष २१ राज्यं कृतम् ।
- (८) ततः सं० १३२२ वर्षे फाल्गुनमासे त्रयोद्श्यां शुक्रवारे नसरदीनसाहिना राज्यं कृतम् । वर्षं एकं यावत् ।
- (९) ततः सं० १३२३ वर्षे चैत्रवदि २ द्वितीयायां ग्यासदीनो राजा जातः । वर्ष २० राज्यं कृतम् ।
- (१०) सं० १३४३ वर्षे चैत्रमासे कोकामलिकभेदेन मोजदीन पातसाहिर्जातः। वर्ष ३ मास ३ राज्यं जातम्। 15
- (११) सं० १३४६ वर्षे फाल्गुनशुदि ६ पथ्यां खलचीवंशीय मलिकजलालदीनेन राज्यं कृतम्। वर्ष ६ मास ९ । स यम्रुनातीरे पंभराग्रामसमीपे मलिक अलावदीनेन मारितः।
- (१२) ततः जलालदीनपुत्रो रुक्मदीनो राज्यधरो बभूव । मास ३ राज्यं कृतम् ।
- (१३) सं० १३५२ वर्षे सुरत्राणः अलावदीनो जातः । वर्ष [२१] राज्यं कृतम् ।
- (१४) सं० १३७३ वर्षे माघश्चदि ११ दिने पातसाहि अलावदीनपुत्रः सहावदीनः पातसाहिर्जातः । मास रो।० 20 राज्यं चकार ।
- (१५) ततः सं० १३७३ वैशाखश्चिद् ३ दिने सुरत्राण अलावदीनपुत्रः कदुवदीनः पातसाहिर्जातः । वर्ष ५ राज्यं कृतम् ।
- (१६) ततः सं० १३७८ वर्षे ज्येष्टशुदि २ दिने कदुबदीन [पुत्रः] पोसरुपानु पातसाहि नसरदीनो राज्यधरः।
 मास ४ राज्यं कृतम्।
- (१७) सं० १३७८ वर्षे भाद्रपद श्चिद २ द्वितीयायां देपालपुरस्थानात् तुगलकगातो हिल्ल्यां नसरदीनं हत्वा ग्यासदीन पातसाहिजीतः । वर्ष ४ राज्यं कृतम् । लषणावती नगरात्समागतः सुरत्राणः पुत्रेण महमूदेन तुगलावादमध्ये कृटयत्रप्रयोगेण मारितः ।
- (१८) ततः सं० १३८० वर्षे आषादशुदि २ द्वितीयायां महमूंदपातसाहिर्जातः । वर्ष २७ राज्यं कृतम् । बालराजा जात..... ।
- (१९) ततः संवत् १४०७ वर्षे श्रीपातसाहि पेरोजनामाजिन ।



(P.) सञ्ज्ञकसङ्ग्रहस्य अन्तिमोहेखः।

सिरिवत्थुपालनंदणमंतीसरजयतसिंहभणणत्थं। नागिंदगच्छमंडणउदयप्पहसूरिसीसेणं॥ जिणभद्देण य विक्रमकालाउ नवइ अहियवारसए। नाणा कहाणपहाणा एस पबंधावली रईआ॥

१४२९ श्रीजिराप० श्रीसावदेवस्र० स्वं चरित्रं न वेडितं पश्चात् ढिल्यां ग० स्वस्रुपार्ज्य पश्चात् संवत् १४३० भाद्र० मासे श्रीगिरनारे समभाव० त्वा परलो० जगाम ।

संवत् १५२८ वर्षे मार्गसिर १४ सोमे श्रीकोरण्टगच्छे श्रीसावदेवस्ररीणां शिष्येण स्नुनिगुणवर्द्धनेन लिपीकृतः। सु० उदयराजयोग्यम्। श्रीः।

LITTE STATE STATE

पुरातनप्रबन्धसङ्ग्रहस्य

अकाराचनुक्रमेण पद्मानुक्रमणिका



्र पुरातनप्रबन्धसङ्ग्रहे

पद्यानुक्रमणिका।

		पद्याङ्क	पृष्ठाङ्क		पद्याङ्क	पृष्ठाङ्क
	अंधयसुआण काली	३५२	286	असिन्नसारसंसारे	२०५	६९
	अंबं तंबच्छीए	२८३	९२	,,	२५३	७६
	अंब[ड]हंतु वाणीउ	११९	39	अहं सारामि तादात्यात्	२५१	७६
		३७१	१२०	अहलो पत्तावरिओ	२०	१२
	अंबा तुष्यति न मया	3	3	अहिंसालक्षणो धर्मः	३७२	१२०
	अकाषींदनृणामुर्वीम्		८६	अहो लोभस्य साम्राज्यम्	३८२	१२२
	अगहु म गहि दाहिमओँ	२७६	97	आः कण्ठशोषपरिपोष०	७७	२८
	अजाते चित्रलिखिते	२८१		आकरः सर्वशास्त्राणाम्	२९०	98
	अत्थि कहंत किंपि न दीसइ	६२	. 22	आचार्या बहवोऽपि सन्ति	११६	३७
	अत्रास्ति सस्ति शस्तः	१५७	49	आतङ्ककारणमकारण०	३९८	१२५
	अथैकदा तं निशि दण्डनायकम्	888	42	आत्मा नास्ति पुनर्भवोऽस्ति	388	१०६
	अद्धां अद्धां नयणलां	३७	24	आदौ मयैवायमदीपि नूनम्	३८९-	१२३
-	अधिकारात् त्रिभिर्मासैः	883	१२८	आपदर्थ घनं रक्षेत्	३३६	११७
	अधीता न कला काचित्	२०६	६९	आपद्गतान् हसिस किम्	- 32	\$8
	अन प्राणा वलं चान्नम्	३२९	११५	आयाताः कति नैव यान्ति	280	७२
	अन्नदानैः पयःपानैः	१८५	६२	आयान्ति यान्ति च परे	386	६६
	अन्वयेन विनयेन विद्यया	२४६	७३		200	६९
	अपमानात् तपोवृद्धिः	३६०	११९	आयुर्यीवनवित्तेषु	१५३	40
	अपलपित रहिस	३२६	888	आशाराज इहाजनिष्ट		१२
	अमुप्मे चौराय	384	११८	आसन्ने रणरंभे	22	
	अम्ह एतल्ड संतोस	११२	३५	आस्तां सुधा किमधुना	७३	२७
	अयमवसरः [सरस्ते]	३३९	११७	आस्यं कस्य न वीक्षितम्	१७२	६०
	अयसाभिओगमणदूमिअस्स	२८७	- 93	इकु बाणु पहुवीसु जु	२७५	८६
	अयि खल्ल विषमः	३६९	१२०	इको वि नमुकारो	300	99
	अर्था न सन्ति	86	35	इच्छउ इअरमणोरहाण	२८	\$8
	अशाकभोजी घृतमति	२९७	९६	इतोऽविधः परितो मृत्युः	२१५	90
	अष्टौ महाङ्गाश्च चतुःशतानि	२२५	७१	इदं ज्योतिर्जालम्	248	७६
	अष्टी हाटककोटयः	380	286	इदमन्तरमुपकृतये	३३७	११७
	असकुन्मूर्वमप्यन्यम्	१५१	40	इयं कटिमत्तगजेन्द्रगामिनी	३५	84
						prof. Solome

•			,		
	पद्याङ्क	• দুষ্টাঙ্ক		पद्याङ्क	<u> विष्ठाङ्क</u>
इह नृपतिसभायाम्	. 68	२९	किं कृतेन यत्र त्वं	१२०	80
उच्चाटने विद्विषताम्	. २१२	. 00	किं नन्दी किं मुरारिः	३८५	१२२
उज्जितसेलसिहरे	२०१	99	किं वर्ण्यते कुचद्वन्द्वम्	६०	२२
उत्क्षिप्य टिट्टिमः पादा	9	9	किमस्तु वस्तुपालस्य	२४३	७३
उत्तंसकौतुककृते	38	\$8	किमिह कलिनरेन्द्रम्	१६८	49
उत्थायोत्थाय बोद्धव्यम्	३७३	१२१	कियन्मात्रं जलं विप्र!	383	११७
उत्पन्नत्योत्पन्नत्य गतिं कुर्वन्	१९४	. , ६8	कीर्तिः कन्दलितेन्दु०	२२९	90
उदयति यदि भानुः	42	28	कुमुदवनमपश्चि श्रीमदम्भोज०		१८,१३१
उद्यमेन हि सिद्धान्ति	३२३	११०	कृतप्रयत्नानिप नैति	808	१२६
उन्मीलन्मणिरिक्मजाल०	२७१	24	केवलिहुओ न भुंजइ	९२	२९
उपकारसमर्थस्य	२७७	66	केवलिहुओ वि मुंजइ	९३	29
3)	260	९०	को जाणइ नरनाह	880	१३४
उमया सहितो रुद्रः	३३३	११६	कोशं विकाशय कुरोशय०	१५२	40
एकं वासः सुरेशैः	१९६	88	कचिदुष्णं क्वचिच्छीतम्	२९६	९६
एकस्त्वं भुवनोपकारक इति	२१३,२५०	00,08	क तरुरेष महावनमध्यगः	३३	\$8
एतस्याः कुक्षिकोणे	66	२९	क्षिस्वा वारिनिधिसाले	१२३	83
एतावतैव वीसरु!	200	६८	क्षुत्क्षामः पथिको मदीय०	86	25
एषु श्रीजयसिंहदेवनृपतिः	१६०	46	क्षुद्राः सन्ति सहस्रशः	३८६	१२२
एहे टीलालेहिं घार न	. 888	३५	खद्योतचुतिमातनोति	860	१२७
ओ आगिलउ जु होइ	. 856	40	गण्डूपदा किमधिरोहति	३०६	. १०३
off affine 2 C.	१३३	48	गतप्राया रात्रिः	83	१५
कं कं देशमहं न गतः	१८३	- ६२	गम्भीरगेयभरगज्जिरवो	१७५	६१
कः कण्ठीरवकण्ठकेसर०	७५, ४०९	२७, १२७	गयगय रहगय तुरयगय	२५	\$8
कतिपयदिवसस्थायी	380	११७	गया ति गंगह तीरि	888	३५
कलिकवलनजाग्रत्पाणि०	२३३	७२	गुरवः परःशतास्ते	१६९	48
कल्पद्धमस्तरुरसौ	२१०	६९	गाम्भीर्ये जलधिः बलिः	२३७	७२
कविषु कामिषु भोगिषु	368	१२२	गुणचन्द्रजयांजनतः	८२	. 32
कसिणुज्जलो य रेहइ	१७	१२	गुणाली जन्महेतृनाम्	१९५	48
का त्वं सुन्धिरि! जल्प	२६८	८३	गुरुभिषक् युगादीशः	२१७	- 38
कान्ते कान्ते शीव्रमागच्छ	- 200	48	गोगाकस्य सुतेन	90	41
कालिका नद्या नद्या	६१	२२	गौरी रागवती त्विय	255	36
का हउं करिसि गमार	१०८	३५	घटिकाऽप्येकया घट्या	288	१०४
किं कारणं नु धनपाल !	३६३	११९	चिक्कदुगं २ हरिपणगंप	300	108
किं कुम्मीः किमुपालनेमहि		७१	चकः पप्रच्छ पान्थम्	२७३	1
			•		- 6

पुरातनप्रबन्धसङ्ग्रहे

			9		*
	पद्याङ्क	पृष्ठाङ्क		पद्याङ	् रहाइ
चिन्तामणिं न गणयामि	१९७ -	६४	तेजःपालोऽनुशास्ति	248	५७
चौछुक्यः परमार्हतः	206	६९	तेहि वि न किं पि	ч	4
च्यारि जोड नीसाण हय	98	३०	त्रिंशद्विमिश्रा त्रिशती चराणाम्		७१
च्यारि पाय विचि	2	१०	त्रिण्हि लक्ष तुषार	२७८	22
जइतचंदु चक्कवइ	२७९	66	त्वं जानीहि मयास्ति	२३६	७२
जईय रावणु जाइयउ	३५०	286	दंसेमि तं पि ससिणं	१२१	88
जयन्ति पादलिप्तस्य	२८२	९२	दन्तानां मलमण्डली	८६	29
जह जह पएसिणिं	268	९२	दरिद्रान् सुजतो धातुः	२७२	- 24
जह सरसे तह सुकेवि	१२	88	दहनेन विनाशितं पुरा	१९०	६३
जाकुड्यमात्यसज्जन ०	१०१	38	दानपात्रमधमर्णम्	823	१३०
जिने वसति चेतिस	368	१२४	दामोदरकराघातविह्नली०	84	१६
जिम केतू हरि आजु	१२८	40	दारिद्यानलसंतापः	४२७	१३१
जीतउं छहि जणेहिं	२०३	६९	दिगम्बरशिरोमणे!	96	26
्जीर्णे भोजनमात्रेयः	२८९	68	दिग्वासाश्चन्द्रमौलिः	२३२	७२
् जीवादिशेति पुनरुक्तम्	१४६	44	दीपः स्फूर्जिति सज्जकज्जलः	२३९	- ७२
जेसल मोडि म बाह	१०७	३५	दीहरफणिंदनाले	366	98
जो जेण सुद्धधम्मंमि	800	१२७	दुःषमाजलधौ येन	६९	२६
झोली तुद्वी किं न मूउ	२९	\$8	दुर्योधनः खकुलनाशकरो	३१०.	308
झोली त्रुटी किं न मूयउ	885	१२९	[दूसा]जप्र (१) वीस	१२७	- 40
झोली ड्रगरवालणि वलिणि	३०२	99	देव! दीपोत्सवे रम्ये	48	?9
ण्हाणं कुंकुमकइमेहि	१७१	49	देव ! द्विजप्रसादेन	२६७	८ २
त एव जाता जगतीह	३९५	१२५	देव! स्वर्गाथ! कष्टं	२५६	90
तत्कृतं यन्न केनापि	388	386	देवाचार्यबलात् युक्तः	ح ر	32
तत्र चित्रचरितः	६८	२६	देशं स्नमपि मुञ्जन्ति	824	१३१
तन्वन्ति डंबरभैरः	२६१	60	दोमुहय निरक्खर	300	१२०
तव प्रतापज्वलनाज्यगारू	386	385	घनधान्यादिदातारः	३९२	128
ताण पुरओ य मरीहं	88	88	धर्मलाभ इति प्रोक्ते	234	११७
ता किं करोमि माए	१९	१२	धांगा दोसु न वइजला	१२६	85
तावचिअ गलगर्जि	७१	२६	धाई धोया पाय जेसल	885	
ताबद् अमन्ति संसारे	३९३	358	2-3 00	₹, ₹₹0	१३४
तावन्नीतिर्विनीतत्वं	३८३ ^	१२२	ध्यानव्याजमुपेत्य	386	१०६
तिक्ला तुरिअ न माणिआ	५३	25	न कृतं सुकृतं किञ्चित्	202	६८
तुह मूंडिए घणेहिं	६३	२३	नगरे वसिस हे बाले	२६६	22
तेजःपाल! कृपालुधुर्यः	१८२ -	६२	नमैर्निरुद्धा तरुणीजनस्य	د ۲	126
		1		- 7	LITTE

Desire he the Ada

	पद्माङ्क	• पृष्ठाङ्क	100	पदाङ्क	प्रशङ्क
नम्रो यत्प्रिभाषमीत्	. ६६	२५	नेत्रैर्निरीक्ष्य विषकण्टक०	388	308
न नद्यो मद्यवाहिन्यः	49	, 88	पइं गरूआ गिरनार	208	38
न पश्यति दिवा घूकः	883	१२८	पक्षपातं परित्यज्य	306	808
न मिक्षा दुर्भिक्षे	8६	१७	पक्षपातो न मे वीरे	३०९	308
नमस्यामो देवान्	४३७	१३३	पङ्के पङ्कजमुज्झितम्	80	१५
न मानसे माद्यति	• ६४	28	पञ्चाशत् पञ्चवर्षाणि	36	१५
नमेस्तीर्थकृतस्तीर्थे	२९३	, ९६	33	858	१२९
नमोऽस्तु हरिभद्राय	३२०	१०७	पञ्चाशदादौ किल	856	१३१
नमं शिरः कुरु तुरुष्क	४०२	१२६	पडिबोहिअ महिवलओँ	90	२६
नयणिहिं रोसु निवारि	388	4६	पणसइरी वासाइं	२६९	८३
नयनविषयं यातश्चाषः	58	२८	पभणइ मुंजु मुणालवइ	४१६	१२९
न लाभयामो ललनाम्	98	- 38	पयोदपटलच्छन्ने	३९१	१२३
नवजलभरिआ मग्गडा	44	१९	परपत्थणापवन्नं	३५६	888
नववाससएहिं नवुत्तरेहिं	२९९	90	परिओससुंदराइं	१८	१र
न विद्या केवल्या	858	१३३	पर्जन्य इव भूतानाम्	३९६	१२५०
न विद्या धनलाभाय	३२१	१०८	पल्योपमसहस्रेकम्	१६४	49
न वीतरागादपरोस्ति	३१५	308	पश्चाइचं परैर्दचम्	१९२	६३
नाखानि खानितटतो	१०२	\$8	,,,	328	\$88
नादत्ते भसितम्	. 355	६१	पाणिम्रहे पुलकितम्	३६८	१२००
नामिपङ्कजमङ्कजन्म०	• 388	७३	पाणिप्रभापिहितकल्पतरु	१७९, २४९	. ६%, ७४
नारीणां विद्धाति	888	१२७	पालित्तय कहसु फुडं	२८६	९३
नासाकं हृदि द्रपेसर्प०	७९	२८	पिव खाद च चारुलोचने	46	१९
नाहं स्वर्गफलोपभोग०	३६५	१२०	पुण्डरीकनिवहैर्विराजितम्	१८९	६३
निअउअरपूरणंमि	8	4	पुत्रादिप प्रियतमैक०	३८८	१२३
निजकरनिकरसमृद्ध्या	३३८	११७	पुनराप्याय्यते घेनुः	३६१	११९
नियउयरपूरणहा	३५५	११९	पुने वाससहस्से	३८७	१२३
नियउयरपूरणासा	१६३	49	पुरा नागार्जुनो योगी	२९२	९५
निरीक्ष्य मिन्नन् ! द्विज०		90	पूर्व वीरजिनेश्वरे भगवति	१ २8	४२
निर्नामलम्बुधौ मजत्	११७	३८	पूर्वपुण्यविभवन्यय०	858	१३०
निवपुच्छिएण भणिओ	224	९३	प्रभाषिनाथैर्भुनिभिः	६७	२६
निच्चूढपोरिसाणं	२१	१२	प्रभासमृद्धिरेवेषा	390	१२३
नीचाः शरीरसौख्यार्थम्	३२२	११०	प्रभोः श्रीमानतुंगस्य	39	१५
नीवारपसवायमुष्टिकवलैः	११५	३६	प्राग्वाटवंशाभरणम् 	\$80	५२
नृपव्यापारपापेभ्यः	२६०, ४३०	७८, १३२	प्रीणितारोषविश्वासु	३७९	१२१
					1

, ,					c
- + -	पचाङ्क	प्रष्ठाङ्क	*	पद्याङ्क	प्रष्ठाङ
फणिपतिमधवाद्या यत्र	849	- 46	मित्रद्रोही कृतप्रश्च	२६४	1 63
बंभ अह नव बुद्ध	७२	२७	मिलिते तद्दलयुगे	१५०	90
बलि गरूआ गिरनार	१०९	३५	मीनानने प्रहसिते	४२२	१३०
बाणे गिर्वाणगोष्ठीम्	286	08	मुंज भणइ मिलाणवइ०	२६	\$8
बापो विद्वान् बापपुत्रो०	386	288	- "	२७	\$8
बीजलिआ बीजी वार	१०५	३५	मुक्तवापि पुण्डरीकाक्षम्	२४५	७३
बृहस्पतिस्तिष्ठतु मन्दबुद्धिः	90	२९	मुखमुद्रया ,सहाऽन्ये	२२८	७१
बौद्धेबींद्धो वेष्णवेर्विष्णु०	२०१	६८	मुञ्ज-भोजमुखाम्भोज०	२३५	७२
भजेन्माधुकरीं वृत्तिम्	३५९	११९	मुद्रानुद्रतमुद्ररान्	888	१३४
माऊ भराहिं काइं	१९३	६३	मुनीनां को हेतुर्जरठ०	१५६	46
मीभदेवस्य नृषस्य	१३६	48	मूर्खस्तपस्वी राजेन्द्र!	४३१	१३२
भुजीमहि वयं भैक्षम्	94	30	मृतो मृत्युर्जरा जीणा	३७६	१२१
म् पभूपल्लवप्रान्त ०	288	90	मृद्वी शय्या प्रातरुत्थाय०	३१७	१०६
भूमृतां निजगृहेषु	१३९	48	मेरुणा मनुजदुर्हभेन	१३८	48
भोजराज! मया ज्ञातम्	346	११९	मौलिं मालवनायकः	४०३	१२६
भोली मूधि म गन्तु करि	888	१२९	यः सप्ताननसप्तिसोदर०	3.83	७३
ञ्रातः पाणिनि संदृणु	835	१३१	यत्त्वयोपार्जितं वित्तं	१३०	40
मइं नाईउं सिद्धेश	१००	38	यथा धेनुसहस्रेषु	838	१३३
पंडी मुरकी रइ करउ	885	42	यदनस्तमिते सूर्ये	388	११७
मंसासी मज्जरओ	३०४	200	यदि विदितचरित्रैः	' 238	७२
मग्गुचिय अलहंतो	१६	१२	यदिह कियते कर्म	४३५	१३३
मजासी मंसरओ	३०३	200	यदेतचन्द्रान्तर्जलद् ०	388	११७
मन तंबोल म मागि	१०६	३५	यद्दाये चूतकारस्य	२०९	६९
मद्रैर्निद्रादरिद्रैः कुरुभि०	883	१३४	यद्भविष्याधिको धीरैः	३२८	११३
मन्नीश ! गुरवस्तुभ्यम्	१५५	46	यद्यपि हर्षोत्कर्षम्	88	१६
महत्तराया याकिन्या	३१६	१०५	यन्मयोपार्जितं वित्तम्	२२०	90
मह वयरियस्स ठाणं	१७४	६०	यशःपुञ्जो मुञ्जो	28	58
मा गोलिणि मन गन्तु	२३	\$8	यशोवीर! लिखत्याख्याम्	१३१	40
माणसणा(डा) दस दस	३७७	१२१	यस्योवीतिलकस्य निर्मल०	४४२	1838
मातृमोदकवद् बाला	383	808	यादोऽङ्गज्ञोणितकषायित०	८७	28
मानं मुख स्वामिनी	88	१५	यावदुच्छ्वसति प्राणी	२९८	९६
मान्याता स महिपतिः	884	१२९	या श्रीः स्वयं जिनपतेः	१७८	६१
मा मण्डक कुरुद्धेगम्	30	\$8	यूकालिक्षरातावली	३९७	१२५
मार्गे कईमदुस्तरे	308 .	६९	यो मे गर्भस्थितस्यापि	२७०	78
	*		1 7		LITTIE

Centre IVI the Add-

				•	
-	पद्याङ्क	प्रष्ठाङ्क	7-	पद्याङ	प्रशब्द
यौष्माकाश्विपसन्धिविग्रह०	. ३५३	? ? ? ?	विष्णुः समुचतगदायुत०	३१२	808
रम्येषु वस्तुषु मनोहरतां	838	. 130	विस्फारस्फारधन्वा	५६	१९
रसातलं यातु तवात्र	३६२	? ? ? ?	वेलामहलकलोल०	३७८	१२१
राजँस्त्वं राजपुत्रस्य	२६५	د ۶	वेषः कोपि तुरुष्क०	64	२९
राजा खयं हरति माम्	१०	28	वेसा छंडि वडाइति	३१	58
राणा सन्वे वाणिया	.860	३५	वैधव्यसदृशं दुःखम्	9	38
रात्रौ जानुर्दिवा भानुः	३५४	. ११९	वैरिणोऽपि हि मुच्यन्ते	३६४	११९
रामनन्दशशिमौलिवत्सरे	96	38	वैरोचने रचितवत्यमरेश०	२५७	७७
रे रे यामकुविन्द	२५९	७७	व्रजत व्रजत प्राणा	40	38
रे रे चित्त कथं आतः	४०५	१२७	शतानि चाष्टादश	२२३	७१
रे रे वातुललोकाः	१६७	49	शत्रु अये जिने दृष्टे	१६५	49
लक्षं लक्षं पुनः लक्षम्	३४३	११७	शशिदिवाकरयोर्भहपीडनम्	48	86
लक्ष्म प्रेयसि केयमास्य०	१८७	६२	शीतत्रा न पटी०	३५७	118
रुक्ष्मीं नन्दयता रतिम्	२३०	७१	शूराः सन्ति सहस्रशः	१२२	85
लक्ष्मीर्यास्यति गोविन्दे	३६, ४२०	१५,१२९	श्रीगर्वोष्मभिरूप्मलेषु	१७३	६०
लच्छ वाणि मुहकाणि	३९९	१२५	श्री चौलुक्य! स दक्षिणः	१२५	8.5
रुव्धाः श्रियः सुखं स्पृष्टं	२१८	90	श्रीमत्कर्णपरंपरागतभवत्०	२१६	00
लिखतु लिखतु धाता	१७७	६१	श्रीमस्प्राग्वाटवंशे	\$88	43
लिखन्नास्ते भूमिम्	• 83	१५	श्रीमानभयदेवोऽपि	368	९६.
लोकं विलोक्य धन्धान्य॰	३८१	१२२	श्रीवस्तुपाल तव भारू०	१८६	. • ६२
लोकः प्रच्छित मे वार्ती	३७४	१२१	श्रीवस्तुपाल! प्रतिपक्षकाल!	२४७	08
वंशाद्धीद्धपरिस्फूर्त्या	२५५	७६	श्रीवस्तुपालः श्रियमेष	२३८	७२
वाढी तउं वढवाण	११३	३५	श्रीवस्तुपालस्य पत्नी	884	48
वर्ष्मप्राहरिके द्विजे	338	११६	श्रीविक्रमादित्यनृपस्य	३०५	१०१
वस्तुपालसचिवेन	१९१	६३	श्रीविकमादित्यनृपात्	१३५	48
वस्त्रप्रतिष्ठाचार्याय	६५	२५	श्रीशत्रुज्जय-रैवताभिघ०	१५८	46
वार्द्धिमाधवयोस्सौधे	99	३३	श्रीसिद्धपुरे रम्ये	९६	३०
वाहनौषघिपाथेय०	१६६	48	श्रोतन्यः सौगतो धर्मः	५७	१९
विन्नाधिज्याधिसंहत्रीं	१३७	48	श्वःकार्यमद्य कुर्वीत	३७५	१२१
विधाय योगनीरोधम्	२९५	९६	श्वानचर्मस्थिता गङ्गा	833	१३२
विषे प्राहरिके नृपः	٤	9	श्वेताम्बराः कौलेतकम्बल०	60	२८
विभुता-विक्रम-विद्या	\$85	५५	षडहडीयां षंगार	१०३	38
विमलदण्डपतिर्विमल०	. \$83	५३	सउ चित्तहं सट्टी मणहं	880	१२९
विश्वासप्रतिपन्नानाम्	२६२	< 8	स एष भुवनभयप्रथित०	३६७	१२०
					Property of

					e
	पद्याङ	विष्ठाङ्क	•	पद्याङ्क	पृष्ठाङ्क
सुवर्णमीवामण्डने	२५२	^ ७६	समुद्र त्वं श्लाघेमहि	488	, ७३
सूत्रे वृत्तिः कृता दुर्ग०	१९९	६७	सम्पत्ती नियमः शक्ती	४३९	8 \$ 8
सेजपालकसहस्रचतुष्कं	२२२	७१	सयलजणाणंदयरो	\$8	१२
सेतुं गत्वा समुद्रस्य	२६३	د ۶	सरिसे माणुसजम्मे	१३	99
सोऽयं कुमारदेवी कुक्षि०	१४७	44	सा नत्थि कला	३३१	११६
सीरभ्यमालगुणमाल०	860	६१	सिंहशिशुरपि निपतति	३२७	११२
स्रायुद्धद्वकरङ्ककुट्टनरता	१६२	46	सीसं कहव न फुट्टं	२९१	98
स्रस्ति क्षत्रियदेवाय	२७४	64	सुकृतं न कृतं किञ्चित्	२१९	90
स्रस्ति श्री भूमिवासात्	२२७	७१	सुखस्य दुःखस्य न कोऽपि	360	१२१
स्रस्ति श्रीत्रह्मलोकात्	२२६	७१	मुखासेव्यं तपो मीम	४३२	१३२
स्रस्ति श्रीमति पत्तने	808	१२६	मुन्दरसरि असुरांह	१३२	40
स्वामिन् समुद्रविजयात्मज०	१७६	६१	हंसैर्रुब्धप्रशंसै:	२३१	७२
स्वार्थारंभप्रणतशिरसाम्	388	208	हंहो श्वेतपटाः किमेष	98,806	२७,१२७
संतः समंताद्रि तावकीनम्	१३४	48	हरिहर ! परिहर गर्व	246	99
संसारमृगतृष्णासु	४०६	१२७	हा कस्स पुरोहं	७६	२७
सङ्ग्रहेकपरः प्राप	836	१३३	हारो वेणीदंडो	१५	१२
सङ्घो वाग्भटदेवेन	१६१	46	हूणवंशे समुत्यने	2	2
सत्यं यूपं तपो ह्यामिः	३६६	१२०	हृदि बीडोदरे वहि०	858	६२
सत्त्वैकतानवृत्तीनाम्	333	११६	हेम तुहाला कर मरू	- 800	१२६
सद्यस्त्रप्यति भोक्तारम्	324	888	हेलानिद्दलियमहेभ०	* ३५१	288
Mark Million Million	110	111	Called div. 1 16 1.		



पुरातनप्रवन्धसङ्गहान्तर्गतविशेषनामां स्चिः।

%€ं अकाराद्यक्षरानुक्रमेण ﴾}़

17.					
ओं		अमृतवत्सला	58	आडि	900
-N	- 5₹	अम्बड	३९, ४०, ६२	आन्नेय	33
ओंकार [नगर्]	34	अ म्बा	49, 42, 86	आदिदेव }	49
अ		अम्बावीदेवीप्रासाद	30	आदिनाथ ∫	42
अइबुक मिलक	40	अभ्विका	90	आनाक	48, 36
अग्निक वेताल	3	अम्बुचीच	906	आसड ३३, ४३	, ४७, ४८ १२४,
अग्निपलालउ [पंछवडउ]	४६	अयोध्या	394		938
अङ्केवालिया [प्राम]	£6, 00	अरिट्ठनेमि रे	88	आभीर	३६,८२
अङ्ग [जनपद]	938	अरिष्टनेमि ∫	90	आभू	43
अचलेश्वर	43	अरिष्टनेमिशासाद्	२७	आम	36
अच्छोदक [सरोवर]	२४	अरिसिंह [राजवैद्य]	48	आमड }	158
अजमेरीय [संघ]	39	अर्जुन	998	आम्बड ∫	३२, ४६, १२६
अजयपाल [राजा]	85-88	अर्बुद्गिरि १३, ५१	, ५२, ६३, ६५,	आम्बा }	3.8
अजय रा	903	Ęv	, 40, 68, 64	आम्बाक ∫	38,80
अजितसिंह सूरि	94	अर्बुद्चैत्य	40	आंबासण	93
अहारहीउ	96	अलवि	२४	आम्र	*3
अणपन्नी	900	अलवेसरी	58	आम्रेश्वर	९६
अणहिल [राय]	903	अलावदीन [सुरताण]	934	आरासण	३०, ३१
अणहिल [राय]	926	अवन्तिदेश	998	आहेत	98
अणहिलपुर	A 43	अवन्ती [नगरी]	98	आलति	+ 28
अणहिलवाड	34	अवन्तीसुकुमाल	90	आछि	58
अणहिल्पत्तन	43	अवलोकनदिशास	38	आलिग [कुम्भकार]	१२३
अणहिलपुर	92, ३३	अशोकचन्द्र	२६	आलिग [प्रधान]	924
,, पुरी	20	अशोकवनिका	30	आलिग [पुरोहित]	३७
अणुपमडी (अनुपमा)	44	अश्वपति	29	आवश्यक [प्रन्थ]	903
अनादि राउल [तपसी]	36	अश्वराज	48, 40	आशराज)	44
,, मठ	₹6	अश्विनीकुमार	९६	-आशाराज	40
अनुपम देवी ५४, ५७,	६३, ६५, ६९	अश्वेश्वर	32	आशापङ्घी	32, 60
अनुपम सर	£ ₹	अष्टकवृत्ति [प्रन्थ]	904	आशी [नगर]	٥٤, ٤٥
अनुपमा	00,04	अष्टादशशती [देश]	68	आचाढ [श्रावक]	36
अन्धय (अन्धक)	996	अष्टापद [पर्वत]	82, 33	आसपाल	३३, ६१
अभय	83	असणिदेवी	903	आसराज	42-48, 902
,, कुमार	६, ३३, ९५	अहम्मद	697	आसराज-प्रबंध	43
	4, 98, 998				64.
अभिनवार्जुन	२०	आ		आसराजवसही आसाप छी	30
अभिनव राम	6	आकाशयान [विद्या]	88		
अमर [पण्डित, कवि]	96	आकृष्टिविद्या	४७, ७५०	आइडग्राम	29
असृतमयी	२४	आकेवालीय [प्राम]	96	भारत	1903
पु॰ प्र॰ स॰	19				

			ATRIVA E A A.P.		
इ		कटक [नगर]	१२५	कान्यकुब्ज	66, 903, 926
इन्द्रजाल विद्या	34	कडी [ग्राम]	४६	कान्हड देव [नड्डूला]	४५, ४६
इन्द्रजाल विधा	44	कंण्टेश्वरी [देवी]	४१, ४२	कान्हाक	L AA
		कण्ठाभरण [व्याकरण]		कामन्दकीनीति	920
ईश्वरस्रि	88	कदुबदीन [पातसाहि]	934	कार्मल	२४
उ		कन्यकुब्ज	92, 86	कामला	93
उ ज्जयन्त	४२, ९८	कपर्दि [मंत्री]	३७, ४३	कामिकतीर्थ	68
उज्जयिनी १,	२, १२, २३, ३१,	कपर्दि [यक्ष] ४८,		कालदण्ड	909
	३८, ९७	कपदिवारिका	960	कालिका [देवी]	२२
डाजिंत सेल }	99	कपर्दियक्षप्रासाद	£8	कालिकाचार्य	99, 83
उ ज्ञिलसिहर	58	कपिछ	98, 908	कालिङ्गीयक	86
उत्तरमथुरा	99	कपिलकोट	93	कालिदास	90, 08, 996
उत्तररामचरित्रगान	96	कपूरी	28	काली देवी	998
उ दयचन्द्र	१२५	कमलकेदारा [वापी]	28	काशी	६, १०३
उदयन ३२,३४		क्मलादित्य	- 38	काइमीर	7,
उदयप्रभ ो	928, 926 68, 660	कमलादेवी	36	कासद्रह)	63
उदयप्पह	935	कयलोषरी [प्राम]	934	कासद्रा [प्राम]	926
उ द्यराज	936	करणउत्र (कर्णपुत्र)	34	कासहद	- 93
उदयसिंह]	88, 40	करडाक	47	काह्नडदेव	902
उदयसीह	903	करम्बकविहार	924	किराडू	२३
उपदेशमाला [प्रन्थ]	908	कर्णउत्त (त्र) २३,		कीत्	903
उपदेशमाला-वृत्ति	900	कर्ण [चौछक्यवंशीय]	85 933	कुङ्गण	35
उ मा	90, 998	कर्ण [डाहलदेशीय]	34, 174	कुण्ड(विड)गेश्वरप्रासा	
उमा पतिधर	90	कर्णदेव	₹₹ ₹ ₹	कुन्ती	. 46
उरंगल [पत्तन]	98, 88	कर्णवारी	999	कुबेर	922
ं ज		कर्णाट	20	कुमर (डुमारपाल)	
ऊदा (उदयन)	२६	कर्णाटेश	98	कुमरविहार	80
ज दाक	२७, १२६	कर्णावती	२७, २८, १२६	कुमरिक (कुमारपाल)	३८, ३९
ज दावसही	20	कर्मसिंह	88, 49	कुमारदेव (कुमारपाल	
ऊपरमालपर्वत	88	कर्प्रदेवी	66-90	कुमारदेवी ३७, ३८	, 39, 89,88-
ऊपरवट [अश्व]	58	कस्तुरी	28		२, ५३, ५५,५८,
ऊ मादे	935	कस्मीर	90		६५, १२३
羽		कलिङ्ग	126, 138	- कुमारदेवीसर	Ęo
ऋषभदेव	909	कल्याणकटक	900, 926	कुमारपाछ	४२
ऋषभश्रासाद	30	कांज	58	कुमारसंभव [काव्य]	90, 996
ऋषभविस्व	30	कांथडिक [तापस]	926	कुमुद [पण्डित]	930
ओ	40	काकरप्राम	97, 976	कुमुदचन्द्र	२७०३०, १२०
ओजेनिनदी		काकू	63	कुम्भीपुर	192
ओढरजाति	338	कातच्च [व्याकारण]	939	कुमरड (कुमारपाछ)	80
	88	कादिक	44	कुरु	938
क	1	कानडा [राग]	48	कुरुचन्द	58
कइंबास [मंत्री]	८६, ८७	कान्ति)	23	कुलचन्द	98, 29
कच्छदेश	994	कान्ती	34, 36	कुहाडि	1900
कच्छेश्वर	93	कान्तीपुरी	28, 99, 94	कृष्ण	93, 88, 906
					1-2-1-1

•					
कृष्णदेव े	84	गद्भणपति	80	चण्डिकास्तुति	95
केतु	40, 902	गाडर	88	चतुर्भुज	69
केदार	, EA		1, ३८, ५१, ५८	चन्दनबाला	२६
केदारयात्रा	36	गितिनार 🖯	१३६	चन्दनवसही	40
केल्हण	909	गुणचन्द्र	२६, २८	चन्दना	58
कैलाशहास	22	गुणवर्द्धन	936	चन्द्नाचरित	७५
कोका मलिक	934	गुणाकरसूरि	96	चन्दबलहिअ)	८६
कोडीनार	90	गूढमहाकालप्रासाद	90	चन्दबलिद्	64,66
कोणाग्राम	49	94	, २१, २७, २९,	चन्द्बलिहिक]	26
कोरण्टक [प्राम]	900	40	, ६९, ७९, ११८,	चन्दोमाणा [श्राम]	56
	936	•	१२६, १२८	चन्द्रज्योत्स्रा	२४, २५
कोरण्टगच्छ		गूर्जरत्रा १९,२३	, २५, २८, ५०	चन्दप्रभ	४३, ६१, ८३
कोरिक	908, 998	गूजरात	34	चन्दप्रभादितीर्थ	AŚ
कोलिक	960	गूर्जरी	७९	चन्द्रावती	45
कोशला	8, 82	गोऊ	902	चांपलदे	8.5
कोङ्कण	86	गोगा	- 30	चाङ्गदेव	- १२३, १२४
कौन्तेय	999	गोगाक	39	चाचरीयाक	७६
क्षिति [पुर]	90	गोगामठ	40	चाचिग	१२३, १२४
क्षीरोदवापी	38	गोदावरी १	१, १३, १४, २०	चाचिगदेव	६७, १०२
ख		गोध्रईयाक	86	चाण्रमञ्	96
खंगार [नृप]	३२, ९८	गोध्रा	48	चान्दण	905
खंडेराय [सांखुलाक]	७४	गोधियक	59	चान्द्र	939
खरतर	994	गोपगिरि	२०, २६	चापोत्कट	92, 926
स्वर्पर	ę	गोपालपुर	36	चामुण्ड	93
खलची	934	गोमण्डल	86	चामुण्डराज	45
खापरका	. 4	गोला (गोदावरी)	२०	चामुण्डा	99, 990
खेड [महास्थान]	Pc2, 930	गोविन्द	94, 928	चारण २३,	३४, ३५, ४७, ५२५
		गोबिन्द [चाचरीयाक]	96	चारुकीर्ति	94
ग			996	चारूपग्राम	59
	, ३५, ६६, ९३	गोविन्दाचार्य		चालुक्य	५६
गंगाधर	२६	गौड [देश] १९,	993	चाहड	३२, १२६
गगनगामिनी [विद्या]	94	गौडवध [काव्य]	925	चाइमान	८६, १०१
गगनधूछि [नायक]	ss	गौरी	39	चाहिणी	923
गजणपुर	१३५,	गौर्जर		चाहिल	48
गणपति [व्यास]	60	ग्यासदीन [पातसाहि]	88	चित्रकवछी	63
गद्य भारत	36	ग्रथिल-भीमदेव	6.5		८, ४४, १०३, १०४
गन्धर्वसर्वस्व	58	, घ		चित्राङ्गद	903
गन्धर्वसेन,	9	घूघलमण्डलिक	48	चीच	906
गन्धवह [रमशान]	- 4	घृतवसतिका	. 64	चैत्रगच्छ	* * * * * * * * * * * * * * * * * * * *
गयणा [इन्द्रजालिक]	3 6			चालुक्य	३७, ४३, ६१, ६९,
गया	34	च			७४, १२७
गर्जनक	८६, ८९	चक्रेश्वरी	90		छ
गांगिल	२९	चण्ड	98	छाडाक [ठकुर]	३०, ४५
गाँगाकु	३६	चण्डप	48	छितिप	= 1 = 20
गाङ्गेयकुमार	२०	चण्डप्रसाद	५३, ५५	19144	1 - 72 1

Indir Gandhi Natio

छिं पिका	60	जिन भद्र सूरि	903, 904	तिहुअणसिंह }	. 33
छेकभारत	38	जिनभुवन	49	तिहुअणसीह ∫	\$5
ज		जिनमत	95	तुगलाबाद }	0 00%
		जिनवल्लभसूरि	. 85	तुगलकगाबाद ∫	134
जइचन्द् रे	66	जिनशासन	98, 00	तुरक }	9, 65
जइतचन्द ∫	66	जिनसिंहसूरि	905		9, 40, 90, 926
जइतलदेवी	da	जिनेश्वरसूरि	84		40, 57, 55-09,
जगड	8.5	जिराप-(ही)	934	dande 11	७३, ७५, ११२
जगडू)	60	जीन्द्राज	902	तेजपुर	90
जगडूक े	60	जीर्णदुर्ग	Ęo	तेजल(तेजःपाल)	६६, ६७
जगदेव	74, 64	जेठेया	90	तेजलपुर	44, 44
जयकेशी	२९, ३६, १३३	जेसल (जयसिंह)	२३, ३५, १३४	तेज्ञा	42, 42
जयचन्द	64, 90	जेसल	34	तैलपदेव	18, 29, 128
जयतलदेवी	58	<u> </u>	88		
जयतसिंह	935	जैत्रचन्द	68, 68	त्रिपुर	806
जयमङ्गलसृरि	40	जैन	96, 63, 904	त्रिभुवनपाल त्रिभुवनसिंह	३७, ४४, १२३
जयसिंघ सिद्धराय	३१, ४४	जैनप्रासाद	२४, ६५		48
जयसिंह हिसद्धराज	23, 24, 38	जैनयाचक	48	त्रिभुवनस्वामिनी	
	३७, ४५, ४७,	जैनव्यन्तर	49	त्रिषष्टिशलाकापुरुपचि	
	46, 938	झ		त्रिषष्टिशलाकापुरुपचर्नि	रेतभण्डार ७७
जया	900		210	थ	
जलालदीन [सुरत्राण]	५०, १३५	झींझरीयाग्राम	Ed	थारापद्गीयप्रासाद	38
जल्हु [कई]	66	2			
	34	टीम्बाणाग्राम	98	द	
जसपडह } [इस्ती]	40,49	ड		दउलती	934
जाकुडि	38	डमाणी [प्राम]	६५	दक्षमणी	36
जाईन्छ ,	- १२६	डाक [प्राम]	६५	दक्षिणिक्षिते [देश]	१२६
जाम्ब	9 5 9	डामर [सान्धिविग्रहिक]		दक्षिणमधुरा	99
जाम्बड [वर्ग]	39	डाहल [देश] २		दक्षिणापथ	98, 928
जाम्बाक	93	ढ		दत्त	90, 904
जावड	99	ढंकपर्वत	. 89, 88	द्=तकश्रेष्ठि	3
जावडि	९९, १०२	ढंका [पुरी]	- 51, 55	दरिद्रनर }	3
जावालिपुर	32, 88, 40		०, १३५, १३६	इरिद्रपुत्तल र्	2
जावालिपुरी	ĘU		, 147, 144	- दशरथ	46
जासिल	39	त		दशार्णमण्डप	48
जिनभद्द	134	तक्षशिला	900	दशास्य	926
जिनहा-°हाक	994	तरंगलोला }[क्या]	38	दाउदपुर	१३५
जितशत्रु	998		38	दान्ताक	995
जिनचन्द्रसूरि	३१, ४३	तारणगढ)	86	दामोदर	98
		तारणदुर्ग } तारणदुर्गप्रासाद	80	दाहिमा दिगम्बर	८६
जिनदत्त	19/ 9 a 10		४७	व्यवस्था	96, 28-28, 69
जिनद्त्त	७८,१०७	ताराज्ञ जनाता ५		14.11.40	
जिनदीक्षा	99	तारादेवी	66, 904		86
जिनदीक्षा जिनदेवी	९१ २ ६	तारादेवी तिलकमञ्जरी [कथा]	८७, १०५ १२०	दिगम्बरचैत्य	86 94
जिनदीक्षा जिनदेवी जिनधर्म	९१ २६ १०, ९४	तारादेवी तिल्कमञ्जरी [कथा] तिलंग [देश]	८७, १०५ १२० १२९	दिगम्बरचैत्य दुर्गसिंह	९८ १५ - ६७
जिनदीक्षा जिनदेवी	९१ २ ६	तारादेवी तिलकमञ्जरी [कथा]	८७, १०५ १२०	दिगम्बरचैत्य	86 94

•	P 2	
दुर्रुभराजे १०२	ध्रवलक [पुर] ५२, ६९	नागड ४९, ५०, ६७,६८, ७७,८०
दुसाज ४९	धवलक ,, ५४, ५५ ६१, ६७	नागपुर २६, ६६, ९९
दुसाजुत्र , ' ५०	धवलक्क ,, २६, २७, ३२, ३३,	नागपुरीय ३१, ७०
देपाक ७३-७५	धव्सका) ,, ६३, ६६, ७५, ९५,	नागर
देवालपुर '१३५	९६ २६	नागराज ३३, ४३
	धवलार्जुन ४०	नागलदेवी 🔻 ७९
3-11-1	धांगा, धांगाक ४८	नागइस्ति ९२
देमता २३	धामदेव ३१	नागार्जुन ९१, ९३-९५
देवगिरि ५४, ५९	धारा [नगरी] १४, १७, १९, २०,	नागिंद १३६
देवचन्द्र ८३, १०७, १२३, १२६	२१, २३, २६, ३५,	नाटसारि [राग] ७९
देवदत्त १११, ११२	४४, ५१, ५२, ९५,	नानाक [किव]
देवधर	९८, ११९, १३१ धाराक	नानामलिक १३५
देवपत्तन ३८,४३,५४,६१,१००	417.6	नामछदेवी ३८
देवप्रभ [स्रि] ५३	***************************************	नायक - ४४
देवल [महं०] ३२	Althoritans at	नारायण १०४
देवशर्मा ९७	anzar Francia	निर्वृणशर्मा २१
देवशाखा [रागिणी] ७९	धारिणी [श्रेष्टिनी]	निर्वाणकलिका [प्रन्थ]
देवस्रि । २५-३१, १०७, १२७	धारू ४३	निहाणा [प्राम] ३१
देवाचार्य रू. २८, ३१, ४३, ४४	धतराष्ट्र ११८	नीत [ठकर] ५२
देवाचार्यपोषधागार २७	न	नीलपट [संप्रदाय] १९
देवादित्य ८२, १३०	नगरपुराण १३१	नेमि [नाथ, जिन] ३१, ३४, ४३ ५३,
देवेन्द्रस्रि ४७	नदृनारायण ७९	ξ4, ξ8, 68, 89,
दोधकपञ्चशती ४९	नडुल रेजिया १०७	92,90
	नडुल } [पुर]	नेमिचैत्य ९८
Sustanta Fara 1	नड्डुला(कान्हडदेव) ४५	नेमिप्रासाद १३१
4,,,,,	नस्द ८१, ८२	नेमिमन्दिर ६३
Sitzin (नन्दिवर्धन ५१	नेह(ड) ५२
Sultan)	नन्दिवर्द्धनपर्वत ८४	नोडा सईद ७३
	नन्दी १२२	
घ	नन्दीश्वरप्रासाद ६३	प
धनदेव १५	नमि ५८	पंचम [राग] ७९
धनदेवी ५४,९५	नमिविद्याधरान्वय ९२	पंचाल [देश] ९४
धनपति ९१	नयसार [भह]	पंचासर [ग्राम] १२, १२८
0.00 00 00	and the first	पंपा [सरोवर] २४
अनपाल ११%, ११%	52 58	44. [9/14/7]
धनपाल ११९, १२०	नरचन्द्र सूरि ६२, ६९	प्लाउन ७९
धनासी [राग] ७९	नरदेव १०२	
धनासी [राग] ७९ धन्ध २६	नरदेव १०२ नरपति २१	पखाडज ७९
धनासी [राग] ७९ धन्ध २६ धन्धक १२३	नरदेव १०२ नरपति २१ नरवर्मदेव २०	प्रवाडज ७९ प्रणपन्नी १००
धनासी [राग] ७९ धन्ध २६ धन्धुक १२३ धन्धु परमार	नरदेव १०२ नरपति २१ नरवर्मदेव २० नरवर्मा ७९	पखाउज ७९ पणपन्नी १०० पत्तन [अणहिलपुर] २१,२३,२५,
धनासी [राग] ७९ धन्ध २६ धन्धुक १२३ धन्धु परमीर धन्याधार [देश] २६	नरदेव १०२ नरपति २१ नरवर्मदेव २० नरवर्मी ५९ नरवाहन ११,९७,१०९	पसाउज ७९ पणपत्नी १०० पत्तन [अणहिलपुर] २१, २३, २५, २८-३३, ३५, ३६, ३८-४०,
धनासी [राग] ७९ धन्ध २६ धन्धुक १२३ धन्धु परमीर धन्याधार [देश] २६ धरणिग ४८, ५४	नरदेव नरपति २१ नरवर्मदेव २० नरवर्मी नरवाहन ११,९७,१०९ नरसमुद्र [पत्तन] २८,२९	पखाउज पणपन्नी पत्तन [अणहिलपुर] २१, २३, २५, २८–३३, ३५, ३६, ३८–४०, ४३–४५, ४७–५०, ५४, ५५,
धनासी [राग] ७९ धन्ध १६ धन्धुक १२३ धन्धु परमार धन्याधार [देश] १६ धरणिग ४८, ५४ धरणीश्वर	नरदेव १०२ नरपति २१ नरवर्मदेव २० नरवर्मा ५९ नरवाइन ११, ९७, १०९ नरसमुद्र [पत्तन] २८, २९ नर	पखाउज पणपत्नी पत्तन [अणहिलपुर] २१, २३, २५, २८–३३, ३५, ३६, ३८–४०, ४३–४५, ४७–५०, ५४, ५५, ५७, ६२, ६५, ६६, ६८, ७५, ७९, ८०, ८९, ९५, ९६, १२३,
धनासी [राग] ७९ धन्ध १६ धन्धुक १२३ धन्धु परमार धन्याधार [देश] १६ धरणिग ४८, ५४ धरणीश्वर १६	नरदेव १०२ नरपति २१ नरवर्मदेव २० नरवर्मी ५९ नरवाहन ११, ९७, १०९ नरसमुद्र [पत्तन] २८, २९ नल १२२ नसरदीन १३५	पखाउज पणपशी वत्तन [अणहिलपुर] २१, २३, २५, २८-३३, ३५, ३६, ३८-४०, ४३-४५, ४७-५०, ५४, ५५, ५७, ६२, ६५, ६६, ६८, ७५, ७९, ४०, ८९, ९५, ९६, १२३,
धनासी [राग] ७९ धन्ध १६ धन्धुक १२३ धन्धू परमीर धन्याधार [देश] १६ घरणिग ४८, ५४ घरणीश्वर १६ घरणेश्वर १६	नरदेव नरपति नरवर्मदेव नरवर्मा नरवाहन नरसमुद्द [पत्तन] नर समुद्द [पत्तन] नर समुद्द [पत्तन] नर १२२ नस्पदीन नसरदीन	पखाउज पणपशी वत्तन [अणहिळपुर] २१, २३, २५, २८-३३, ३५, ३६, ३८-४०, ४३-४५, ४७-५०, ५४, ५५, ५७, ६२, ६५, ६६, ६८, ७५, ७९, ४०, ८९, ९५, ९६, १२३, १२६, १३२
धनासी [राग] ७९ धन्ध २६ धन्धुक १२३ धन्धु परमीर धन्याधार [देश] २६ धरणिग ४८, ५४ धरणीश्वर २६ धरणेन्द्र १६	नरदेव १०२ नरपति २१ नरवर्मदेव २० नरवर्मी ५९ नरवाहन ११, ९७, १०९ नरसमुद्र [पत्तन] २८, २९ नल १२२ नसरदीन १३५	पखाउज पणपशी वत्तन [अणहिलपुर] २१, २३, २५, २८-३३, ३५, ३६, ३८-४०, ४३-४५, ४७-५०, ५४, ५५, ५७, ६२, ६५, ६६, ६८, ७५, ७९, ४०, ८९, ९५, ९६, १२३,

			•		•
पद्माकर	२६	पुलकेशी	3 4	बङ्गअ	" 66
पद्मानन्द [काव्य, प्रथ		पुष्करिणी	२६	बड्या [चाचरीयाव	5] ' 96
पबंधावली	१३६	पुक्लावतीविजय	48	बनास नदीं	, 88
परकायप्रवेशविद्या	63	पुच्याभरण	. 38	ब(ध ?)न्धुराज	49
परसहंस	905	पुरफचूला	8.3	बप्पभद्दस्रि	36, 38
परमर्दी	90	पूनड [साधु]	७०	बर्बर [वेताल]	9, 938
परमार [वंश] १	2, 23, 24, 83,	पूर्णचन्द्र	२६	वर्बरक	२३
-	४४, १२८	पूवा	७२	बलि [राजा]	८२, ९७, १०२
परिसल	२०	पृथिवीस्थान [पत्त	न] ९१	वंहडाइच	934
पल्यपुर	94	पृथ्वीराज	८६, ८९, १३५	बहुरूपिणी [विद्या	994
पह्णीब्राम	- 63	पेटलाउद	* 40	ब्रह्मश्चिय	94
पहुविराय, पहुवीस (पृथ्वीराज) ८६	पेथू	. 24	ब्रह्मा	७४, ८७
पाटलिपुत्र } [पत्तन]	93	पेथूहर	24	बाकरी [वेश्या]	903
पाटालपुर ।	८१, ८२	पेरोज	934	बाण [किव]	94, 48
पाणान	939	पोतनपुर	906	बापड [राजपुत्र]	49
पाण्डव	906	प्रतापमञ्ज	३८, ३९, ४३, १२३	बालचन्द्र	88
पातसाहि	८३, ८७, १३५	प्रतापसिंह	८६, ८७	बालधवला	89
पाताक	८२	प्रतिष्ठानपत्तन	. 99	बालभारत	96
पाद्छिप्त(°सकपुर)	६ ३, ९१	प्रतिष्ठानपुर	98, 996	वालहंससुरि	७६
पादिछप्त स्रि	89-98	प्रतिमाणा	99	बावन	28
पाद्रदेवता	29	प्रथिमराज	८७	बाहडदेव	३२, ३९, ४०, ४६,
पापक्षय [हार]	४०, ४१	प्रद्योतनसूरि	900	416044	123, 128, 126
पारस [श्राद्ध]	39	प्रफुछ [श्रेष्ठी]	- 85	बाहुक [शल्यइस्त]	
पाराचि [भूमि]	933		६१, ६५, ११२, १२३	बाहुडदेव	. 36
पारूथक] [द्रम्म]	49	प्रश्नप्रकाश [प्रन्थ]	38		
पार्वती	30	प्रल्हाद्नपुर	४३, ६७	बाहुलोडपूर बीजलिआ	933
	29	प्राकृत [भाषा]			३५
पार्श्व [नाथ, जिन] ६८		प्राग्वाट [वंश]	२६, ४३, ५२, ५३,	बुद्धि [योगिनी]	३६
पार्श्वचन्द्र	900		६२, ६८, १०१	बुद्धिसागरसूरि	99
पार्श्वतीर्थ	२६	प्राचीमाधव	AR	बृहद्गच्छ	२६, १०३
पार्श्वनाथचेत्र	39	प्रियंगुम अरी	994	बृहस्पति	28 83
पार्श्वनाथप्रतिमा	۶۰, ۹۷ ۹۹	वियमलेक [तीर्थ]	4.9	बोटिक	89
पार्श्वनाथविम्ब		मेम लदेवी	36	बोसरिक } बोसरी	38
पार्श्वमायायम्ब पार्श्वमूर्ति	90		फ		३२
पालित्तय [स्रि]	90	फणिपति	40	बोहित्थ [वंश] बौद्ध	33
पालीताणक	94	फत्	28	418	६८, ८३, ९८, १०५,
पासिल [श्रावक]	६५	फलवर्द्धिका ग्राम	39	बहादेवकुल	१०६, १३०
पाहिणी	30	फलू	28		- 48
पिष्यलाचार्य	₹ <i>७</i> <i>७५</i>	कुलड	92		म
पुंडरीक		173	ब	भक्तामरस्तव	98
पुण्डरीकिणी [नगरी]	६६, ७०	बडली		भट्टमात्र	9, 4, 6, 998
पुण्यसार	30	्बङ्गलादेवी -	७९	भद्रबाहु	59
पुरन्दर	38	्रबङ्गालदेश - बङ्गालदेश	923	भद्रेश्वर	. 00
9.31	000000	- अगल पुरा	66	भयहरस्तव	198
					To and home

•		
भरत [राजा, चक्री]	४२, ५८	1
भव (शिव)	932	-
भवानी (पर्वती)	932	
भाऊ	48	
भाण्डागारिक	3905	
भानुमती	69	П
	69-63	
भारत, छेक	20	
— गद्य	96	
— बाल	96	
— (महाभारत)	999	
भावड	33	
	۷, ۹۹۹	-
भीम २१, २३, ५४, ६५		1
929, 92		1
भीमगान्धिक	998	1
भीमडाक	39	3
0.0	12, 94	4
0 000	₹8, ६ 4	3
सुण्डपर्वत	96	
भुवनपाल	4६	4
अवनपालेश्वरप्रासाद	46	3
भूणपाल	74	+
भूण्डपर्वत '	36	Ŧ
भूयराज	• 926	Ŧ
	10, 44	*
सगुपुर ४०, ५६, ६		+
		स
मैरव [राग]	9, 08	4
भैरवानन्द [योगी]		स
भोगवती	6	म
भोगावह	32	म
भोगीन्द्र	90.	म
		#
भोज [तृप] १४, १७-२३, ५ ७२, ९६, ११७,		म
129, 122, 123		म
भोजस्वामिश्रासाद	90	म
भोपलदे	83	म
भोपछा	99	म
	31	म
म	-	म
मं डलीनगरी	da	म
मकडाणा ६	E, 89	मा
मगध	928	म

मधव	40
मङ्गाहडपुर	२६
मण्डनगणि	32
मतौडातीर्थ	ĘĘ
मथुरा	99, 82
मद्न	vv
मद्नपाल	५३, ५४
मद्नब्रह्म	२३-२५
मद्नायतन	v
मद [देश]	932
मधुमती	88-909
मधुस्दन	99
मनोरमा	99
मस्माणनगर	909
मन्माणाकर	909
मम्माणी [खिन]	33
मयण	३६
मयणल(छ)देवी	२८, ३५, ३६,
	933, 938
मयणसाहार	84, 68
मयूर [कवि]	94, 95
मरहट्टदेश	99
मरु [भूमि]	925
मरुदेवी	38
मरुमण्डल	63
मरुखली	३२, ८४
मलधार [गच्छ]	920
मलयपर्वत	49
मलिककूबडी	934
मलिका	934
मछदेव	५४, ६५, ९०
मलवादि [स्रि]	८३, ९६, १३०
मिछिक	40
म हिकार्जुन	३९, ४०, ४६, ४७
महणक	92
महणका	926
महमद	90
महमूंद	१३५
महापिछ	90
महाभारत	928
महाविदेह	58, 998
महाराष्ट्रीय	104
महावीर	63

	243
महिणल पट्टिलक	
महिरावण	39
महिषपुर	39
महीधर .	96
महुआ	A Ś
महेश्वर	
मांगू	933
माइंदेव	
माऊ -	२३ २५, ५४
माऊहर	77, 70
मागघ	9
माघ [किव]	90, 08, 904,
	130, 139
माघकाव्य	90
माणिकउ [पछेडउ]	80
माणिक्य	20, 20, 39,
माणिक्यसूरि	५०, ६४, ७६
माधव	३२, ३३,
माधवदेव	28, 24
माधवपंडित	28, 24
मानखे(वे)टपुर	93, 98
मानतुङ्ग सूरि	94, 94, 929
मानदेव स्रि	900
मानस [सरोवर]	28
मारव	.49
मालदे	98
मारुक]	३२, ५०
मारुयक ∫	४८, ११३
मालव १७, २०	, २३, २४, ३१,
३५, ४४, १	७, १०२, ११९,
	२६, १२८, १३१
मालवक	90, 29, 95
मालवपति	७९
मालवमण्डल	२७
मालवराज्य	9.5
मालवा मालवेश	3.8
माल्हणादेवी	98
	90
माहिन्द माहेच	903
माहे च माहेश्वरप्रासाद	98
माहेश्वरप्रासाद माहेश्वरी	58
मिणालव ई	133
	- 34

132	,			(98
मुझ [तृग]	93, 94-42,	याकिनी [साध्वी]	903	रुदाइच (रुद्रादित्य)	995
32 [5.1	926, 928	याज्ञवल्क्य	998	रुद्र [शिव]	
मुणालवई	928	युर्गीदिदेव ४३,६६	, 63, 900	रुद्रमहाकाल	
मुद्रल	१३४	युगादिदेवप्रासाद	२३, ५२	रुद्रादित्य [मंत्री]	93, 88, 926
मुद्रलबंदी	60	युगादिदेवभाण्डागार	58	रूपवती	930
मुद्रखपातसाहि	64	युगादिफलही	96		३४, ४७, ५२, ५३,
मुनिचन्द्र	२६, ३१	युधिष्ठिर '	928, 932		६५, ६९, ८२, १३२
मुनिसुवत [देव]	38	युगंधराचार्य	960		३४, ४३, ६१, ९३,
	४५, ६२	यूकावसही	954		७, ९८, १२६, १३२
मुनिसुवतचैत्य	- 33	योगशास्त्र	924	रैवतकपद्या	१२६
मुनिसुव्रतप्रासाद	32	योगिनीपुर	८६, ६७, ८९	रैवततलहद्दिका	36
मुरंडनरपति	922	₹		रोदिक (रुद्रादित्य)	
मुरारि		रंक [वणिक्]	9, 62, 63	रोहणगिरि, रोहणा	ाल १, ११६
मुहडासा [प्राम]	39	रञ्जपति	७२	A TOTAL STATE	छ
मुहुयानगर		रणसिंह	39		२५
मुन्धउर	१३५	रति	920	लंका	909
मूलराज	१३, ७७, १२८	रतिरमण (कामदेव)	922	लक्ष्मण	928
मृणालवती	१४, १२९		- 68	लक्ष्मी	94
मेघ [राग]	৩০	रतपुत्र	. 68	लक्ष्मी धर	11
मेडतकपुर	93	रत्नपुर	920	छख[म]णसेन	68, 66
मेद [जाति]	909, 902	रतप्रभ	82	लखणावतीपुरी	68, 66
मेदपाट	४४, १०२	रत्नशेखर	68	लघु वाग्भट	९६
मेरी	58	रसीअड [योगी]	- 64	लितविस्तरा [वृत्ति	
मेरु	२०, ५१	(distre)	- 86	छछिता	, ६२, ६३
मेलगपुर	३२	राजपुत्रवाटक	40, 49	ललि(लू)तादेवी	५४, ६३, ६५
मेवाड	39	राजल राजविडम्बननाटक	२१, २२	खवणप्रसो र्	५४, ६५
मेहता [गाम]	48	राजविहार	30	लवणसमुद्र	V.
मोगा	63	राजशेखर	998	छवदोसिक	96
मोजदीन [सुरत्राष			Ęu	लपणावती	१३५
मोढकुल	923	राजस्थापनाचार्य [बिरुद] राजिल	993	लहर [ठक्कर]	45
मोडेरपुर	63	राजीमती	60	लाखण	909, 902
	य	राम (रामचन्द्र) ८,९,		ल् ग छल देवी	३३
यक्षदेवकुळ	3	राम (राम यन्त्र) क, 5,	994	्रहाट [देश]	३२, ६८, ९३, १३४
यक्षनाग	32	रामकथा	3	ळाडदेश	80
यमुना [नदी]	99, 934	रामदेव	993	लाषाक	93
यवनव्यंतर	63	रामराज्य	3	लाहउर	१३५
यशःपटह [इस्ती		रामशेन [ग्राम]	32	लीलादेवी	6 33
यशश्चनद्र	923	रामायण	6	लीलावती	28
यशोधन		रायविड्डार [बिरुद]	32	ही ल्	8.5
यशोधर	992	रायविहार	30	लु खाई	993
यशाधर यशोभद्र	53		, 994, 996	लूणपसा]	48
	७५, ११५	राष्ट्रकृटीय	66	ल्लूणप्रसाद	५५, इ
यशोराज	٥٤ - ١		43	ॡ्रणसीइ	. 09
	६, २३, २४, ३५, १०९	ग्रासि छस् रि	934	स्त्रणिंग	पर, पर
यशोवीर	४९-५३, ६७, ७०, ७१	रूक्मदीन	147	1 60.00	THE PARTY

Centre for the fire

. 9		n	0		1750
स्र्णिगवसही	५३, ६५	वरणारसी	94, 20, 44	विष्णु	68, 908
लोलियाणक	998	वादी देवसूरि	30	वीकम	903
लोहरिक हे इम्म	1 40	वामणी	२४	वीकमओॅ	3
लोहडिय ∫ रिया	4	वासंदेव	vy	वीघरा	102
	4	वामन	90	वीर [जिन]	32, 82, 58, 908
वईजलिया		वामनस्थली	£2, £6, 998	वीरणाग	3 €
वङ्गालया	86	वामराशि	- 974	वीरप्रतिमा	٤٤
	925	वायडज्ञातीय	96	वीरदेव	37, 900
वचनवत्सला	54	वायडपुर	38	वीरधवल	48-46, 64-60,
वज्रस्वामी	33, 909		6, 66-90, 900		59, 06
वज्राकर	3	वाराहीसंहिता	30	वीरम	48, ६५-६७
वटकूपपुर	és.	वालही		वीरमति	926
वटपद्रपुर	AA	वालीनाह	318	वीरराज (वीरधवर	ह) ५७
वडीयारदेश	356		42	वीराचार्य	*3
वड्याघ्राम	७६	वासुकि	39	वील्र	28
वढवाण	३५	वासुपूज्यचेत्र	30	वीसल)	44-46, 998
बरथुपाल (वखुपाल)) १३६	विक्रम (विक्रम)	935	वीसलदेव	40, 46, 00-60
वद्यमाण (वर्द्धमान)	33	विक्रमकाल	63	वीसलिक	66
वनराज	92, 926	विक्रमराय	183	वृद्धसरस्वती	२०
वयज्	39		90, 998, 990	वृषभ [जिन]	68
वयजुका	48	विक्रमसेन	4,6	वेणीकृपाण [बिरुद] 06
वररुचि	69	विक्रमादित्य १,३,९	,49,909,996	वेदगर्भ	994
वराइमिहिर	30, 39	विक्रमार्क	8-0	वैदिक	98
वर्द्धमानपुर •	Ęv	विखि	8.5	वैष्णव	58
	6, 63, 84, 998	विजयचन्द्र	66	व्यात्रपही	da
वलभी [पुर]	/62, 63	विजयब्रह्म	99	व्यास	٥٧, ٥٤, ٥٥
	63	विजयसेनस्रि	44, 48, 04	व्यासविद्या	60
वलही	902	विजया	900	10	श ः
वल्लभराज	1 1	विदुर	906	शंकर	58, 994, 920
वह्नभा	- 38	विद्याधर [मंत्री]	66, 90, 922	शंख	५६, ५७, ७४
वसंत [राग]	90	विद्यारधरगच्छ	53	शक	40
वसन्तपुर	993	विद्यानन्द	112	शकावतारतीर्थं	. 120
वसाह	\$3, 83, 88, 80	विद्यापुर	६७	शङ्खेश्वर [प्राम]	68
	86, ६9, 60 .	विनमि	46	शङ्केश्वरपार्श्वनाथ	52
	५२-५५, ५७, ५९,	विभीषण	938	शङ्खलु (संडेराज)	
	£9-£8, ££-64,	विमल [मंत्री]	49-43		३२, ४२, ४३, ५९,
	00, 06, 60	विमलचन्द्र	२६		- ६६, ६८, ७५, ८३,
वस्तापथ [ब्रीथं]	Ęo	विमलवसति	49		₹, ९९-१०१, १२६,
वांका [प्राम]	19		42	31, 3	120, 120, 122
वाक्पतिराज	197	विमलवसहि	63, 98, 96	शत्रुञ्जयतलहद्दिका	140, 140, 141
वाग्भट [मंत्री]	३२, ४०, ४२, ४३,	विमलादि	44, 70, 70	शतुलयत्तवहाटका	46
	46, 50	विमानविश्रम		शतुज्ञयमाहात्म्य	04
वाग्भट [वैश्व]	98,90	विराट [देश]	35.8	शतुज्ञपयात्रा शम्भलीश	303
वाचरामाम	32	विवेकबृहस्पति [विरुद]		शम्मलाश शम्भु	908, 528
वाचस्पति	- 90	विश्वमञ्	44	41.3	100 172
यु॰ प्र॰	स॰ 20				721

Contra Security Adds

1 10		
शाकसैन्य ८६	व °	साङ्गण-चामुण्डराज ६९
शाकंभरी [पुरी] ३१, ८६, ८७, १०१	षं(खं) गार ३४	साङ्गण [डोडिआक]
शाकटायन [व्याकरण] १३१	षं(खं)भराघाम १३५	साजण (सजन) [मंत्री]
शाक्यसिंह १०६	षड्दर्शनमाता [बिहद] ६३	सातवाहन ११, ९१
शातवाहन ९४, १३०	षोसरुपानु (खुशरुखान) १३५	सात्कै [महं॰]
शान्तिकलश २६	स	सान्त् [मंत्री] ३१,३५,१०७
शान्तिनाथ १०७		१३३, १३४
शान्तिस्तव १०७	सइंभरी (शाकंभरी) ८६ सइंवाडीघाट ६७	साञ्चमती ७८
शारदा [देवी]		भामंतसीह १०२
शासनदेवी २६	सईद [नोडा] ५६, ७३	सामाचारी [प्रन्थ] ९४
शिलादित्य ८२	संखेश्वर १२	साम्ब
शिव १०, १९, ४८, ६८	संधामराजा ९३	सारंगदेव ११२
शिवपत्तन ८३	संमेत [गिर, तीर्थ] ९३	सारस्वतमंत्र ७८
शिवपुर १०३		सालाहण १२
शिवभूति २६		सावदेवस्रि १३६
शिवमार्ग १२४	संस्कृत [भाषा] ६,१०	साहबदीन [पातसाहि] ८७, ८९, १३५
शिवशासन ४९	सगर [चकवर्ती] ५८ सजन [कुलाल] २८	साहारण २७
शिशुपावलघ [काव्य]		सिंघरा १०२
शीलगुणसूरि १२, १२८		सिंह १३
शुभंकर १०५	सजान [साकरीयाक] ३६ सण्डेरगच्छ ४९	सिंहणदेव ७९
इर्ज़ारकोडि (साडी) ४०, ४६	सण्डेराज (खण्डेराज) [शंखलु] ५६	सिद्धराज [जयसिंह] २३-२५,२८,३०,
शैव ६८		३४-३६, ३८, ३९, ४७,
शोभन [मुनि] ११९	सत्यपुर २६ सपादलक्षप्रन्थ (महाभारत) ५८	८५, १०५, १२३, १२५,
शोभनदेव [सूत्रधार] ५३	समरसिंह ४९	920, 939-938
श्री [कन्या] १५	समरसीह १०२	सिद्धचेत्रवर्ती २८, २९
श्रीदेवी १ १२, १२८	समराक ६८	सिद्धनाथ २३, २५
श्रीधर ४२	समरादित्य १०५	सिद्धपाल [किव] ४२, ४३
श्रीपर्वत ६, ६५, ११६	समरादित्यचरित १०५	सिद्धपुर ३०, ४४, ४५
श्रीपाल [किव] ४२, ४३	समसदीन [पातसाहि] १३५	सिद्धि १०५
श्रीपुंजराज ५१, ८४, ८५	समुद्रविजय ६१,८१	सिद्धसारस्वत ८६
श्रीयमस्रि १०७	सरस्वती [देवी] १०, २६, २७, ४३,	सिद्धसेन स्रि ३८, ११७
श्रीमाता ५१, ५२, ८४-८६	992, 920, 928	सिद्धसेन दिवाकर १०
श्रीमाल [पुर] १७, १८, ३२, ३४,	सरस्वती [नदी] १२८	सिद्धहेम [व्याकरण] १३१
82, 89, 63, 904,	सरस्वतीकण्ठाभरण प्रासाद १२०	सिद्धि [योगिनी] ३६
908, 988, 980	सरस्वतीकुटुम्ब ११८	सिन्धल १५
श्रीमालज्ञातीय १०५	सर्वदेवाचार्य १०७	सिन्धु १ १२६
श्रीराग ७९	सहस्रकला २४, ४९	सिन्धुल १३, १५
श्रीहर्ष [किव] १२८		सिराणा [ग्राम] ५०
श्रेणिक [राजा] ४२		सींघण २४
श्वेतपट २७, २९	सहस्रालेङ्ग [सरोवर] ६७ सहावदीन [पातसाहि] १३५	सीता २१
श्वेताम्बर १५, २७, २८, १०१,	साइंदेव २४	
१०५, १२७, १३०	साऊ २४, ५४	सीतादेवी १०१ सीतारामप्रबन्ध • ७४
श्वेतीस्वरीय २७, ९८	सागर [द्विज] २६,९७	सीधाक १०५
	16.30	(गावाक

	26
सीमंधर [खामी, जिन] २६, ६९,	34,
• - 9	98
सीमंधरप्रासाद	२६
सीलण ४७,	86
	40
	२४
	38
सुधर्मस्वामी	९५
सुघानिघि वापी	२४
	40
	99
3.10	20
सुमतिप्रभ [गणी]	39
सुमाया	28
	08
सुमेसर (सोमेश्वर)	45
सुरत्राण ५१, ६६,	68
	22
सुराष्ट्रा ३४, ५८, ६३, ९३,	
86, 928, 924, 9	
सुललित	28
सुवर्णनर	3
	०२
सुवर्णापुरुष	2
सुवर्णसिद्धि	88
सुव्रता	93
सुव्रताचार्य	33
सुशीला	28
सुहादेवी	32
सुहागदेवी ४८, ४९, ८८, ८९,	90
	58
सूमेसर (सोमेश्वर)	650
सूर्यशतक	98
सेडउ [इस्ती]	88

	3
सेडी [नदी]	. 59
सेड्यक [इस्ती]	80
सेरिसक]	280
सेरीसक रे विषय	1 998
सेषर	92
सेहर	92
सोनल	३४, ३५
सोपारक	४२
सोम	५३, ५५, ९८
सोमचन्द्र	२६
सोमनाथ [महादेव]	36
सोमनाथयात्रा	\$8
सोमभट्ट	90, 96,
सोमभद्र	8
सोमेश	933
सोमेश्वर [महादेव]	३५, ३६, ३८, ४७,
	६१, ६९, ७२, ७८,
	८६, ९८, ११२,
	१२९, १३०, १३२
सोमेश्वरदेव [कवि]	७४, ८०
सोमेश्वरयात्रा	८२, १३२
सोरठी [राग]	us
सोॡ	926
सोहगा	48
सोहालक [प्राम]	48
सोही	903
सौगत [मत] १	६, ८३, १२०, १३०
सौभाग्यदेव	66
सौरमन्त्र	८२
सौराष्ट्र	926
सौराष्ट्रिक	४३
स्तम्भतीर्थ	४४, ५४, ५५, ६४,
	६५, ७३, ७४, ९८,
	992, 923
स्तम्भन (स्तम्भतीर्थ	
स्तरभनकाचार्य	96

स्तम्भनप्राम	54
स्थूलभद्रचरित	३७
स्वर्गारोहणप्रासाद	ĘG
स्वर्णगिरि	49
स्वर्णगिरिदुर्ग	40
•	
हंस	४३, १०५
इंसगति	38
इंसविश्रामवापी	58
हजयात्रा	ĘĘ
हम्मीरी	28
हरदेव [चाचरीयाक	
हरपालदेव	१२३
हरिचन्द्र	२६
हरिभद्र सूरि	903-904, 900
हरिसिद्धि [देवी]	4
हरिहर	७७
हर्ष [राजा]	94
हस्तिकल्पपुर	906
हांसी	3.0
हारीज	63
हिंदुक	44
हिसादि ।	49
हिमालय }	996
हुण	338
हूणवंश	1 9
हेमचन्द्र [सूरि]	३७, ४२, ४३,
	१२६, १२८
हेमडसेवड	924
हेमप्रभ सूरि	५३
हेमब्याकरण	939,
हेम[चन्द्र]सूरि	३७, ३८, ४४, ४६,
	४९, ५८, १२३,
	१२४, १३२
हेमाचार्थ	33, 88, 84, 80

प्रवन्धचिन्तामणिग्रन्थान्तर्गतावेशेषनाम्नां सूचिः।

॥ अकाराद्यक्षरानुक्रमेण ॥

अ	
अकालजलद [बिरद]	30
भगस्त्य	६९, ७६
अग्नि [राजा]	६२
भग्निवेताल	2, 3, 32
अच्छोद [सरोवर]	£ 3
	९६,९७
अजयदेव चालुक्य	
अजितनाथ [जिन]	9.5
अणहिल्ल [भारूयाड]	93
अणहिछपुर [पत्तन]	१३, १५, १७,
	, ४७, ६०, ७४,
	७, ७८, ८१, ८६,
	, ९१, ९२, १२६
अनादिभूपति [तपस्वी]	83
अनुपम देवी	96, 903-4
अनुपमा ∫	
अनुपमासर	900
अन्धय [अन्धक]	39
अन्ध्र [देश]	1900, 920
अभयदेव [स्रि]	903
अभिनन्द [कवि]	908
अम्बा अम्बका	923
अयोध्या	93
अरिष्टनेमि-प्रासाद	ĘĘ
अर्ट्यास-त्रातापु अर्ह्यती	26
अर्जुन अर्जुन	३१, ५५
अर्जुनदेव [मालवभूपित]	९७
अर्णोराज [शाकम्भरीश]	७६
अर्द्धाष्टम [देश]	. 43
अर्बुद [नाम]	990
अर्बुद्र गिरि	60, 90, 909
अर्बुद तलहहिका	39
अहंन् [देव]	६३
अर्हन्तश्री [प्रनथविशेष]	38
अलका [नगरी]	93
अवन्ति [नगरी]	2, 3, 24, 89,
	90, 904, 939

	
अवन्ति [देश]	1
भवन्ति सुकुमाल [मुनि]	७ (हि॰)
अश्विनीकुमार	123
अष्टापद [पर्वत]	935
अष्टापद-प्रासाद	909
• आ	
आकृष्टि विद्या	998
आकेवालीया [प्राम]	904
आगडदेव	94
भागडेश्वर	94
भानाक (अणीराज) [सपादल	क्षीयो ७६,७९
आनाक [ब्याघ्रालीय]	38,96
आभड [वसाह]	59-40
आभीरराणक [नवघण]	43
आम [नृपति]	923
	44, 60, 69
आम्बड } [मंत्री]	٥٤-٥٤, ٩٥
आईत [दर्शन, मत]	४२
भालिग [कुलाल]	30, 60
आलिग (°मिग?) [पुरोहित] ६० (टि०),
	63
आलिग [प्रधान]	49, 89
आल्या [गूर्जराश्ववार]	28
भावस्यकवन्दनानिर्युक्ति [प्रं	थ] १०१
आशराज [मंत्री]	36
आशराज-विहार	909
आशा [भिल्ल]	44
आशापही	44
आशास्वर [दिगम्बर]	998
आसंबिली [प्राम]	v9
इ	
इन्द्र [नृपति]	६२
उ	
उच्चा [नगरी]	94
उज्जयन्त [पर्वत, तीर्थं] ६	५, ९३, १००,
	909
उज्जयन्त-प्रासाद	६५
उज्जयिनी [नगरी]	८, १३
उञ्झा [प्राम]	७१, ७२

उत्तराध्ययन [सूत्र] बृहद्वृत्ति	44
उदयचन्द्र [पण्डित]	90
उदयन [मंत्री] ५६, ७७, ७	3, 69, 63,
	٥٤, ٥٥, ٩٥
उदयन-चैत्य	22
उद्यन-विहार	44
उद्यप्रभदेव	६९
उदयमति [राज्ञी]	48, 44
उदा [उदयन]	५६
उपासकद्शा [सूत्र]	33
उमा	¥
डमापतिधर	992, 923
उर्वशी	90
'डवसग्गहर' [स्तोत्र]	998
邪	
ऋषम [जिन]	६ (डि॰) ६२
ऋषभनाथ-प्रासाद	63
ऋषभपञ्चाशिका [स्तुति]	80
-	
ए	
	903
एकपद [क्षेत्रपाल]	923
एकपद [क्षेत्रपाल] क	0
एकपद [क्षेत्रपाल] क कच्छ [देश] १६,	0
एकपद [क्षेत्रपाल] क कच्छ [देश] १६, कच्छप [लक्षराज]	94. 98, 84
एकपद [क्षेत्रपाल] क कच्छ [देश] १६,	96. 98, 84
एकपद [क्षेत्रपाल] क कच्छ [देश] कच्छप [लक्षराज] कण्टेलीया [पाषाणविशेष]	94. 98, 88 98 900
एकपद [क्षेत्रपाल] क क च छ [देश] १६, क च छ प [लक्षराज] क ण्टेलीया [पाषाणिवशेष] क ण्टेली-प्रासाद क ण्टाभरण [न्याकरण] क च थादुर्ग	94. 98, 88 98 900 93, 94 69
प्कपद [क्षेत्रपाल] कच्छ [देश] १६, कच्छप [लक्षराज] कण्टेलीया [पाषाणविशेष] कण्टेली-प्रासाद कण्डाभरण [न्याकरण] कन्थादुर्ग कन्यकुल १९, १	94. 98, 84 98 900 93, 94
प्कपद [क्षेत्रपाल] क कच्छ [देश] १६, कच्छप [लक्षराज] कण्टेलीया [पाषाणिवशेष] कण्टेलीरा-प्रासाद कण्टाभरण [न्याकरण] कन्यादुर्ग कन्यकुळा १९, १ कन्ह (कुण्ण)	96. 98, 84 98 900 93, 94 69 96 12, 39, 923
एकपद [क्षेत्रपाल] क क च्छ [देश] १६, क च्छप [लक्षराज] क प्टेलीया [पाषाणिवशेष] क प्टेश्वरी-प्रासाद क प्टाभरण [व्याकरण] क म्यादुर्ग क न्य कु ज १९, १ क नह (कृष्ण) कपर्दि [मंत्री] ८७,	96. 98, 84 98 900 93, 94 69 96 12, 39, 923 6
प्कपद [क्षेत्रपाल] कच्छ [देश] १६, कच्छप [लक्षराज] कण्टेलीया [पाषाणिवशेष] कण्टेली-प्रासाद कण्डाभरण [न्याकरण] कन्थादुर्ग कन्यकुल १९,९ कपर्दि [मंत्री] ८७, कपर्दि [यक्ष]	96. 98, 84 98 900 93, 94 69 96 7, 29, 98 60, 98
प्कपद [क्षेत्रपाल] कच्छ [देश] १६, कच्छप [लक्षराज] कण्टेलीया [पाषाणिवशेष] कण्टेली-प्रासाद कण्डाभरण [न्याकरण] कन्यादुर्ग कन्यकुल १९,१ कपर्दि [मंत्री] ८७, कपर्दि [यक्ष] कपिछकोष्ट [दुर्ग]	96. 98, 84 98 900 93, 94 69 96 2, 29, 923 66 700, 924 98
प्कपद [क्षेत्रपाल] कच्छ [देश] १६, कच्छप [लक्षराज] कण्टेलीया [पाषाणिवशेष] कण्टेली-प्रासाद कण्डाभरण [न्याकरण] कन्थादुर्ग कन्यकुल १९,९ कपर्दि [मंत्री] ८७, कपर्दि [यक्ष]	१८. १९, ९५ १९ १३, १५ ६१ १६, ३१, १२३ ८८, ९०, ९६ १००, १२४ १) [सिद्धराज]
प्कपद [क्षेत्रपाल] कच्छ [देश] १६, कच्छप [लक्षराज] कण्टेलीया [पाषाणविशेष] कण्टेली-प्रासाद कण्टाभरण [न्याकरण] कन्थादुर्ग कन्यकुल १९,१ कपदि [मंत्री] ८७, कपदि [यक्ष] कपिलकोष्ट [दुर्ग] करणडन्न (कणेपुत्र=करणोत	96. 98, 84 98 900 93, 94 69 96 12, 39, 933 66 200, 934 98 1) [限盛初]
प्कपद [क्षेत्रपाल] कच्छ [देश] १६, कच्छप [लक्षराज] कण्टेलीया [पाषाणिवशेष] कण्टेली-प्रासाद कण्टाभरण [ल्याकरण] कन्थादुर्ग कन्यकुल १९,११ कपर्दि [मंत्री] ८७, कपर्दि [यक्ष] करण्डन्द्र (कण्पुत्र=करणोत	१८. १९, ९५ १९ १२, १५ ६१ १६ २, ३१, १२३ ८८, ९०, ९६ १००, १२४ १९ १) [सिद्धराज]
प्कपद [क्षेत्रपाल] कच्छ [देश] १६, कच्छप [लक्षराज] कण्टेलीया [पाषाणविशेष] कण्टेलीया [पाषाणविशेष] कण्टेली-प्रासाद कण्डाभरण [न्याकरण] कन्थादुर्ग कन्यकुल १९,१ कपि [मंत्री] ८७, कपि [यक्ष] कपिलकोष्ट [दुर्ग] करणडत्तु (कर्णपुत्र=करणोत् करम्बक-विद्वार कर्ण [पुराणकालीन] १३,५९	96. 98, 94 98 900 93, 94 69 96 2, 39, 93 20, 40, 46 900, 934 900, 934 900, 934
प्कपद [क्षेत्रपाल] कच्छ [देश] १६, कच्छप [लक्षराज] कण्टेलीया [पाषाणिवशेष] कण्टेली-प्रासाद कण्टाभरण [ल्याकरण] कन्थादुर्ग कन्यकुल १९,११ कपर्दि [मंत्री] ८७, कपर्दि [यक्ष] करण्डन्द्र (कण्पुत्र=करणोत	96. 98, 84 98 900 93, 94 69 96 12, 39, 93 900, 934 900, 93 900, 93 900, 93 900, 93 900, 93 900, 93

कर्णमेरु [प्रासाद] ५५, ७०, ७१	कीर्तिराज ी	गुणचन्द्र [विद्वान्]
कर्णसागर [तडाग] ५५	कुकूण [देश]	गृह महाकाल-प्रासाद ' ७ (टि॰)
कर्णांट दिशा ३१, ५४, ६६, ७४, ९५	कुक्तेश्वर-प्रासाद ७८	गूर्जर १३, ३१, ४६, ६२, ९५
इणाँटेश २५	कुन्तल मण्डल ११४, ११५	,, गोपाल
कर्णांवती ५५, ५६, ६६, ८३	कुवेर ३९	,, देश १२, १४, १६, २१, २८,
कर्णांक्रज [सिद्धराज] ५६, ५९	कुमरनरिन्द (°नरेन्द्र) [कुमारपाल] ८,७८	३१, ३२, ४५, ४६, ५३,
क्रणेश्वर ५५	कुमारदेवी ९८	५८, ६६, ९४, ९७
कर्प्र [किव]	कुमारदेवीसर १०१	,, धरित्री १२, २५, ७४
कर्मप्रकृति [प्रन्थविशेष] ३७	कुमारपाळ ७६-७९, ८१, ८६-९०,	,, ° नाथ ७८
क्छविणि [नदी] ८०	९२, ९४, ९५, ९७,	,, नृपति २०
कलंहपञ्चानन [इस्ती]	१०१, १२१, १२८	,, मण्डल ६२
कलिकालसर्वज्ञ [बिहद] १२६	कुमारविहार [प्रासाद] ८९, ९१, ९२, ९६	गूर्जराधीश्वर ७२
कलिङ्ग [देश]	कुमारसम्भव [काव्य]	गूर्जरेश्वर १६, ५४
कल्याणकटक ११	कुमुदचन्द्र [पण्डित, वारी] ६६-६६	गोदावरी [नदी] ९, २२
कल्याणम् यचैत्य १०१	कुरुकुहा देवी ६८	गोलानई (गोदावरी नदी) २४
कविबान्धव [बिरुद]	कुळचन्द्र [पण्डित] ३२	गोवर्द्धन [राजा]
कंक्लोल १८	कुसुमपुर ११२	गोविन्द ९, २५
कंस १९५	कृत्व ११६	गोविन्दाचार्य २८
काकर [प्राम] १२, १३	केशव ८१	गौड [देश] २२, ७६, ११२
काकल [पण्डित] - ६८	कैंडास ८५	गौडदेशीय
काकुरस्थवीर्य २७	कोछरवा [देवी] ५५	गौरी १०३, १२३
	कोपकालानल [बिहद] ११६	च
काकू [वणिक्] १०७,१०८	कोल्लापुर ७३	चउलिग [हस्ती] ७९
कातज्ञ [ब्याकरण] ६१	कोॡ्या [गूर्जराश्ववार] ४८	चण्डिकाः • ३८
कात्यायिनी २३	कोशल [देश] ३१	चिंडका शासाद ४४, ६० (डि०)
कानीन [मुनि] ४२	कौङ्क(ङ्क)णक [देश] ३१,८०,८८,	चन्द्रनाचार्य ४९
कान्ती [पुरी] १३, १११, १२०	94, 996	चन्द्नाथदेव २०
कान्थडि [तापस]	कौतुकी [सीलण] ९६	चन्द्रप्रभ [जिन] १०१
कान्हडदेव - ७८	कौरवेश्वर १३	चन्द्रप्रभविस्व १०८ १०९
कान्ह् [न्यवहारी]	क्षपणक ११४	चन्द्रप्रसस्रि १
कापिल [दर्शन] ६३	क्षेमराज १४, १५	चन्द्रलेखा [राज्ञी] १२०
कामन्दकीय [नीतिशास्त्र]	ख	चन्द्रावती [नगरी] १०१
कामज्या १८	खंगार [आभीरराणक] ५४, ७६	व्स्या [नगरी] १३
कामिततीर्थं - ११०	खण्डप्रशस्ति [काव्य] ४१	चरटराज्य १४
कालभैरवीय ६० (टि०)	खेडा [महास्थान] १०६	चाङ्गदेव ८३
कालमेघ १२३	ग	चाचिग ८३
कालिका [देवी]	गगनगामिनी [विद्या] 998	चाचिणेश्वर-प्रासाद
कालिदास [कवि] ३, ४, ५, १०२	गङ्गा [नदी] ७४, १०४, ११३	चाणक्य ६७
कालिन्दी [नदी] ७५	गाङ्गेय १३	चानद्र [व्याकरण] ६१
काशहद [नगर] २१	गांडर [अरघट]	चापोस्कट वंश १२, १५, १६
काशि [नगरी] १३, ५०, ७४, ८९,	गाथाकोश [गाथासप्तशतीप्रथ] १०	चासुण्डराज [चापोत्कटवंशीय] १५
193	गिरिनगर १२२	,, [चालुक्यवंशीय] १९,२०
काश्मीर [देश] ६० (टि॰)	ब्रिरिनार ६५	0.7
कीर [देश]	गुडजातीय [सभट] १०२	
	104	चामुण्डा [गोत्रजा देवी]

		and the same of th
चारण [जाति] ५८, ९२, ९३	जिनधर्म ३७, ६३	त्रिपुरुष [प्रासाद, धर्मस्थान] १७, १८,
चाहड [उदयनपुत्र, राजघरह] ९४	जिनप्रासाद १२३	५३, ६१, ८१
चाहड [सचिव]	जिनपूजा १२४	न्निभुवनपाछ ७७
चाइडकुमार ७९	जिनैबिम्ब ९७, १२०	त्रिभुवनपाळविहार ८७
चाहुमान [वंश]	जिनशासन १२, ३७, ३९, ६८, ७८,	त्रिपष्टिशलाकापुरुपचरित्र ८६, १२८
चित्र ९९	८३, १२४	त्रैलोक्यपाद १२३
चित्रकसिद्धि [विद्या] १०८	जिनेन्द्रव्याकरण ६०	थ ।
चित्रकूटपट्टिका	जीमूतवाहन १०३	थाहड (१) [बाहड, टिप्पणी] ६९
चिन्तामणि (गणेश) १२१	जेसल [जयसिंह, सिद्धराज] ५८, ६५,	द
चूडामणि प्रनथ (अर्हन्तश्री) ३९	de la company de	दक्षिण [देश]
चेदि [देश]	जैत्रमृगारि [जयसिंह ,,] ७५	दक्षिणापथ २२
चोड [देश] ३१, १११	जैत्रसिंह [तेजःपालपुत्र]	दण्डक [राजपुत्र] १५
चौलुक्य [वंश] ६१,६८,७३,७९-	जैन [दर्शन, धर्म, मत] ८, १३, ३६,	दण्डाहि [देश ?] ५३
८१, १२६, १२७	४४, ६३, ९४, ९७, १०७	दशीचि [ऋषि] १०३, ११५
चौलुक्यचकवर्ती २५, ७९०, ८०	जैनप्रासाद २८, ६१, ६२, ६३	दरिद्रपुत्रक
	जैनमुनि १०, ९९, १०७, ११९	दशस्य २४
छ	जैनविचारप्रन्थ ३७	दशवैकालिक [सूत्र] ३६
अश्रहारा १३ बाला [पाम] ६९	जैनागम ८२	दससिरु (दशबिरस्, रावण) २३
ores [suri]	जैनाचार्य १२, १०७, ११८	दहमुहु (दशमुख ,,)
1944 [414]	जैनालय ३८	दान्ता [श्रेष्ठी]
अर्थ ज क	जोगराज १४	दामर [सान्धिनिम्नहिक] ३०-३२,
जउणानई [यमुनानदी]	ज्ञानसागर [मुनि]	38, 49, 43
जगन्सम्पण [बिहद]	झ	दिगम्बर (दिग्वासस्) ३२,६६-६८,११४,
जगहेव • ११४, ११५, ११६	झाळा [ज्ञाति]	922-923
जम्बूद्वीप / ६६	झोलिकाविहार ९३	दुर्छभराज २०
जयकेशी [राजा] ५४, ७४	ड	दुर्छभसर २०
जयचन्द्र ७४, ११३	डामर (दामर) [सान्धिविप्रहिक] ३०,	दहाविद्या ९२
जयतलदेवी ९८, १०४	३१, ३३, ३४	देउलवाडउ ६५
जयदेव [पण्डित] ९६, १०३	डाहल [देश] ४९, ६४, ९२	देमति [राजी] ४९
,, [जयसिंह, सिद्धराज] ६०	ढ	देवचन्द्र [स्रि] ६० (डि०), ८३, ९३
जयदेव-भवन ६० (टि॰)	हङ्क [पर्वत]	देवराज [पृष्टकिल]
जयन्त •९६	ढिली [नगरी]	देवस्रि ो जनी ६६, ६७, ६९
जयन्ती [देवी]	त	देवसूरि }[वादी] ६६, ६७, ६९
जयमङ्गल [सूरि] ६३	and the same of th	देवादित्य
जयसिंह [सिद्धराज] ५५, ६०, ७१, ७६	वानवा विका	द्वारवती [नगरी]
जाङ्गल [द्रेश]	4142.1	द्वाश्रय [महाकाव्य] ६१
जाङ्गलक ९५	Machanal Ci Famil	ध ।
जाम्ब [मंत्री] १२, १३, ६५		धनद १२३, १२४
जामदस्य ९६	an fauci	धनपति १२०
जास्त्रधर [देश]	900	धनपाल [किव] ३६-४२
जावालिपुर १०१	तजळपुर	भ्रनेश्वर १२०
जाह्नुवी ११४		धरणिंग
जिन ६२,८१	. 03	धरणेन्द्र १२०
जिनदत्तस्रि १०१	त्रिपुरी	그건

धर्म [वादी]	. 89	नेमि [नाथ, जिन]	६५, १९०	प्रश्र	. 99
धर्मदेव	9	नेमिनाथ-प्रासाद	. 99	पृथ्वीराज [सपादलक्षीय]	
धर्मवहिका	30	नेमिनाथविम्ब	909	2	• 996
धर्मशिला	64	प	Trailing !	प्रतापदेवी	84
धाता (विधाता)	94	पञ्चश्राम	908	प्रतिष्ठानपुर	30.
धामणडिल [प्राम]	922	पञ्चासर [प्राम]	92, 93	प्रद्युम्नाचार्य	58
धारा [नगरी] १३, २०,	३२, ३५, ३६,	पञ्चासरचैत्य	93	प्रबन्धचिन्तामणि [प्रन्थ]	9, 924
89, 84, 86, 4		पत्तन [अणहिलपुर पाटण	1] 93, 98, 94,	प्रबद्धशत [प्रन्थविशेष]	90
धारा [पणक्री]	33	90, 20, 4	3-44, 46-67,	प्रभासक्षेत्र	68, 909
धारादुर्ग	46, 49		९, ७७, ८२-८४,	प्रवर नगर	9
धारानाथ	७५	60,69-9	9, 98, 96	प्राकृत [भाषा]	88, 68
धारापति	७६	पत्तन-पाटलीपुत्र	904	प्राकृतसूत्र	86
धाराश्रेष्ठी	१२२, १२३	पत्तन-सोमनाथ	909	प्राग्वाट [वंश]	96
धुन्धुक हे [नगर]	53	पद्माकर	६० (डि०)	प्रियङ्गम अरी	3
3-31	65	पद्मावती [देवी]	998	प्रियव्रत	63
न		पम्पा [सरोवर]	65	फ	
नगरमहास्थान	43	परपुरप्रवेशविद्या	६, १०६		96
नगरपुराण	£3	परमाई [नृपति]	90, 998-998	फूलड [पशुपाल]	10
नन्द [नृप]	908, 996		१८, २१, ५९, ७६	ब	1 1 1 1 1 1 1 1
नन्दिवर्धन	998	परमार राजपुत्र	. 99	बप्पभिहसूरि	925
नन्दी	38	परमाईत [बिरुद]	७७, ८६	बम्बेरानगर	38
नन्दीश्वरावतार [प्रासाद]	900	पराशर [ऋषि]	६० (डि०), ८२	बर्बर [वेताल]	७३, ७६
नळ [चपित]	38	पह्णीब्राम	900		6, 98, 994
नरवर्मा	७६	पाटलीपुत्र [पत्तन]	908, 996	बल्लाल [रूपति]	94
नरवाहन [सङ्गार]	48	पाणिनि [व्याकरण]	६9, 939	वाउलाग्राम्	99
नर्भेद्रा	60	पाण्डव	85	बाण [किव]	88
नयचक [प्रन्थ]	900	पाण्ड्यनृप	२७	बारप [सेनापति]	94, 90
नवंघण (°न)	£8, £4	पाताक	900	बालचन्द्र [पण्डित]	903
नवाङ्गवृत्ति [प्रन्थ]	900, 920	पादलिसपुर	900, 998	बाल-मूलराज	30
नहुष [राजा]	24	पापखड [हाह]	- 69	बाइड (वाग्भट) [मंत्री]	44
नाइकिदेवी	90	पापघट	98	बाहडपुर	69
	5, 998, 980	पारूथक [द्रम्मविशेष]	93	बाहुलोड [नगर]	48, 40
नाचिराज [कवि]	40	पार्थकथा	994	बाहुलोडकर	46
नाडोङ [प्राम]	६० (टि॰)	पार्वती	35	बीज [राजपुत्र]	94
नाणाद्राम	89	पार्श्वनाथ [जिन, तीर्थ] पार्श्वनाथप्रतिमा		बुद्ध [देव]	900
नाभाग [तृपति] नाभि [तृपति]	32	पश्चिनाथनिम्ब	93	बृहस्पति [गण्ड]	68, 64, 89
	६२, ६३		920	बृहस्पतिमत	908
नाभिभू [प्रथमजिन]	9	पाछिताणक [स्थान]	900		
नारय (नारद)	6	पालिता (पादलिप्ता०)			६३, ६९, १०७
नारायण	90	पावक [पर्वत]	900	ब्रह्मपुरी	98
नास्तिक [दर्शन]	65	पाहिणि	६२,६३	ब्रह्म-प्रासाद	
नीतिशास्त्र	98	पीपलुका [तडाग]	93	ब्रह्मा	. 64
नीलकुण्ठ [महादेव]	82	पुण्यसार	999	ब्राह्म [दर्शन]	11 63
नीलकण्डेश्वर	45	पुष्कर	७६	ब्राह्मी [देवी, सरखती]	1903
0		1.			Liddle Condition

प्रबन्धचिन्तामणिविशेषनामसूचिः।

			•
Erick W W LINE	. H .	2 2 Eur	मारव ९५
भक्तामर स्त्रोत्र ४५	मख(मका)तीर्थ	903	मालदेव 900
भद्दमात्र • १,२,८	मण्डलीकसत्रागार [बिहद]	58	मालव } [देश, मण्डल] १९-२२, १५,
भद्दारिका-भीरूआणी ५३	मण्डलीनगर	90	मालपक)
भट्टारिका-योगीश्वरी 9४	मतिसागर	999	३२, ४५, ५१, ५८, ५९,
भद्रबाहु [स्रि]	मथुरा [पुरी]	93	६१, ६२, ७१, ७४, ७६,
भरत [नृपति] ६२, ६३, ८६, ८७	मदनपाछ '	14, 44	७८, ८१, ९५, १२१
भरतखण्ड ६२	मदनराज्ञी	46	मालवपति ३१,९७ मालविक । २०,५८
भर्तृहरि १९१	मदनरेखा	996	मालविक ५९
भव [शिव] ६३, १२३	मदनशङ्करप्रासाद	30	मालवीय ४६
भवानी १२३	मध्यदेश"	३६, ७२	मालिम १०३
भागीरथी १२७	मनु	63	माहेच १९
भारत (महाभारत) १, १०७		9, 903	मिथिला १३
भारती ४२, ५०, १०७	मयणहादेवी ५४, ५७,	६७, ७४	मुझ [राज, तृप] २०-२५, २८, ३१, ५०
भारूयाड [साखड] १३	मयूर [किव]	88	मुआल [मंत्री] ५४,५९
भागीव ११५	मरुदेव	63	,, [महोपासक] ९९
भिल्लमाल ३६	मरुदेवि	65	मुआलदेव १५
भीम, भीमसेन २८, ९७	मरुदेश }	62	मुआलदेव-प्रासाद १७
भीम, भीमदेव [चौछक्य १] २०, २५,		£, 900	,, स्वामी ,,
२८, ३३, ३४, ४५, ४६,	ALL AND ADDRESS OF THE ADDRESS OF TH	६, १००	मुणालवई (मृणालवती) २३
५१-५४, ७७	मलधारी [बिहद] मल्लवादी [स्रि]	900	मुनिदेवाचार्थ ६९
भीमदेव [चौछुक्य २] ९७,९८		69, 84	मुनिसुवत [जिन]
भीमडीयाक (टिप्पणीगत) ३१	महणका	93	मुरारि ३९
		89, 69	मूलराज [चालुक्य १] १६-१९,३९,६१,९५
	महाकाल-प्रासाद ३० (टि	- No. 10 (S. C.)	मूलराज [बाल, ,, २] ९६
North	महादेव	64	मूलराज, कुमार
S. Harris	महानन्द	996	मूलराजवसहिका १७
भूपछ [कुमारी]	महाभारती कथा	४२	मूलेश्वर-प्रासाद १७
भूय [ग] डदेव १४,१५	महाराष्ट्र [देश]	49	मृणालवती २३
भूय [ग] डेश्वर-प्रासाद १४, १५ भयराज ११, १५	महालक्ष्मी [देवी]	ξυ	मेघनाद १२२
	महावीर [जिन]	60	मेरुतुङ्गाचार्य १,६९
030	महावीरचैत्य	900	मेवाड [देश]
	मही नदी	88	मोढ वंश ८३ मोढ वसहिका ८३
41/4/4	महेश्वर	64	
Middle of Land	महोदय	७६	मोडेरपुरावतार [प्रासाद]
	माघ [किव, पण्डित] ३४-३६	, 902	इलेच्छ ७३, ११७, ११८
	माङ्गू [झाळा]	७२	म्लेंच्छदेश ७२
भोज, भोजदेव २२, २५, २६, २८,	माङ्गस्यिण्डल	७२	,, मण्डल १०८
३०, ३१-३६, ३९, ४१,	माणिक्य [पण्डित]	60	,, राजा
४३, ४५-४७, ४९-५१, ५२, १०४, १०५, १२१	माणिकड पछेवडड	69	य
भोजस्वामि-प्रासाद ३४	मानतुङ्गाचार्य	88	यमुना [नदी]
भोबएव (भोजदेव)	मानस [सरोवर]	43	यक्षःपटह [हस्ती]
भंभेरी [नगरी]	मान्धाता [तृपति]	\$3	यशश्चनद्र [गणी] ८२,८८
and [and]			and hong

बशोधवल ५९	कुप्तर, १२३	वस्तुपाल [महामाल] ९८, १००, १०२,
यशोभद्र [सूरि] ६८	रोहक [महामाल्य]	1,903,900
यशोराज	रोइण, रोहणाचल १, ३	बाग्सट [मंत्री] भारत भारत १६,८६,८७
यशोवमी ५८-६१, ७४, ७६	ल का का कार्य	en stant 198-99
यशोवीर १०१, १०२		,, • (लघु, बृहत्)[बैय]
युगादिदेव [जिन] ४५, ६६, ८६,	लंक [गढ] (ल्हा) २३, ५८	,, [बैद्यक प्रन्थ]
ACCOUNTS NOT THE RESERVE OF THE RESE	क्रवंखड (लाखाक)) क्रिके किया १९	
964, 964	क्षा ,,	第一日 中国 TO 10 10 10 10 10 10 10 10 10 10 10 10 10
युविष्टिर २२,८२	लक्षराज ,,	29,998
युकाविहार ९१	ळक्ष्मणसेन १९१२	्रवादिवेतालीय [बिरुद]
योगराज	लक्ष्मी	वामराहिः [विप्र]
योगशास्त्र ८६, ९०, ९२, १०८	लक्ष्मापात १२७	वायटीय [गच्छ]
सोगीश्वरि [भट्टारिका]-प्रासाद १४	लप (ख) णावती [पुरी] ११२	वायटीय जिनायतन
#35 ##BIBOLOGO *	लघु भैरवानन्द [योगी] ६० (टि॰)	वाराही ग्राम (१)
· · · · · · · · · · · · · · · · · · ·	लघु वारभट [वैद्य]	वाराहीय ब्रुच
रघु [कुल, राजा] ७३, ८६		वाराही संहिता [श्रंथ]
रङ्क [वणिक्] १०८, १०९	छङ्का [नगरी] १३, ३२, ३९, ६६, ७२	
रणसिंह ११९	छच्छ (लक्ष्मी)	The second secon
र्शति (अञ्चानकार्ष्य) क्षामार्ष्यः	ब्रिक्टिनसर क्रिकेट महर्भ १०	वाल्मीकि [ऋषि]
रतिरमण ३९	ळवणप्रसाद [राजा] ९४, ९४, १००,	वासकि [नागराज]
रस्वरिक्षा अन्य	903, 908	्वासुदेव भिन्न भिन्न भिन्न भिन्न भिन्न
रत्रम [पण्डित]	लाखाक [फुलउत्र] १८, १९	विक(क)मकाल १५,१०९
-रतमाल [पुर] - १०९	लाछि [छिम्पिका]	विक्रम] [नृप] २, ४, ६, ७, ९
रत्नशेखर १०९, ११०		विक्रमार्क } १,५,२७,८२,१०६,१२१
THE PROPERTY OF THE PROPERTY O	and the same of th	विक्रमादित्य ३,८
रताकर [पण्डित] ६७		and the state of t
रतादित्य १५	लीडा [ठकुर, राजवैद्य]	विक्रमार्के संवत्सर • १३ विग्रहराज ९०
राज [राजपुत्र, क्षत्रिय] १५	लीलादेवी १५	· · · · · · · · · · · · · · · · · · ·
राज्ञारह [बिरुद]	ॡणिग [मंत्री]	विचार चतुर्भुख [विहद]
राजपितामह [,,] ८०,८१	ल्हणिगवसिंह [प्रासाद]	विजयसेत स्रि
राजमदनशङ्कर[,,] २०	and [minst]	विजया [पण्डिता] ४३
राजविडम्बन [नाटक] ३१	A LONG THE REST	विदिशा [नगरी]
राजशेखर [कवि, अकालजलद]	वटपद्र [प्राम]	विद्याधर [मंत्री] ,११३, ११४
राजिराज (?)	वडसर "	विद्यापति [महाकवि]
राम [दाशरथी] १९, २४, ५५, ७३	वढवाण ,, ६५	बिनायक [गणपति]
(in [4/4/(4/1] 15, 40, 75, 04	वढीयार [देश]	
रामचन्द्र [कवि, प्रबन्धशतकर्ता] ६३, ६४	वनराज १२, १३, १४	विनीता [नगरी]
23, 90	वयज्ञहदेव [तप्रस्तिभूपति]	बिभी गण
रामेश्वर-प्रासाद ४१		विमरुमिरि ६६, १०७
शबण [लङ्कापति] २४,२८	वयजलदेव [प्रतीहार] ९७	विमलवसहिका १०१
राष्ट्रकूट [वंश]	वररुचि [पण्डित] ३, ४७	विमलवाहन ६३
रुद्र ४, ३८, ९०	वराहमिहिर [पण्डित] ११८, ११९	विरिश्चि १९ १९
रेंद्रमहाकाल-प्रासाद	वृद्धमानपुर ६४, ८६, १२५	बिरहक [बुक्ष विशेष] ८०
* · · · · · · · · · · · · · · · · · · ·	वर्द्धमानप्रतिमा	विशाला [नगरी] ३६
रुद्दाइस [मंत्री] २१, २२, २३	वर्दमानसूरि ३६, १०९	विशोपक [देश?] ५३
रेवा [नदी] ९, ७५	वजमीपुर १०७-९, १२२	
रैवत) जिल्ला	ब्रलभीभंग हाहास-	
रैवर्तक [पर्वत] ६५,८७,१०८,	SHARLE TO THE PARTY OF THE PART	विश्वामित्र । ध्वाहि (दि०), ८२
	पञ्चनराज २०	विश्वेश्वर ()
549		the second secon

ACC NO P 122

